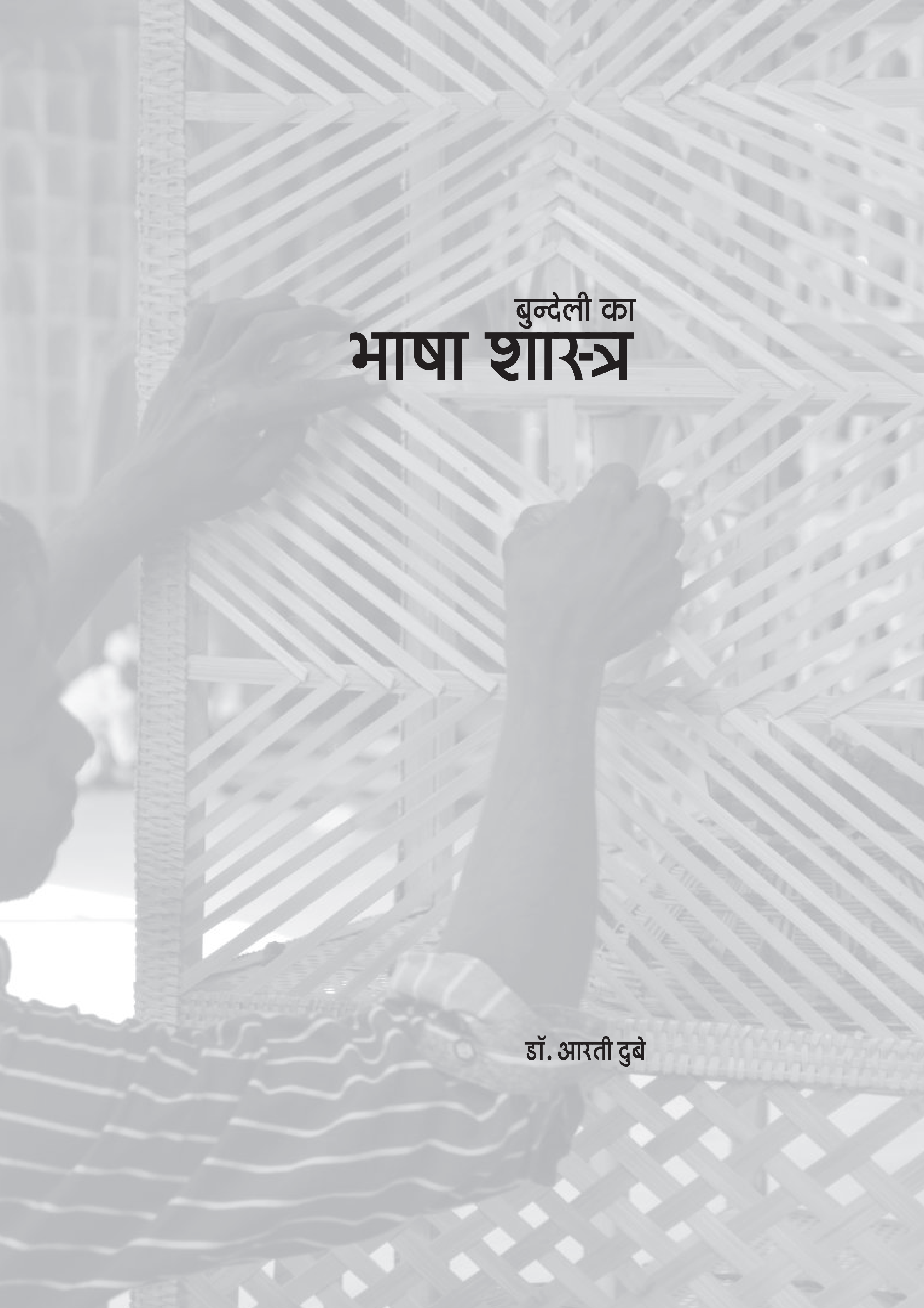

बुन्देली का

भाषा शास्त्र

डॉ. आरती दुबे

बुन्देली का

भाषा शास्त्र

डॉ. आरती दुबे

प्रधान सम्पादक
श्रीराम तिवारी

सम्पादक
अशोक मिश्र

आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद् भोपाल का प्रकाशन

प्रकाशक – आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्
जनजातीय संग्रहालय, श्यामला हिल्स, भोपाल–462002
मध्यप्रदेश, भारत
फोन – 0755–2661948, 2661640
E-mail : mplokkala@rediffmail.com

प्रकाशन वर्ष – वर्ष 2012 प्रथम संस्करण

स्वत्वाधिकार – आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्

शब्दांकन – आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्

आवरण – भूमि की लिपाई/ छाया–अकादमी संकलन से

मुद्रण – शासकीय केन्द्रीय मुद्रणालय, भोपाल

मूल्य – 300/– रुपये (तीन सौ केवल)

■ पुस्तक से सम्बन्धित समस्त विवादों का न्यायालयीन कार्य क्षेत्र भोपाल होगा।

■ पुस्तक में प्रकाशित समस्त सामग्री लेखक की है, आवश्यक नहीं कि प्रकाशक इससे सहमत हो।

ISSN - 978-81-922558-3-5

भाषा की शक्ति के स्वरूप और विकास की सामान्यत: दो दिशाएँ हैं- एक जहाँ भाषा स्वयं एक व्यक्तित्व की तरह विकसित होती है, और दूसरी में वह बहुत सी अभिव्यक्तियों का माध्यम होकर स्वयं एक संस्कृति की रचना करती है। जब हम कुछ स्थानिक संस्कृतियों को उनकी भाषाओं और भाषिक क्षेत्रों या जनपदों की तरह परिभाषित करते हैं, तो वास्तव में वे भाषाएँ संस्कृति के विशेष जनपदों की तरह परिभाषित होती हैं। भाषा का एक आधार 'लोक सम्प्रेषण' का है, जहाँ वह अपनी सत्ता का विस्तार विशेष ध्वनियों, शब्दों और वाक् पद्धतियों में करती है, जिसमें अर्थों की एक परम्परा भी समाहित होती है- यह भाषा का अपना आधारभूत क्षेत्र है, जहाँ किसी समुदाय के लोक व्यवहार से नये शब्द, कुछ नये अर्थ उसे समृद्ध करते रहते हैं। प्रत्येक समय और जीवन तथा प्रत्येक पीढ़ी भाषा को अपने लोक व्यवहार के अनुभव से थोड़ा समृद्ध करती रहती है। भाषा के विकास का दूसरा क्षेत्र जीवन अर्थों और उसकी रचनाओं की 'अभिव्यक्ति के माध्यम' के रूप में सामने आता है।

मध्यप्रदेश के लोकांचलों में प्रचलित भाषाएँ इन जनपदों की संस्कृति और उसकी पहचान हैं- इनकी शब्द सम्पदा एवं अभिव्यक्ति के आरोह-अवरोह से एक जनपद की भाषा में भी स्थानिक अंतर दिखाई देता है, पर वास्तव में ऐसा है नहीं। जनपदीय भाषा के व्याकरण और उच्चारण भेद को समझने के लिए यह पुस्तक उपयोगी होगी, ऐसी आशा है। पुस्तक के लेखन के लिए अकादमी डॉ. आरती दुबे की आभारी है।

- सम्पादक

पुरोवाक्

1986 में बुंदेली के व्याकरणिक अनुशीलन पर कार्य करते हुए मेरे मन में यह बात बार–बार उठती रही कि बुंदेली के व्याकरण को निश्चित कर लेने के बाद उसके विविध रूपों का अनुशीलन करना आवश्यक हो जाता है। मैं सतत इस प्रयत्न में लगी रही कि विभिन्न क्षेत्रों से बुन्देली के विभिन्न रूपों का उदाहरण सहित परिचय मिल सके। बुंदेली के विविध प्रयोगों को देखते हुए यह और भी आवश्यक हो गया कि उसका भाषाशास्त्रीय अनुशीलन किया जाय। संयोग की बात है कि इस बीच अनेक व्याकरणिक अनुशीलन अपने–अपने ढंग से किये गये, परन्तु उनका एकपक्षीय विवेचन ही सामने आया। प्रस्तुत पुस्तक में इस बात का प्रयत्न किया गया है कि बुंदेली के साहित्य और इतिहास को देखते हुए उसकी आत्मा को यथार्थ में संरक्षित किया जाय और जहाँ तक बन सके भाषाविदों के शास्त्रीय ऊहापोहों से बचा जाय।

बोली का व्याकरण निश्चित करने में अनेक कठिनाइयाँ आती हैं। बुंदेली के व्याकरणिक अनुशीलन पर मैं पहले ही पुस्तक लिख चुकी हूँ, इसलिए बुंदेली के अन्यान्य रूपों की व्याकरणिक संरचना, क्षेत्र, सीमाएँ, शब्दसामर्थ्य, ध्वनिसमूह एवं विशेषताओं को निर्धारित करने में बहुत आसानी हुई। पिछले दशक में बुंदेली के उन रूपों को प्रकाश में लाया गया है, जिन्हें अब तक एक अंचल विशेष में ही व्यवहृत किया जाता है। बुंदेली पश्चिमी हिन्दी की महत्त्वपूर्ण बोली है और इसका साहित्य अपने उद्भव काल (जगनिक के आल्ह–खण्ड) से आधुनिक काल तक विपुल भण्डार का संवर्द्धन कर चुका है। ऐसा माना जाता है कि जब कोई बोली अपने व्याकरणिक रूप को सुनिश्चित कर लेती है और उसका विपुल साहित्य सामने आता है तो उसे एक भाषा का दर्जा दिया जा सकता है। बुंदेली के साहित्य में विविधता है। जैसे– विभिन्न दरबारों के माध्यम से बुंदेली ने रीतिकाल के साहित्य में अभूतपूर्व समृद्धि दी है। इसके बाद संक्रमण काल में साहित्य प्रणयन होता रहा, परन्तु रचनाएँ प्रकाश में न आ सकीं, जिसके लिए ब्रिटिशकालीन बंदिशें और परिस्थितियाँ जिम्मेदार रहीं हैं। स्वांतत्र्योत्तर बुंदेली का साहित्य क्रमशः लोककाव्य, शिष्टकाव्य, लोककथाएँ,

कहानियाँ, व्याकरण, कहावत कोश, शब्दकोश, नाट्यसाहित्य, अनुवाद तथा अन्यान्य विधाओं के साथ प्रस्तुत हुआ है। आज बुंदेली, पश्चिमी हिन्दी की अन्य बोलियों की तुलना में अधिक समृद्ध है। बुंदेली और उसके साहित्य पर अनेक शोध–प्रबंध प्रवृत्तिगत अध्ययन की दृष्टि से तथा विषयगत अनुशीलनों की दृष्टि से किये जा चुके हैं। यह सब एक ओर बुंदेलखण्ड के साहित्यिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परिदृश्य को उन्मोचित करता है, तो भारतीय संविधान में बुंदेली के सशक्त दावे को भी प्रस्तुत करता है।

इस पुस्तक में बुन्देली के प्रत्येक रूपा का व्यापक अध्ययन किया गया है। बुन्देली के हर रूप का व्याकरण कुछ समानताओं के साथ भिन्नता भी लिये हुए है। भाषाशास्त्रीय अध्ययनों का इतिहास बहुत प्राचीन भी नहीं है। अभी तक जो अध्ययन बुंदेली के भाषाशास्त्रीय पक्ष पर हुए हैं, वे समग्र बुंदेली स्वरूप पर ही हुए है। बुंदेली के विविध रूपों पर अलग से भाषाशास्त्रीय अध्ययन नहीं हुए। फलतः हम विभिन्न क्षेत्रों के भिन्न–भिन्न बुंदेली रूपों के व्याकरण एवं भाषाशास्त्र से भलीभाँति परिचित नहीं हो पाते। निष्कर्षतः बुंदेली के विविध रूपों का वास्तविक स्वरूपा धीरे–धीरे लुप्त होता जा रहा है।

वर्तमान युग संचार–माध्यमों का युग है। लोग अपनी बोली को छोड़कर मिश्रित बोली का प्रयोग अधिक करने लगे हैं। संपर्क की अधिकता के कारण बोली का रूप बदल गया है। फल यह हो रहा है कि जिस बुंदेली ने शताब्दियों से हमारी सांस्कृतिक, साहित्यिक विरासत को संरक्षित–संवर्द्धित किया, उसके ही विविध रूप धीरे–धीरे अपना वास्तविक स्वरूप खोने लगे हैं तथा इनका अस्तित्त्व भी संकट में है।

इस पुस्तक में बुन्देली के भाषाशास्त्रीय रूप को उसकी प्राचीन पृष्ठभूमि के साथ प्रस्तुत किया गया है। वस्तुतः भाषाशास्त्रीय अध्ययनों में भाषाविद् अनेकविध रूपा में व्याकरण और बोली के पदग्रामिक, अविकारी तथा विकारी रूपों को पधानता देते हैं। मैंने उसे भाषाविज्ञान की कसौटी पर परखने का प्रयत्न नहीं किया, परन्तु भाषाशास्त्र में आने वाली विशेषताओं के साथ प्रस्तुत किया है, जो सामान्यतः हिन्दी और अन्य भाषियों को भी सहज समझ में आ सके एवं बुंदेली के विविध रूपों का प्रत्यक्ष आभास मिल सके। बुन्देली के विविध रूपों में अन्तर बहुत ही सूक्ष्म है। अतः उसे विशेषताओं के साथ लिया है तथा बुंदेली के विविध रूपों का सांगोपांग भाषाशास्त्रीय अनुशीलन यथासंभव रूप में किया है।

– डॉ. आरती दुबे

एफ 110 / 16, शिवाजी नगर, भोपाल

अनुक्रम

बुन्देली / 11

बुन्देली का उद्‌भव और विकास / 16

बुन्देली के रूप और स्थान / 23

भाषा शास्त्र एवं व्याकरण पर हुए कार्य / 49

बुन्देली के विविध रूपों का भाषा शास्त्र / 70

प्रामाणिक बुन्देली / 72

खटोला बुन्देली / 198

पंवारी बुन्देली / 203

लोधान्ती बुन्देली / 235

बनाफरी बुन्देली / 238

कुन्द्री बुन्देली / 249

निभट्‌टा बुन्देली / 253

भदावरी–तंवरगढ़ी बुन्देली / 256

बुन्देली के विविध रूपों में अन्तर और समानता / 276

परिशिष्ट / 295

संदर्भ / 329

बुन्देली

समस्त भारतीय भाषाओं के मूल में संस्कृत को माना गया है। संस्कृत से विकसित होने वाली लोक–भाषाओं में हिन्दी का अपना विशिष्ट स्थान है। भाषाविदों ने हिन्दी के दो प्रमुख भेद किये हैं– पूर्वी हिन्दी और पश्चिमी हिन्दी। वास्तव में बुन्देली संबंधी निर्णय भाषा वैज्ञानिकों ने उपलबध सामग्री के आधार पर लिये हैं, परंतु कालान्तर में बुन्देली संबंधी इतनी सामग्री उपलब्ध हो गयी है कि यह बोली–रूप मानक कोटि तक पहुँच चुका है।

भारतवर्ष छठी शती ईसा पूर्व 16 महाजनपदों में विभाजित था। जनपदीय भाषा ने वैदिक संस्कृत भाषा का सरलीकरण किया। कालान्तर में उसने 'क्लासिकल संस्कृत' का स्वरूप ग्रहण किया तथा अन्तर्जनपदीय भाषा को प्रभावित करने लगी। इसको व्यवस्थित करने हेतु व्याकरणाचार्य पाणिनि ने अष्टाध्यायी की रचना चौथी शती ईसापूर्व में की। इस समय पालि एवं प्राकृत भाषाएँ जनभाषा के रूप में प्रचलित थीं। गौतम बुद्ध एवं महावीर स्वामी ने क्रमशः बौद्ध एवं जैन धर्म का प्रचार इन माध्यमों से जनमानस में किया है।

महाकाव्य काल के दो प्रसिद्ध ग्रन्थ 'रामायण' एवं 'महाभारत' हैं। दोनों ग्रंथों के रचयिता बुन्देलखण्ड की धरती से जुड़े हुए थे। चेदि, दशार्ण एवं कारुष से वर्तमान बुन्देलखण्ड आबद्ध था। यहाँ पर अनेक जनजातियाँ निवास करती थीं। इनमें कोल, निषाद, पुलिन्द, किरात, नाग– सभी की अपनी स्वतंत्र भाषाएँ थीं। संस्कृत विद्वानों की भाषा थी। अंतर्जनपदीय भाषा के रूप में 'विंध्येली' को स्वीकार किया गया है। यह एक समृद्ध भाषा थी। हेमचंद्र सूरि ने अपभ्रंश का व्याकरण दसवीं शती में लिखा। मध्यदेशीय

भाषा का विकास इस काल में हो रहा था। बारहवीं शती में दामोदर पंडित ने 'उक्ति–व्यक्ति–प्रकरण' की रचना की, इसमें अवधी तथा शौरसेनी (ब्रज) के अनेक शब्दों का उल्लेख प्राप्त है। इसी काल में बुन्देली पूर्व अपभ्रंश के उदाहरण भी प्राप्त होते हैं। बुन्देली भाषा की अपनी प्रकृति तथा वाक्य–विन्यास की मौलिक शैली है। हिन्दी प्राकृत की अपेक्षा संस्कृत के निकट है। आदिकाल की काव्य भाषा में नाथपंथी रचनाएँ प्राप्त हैं, वे भाषाकाव्य की प्रथम सीढ़ी को ज्ञापित करती हैं। इसके पूर्व भी भवभूति के 'उत्तररामचरित' में ग्रामीण जनों की भाषा 'विंध्येली' (प्राचीन बुन्देली) ही थी। बुन्देली की पाटीपद्धति में सात स्वर तथा पैंतालीस व्यंजन हैं। 'कातंत्र व्याकरण' ने संस्कृत से सरलीकरण प्रक्रिया में सहयोग दिया। बुन्देली पाटी की शुरुआत 'ओना मासी धँम' मौखिक पाठ से शुरू हुई। विदुर–नीति के श्लोक विनायके तथा चाणक्य नीति 'चन्नायके' के रूप में याद कराये जाने लगे। डॉ. रमेशचंद्र ने लिखा है कि– 'कायस्थों तथा वैश्यों ने इस भाषा को व्यवहारिक रूप प्रदान किया, उनकी लिपि मुडिया (निम्न मात्रा विहीन) थी। 'स्वर बैया' से अक्षर तथा मात्रा ज्ञान कराया गया।' 'चली–चली विजन वखों आई', 'कां से आई क का ले आई'। वाक्यविन्यास मौलिक थे। भाषा काव्य की परम्परा दसवीं शती से प्रारम्भ हो गयी थी। बुन्देली के आदिकवि के रूप में प्राप्त सामग्री के आधार पर जगनिक एवं विष्णुदास सर्वमान्य हैं, जो बुन्देली की समस्त विशेषताओं से मण्डित हैं। युगीन अपेक्षाओं के अनुरूप काव्य रचना हुई है।

बुन्देली और ब्रज दोनों बोलियाँ सहोदर ही हैं। इस संदर्भ में कृष्णलाल हंस ने लिखा है – 'ब्रज और बुन्देली मध्यदेशीय शौरसेनी–अपभ्रंश से उद्भूत मध्यदेशीय हिन्दी के दो रूप हैं। ये दोनों बोलियाँ अथवा भाषाएँ एक भाषा के दो रूप थे– अतः आरंभ में इनके रूप में कोई अंतर नहीं था। एक रूप ब्रजभूमि में प्रयुक्त होने के कारण ब्रज कहलाया और दूसरा रूप बुन्देलखण्ड में प्रयुक्त होने के कारण बुन्देली या बुन्देलखण्डी कहलाया।' बुन्देली का विकास ग्यारहवीं– बारहवीं सदी में हो चुका था और यह चलन में भी आ चुकी थी। केशवचंद्र मिश्र ने लिखा है – 'चंदेल साम्राज्य के अधिकांश भाग में बुन्देली भाषा अपनी अनेक स्थानीय बोलियों के साथ ग्यारहवीं–बारहवीं सदी में विकसित हो रही थीं। इस प्रकार बुन्देली का उद्भव शौरसेनी–अपभ्रंश से होता है और विद्वानों का मानना है कि यह ग्यारहवीं–बारहवीं सदी में क्रमशः प्रचलन में आ रही थी। इसके बाद ही बुन्देली में राउल बेल और संदेश रासक जैसी कृतियों की रचना होती है। बीसलदेव रासो को भी विद्वान लोग बुन्देली की ही कृति स्वीकार करते हैं। इस तरह बुन्देली परम्परा और साहित्य की दृष्टि से सम्पन्न भाषा रही है।

बुन्देली के क्षेत्र

भाषायी भूगोल की दृष्टि से संपूर्ण बुन्देलीभाषी क्षेत्र को पाँच भागों में बाँटा जा सकता है— उत्तरी क्षेत्र, दक्षिणी क्षेत्र, पूर्वी क्षेत्र, पश्चिमी क्षेत्र और मध्यवर्ती क्षेत्र।

उत्तरी क्षेत्र

उत्तरी क्षेत्र के अंतर्गत मध्यप्रदेश के मुरैना, भिण्ड तथा ग्वालियर जिले हैं। आगरा, मैनपुरी और इटावा का कुछ दक्षिणी भाग भी इसी क्षेत्र के अंतर्गत मानना उचित होगा। इनमें से मुरैना और ग्वालियर तथा आगरा के दक्षिणी भाग में प्रचलित बुंदेली का वह रूप है, जो 'भदावरी' के नाम से जाना जाता है। यह बुन्देली का ब्रजमिश्रित रूप है। मुरैना की श्यौपुर तहसील में प्रचलित बुन्देली के रूप में राजस्थानी का मिश्रण है।

दक्षिणी क्षेत्र

दक्षिणी भाग के अंतर्गत छिन्दवाड़ा, सिवनी और बालाघाट जिले हैं। इनमें से छिन्दवाड़ा जिले का उत्तरी भाग (अमरवाड़ा तहसील) तथा पूर्वी भाग (चौरई क्षेत्र) की लोकभाषा लगभग शुद्ध बुन्देली कही जा सकती है, किन्तु इस जिले के मध्य और दक्षिणी भाग में बसे किरार, रघुवंशी, कोष्ठी और कुम्हार जाति के लोग जो बोली बोलते हैं, उसे बुन्देली का विकृत रूप कहा जा सकता है। इस क्षेत्र की सौंसर तहसील मुख्यतः मराठी भाषी है, पर तहसील में यहाँ—वहाँ तथा इससे संलग्न छिन्दवाड़ा तहसील के सीमावर्ती क्षेत्र में बुन्देली का जो रूप प्रचलित है, वह भी मराठी प्रभावित है। इस जिले में बुन्देली भाषी कोष्ठियों की बोली पर भी मराठी का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। सिवनी जिले का अधिकांश भाग बुन्देलीभाषी है। इसकी दक्षिणी सीमा मराठी भाषी नागपुर जिले से संलग्न है। अतः इस सीमावर्ती भाग पर स्वभावतः मराठी का प्रभाव दिखलाई देता है।

पूर्वी क्षेत्र

बुन्देली भाषा क्षेत्र के पूर्वी भाग के अन्तर्गत जालौन, हमीरपुर, छतरपुर का पूर्वी भाग, पन्ना तथा जबलपुर जिले के कुछ उत्तरी और पूर्वी भाग का स्थान है। इनमें से हमीरपुर जिले में बुन्देली के अनेक रूप प्रचलित हैं। इस जिले के मध्य की बोली तो शुद्ध बुन्देली कही जा सकती है, किन्तु इसके उत्तर— पश्चिमी भाग और जालौन के दक्षिणी भाग में बुन्देली का 'लोधान्ती' रूप और पूर्वी सीमावर्ती क्षेत्र में (केन नदी का तटवर्ती भाग) से एक पृथक रूप प्रचलित है जो 'कुण्डरी' के नाम से जाना जाता है।

इसी जिले के उत्तरी यमुना नदी के तटवर्ती भाग में बुन्देली का रूप और भी बदल गया है। बुन्देली का यह रूप 'तिरहारी' कहा जाता है। इसके दक्षिण तथा दक्षिणी–पश्चिमी भाग में बुन्देली का 'बनाफरी' रूप बोला जाता है। जालौन जिले के पश्चिमी भाग में तो बुन्देली का लगभग शुद्ध रूप ही प्रचलित है और इसके दक्षिणी भाग में बुन्देली का 'लोधान्ती' रूप प्रचलित है। परन्तु इस जिले के पूर्वी सीमावर्ती भाग (यमुना नदी का दक्षिणी तटवर्ती भाग) में बुन्देली का एक सर्वथा नवीन रूप दिखायी देता है जो कि 'निभट्टा' कहलाता है।

पन्ना जिले की लोकभाषा के दो रूप हैं। इसके उत्तरी भाग की बुन्देली छतरपुर जिले की बुन्देली से और पश्चिमी भाग की बुन्देली दमोह जिले की बुन्देली से साम्य रखती है। इन दोनों भागों की लोकभाषा शुद्ध बुंदेली ही कही जा सकती है, किन्तु इसके पूर्वी और दक्षिणी भाग की बुन्देली निकटवर्ती बघेली भाषी क्षेत्र के प्रभाव से बघेली मिश्रित हो गयी है। यह बुंदेली का बनाफरी रूप है, जो उत्तर हमीरपुर जिले के दक्षिणी भाग तक पहुँच गया है।

इस तीसरे क्षेत्र में जबलपुर जिले के उत्तरी और पूर्वी क्षेत्र की बुंदेली भी बघेली मिश्रित है। इस जिले की जबलपुर और पाटन तहसील में बोली जाने वाली बुन्देली उत्तर पूर्व में बढ़कर सिहोरा तहसील के पूर्वोत्तर में ही बघेली से मिश्रित होने लगती है और इसके आगे बढ़कर कटनी तहसील में इसका बुंदेली–रूप लुप्तप्राय हो जाता है और बघेली ही वहाँ की लोकभाषा बन जाती है।

पश्चिमी क्षेत्र

इस भाग के अंतर्गत मुरैना जिले के श्यौपुर तहसील, शिवपुरी, गुना, विदिशा और होशंगाबाद जिले का पश्चिमी भाग तथा सीहोर जिला है। इनमें से मुरैना, शिवपुरी और गुना जिले के पश्चिमी भाग राजस्थान की पूर्वी सीमा से संलग्न हैं, जिससे इन भागों में बोली जाने वाली बुंदेली राजस्थानी से प्रभावित हो गयी है।

सीहोर जिले के पश्चिमी भाग में प्रचलित बुंदेली मालवी भाषी क्षेत्र की संलग्नता के कारण मालवी मिश्रित हो गयी है। पश्चिम की ओर आगे बढ़ने पर इस जिले की आष्टा तहसील में बुंदेली का रूप लुप्त प्राय हो जाता है और उसका स्थान मालवी ग्रहण कर लेती है। इस तहसील की बोली विशुद्ध बुंदेली तो नहीं, पर बुंदेली मिश्रित मालवी ही कही जा सकती है।

होशंगाबाद जिले के पश्चिमी भाग की भाषायी स्थिति सीहोर के पश्चिमी भाग से

कुछ भिन्न है। इस पश्चिमी भाग में इस जिले की दो तहसीलें सिवनी और हरदा हैं। इनमें से सिवनी तहसील की लोकभाषा बुंदेली प्रभावित मालवी है। हरदा तहसील का उत्तरी भाग मालवा क्षेत्र से सम्बद्ध और पश्चिमी भाग निमाड़ी भाषी क्षेत्र है। परिणाम–स्वरूप इस तहसील के पश्चिमी भाग में निमाड़ी मिश्रित मालवी बोली जाती है, मध्य और उत्तर के भागों में बुंदेली प्रभावयुक्त निमाड़ी और मालवी का ऐसा मिश्रित रूप बोला जाता है, जिसे किसी भी एक लोकभाषा के रूप में सम्बोधित नहीं किया जा सकता। उस क्षेत्र में यह रूप 'भुवाने की बोली' के नाम से प्रसिद्ध है।

मध्यवर्ती क्षेत्र

इस क्षेत्र के अंतर्गत दतिया और पश्चिमी भाग तथा मध्य भाग में छतरपुर, झाँसी, टीकमगढ़, विदिशा (कुछ भाग छोड़कर) सागर, दमोह, जबलपुर, (कटनी तहसील के अतिरिक्त) रायसेन, होशंगाबाद (सिवनी हरदा के अतिरिक्त) और नरसिंहपुर का जिले का स्थान है। यह संपूर्ण क्षेत्र बुंदेलीभाषी क्षेत्र के मध्य स्थित है, जिससे इसकी सीमावर्ती बोलियाँ इस भाग में प्रचलित बुंदेली को प्रभावित न कर सकी। इस दृष्टि से इसे 'शुद्ध बुंदेली' का क्षेत्र कहा जा सकता है।

ऐसी कोई भी भाषा या बोली नहीं है, जिसमें किसी दूसरी बोली या भाषा का प्रभाव न पड़ा हो, अतः किसी भाषा या बोली को पूर्ण शुद्ध नहीं कहा जा सकता। पर यहाँ पर बुंदेली के शुद्ध रूप से तात्पर्य है– जिसमें दूसरी भाषा का प्रभाव नाममात्र का ही हो, वही शुद्ध बुंदेली है।

बुन्देली का उद्भव और विकास

भाषाविज्ञान के सिद्धान्तों के अनुसार बुंदेली का उद्भव

आज भारत के जिस प्रदेश को बुन्देलखण्ड कहा जाता है और जिसकी लोकभाषा को बुन्देली कहा जाता है, वह प्रागैतिहासिक काल में भी वर्तमान था, उस समय नाम चाहे जो कुछ भी रहा हो। डॉ. हरदेव बाहरी ने लिखा है– 'यह बात अंतःसाक्ष्य से सिद्ध है कि हमारे हिन्दी प्रदेश में आर्यों का प्राचीनतम निवास स्थान सारस्वत प्रदेश था, जिसे ब्रह्मावर्त या ब्रह्मपीठ कहा गया है। यहाँ पर ही ऋग्वेद का सम्पादन हुआ है। इसके दक्षिण और पूर्व में अनेक अनार्य जातियों का निवास था और दावे से कहा जा सकता है कि उनकी बोलियाँ एकरूप नहीं थीं। उन जातियों में कुछ सभ्य थीं और कुछ असभ्य। असभ्य जातियों में कोई बड़े राजनैतिक संगठन नहीं हुआ करते थे, अतः उनमें अनेक बोलियाँ प्रचलित थीं। जब वैदिक अथवा संस्कृत भाषा आर्यों की शक्ति और संस्कृत के साथ–साथ हिन्दी प्रदेश के तत्कालीन आदिवासियों पर छाने लगी, तो वे बोलियाँ अकस्मात लोप नहीं हो गईं, बल्कि संस्कृत को अपना अंशदान देती हुई धीरे–धीरे उसमें विलीन होती गईं। नये क्षेत्रों में आकर बसने वाले आर्य लोग अपने साथ साहित्यिक भाषा के साथ अपनी–अपनी बोलियाँ भी लाये। इस तरह आर्यों और अनार्यों की बोलियों का विलयन हुआ। इस विलयन की प्रक्रिया में बोलियों के कितने स्थानीय और जातीय रूप बने, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती।'

डॉ. हॉनार्ल के अनुसार 'पंजाबी, राजस्थानी और पूर्वी हिन्दी प्रथम आर्य– समुदाय की और पश्चिमी हिन्दी द्वितीय आर्य–समुदाय की भाषा थी।' डॉ. हॉनार्ल ने तत्कालीन आर्यों द्वारा प्रयुक्त भाषाओं को ही पश्चिमी हिन्दी और पूर्वी हिन्दी कह दिया है। ये

नामकरण वास्तव में अपभ्रंशकाल के उत्तरार्द्ध के हैं। डॉ. ग्रियर्सन ने यह स्वीकार किया है कि 'भारत के भाषात्मक इतिहास के प्रारंभ में ही भारतीय आर्य बोलियों के दो समूह हो गये थे। एक मध्यवर्ती प्रदेश की बोलियों का समूह और दूसरा बाह्यवृत्त की बोलियों का समूह था।'

डॉ. ग्रियर्सन ने बोलियों के जिस समूह को मध्यवर्ती प्रदेश में प्रचलित बतलाया है, उन्हीं में से कोई बोली अथवा उपबोलियाँ उस काल में वर्तमान बुन्देलखण्ड के स्थान में बोली जाती होगी। डॉ. ग्रियर्सन ने लिखा है कि 'पतंजलि के काल तक उत्तर भारत में अनेक बोलियाँ प्रचलित थीं। ये बोलियाँ वेदों के रचनाकाल में क्रमशः विकसित होती जा रही थी। संस्कृत का जन्म इन्हीं में से एक बोली का विकास था। इस नवीन भाषा का जन्म ब्राह्मणों के प्रभाव में द्वितीय भाषा के रूप में हुआ था। समय के साथ यह भाषा मध्यभारत तक फैल गयी, इसे मध्यकालीन लेटिन के समान महत्त्व प्राप्त हो गया। शताब्दियों तक आर्यों की परस्पर व्यवहार की भाषाएँ प्राकृत कहलाईं, जबकि संस्कृत एक बनायी गयी अप्राकृत भाषा थी। ये ही प्राकृत वैदिक काल में देश के विभिन्न भागों में लोकभाषाओं के रूप में प्रचलित थीं और इनका संपादित रूप ही प्रथम प्राकृत कहलाया। इन लोकभाषाओं के रूप में जिन प्राकृतों का संस्कृत के साथ विकास हुआ, इनका व्याकरण बना और इस प्रकार उन्हें साहित्यिक रूप प्राप्त हुआ। प्राकृत का यही रूप द्वितीय प्राकृत कहलाया।

डॉ. ग्रियर्सन ने इन लोकभाषाओं के रूप में प्रचलित विभिन्न प्राकृतों का नाम निर्देश नहीं किया है। प्राकृत–काल (500 ई. पूर्व से लगभग 500 ई.) तक में हमें जिन प्राकृतों का उल्लेख मिलता है, वह क्षेत्रवाची हैं। उत्तर भारत में प्रचलित प्राकृतों के तीन नाम मिलते हैं–उत्तर–पश्चिमी प्राकृत मध्यदेशीय प्राकृत और प्राच्य।

नाट्यशास्त्र के रचयिता भरत ने प्राकृतों के सात प्रकार, साहित्य–दर्पणकार ने बारह प्राकृत, लंकेश्वर के रचयिता ने सोलह और प्राकृतचंद्रिकाकार ने सत्ताइस प्रकार बतलाये हैं। ये भेद भौगोलिक आधार पर ही जान पड़ते हैं, अतः उस काल में बुन्देलखंड कहे जाने वाले भू–भाग में प्रचलित लोकभाषा के रूप में प्राकृत को 'मध्यदेशीया प्राकृत' कहा जा सकता है। इसी प्राकृत के मूल में बुन्देली के उद्‌गम का स्रोत है।

प्राकृत के प्रथम विकास काल में ही पालि का बुन्देलखंड में प्रवेश हो गया था और इस क्षेत्र की लोकभाषा उसकी प्रकृति भी ग्रहण करने लगी थी, किन्तु उसी समय नाग, वाकाटक आदि राजवंशों के राजाओं द्वारा जिस धार्मिक आन्दोलन का सूत्रपात हुआ और जिसके परिणाम स्वरूप प्राचीन वैदिक धर्म एक नये स्वरूप (पौराणिक) में

आविर्भूत हुआ। उससे इस भू–भाग में पालि का विकास अवरुद्ध हो गया और उसके स्थान में संस्कृत को पुनः साहित्यिक भाषा का रूप प्राप्त हुआ और प्राकृत अन्य बोलियाँ लोकवाणी का माध्यम बनी।

भारत में प्रवेश करने वाला द्वितीय आर्य–समुदाय प्रथम आर्य–समुदाय से अधिक सुसंस्कृत था। इस समुदाय के लोगों ने प्रथम समुदाय के लोगों को घृणात्मक शब्दों से 'पिशाच' कहा था। इन्हीं पिशाचों की भाषा 'पैशाची' कही गयी है। इसी पैशाची भाषा में 'बड्‌ड कहा' की रचना हुई। इसकी रचना विन्ध्यप्रदेश में हुई, तो यह स्वीकार करना पड़ेगा कि ईसा की प्रथम शती में बुन्देलखण्ड में कोई ऐसी प्राकृत लोकभाषा प्रचलित थी, जिसमें पैशाची–प्राकृत की प्रकृति विद्यमान थी। श्री हरिहरप्रसाद द्विवेदी ने यही मत व्यक्त किया है। व्याकरणकार वररुचि ने 'पैशाची प्रकृतिः शौरसेनी' लिखकर पैशाची की प्रकृति का शौरसेनी से साम्य बतलाया है। इस विवेचन के पश्चात् हम प्राकृतकाल में बुन्देलखण्ड की लोकभाषा शौरसेनी के एक रूप 'मध्यदेशीया प्राकृत' होने के निष्कर्ष पर पहुँचते हैं।

संवत् 1500 से 1000 वि. तक का समय भाषा की दृष्टि से 'अपभ्रंशकाल' कहा गया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है– 'भरतमुनि (तीसरी शती) ने अपभ्रंश का नाम न देकर 'देशभाषा' भी कहा है। वररुचि के 'प्राकृतप्रकाश' में भी अपभ्रंश का उल्लेख नहीं है। अपभ्रंश का नाम पहले–पहल वलभी के राजा धारसेन द्वितीय के शिलालेख में मिलता है, जिसमें उसने अपने पिता गुहसेन (वि.स.650 के पहले) को संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश तीनों का कवि कहा है। भामह (विक्रम 7 वीं शती) ने भी तीनों भाषाओं का उल्लेख किया है। इस प्रकार अपभ्रंश या प्राकृताभास हिन्दी में रचना होने का पता हमें विक्रम की सातवीं शताब्दी में चलता है।' डॉ. उदयनारायण तिवारी ने 600 ई. (सं. 657 वि.) से अपभ्रंशकाल स्वीकार किया है और इसका विस्तार क्षेत्र राजस्थान, गुजरात, पश्चिमोत्तर भारत, बुन्देलखण्ड, बंगाल और दक्षिण में मान्यखेट तक बतलाया है।

इन मान्यताओं के अनुसार अपभ्रंशकाल स्थूल रूप से सन् 500 से 1000 ई. तक मानना उचित है। इसका कारण यह है कि सन् 500 ई. के आस–पास प्राकृत लगभग समाप्त हो गयी थी और वह लोकभाषा अपभ्रंश के रूप में परिवर्तित होने लगी थी। डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि–'यह बात स्मरण रखने योग्य है कि यद्यपि प्राकृत में लिखे गये काव्यों के बाद ही अपभ्रंश भाषा में काव्य लिखे गये हैं, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि प्राकृत नाम की कोई भाषा पहले बोली जाती थी और अपभ्रंश नाम की

भाषा बाद में बोली जाने लगी। वास्तव में अपभ्रंश लोक–प्रचलित भाषा का नाम है, जो विभिन्न समयों में विभिन्न रूपों में बोली जाती थी।

अग्रांकित विवरण से 'बुन्देली की उद्‌भव कालीन भाषायी पृष्ठभूमि' इस प्रकार स्पष्ट होती है– बुन्देली शौरसेनी अपभ्रंश के एक रूप 'मध्यदेशीया' से विकसित पश्चिमी हिन्दी की एक बोली है। इसे हम इस प्रकार से दर्शा सकते हैं– शौरसेनी अपभ्रंश (मध्यदेशीया) > पश्चिमी > हिन्दी > बुन्देली।

प्रथम सोपान शौरसेनी अपभ्रंश जनभाषाओं का विकास अपभ्रंश कहलायी। आध ुनिक विद्वानों ने शौरसेनी अपभ्रंश, मागधी अपभ्रंश, अर्द्धमागधी अपभ्रंश, महाराष्ट्री अपभ्रंश और पैशाची अपभ्रंश ही अपभ्रंश के प्रमुख प्रकार स्वीकार किये गये हैं। इनमें से शौरसेनी अपभ्रंश ही मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा और आधुनिक आर्यभाषा हिन्दी के मध्य की कड़ी है। इसके एक ओर शौरसेनी प्राकृत और दूसरी ओर प्राचीन हिन्दी है।

शौरसेनी अपभ्रंश को 'पश्चिमी अपभ्रंश भी कहा जाता है। इसके अंतर्गत गुजरात तथा राजस्थान सहित आज का हिन्दी प्रदेश है।' यहीं शौरसेनी का विकास ग्यारहवीं शती में प्राचीन हिन्दी के रूप में हुआ। वैसे तो सातवीं शती में यह अपना मूलरूप परिवर्तित करती हुई क्रमशः हिन्दी उन्मुख होती जा रही थी, जैसा कि हमें अपभ्रंश के तत्कालीन बौद्ध और जैन कवियों की रचनाओं से ज्ञात होता है। पर इसका स्पष्ट रूप हमें ग्यारहवीं शती में ही हिन्दी के रूप में विकसित परिलक्षित होता है।

बुन्देली का विकास

अन्य भाषाओं की तरह ही बुन्देली का भी विकास क्रमशः हुआ है। विकास की जब हम चर्चा करते हैं, तब हमारे सामने वह पूरा क्षेत्र बुन्देलखण्ड आ जाता है, जहाँ बुन्देली का जन्म हुआ और क्रमशः यह भाषा विकसित हुई। बुन्देलखण्ड जिसे प्राचीन मध्यदेश कहा जाता है, कालपी में वाल्मीकि–आश्रम, जालोन में परासर कृष्ण वेदव्यास का स्थान आदि के लिए ही नहीं, बल्कि उन स्थानों के लिए भी यह भूमि प्रसिद्ध है जो महाभारत और रामायण में वर्णित हैं। 'चेदि' जनपद जहाँ पुराणकालीन बुन्देली सीमा का परिचय कराता है, वहीं चन्देल राज्य की दसवीं और ग्यारहवीं शताब्दी की सीमाएँ हमारे समक्ष आती हैं। चेदि जनपद में यमुना और नर्मदा के मध्य का भाग था। चंदेल काल में नर्मदा के उत्तर पूर्व में तमसा तक, पश्चिम में वेत्रवती और उत्तर में यमुना के विशेष भाग थे। इसी क्षेत्र के अंतर्गत ग्वालियर, ओरछा, छतरपुर और पन्ना जैसे राज्यों

को सांस्कृतिक केन्द्रों के रूप में विभिन्न शताब्दियों तक प्रसिद्धि मिली है जो संगीत, धर्म, उपदेश और साहित्य के माध्यम से आई है। इस समय का व्यापक भाषा–स्वरूप चौदहवीं शताब्दी की भाषा से भिन्न है। चौदहवीं और पंद्रहवीं शताब्दी तक भाषा का एक निश्चित रूप बन चला था, जिसकी झलक विष्णुदास, सूर तथा तुलसी जैसे कवियों के साहित्य में मिलती है। डॉ. कृष्णलाल हंस ने बुन्देली के विकास के संदर्भ में चर्चा करते हुए लिखा है– 'बुन्देली का विकास तीन रूपों में हुआ – काव्यभाषा के रूप में, राजभाषा के रूप में और लोकभाषा के रूप में।' इस प्रकार 'डॉ. कृष्णलाल हंस' के अनुसार बुन्देली के तीन रूप विकास परम्परा को आगे बढ़ाते हैं। अपनी पुस्तक 'बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप' में डॉ. कृष्णलाल ने इन तीनों रूपों की विस्तृत चर्चा की है।

काव्यभाषा के रूप में

बुन्देली एक लोकभाषा अथवा बोली मानी जाती है। बुन्देली और ब्रज दोनों का विकास लगभग एक साथ हुआ है, परंतु ब्रज में पर्याप्त साहित्य रचना होने के कारण उसे मध्यकाल में भाषा का रूप मिल गया था, परंतु आरंभ में और वर्तमान में बुन्देली एक लोकभाषा के रूप में सीमित रह गयी। ब्रज में पर्याप्त साहित्य पाया जाता है। दूसरी ओर बुन्देली है जो ब्रज के समकक्ष होते हुए भी अपने आरंभ काल से अब तक लोक भाषा ही बनी रही। इसे भक्ति के माध्यम के रूप में विकसित होने का अवसर न मिला, पर बुन्देलखण्ड के राजाओं के दरबार में बड़ी संख्या में कवि रहे हैं। ग्वालियर के राजा रामसिंह तोमर की सत्ता समाप्त होने पर उनके आश्रित कवियों ने बुन्देलखण्ड के राजाओं का ही आश्रय ग्रहण किया और वे ससम्मान काव्य रचना करते रहे। उस समय के इन कवियों की भाषा क्या रही होगी, यह कहना मुश्किल है, एक अनुमान के अनुसार आरंभ में इनके काव्य की भाषा प्रधानतः मध्यदेशीय हिन्दी ही रही होगी। सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी के कवियों को ब्रज अथवा बुन्देली का कवि मान लिया जाता है। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि बुन्देली अपने विकसित रूप में सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी के बाद ही सामने आ पाती है। काव्यभाषा के रूप में जब हम बुन्देली के विकास की चर्चा करते हैं, तब हमारे सामने पूरे बुन्देलखण्ड के सोलहवीं शताब्दी के बाद के कवि आते हैं। सबसे पहले ओरछा दरबार के कवियों की चर्चा की जाती है। डॉ. कृष्णलाल हंस ने लिखा है– 'बुन्देलखण्ड में एक ऐसी कवि परंपरा सोलहवीं शती से ही रही है, जिनके कवियों का हिन्दी के काव्य साहित्य के विकास और समृद्धि में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।' महाराज भारतीचंद्र (संवत् 1588–1611 वि.) के आश्रय में अनेक कवि रहे हैं, जिनमें गुलाब कवि और मंसाराम विशेष उल्लेखनीय

हैं। कवि गुलाब का 'सेरबध' तथा मंसाराम के 'सरोदय', 'युद्ध विजय', 'अजपा जोग' तथा 'आवागमन मिटावानी' नामक काव्य कृतियाँ उपलब्ध हैं। इन्हीं के शासन काल में खेमराज ब्राह्मण ने 'प्रताप हजारा' (संवत् 1590) की रचना की थी, जिसमें महाराज रूद्रप्रताप, उनके पुत्रों तथा उनकी राजधानी के वैभव का चित्रण किया गया है। पूर्ण कृति की भाषा बुन्देली है।

राजभाषा के रूप में विकास

बुन्देली हिन्दी की एक ऐसी भाषा मानी जाती है जो लगातार चार सौ वर्षों तक राजभाषा के रूप में स्थापित रही है। 'बुन्देली अथवा बुन्देलखण्ड की 'बोली' तो अभी भी कहा जाता है, किन्तु हिन्दी की बोलियों में बुन्देली ही एक ऐसी बोली है, जिसे लगातार चार सौ वर्षों तक राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित होने का सौभाग्य प्राप्त रहा है। इससे स्पष्ट होता है कि बुन्देली बुन्देलखण्ड के राजाओं के राज्यकार्य, हिसाब–किताब और परस्पर पत्र व्यवहार की भाषा रही है। उस समय के सभी राजकार्य बुन्देली में ही होते थे, जैसे – सनदें, इकरारनामें, ताम्रपत्र, शिलालेख, राजकीय एवं व्यक्तिगत पत्र व्यवहार आदि। इससे स्पष्ट होता है कि बुन्देली राजभाषा के रूप में काफी समृद्ध रही है।

लोकभाषा के रूप में विकास

बुन्देली का काव्यभाषा और राजभाषा के रूप में जो विकास हुआ है, वह बुन्देली की समृद्धि को दर्शाता है। इसी तरह लोकभाषा के रूप में भी बुन्देली का विकास निःसंदेह अविस्मरणीय है। लोकभाषा के रूप में विकास बतलाने की दृष्टि से दो विधाएँ मानी जाती हैं पद्य और गद्य। पद्य के रूप में बुन्देली में लोकगीतों का समृद्ध भण्डार है और गद्य के रूप में लोककथाओं, लोकोक्तियों, मुहावरों और बुझौवलों का अंबार है। लोकगीत के रूप में बुन्देली में धार्मिक गीतों के अंतर्गत भजन, भगतें, भोला के गीत, उपवास, व्रत, नौरता, तीर्थयात्राएँ आदि से संबंधित गीत मिलते हैं। सामाजिक गीतों में सोहर, संस्कारगीत, त्योहारगीत, ऋतुगीत, प्रेमगीत, होलीगीत आदि आते हैं। इसके साथ ही बुन्देली में लोकगीतों की एक ऐतिहासिक परंपरा भी रही है, जिसमें वीरगाथाओं से पूर्ण गीत मिलते हैं। साथ ही विविध त्योहारों और ऋतुओं से संबंधित गीत भी कम नहीं हैं।

लोककथाओं की दृष्टि से संबंधित कथाएँ, पशु–पक्षियों से संबंधित कहानियाँ, जादू की कहानियाँ, परियों और अप्सराओं से संबंधित कहानियाँ, साधु–फकीरों से

संबंधित कहानियाँ, कल्पित राजा–रानियों और राजकुमारों से संबंधित कहानियाँ, ऐतिहासिक कहानियाँ, नीति और सिद्धान्तों पर प्रकाश डालने वाली कहानियाँ, मानव जीवन के सुख–दुःख और विविध समस्याओं पर आधारित कहानियाँ आदि मिलती हैं। लोकोक्तियों और मुहावरों के साथ–साथ बुझौवल आदि की दृष्टि से भी बुन्देली बोली समृद्ध रही है। इस प्रकार बुन्देली के विकास की जब हम चर्चा करते हैं, तब कृष्णलाल हंस के द्वारा बुन्देली विकास के तीनों रूप हमारे सामने आ जाते हैं। बुन्देली का विकास इन्हीं तीनों के अंतर्गत क्रमशः होता है। बुन्देली सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में राजभाषा के रूप में स्थापित रही है। बुन्देली एक ऐसी बोली है, जिसे चार सौ वर्षों तक राजभाषा रहने का गौरव प्राप्त रहा है।

बुन्देली के रूप और स्थान

बुन्देली एक विस्तृत भू–भाग की भाषा है। विस्तृत रूप होने के कारण इसमें क्षेत्रीय स्तरों पर सांस्कृतिक विचारों, परम्पराओं मान्यताओं, रीति–रिवाजों आदि का आदान–प्रदान होता है। यमुना के उत्तरी भू–भाग से लेकर नर्मदा के दक्षिण भू–भाग में क्षेत्रीय विविधता के परिणामस्वरूप बुन्देली भाषा की क्षेत्रीयता के विभिन्न स्वरूप हमें प्राप्त होते हैं। कुछ निश्चित समान मूल प्रवृत्तियों के बावजूद स्थानीय विशेषताओं के कारण यह (बुन्देली भाषा) स्थानीय रूप ग्रहण करती है, जिन्हें हम उपबोली के रूप में परिभाषित कर सकते हैं या इन्हें हम बोली के क्षेत्रीय रूप भी कह सकते हैं।

बोली की इस विविध क्षेत्र रूपावली को डॉ. कृष्णलाल हंस ने अपनी पुस्तक 'बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप' में चार श्रेणियों में विभाजित किया है– परिनिष्ठित बुन्देली, शुद्ध बुन्देली, मिश्रित बुन्देली और विकृत बुन्देली

इन चार प्रकारों के अंतर्गत हंस जी ने बुन्देली की क्षेत्रीयता को स्पष्ट किया है। बुन्देली भाषा के रूपों का उपर्युक्त श्रेणीकरण अनावश्यक प्रतीत होता है, क्योंकि –

1. परिनिष्ठत बुन्देली इस आधार पर शुद्ध बुन्देली से अलग बताना असंगत है कि कालविशेष में इसे रचनाकारों ने अपनी काव्यभाषा भी बनाया है। वस्तुतः बुन्देली का विकास क्रमशः हुआ है, उसमें समय–समय पर परिवर्तन आए हैं।

2. शुद्ध बुन्देली पर अन्य सीमावर्ती बोलियों के प्रभाव के कारण वह अपना मूल रूप खो देती है, अथवा अन्य बोलियों के शब्दों से संपृक्त हो जाती है। इसलिये वह मिश्रित है और यही मिश्रण उसे विकृति प्रदान करता है। उपर्युक्त विवेचना के आधार पर बुन्देली को दो श्रेणियों में विभक्त किया जाता है।

शुद्ध बुन्देली

यह बुन्देली का वह रूप है, जिसके अंतर्गत दतिया, झाँसी, टीकमगढ़, छतरपुर का मध्य और पश्चिमी भाग, विदिशा, सागर, जबलपुर (कटनी तहसील को छोड़कर), दमोह, रायसेन, होशंगाबाद (सिवनी और हरदा तहसील को छोड़कर) एवं नरसिंहपुर क्षेत्र आते हैं।

संपूर्ण विश्व में प्रचलित भाषाओं में कोई भी भाषा अथवा बोली पूर्णतया शुद्ध नहीं कही जा सकती, क्योंकि वह न्यूनाधिक मात्रा में आसपास की भाषा अथवा बोलियों से प्रभावित होती है। लेकिन यह थोड़ा बहुत प्रभाव उसको शुद्ध रूप में पूर्णतः अलग नहीं करता। कमोबेश रूप में यही तथ्य बुन्देली के संदर्भ में भी लागू होते हैं। बुन्देली में सर्वगृहीत प्रवृत्तियों के सिवा स्थानीय प्रभाव इसके अलग–अलग रूपों को प्रस्तुत करते हैं। कुछ क्षेत्र ऐसे भी हैं जहाँ सीमावर्ती बोलियों के प्रभाव से बुन्देली शत–प्रतिशत मुक्त है और इसी क्षेत्र की बुन्देली शुद्ध अथवा मानक बुन्देली कही जा सकती है।

शुद्ध बुन्देली के क्षेत्र की सामान्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

1. भविष्यकालीन हिन्दी के गा, गी, गे रूपों का बुन्देली में अभाव है। उदाहरण के लिए –चढ़ चुका होगा –हुइए। चढ़ेगा–चढ़है। इसी प्रकार था, थी, थे के स्थान पर ता, ती, ते रूपों का प्रयोग व्यवहृत है। उदाहरण के लिए–रजवाड़ा नहीं था–रजवाड़ों नई हतो। फोड़ ली थी– फोर लई हतीं। उड़ जाते थे–उड़ जातते।

2. कर्मकारक परसर्गों में 'खों' और 'कों' रूपों का प्रचलन बुन्देली के मध्यवर्ती क्षेत्र की प्रमुख विशेषता है। उदाहरण के लिए– बहू बेटी को–बहुअन बिटियन खों, विधि की गति को– विध की गत कों।

3. बुन्देली के शुद्ध रूप में संज्ञा का बहुवचन रूप 'न' और 'अन' प्रत्यय लगाकर बनाया जाता है। जैसे– राजाओं ने–राजन ने, आँखों–आँखन, सैनिक–सैनिकन, लरकियन–लरकन, सैनिकों–सेनकन, लड़कों–लरकन, लड़कियों–लरकियन।

4. कारक के कर्म में कारण से 'सें' के रूप में ही सदैव प्रयोग किया जाता है। यह प्रकृति बुन्देली की मुख्य विशेषता है– प्रजा से–परजा सें, सभी से–सबई सें।

5. हकार लोप की प्रवृत्ति एक सामान्य विशेषता है, यही विशेषता उसे शुद्ध बुन्देली

प्रमाणित करती है– कहता–केत, कात, कहा–कई, उन्होंने–उननें, बहुत ही–भौतई।

6. शुद्ध बुन्देली में लोच और माधुर्य का अपूर्व संगम है। अनेक भाषाशास्त्री इसे 'मधुर बोलियों का सिरमौर' कहते हैं। यह माधुर्य कठोर वर्ण 'ड' बुन्देली में 'र' एवं 'ण' के 'न' में परिवर्तित होने के कारण दिखायी देता है। जैसे–फोड़ लीं–फोर लईं, लड़ने–लरबे, बिगाड़– बिगार।

7. अर्द्ध अक्षर को पूर्ण करके बोलने, लिखने की प्रवृत्ति पायी जाती है। जैसे– प्रजा – परजा, कर्जा–करजा, भ्रम–भरम।

8. शुद्ध बुन्देली में स्थान–स्थान पर अनुस्वरित उच्चारण दिखायी देता है – सुना–सुनों/सुनीं, कोई–कोनउँ/ कोउ/ काउ, उसने–ऊने/ उननें/ बानें, भेदी ने–भेदी नें।

उपर्युक्त विशेषताएँ बुन्देली के मध्यवर्ती क्षेत्र की हैं, जो कि भाषायी दृष्टि से मानक बुन्देली अथवा शुद्ध बुन्देली का क्षेत्र कहा जाता है, किन्तु ये ही विशेषताएँ जब इसी रूप में प्राप्त नहीं होतीं और अन्य प्रभावों सहित प्रयुक्त होती हैं, तब ऐसे रूप को हम बुन्देली का मिश्रित रूप कहते हैं।

मिश्रित बुन्देली

प्रत्येक भाषा या बोली का एक सर्वस्वीकृत रूप तो होता ही है और दूसरा मिश्रित रूप होता है। यही रूप उसे अन्य बोली या भाषा से पृथक् अस्तित्व प्रदान करता है। लेकिन इतने विशाल जनसमूह की अपनी विशिष्टताएँ होती हैं, जो उसके बोली रूप को भी प्रभावित करती हैं। परिणामतः उसमें विशिष्ट प्रभावगत मिश्रण उपस्थित होता है। इसी कारण इस प्रकार के बोली रूप को हम मिश्रित बोलीरूप कहते हैं। बुन्देली के मिश्रित रूप को दो बिन्दुओं पर देखा जा सकता है –

स्थानीय शब्दावली का प्रभाव

क्षेत्र विशेष एवं जाति विशेष की अपनी विशिष्ट कार्यशैली एवं परंपरा होती है, जिसका प्रभाव वहाँ की भाषा अथवा बोली पर भी स्पष्ट परिलक्षित होता है। बुन्देली पर भी क्षेत्रीयता का प्रभाव हुआ है, जिसे हम मिश्रित बुन्देली के रूप में परिभाषित कर सकते हैं। उदाहरण के लिये बालाघाट जिले के लोधियों, पँवारों और छिन्दवाड़ा जिले के एवं नागपुर के कोष्ठियों एवं कुम्हारों द्वारा प्रयुक्त होती बुन्देली।

सीमावर्ती बोलियों का प्रभाव

बुन्देली क्षेत्र के चारों ओर विभिन्न बोलियों का प्रचलन है। इसके उत्तर में ब्रज–कन्नौजी, दक्षिण में मराठी पूर्व में अवधी–बघेली–छत्तीसगढ़ी एवं पश्चिम में निमाड़ी एवं मालवी बोलियाँ प्रचलन में हैं। परस्पर संपर्क के कारण इन बोलियों का प्रभाव बुन्देली पर हुआ है। परिणामतः इनके मिश्रण से बुन्देली के नये रूपों का जन्म हुआ है जो बुन्देली के मिश्रित रूप हैं। अन्य बोलियों के संसर्ग से बुन्देली के जो नये रूप परिलक्षित होते हैं, उनका विश्लेषण निम्नानुसार है –

बुन्देली का पूर्वी रूप

बुन्देली के पूर्वी हिस्से में जालौन, हमीरपुर, छतरपुर का पूर्वी भाग, पन्ना एवं जबलपुर जिलों का उत्तरी भाग सम्मिलित किया जाता है। पूर्वी हिस्से के पश्चिमोत्तर में शुद्ध बुन्देली का जालौन जिला, बुन्देली एवं अवधी के संयुक्त रूप का कन्नौजी भाषी, कानपुर उत्तरी सीमा से बैसवाड़ी भाषी, पूर्वोत्तर क्षेत्र में फतेहपुर जिले में बघेली, पूर्वी सीमा से दक्षिणी एवं दक्षिण पूर्वी सीमा क्षेत्र में छत्तीसगढ़ी और बुन्देली भाषा का क्षेत्र, पश्चिमी सीमा से जुड़ा हुआ है। सीमावर्ती विभिन्न बोलियों के संपर्क से बुन्देली ने अनेक अभिनव रूप धारण किये हैं।

लोधान्ती एवं राठौरी रूप

हमीरपुर जिले का पश्चिमोत्तर भाग, राठ तहसील तथा जालौन जिले के उरई तहसील में बुन्देली का प्रचलित रूप है। इस रूप को लोधियों एवं राठौरों द्वारा अधिक संख्या में प्रयोग करने के कारण क्रमशः लोधान्ती एवं राठौरी कहा जाता है। डॉ. जार्ज ग्रियर्सन ने हमीरपुर एवं जालौन जिलों को मिलाकर इसके बोलने वालों की संख्या 1,45,000 बतलायी है, आज इनकी संख्या बढ़ गयी है। इसकी प्रमुख विशेषताओं में 'ओ' के स्थान पर 'औ', 'वह' के स्थान पर 'बो', 'यह' के स्थान पर 'जो' एवं 'कों', 'खों' के स्थान पर 'काँ', 'खाँ' प्रचलित है।

बनाफरों की बनाफरी बुन्देली

बनाफर क्षत्रियों के द्वारा बोली जाने वाली बुन्देली बनाफरी नाम से अभिहित की जाती है। इस रूप के अन्तर्गत हमीरपुर जिले का दक्षिणी पूर्वी भाग आता है।

बनाफरी का भी संपूर्ण क्षेत्र समान नहीं है। इसके साथ वर्तमान में प्रचलित बनाफरी अपने प्राचीन स्वरूप से भिन्न है। बनाफरी के प्राचीन स्वरूप में उर्दू, अरबी भाषा

के शब्दों के साथ बुन्देली के मिश्रण से युक्त शब्दों का प्रयोग मिलता हैं। उदाहरण के लिए 'नज़र' शब्द में बुन्देली का 'त' प्रत्यय लगाकर बना शब्द 'नजरत'/सलामें/परवानो, खत्म से खातमा/खतमई, आफत से आफतई/आफत में इसी प्रकार के शब्द हैं।

बनाफरी भी बघेली मिश्रित बुन्देली एवं बुन्देली मिश्रित बघेली दो रूपों में मिलती है। महोबा चरखारी क्षेत्र की बनाफरी इसी प्रकार की है, जिसमें बघेली का मिश्रण है। इसकी विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

1. अधिकांश स्त्रीलिंग संज्ञाएँ एकारान्त होती हैं एवं वे सानुनासिक हो जाती हैं। जैसे – लड़कियें।
2. ईकारान्त स्त्रीलिंग संज्ञा के बहुवचन रूप में (याँ) प्रत्यय लगाया जाता है। जैसे–मौंड़ी, मौंड़ियाँ।
3. अकारान्त पुल्लिंग संज्ञाएँ ओकारान्त उच्चरित होती हैं, जैसे बहुवचन रूप में एकारान्त हो जाती हैं। जैसे– घोरो – घोरे, गधरो – गधरे।
4. संबंधसूचक सर्वनाम बनाफरी में 'जे' अथवा 'ज्या' स्त्रीलिंग के लिये 'जा' तिर्यक रूप में 'जेह' 'जे' 'ज्या' होते हैं। 'सो' का रूप बघेली की तरह 'तो' अथवा 'तोन' होता है।
5. बनाफरी में कारकों के परसर्ग बुन्देली और बघेली दोनों के प्रयुक्त होते हैं।
6. व्यंजनों में 'न' के स्थान पर 'ल' उच्चरित होता है – जनम–जलम, नीम–लीम। इसके विपरीत–ल– के स्थान पर 'न' का प्रयोग भी प्रचलित है–लकड़ी–नकड़ी, लाने–नाने।
7. 'व' के स्थान पर 'म' का प्रयोग भी अनेक शब्दों में मिला है – दीवान – दीमान, जवान – जमान।
8. बनाफरी में बुन्देली के अन्य रूपों की तरह भविष्य कालवाची हौं, हो, हे, है, हैं, हाँ प्रत्ययों का प्रयोग होता है।
9. अपूर्ण भूतकाल क्रिया में 'हतो' अथवा 'रहे' रूपों का प्रयोग होता है।
10. बनाफरी की सामान्य भूतकालीन क्रिया के खड़ी बोली और पूर्वी हिन्दी की तरह

दो रूप होते हैं। इन दोनों रूपों में सकर्मक क्रिया होने पर कालरचना कर्मवाच्य में होती है। इस स्थिति में क्रिया के लिंग वचन कर्म के लिंग–वचन की तरह ही होते हैं अन्यथा क्रिया का लिंग पुरुष के अनुसार होता है। जैंसे–पुल्लिंग–मैंने मारोय (किसी पुल्लिंग को मारा), स्त्रीलिंग– मैंने मारयू (किसी स्त्रीलिंग को मारा), तृतीय पुरुष एक वचन में मारिस, मारुष का भी प्रयोग मिलता है।

11. पूर्ण भूतकाल में 'हौं' प्रत्यय का प्रयोग होता है, जो वास्तव में बुन्देली का भविष्यकाल द्योतक है। यथा– 'मैं मारहों' का अर्थ बुन्देली के अन्य रूपों 'मैं मारूँगा' होता है, किन्तु बनाफरी में इसका अर्थ होता 'मैंने मारा'। 'मारहों' के स्थान पर 'मारो हो' का भी प्रयोग होता है। कुछ स्थानों में 'हों' के स्थान पर 'हताये'– तथा 'हतोय' प्रत्यय का भी प्रयोग मिलता है। इन विशेषताओं के साथ बुन्देली–बघेली का पूर्ण प्रभाव देखा जा सकता है।

बुन्देली का कुन्द्री (कुण्डरी) रूप

केन नदी के पश्चिमी तटवर्ती भाग की बघेली (जो हमीरपुर जिले में स्थित है) को भाषा भौगोलिक आधार पर 'कुन्द्री' नाम से पुकारते हैं। इस बुन्देली रूप पर बुन्देली, बघेली और अवधी का प्रभाव मिलता है।

निभट्टा बुन्देली

निभट्टा, तिरहारी का ही एक रूप कहलाता है जो कि जालौन के पश्चिम एवं उत्तर के सीमावर्ती स्थानों में प्रचलित है। तिरहारी और निभट्टा में फर्क इतना है कि जहाँ निभट्टा बुन्देली प्रधान है, वहीं तिरहारी बघेली प्रधान है। इसके उत्तरी हिस्से पर कन्नौजी प्रभाव भी दिखायी पड़ता है।

तिरहारी बुन्देली

यमुना नदी के 'तीर' (किनारे या तट पर) पर बोले जाने के कारण ही इसे 'तिर–हारी' (तीरावाली) अथवा किनारे वाली बोली के रूप में जाना जाता है। इसके तीन जिले जालौन, हमीरपुर, बाँदा यमुना के दक्षिणी तट पर तथा फतेहपुर और कानपुर जिले उत्तरी तट पर हैं। लेकिन इन पाँच जिलों की तिरहारी भी अन्य बोलियों के प्रभाव के कारण भिन्न–भिन्न रूप लिये हुए है। उदाहरण के लिए जालौन और हमीरपुर जिले बुन्देली भाषी, बाँदा अवधी और बघेली से प्रभावित, कानपुर, कन्नौजी भाषी और फतेहपुर अवधी के रूप बैसवाड़ी का प्रभाव लिए हुए है। इसी प्रकार इन रूपों पर भी एक

सीमावर्ती बोली का प्रभाव दूसरी पर है। इस प्रकार कहीं तिरहारी बुन्देली प्रधान है तो कहीं अन्य बोली प्रधान है, लेकिन सभी रूप मिश्रित ही कहे जा सकते हैं।

पूर्वी क्षेत्र के अन्य रूप

1. पन्ना जिले की अजयगढ़ तहसील का बोलीरूप – इस तहसील का अधिकांश भाग शुद्ध बुन्देली के अन्तर्गत है, किन्तु इसका पूर्वी सीमावर्ती भाग एवं दक्षिणी पूर्वी भाग बघेली से जुड़ा होने के कारण इन हिस्सों में बघेली का मिश्रण मिलता है।

2. कटनी का बोलीरूप– कटनी क्षेत्र मुख्यतः बुन्देली सीमा के अधिक निकट है, इसी कारण यह बघेली प्रभावित बुन्देली का हिस्सा कहा जा सकता है।

3. जबलपुर तहसील का बोलीरूप – जबलपुर तहसील दक्षिण में सिवनी जिले से और पूर्व में नरसिंहपुर से संलग्न है। इसका पूर्वी भाग बघेली से और दक्षिणी भाग की बोली मण्डला के मिश्रित रूप से प्रभावित है, किन्तु दक्षिण और पश्चिमी भाग की बोली लगभग शुद्ध बुन्देली है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बुन्देली के पूर्वी हिस्से जालौन से लेकर दक्षिणी हिस्से जबलपुर तक के सभी बोलीरूप बघेली प्रभावित हैं। कहीं यह प्रभाव या मिश्रण कम है तो कहीं अधिक मात्रा में है, लेकिन कहीं भी शुद्ध रूप नहीं है। बघेली और बुन्देली का मिश्रित रूप ही प्रचलन में है, जो बुन्देली के मिश्रित रूप के अन्तर्गत ही है। इसलिए सभी पूर्व हिस्सों के बोलीरूपों को बघेली मिश्रित बुन्देली रूप ही कह सकते हैं।

बुन्देली का दक्षिणी रूप

बुन्देली के दक्षिणी क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों के बारे में भाषावैज्ञानिकों, विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान् जहाँ इसके क्षेत्र में बैतूल, छिन्दवाड़ा, सिवनी तथा बालाघाट जिले सम्मिलित करते हैं, वहीं कुछ विद्वान इस क्षेत्रान्तर्गत बैतूल जिले को छोड़ते हैं, तो कुछ बालाघाट जिले को दक्षिणी क्षेत्र के अंतर्गत सम्मिलित नहीं करते हैं।[2] रसेल ने बैतूल जिले की बोली को मालवी के अन्तर्गत रखा है, क्योंकि इस क्षेत्र के निवासी मालवी का प्रयोग ही करते हैं।

इसी प्रकार डॉ. ग्रियर्सन ने भारतीय भाषाओं के सर्वेक्षण के दौरान पाया कि बालाघाट जिले के बोलीरूप में बघेली एवं मराठी का संयुक्त रूप विद्यमान है। इसी कारण ग्रियर्सन ने इसे दक्षिण की विकृत बोलियों के अन्तर्गत स्थान दिया है।

दक्षिण क्षेत्र के बुन्देली रूप

छिन्दवाड़ा जिले का बुन्देली रूप :– (सूचक क्र.– 1)

छिन्दवाड़ा जिले को, बुन्देली के दक्षिणी क्षेत्र के अंतर्गत प्रमुखता से सम्मिलित किया जाता है। इस जिले के दक्षिण में नागपुर जिला जो मराठी भाषी है, उत्तरी सीमा पर नरसिंहपुर तथा होशंगाबाद का बुन्देली क्षेत्र, पश्चिमी में मालवी का बैतूल जिला एवं पूर्व में बुन्देली भाषी सिवनी जिला है। इसी कारण इस क्षेत्र के बुन्देली रूप की एक अजीबो–गरीब स्थिति बन गई है। सीमावर्ती क्षेत्रों को छोड़कर इसके मध्य भाग में ही बुन्देली का आधिक्य मिलता है। छिन्दवाड़ा जिले में भिन्न–भिन्न जातियों की प्रमुखता है और जन–जातियों की बोली बुन्देली होते हुए भी जातिगत विशिष्टता से सम्पृक्त है। इस कारण बुन्देली के इस क्षेत्र में विभिन्न जातिगत रूप विद्यमान हैं। इन्हीं बुन्देली रूपों को डॉ. ग्रियर्सन[3] ने विकृत बुन्देली रूपों की संज्ञा प्रदान की है, क्योंकि इनमें मराठी एवं बघेली के मिश्रण से अनेक नये शब्दों का निर्माण हुआ है। इस क्षेत्र में कोष्ठियों की कोष्ठी, किरारों की किरारी, कुम्हारों की कुम्हारी, ग्वालों की गाओली, रघुवंशियों की रघुवंशी जैसे बोलीरूप प्रचलित हैं।

यहाँ पर हम चौरई तहसील के कपुरधा ग्राम से प्राप्त बुन्देली का नमूना प्रस्तुत कर रहे हैं, जो बुन्देली भाषी सिवनी जिले के निकट है। यही कारण है कि यह स्थान बुन्देली के अधिक निकट है। यहाँ की बुन्देली की प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं –

1. बुन्देली के भविष्यकालीन रूप – खाऊंगा–खांहूँ, करूँगा–करहूँ, जाउँगा–जाहूँ आदि यहाँ मिलते हैं। 'हते' के लिए 'हिते' शब्द का प्रयोग स्थानीय वैशिष्ट्य का प्रतीक है।
2. कर्मकारक विभक्ति 'खौं' के स्थान पर 'खें' का प्रयोग मिलता है।
3. 'स्नान कर रही' के लिए 'खैररई' शब्द का प्रयोग स्थान वैशिष्ट्य का प्रतीक है।
4. 'अकारान्त' को 'ओकारान्त' एवं 'एकारान्त' का 'ऐकारान्त' बुन्देली की तरह ही विद्यमान हैं।
5. बुन्देली की एक विशेषता 'हकार' लोपीकरण है, परन्तु इस क्षेत्र का बोलीरूप शुद्ध बुन्देली नहीं तो बुन्देली के अधिक निकट अवश्य कहा जा सकता है।
6. लड़का के लिये टूरा, लड़की के लिये टूरी शब्द व प्रयोग।
7. बहुवचन के लिए अन प्रत्यय लगाया जाता है–दूरियों–दुरियन।

सिवनी जिले का बुन्देली रूप – (सूचक क्र.– 2)

सिवनी डिस्ट्रिक्ट गजेटियर में श्री रसेल ने इस जिले में बुन्देली बोलने वालों की संख्या तिरपन प्रतिशत बतलायी है, शेष मराठी एवं गोंडी बोलने वाले हैं। इसके पूर्व में 'छत्तीसगढ़ी'– बुंदेली का प्रभाव दिखायी देता है। बाकी सीमाओं पर छत्तीसगढ़ी एवं मराठी प्रभावित बुन्देली का रूप प्राप्त होता है। सिवनी का बरघाट क्षेत्र इसी प्रकार का मिश्रित क्षेत्र है।

बालाघाट जिले का बुन्देली रूप

जैसा कि हम पूर्व में स्पष्ट कर चुके हैं कि बालाघाट जिला बुन्देली के अन्तर्गत सम्मिलित नहीं किया जा सकता, क्योंकि इस क्षेत्र में मराठी मिश्रित बघेली का प्रयोग अधिक है। बालाघाट की बुन्देली के सम्बन्ध में सर ग्रियर्सन का मत है कि – 'बालाघाट में मराठी के एक रूप के अतिरिक्त पूर्वी हिन्दी के रूप बोले जाते हैं, जो बघेली के मिश्रित रूप हैं। इस जिले के लोधी जाति के लोग जो बोली बोलते हैं, वह बुन्देली और मराठी का मिश्रित रूप है।'[4]

बालाघाट गजेटियर के लेखक सी.ई.लो के मतानुसार इस जिले के आदिवासियों के अतिरिक्त हिन्दू परिवारों की बोली मराठी मिश्रित हिन्दी है। इनमें से इस जिले में बसे पँवार बघेली और मराठी मिश्रित बुंदेली रूप बोलते हैं और लोधी बुन्देली और मराठी का मिश्रित रूप बोलते हैं।

बुन्देली के पश्चिमी रूप

बुन्देली के पश्चिमी क्षेत्र के अंतर्गत शिवपुरी, गुना और विदिशा जिले का पश्चिमी भाग, सीहोर (आष्टा तहसील छोड़कर) भोपाल की सिवनी (मालवा) एवं होशंगाबाद की हरदा तहसीलें एवं मुरैना की श्योपुर तहसील (मुरैना का पश्चिमी भाग) आते हैं। विदिशा का पश्चिमी हिस्सा सीहोर तहसील का भी पश्चिमी क्षेत्र तथा होशंगाबाद के बुन्देली हिस्से का पश्चिमी भाग मालवी की सीमाओं को स्पर्श करता है। इसी तरह मुरैना की श्योपुर तहसील की उत्तरी एवं पश्चिमी सीमा से राजस्थान की पूर्वी सीमा, पूर्वी सीमा से मुरैना का भदावरी भाषा क्षेत्र तथा दक्षिण में राजस्थानी भाषी क्षेत्र स्थित है। इसी कारण इन सीमावर्ती बोलियों का प्रभाव बुन्देली पर है। इसी मिश्रण या प्रभाव के कारण बुन्देली ने विभिन्न क्षेत्रीय रूप धारण किये हैं। बुन्देली के पश्चिमी क्षेत्र के विभिन्न बुंदेली रूपों का जिलेवार विश्लेषण –

1. मुरेनई – मुरेनई वस्तुतः मुरैना जिले में प्रयुक्त किए जाने वाले बुन्देली रूपों का नाम है। मुरैना की बुन्देली के उत्तर, दक्षिण एवं पश्चिम की ओर राजस्थानी बोली का क्षेत्र है और यही कारण है कि इन सीमावर्ती हिस्सों की बुन्देली पर राजस्थानी का स्पष्ट प्रभाव है। बोली या भाषा की प्रवृत्ति होती है कि इसके क्षेत्रीय स्तर पर भी अनेक प्रक्षेत्र होते जाते हैं, यही प्रवृत्ति मुरेनई में भी देखी जा सकती है। मुरेनई के भी निम्न स्थानीय प्रक्षेत्र हैं –

अ. श्योपुरी – राजस्थानी सीमा के निकट होने से इस क्षेत्र में बुन्देली का कम राजस्थानी भाषा का प्रचलन अधिक प्रचलित है। इसी कारण हम इसे राजस्थानी प्रधान बुन्देली कह सकते हैं। इस क्षेत्र की बुन्देली में राजस्थानी, खड़ी बोली एवं बुन्देली के शब्दों का संयुक्त प्रचलन विद्यमान है।

ब. मुरैना की विजयपुरी – विजयपुरी मुरैना के विजयपुर प्रक्षेत्र की उपबोली है, जो कि ग्वालियर जिले में पश्चिमी सीमा एवं श्योपुर तहसील की पूर्वी सीमा के मध्य स्थित है। इसके एक ओर सिकरवारी तो दूसरी ओर खड़ी बोली प्रधान बुन्देली का ग्वालियरी रूप मौजूद है। यही कारण है कि इस क्षेत्र की बोली में ब्रज एवं मालवी दोनों बोलियों का संयुक्त प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

स. पश्चिमी मुरैना की बड़ौदई – मुरैना के दक्षिण और पश्चिम में बड़ौदा अवस्थित है। यहाँ पर प्रचलित बुन्देली रूप भी वस्तुतः राजस्थानी प्रधान बुन्देली कहा जा सकता है, जिसमें खड़ी बोली का भी योगदान है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पश्चिम मुरैना जिले की बोली बुन्देली–राजस्थानी प्रधान बुन्देली ही है। विजयपुर क्षेत्र से हम जैसे–जैसे पश्चिम की ओर बढ़ते जाते हैं, बुन्देली का प्रभाव कम अपितु राजस्थानी का प्रभाव क्रमशः बढ़ता जाता है। हम जैसे ही श्योपुर से पश्चिम की ओर बढ़ते हैं, वहाँ बुन्देली समाप्त सी प्रतीत होती है और राजस्थानी प्रारंभ हो जाती है।

शिवपुरी की पश्चिमी बुन्देली – (सूचक क्र.– 5)

बुन्देली के पश्चिमी रूपों के अन्तर्गत शिवपुरी का पश्चिमी क्षेत्र अवस्थित है। शिवपुरी का यह क्षेत्र राजस्थानी भाषा से संपृक्त हैं। फिर भी इस हिस्से के कई भाग ऐसे हैं जो बुन्देली प्रधान ही हैं। उदाहरण के लिए 'कोलारस'। कोलारस में बोली का गठन बुन्देली का ही है, जबकि थोड़ा बहुत प्रभाव राजस्थानी का है। मुरैना के पश्चिमी हिस्से की तरह शिवपुरी के पश्चिमी हिस्से में राजस्थानी का प्रभाव अत्यल्प है।

गुना की पश्चिमी बुन्देली – (सूचक क्र.– 6)

बुन्देली के पश्चिमी रूप के अन्तर्गत गुना के पश्चिमी क्षेत्र की सीमा से राजस्थानी की सीमा रेखा आकर मिलती है और इसी सीमा क्षेत्र के दक्षिण में मालवी का प्रभाव क्षेत्र स्थित है। इस प्रकार पश्चिमी गुना के पश्चिमी क्षेत्र में राजस्थानी एवं मालवी का प्रभाव एक साथ बुन्देली में मिलता है। तुलनात्मक प्रभाव की दृष्टि से इस क्षेत्र में राजस्थानी की अपेक्षा मालवी का प्रभाव अधिक मिलता है। इसलिये इस क्षेत्र की बुन्देली को मालवी प्रधान बुन्देली कहा जा सकता है।

विदिशा की पश्चिमी बुन्देली – (सूचक क्र.– 17)

पश्चिमी विदिशा दक्षिणी गुना की पूर्वी सीमा पर स्थित है। पश्चिमी विदिशा का क्षेत्र भी मालवी के प्रभाव से पूर्णतः वंचित नहीं है, चूँकि मालवी क्षेत्र से यहाँ तक आते–आते मालवी का प्रभाव नाममात्र ही रह जाता है। राजस्थानी सीमा भी यहाँ से दूर है, इसी कारण यह क्षेत्र बुन्देली प्रधान, अत्यल्प मात्रा में राजस्थानी एवं मालवी का प्रभाव लिये है और इसी कारण इसे बुन्देली के मिश्रित रूपों में स्थान दिया गया है।

पश्चिमी होशंगाबाद की बुन्देली – (सूचक क्र. 3)

पश्चिमी होशंगाबाद को भी बुन्देली भाषी क्षेत्र के अंतर्गत सम्मिलित किया जा सकता है। यद्यपि इस क्षेत्र में हरदा, सिवनी तहसीलें आती हैं। यहाँ बुन्देली प्रभावित मालवी अधिक है। इटारसी के पश्चिम की ओर क्रमशः बढ़ने पर मालवी का प्रभाव बढ़ता जाता है, जो कि धरमकुण्डी तक पहुँचते तक आधी बुन्देली एवं आधी मालवी के मिश्रण से युक्त है, जबकि सिवनी में यह प्रतिशत मालवी का अधिक है।

सीहोर का बुन्देली क्षेत्र

बुन्देली के पश्चिमी क्षेत्र के अंतर्गत सीहोर जिले को भी स्थान दिया जाता है। इस जिले के पश्चिमोत्तर में शाजापुर एवं पश्चिम में देवास जिला है जो कि मालवी भाषी है। इसी प्रकार मालवी भाषी राजगढ़ जिले की पूर्वी सीमा भी सीहोर से मिलती है। मालवी प्रभावित बुन्देली तक विदिशा जिला सीहोर की पूर्वोत्तर सीमा से जुड़ा हुआ है। इसी प्रकार सीहोर की दक्षिणी सीमा होशंगाबाद जिले की सिवनी तहसील की उत्तरी सीमा का स्पर्श करती है जो कि मालवी प्रधान बुन्देली का है। यद्यपि सीहोर जिले में बुन्देली बोली जाती है, लेकिन उसमें मालवी का मिश्रण अधिक है। इसलिए इस क्षेत्र की बोली को मालवी प्रधान बुन्देली का क्षेत्र कहा जा सकता है।

बुन्देली के पश्चिमी क्षेत्र के अन्तर्गत अनेक विद्वान आष्टा, भोपाल, हरदा आदि क्षेत्रों को भी सम्मिलित करते हैं, परन्तु आष्टा क्षेत्र में मालवी का स्पष्ट प्रभाव है। बुन्देली शब्दों का प्रयोग नाममात्र के लिए ही किया जाता है। इसी प्रकार भोपाल क्षेत्र में मुस्लिम सभ्यता एवं संस्कृति के प्रभाव के कारण यहाँ भी बुन्देली नाममात्र के लिये ही है और उस पर उर्दू एवं खड़ी बोली के प्रभाव का आधिक्य है। इसी तरह होशंगाबाद की हरदा तहसील में बुन्देली प्रभावित मालवी और निमाड़ी का मिश्रण है, जिसे 'भुवाने' नाम की बोलीरूप में जाना जाता है।

हम कह सकते हैं कि मिश्रित बुन्देली के पश्चिमी रूप के अंतर्गत जितने भी जिले या क्षेत्र हैं, उनमें से पचास प्रतिशत राजस्थानी प्रभावित तो पचास प्रतिशत मालवी प्रभावित क्षेत्र है। कहीं भी बुन्देली का शुद्ध रूप अथवा अन्य बोली का पूर्णतः शुद्ध रूप प्राप्त नहीं होता है। इसी कारण इन क्षेत्रों की बुन्देली को मिश्रित रूप के अन्तर्गत रखते हैं।

बुन्देली का उत्तरी रूप

डॉ. कृष्णलाल हंस ने अपने शोधग्रंथ 'बुन्देली के विविध रूप' में बुन्देली के उत्तरी रूप की जो सीमाएँ दी हैं उसके अनुसार– 'मध्यप्रदेश के उत्तरी जिले (मुरैना, श्योपुर तहसील को छोड़कर) भिण्ड और ग्वालियर जिला उत्तरी क्षेत्र के अन्तर्गत है। इनके अतिरिक्त उत्तरप्रदेश के आगरा, मैनपुरी और इटावा जिले के मध्यप्रदेश के इन उत्तरी जिलों से लगे हुए कुछ दक्षिणी भाग भी इसी क्षेत्र के अंतर्गत माने जाने चाहिए।' वास्तव में देखा जाये तो बुन्देली ग्वालियर, भिण्ड, मुरैना तीन जिलों में मिलती है। बाकी उत्तरप्रदेश के आगरा, मैनपुरी, इटावा जिले में कन्नौजी एवं ब्रज मिश्रित बुन्देली का क्षेत्र है। यह एक जीवंत सत्य है कि किसी भी बोली की एक निश्चित सीमारेखा नहीं खींची जा सकती। यही कारण है कि इन सीमावर्ती उत्तरप्रदेश एवं मध्यप्रदेश के जिलों का बोलीरूप मिश्रित बोलीरूप है, जिसमें कहीं बुन्देली का प्रभाव अधिक है तो कहीं बुन्देली पर ब्रज एवं कन्नौजी का प्रभाव अधिक है।

चंबल नदी के किनारे का सारा भू–भाग जाति समूहों के आधार पर विभाजित है, जिसे 'घार' के नामों से जाना जाता है। भिन्न–भिन्न जाति समुदायों के निवास स्थानों के आधार पर ये स्थान एवं इनका बोली रूप क्रमशः सिकरवार घार से सिकरवारी, तोमर (तंवरघार) से तंवरघारी, भदावर घार से भदावरी, रजपूत घार से रजपूत घारी, जाटवघार से जटवारी, गूजर धार से गूजरघारी एवं कछवाय घार से कछवायघारी नाम से विन्यस्त है। इन क्षेत्रों में बुन्देली कुछ परिवर्तनों के साथ विद्यमान है। बुन्देली भाषी क्षेत्र के उत्तरपूर्वी संधि–स्थलों पर इन परिवर्तनों को स्पष्ट रूप से अनुभव किया जा सकता है।

ग्वालियर जिला तोमर राजपूतों का शासन स्थल रहा है और इसी कारण इस जिले के बोलीरूप को तोमरी अथवा तोमरगढ़ी के नाम से पुकारा जाता है, जो वर्तमान में तंवरघारी नाम से भी प्रचलित है। इसी प्रकार इस जिले के उत्तर–पश्चिमी भाग में बुन्देली का भदावरी रूप प्रचलित है। यहाँ के बोलीरूप में खड़ी बोली का प्रभाव भी देखने को मिलता है। ऐतिहासिक घटनाक्रम के आधार पर ग्वालियर क्षेत्र में जैसे–जैसे हम उत्तर की ओर बढ़ते जाते हैं, बुन्देली में ब्रज का मिश्रण भी बढ़ता जाता है। (सूचक क्र.– 19)

ग्वालियर जिले की बुन्देली की प्रमुख विशेषतायें निम्न हैं –

1. बुन्देली के अन्य पुरुष उये, ऊने, उनने, उनपे, उनके आदि रूपों के लिए इस क्षेत्र में बाये, बाने, बिनने, बिनपे जैसे रूप प्रयुक्त किये जाते हैं।

2. बुन्देली के द्वितीय पुरुष 'तुम' का संबंध कारक रूप तुमारो अथवा तुमाओ यहाँ के बोलीरूप में तेव के रूप में व्यवहृत किया जाता है। जैसे– तेव लोग–तुम्हारा पति। तेव मोड़ा – तुम्हारा बच्चा।

3. हकार लोपीकरण की प्रवृत्ति बुन्देली की एक प्रमुख विशेषता है जो कि यहाँ स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है, जैसे– कहत–कत, ऊदनशाह–ऊदनशाय, बहुत–भोत।

4. अकारान्त का एकारान्त रूप भी यहाँ द्रष्टव्य है, जैसे– तरह – तरै, कह – कै।

5. स्त्रीलिंग कर्ता के कहन शब्द के लिए यहाँ कत शब्द का प्रयोग स्थानीय वैशिष्ट्य का प्रतीक है।

मुरैना जिले का बुन्देली रूप (सूचक क्र.– 17)

इस जिले का बुन्देली रूप ग्वालियर जिले से अधिक भिन्न नहीं है। ग्वालियर क्षेत्र से उत्तर की ओर बढ़ने पर बुन्देली में ब्रज का मिश्रण होता जाता है, वही स्थिति मुरैना जिले की भी है। मुरैना जिले के पूर्वोत्तर जाने पर इसके सीमावर्ती कन्नौजी का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इस जिले के बुन्देली रूप की विशेषताएँ निम्न हैं, जैसे –

1. एकारान्त के स्थान ऐकारान्त का प्रयोग ब्रज की विशेषता का प्रमाण है, जो इस क्षेत्र में देखने को मिलता है, जैसे– कहते थे – कहातै, मानते – मानतै।

2. समीकरण की प्रवृत्ति भदावरी की एक प्रमुख विशेषता है, जो इस क्षेत्र के बुन्देली रूप में स्पष्ट है, जैसे– मानते थे – मानतै, जानते हैं – जानत, बैठा दिए – बैठादय।

3. शब्दान्त में 'आय' प्रत्यय का प्रयोग मिलता है, जैसे– खींच–खिंचबाय, हरबा–हरबाय, करबा – करबाय, बनवा – बनबाय।

4. 'वह' अन्य पुरुष एक वचन के लिए 'बू' शब्द का प्रयोग स्थानीय वैशिष्ट्य का प्रतीक है, जैसे– वह कहता था–बू कहत तो।

5. अनेक अकारान्त संज्ञा शब्दों का इकारान्त रूप में प्रयोग करने की प्रवृत्ति ब्रज एवं कन्नौजी के प्रभाव की ओर इंगित करती है, बाद – बादि, छवि – छब।

6. हकार लोपीकरण एवं अनुनासिकता बुन्देली के अन्य क्षेत्रों के समान ही हैं।

भिण्ड का बुन्देली रूप (सूचक क्र.– 18)

बुन्देली के उत्तरी रूप के अंतर्गत भिण्ड जिला भी सम्मिलित किया जाता है। सीमावर्ती जिला होने के कारण यहाँ के बोलीरूप पर ब्रज और कन्नौजी का प्रभाव है। इस क्षेत्र की विशेषताएँ निम्न हैं –

1. शब्दों के मध्य अक्षर को अर्द्ध अक्षर करने की प्रवृत्ति कन्नौजी के प्रभाव को दर्शाती है, जैसे – जानते – जान्त, मानते – मान्त, मिलते – मिल्त।

2. भदावरी की एक प्रमुख विशेषता समीकरण वृत्ति है जो कि यहाँ के बोली रूप पर भी स्पष्ट दिखायी पड़ता है। जैसे– हद कर दी – हद्दई कर दई, रख–धद्दई, बरसा – बस्सो, बैठा दिये – बैठाद्दय।

3. 'कह' के लिए 'कस' शब्द का प्रयोग स्थानीय वैशिष्ट्य का प्रतीक है, अन्य विशेषताएँ बुन्देली के अन्य क्षेत्रों के समान ही हैं।

हम कह सकते हैं कि ग्वालियर, मुरैना, भिण्ड एवं उत्तरप्रदेश के आगरा, मैनपुरी और इटावा जिलों के बोलीरूप बहुत कुछ समानता के धरातल पर प्रवाहित हैं। प्राचीन काल से ही इन जिलों की सांस्कृतिक एकता भी इनके एकत्व को संरक्षित करती है। यहाँ तक कि इन क्षेत्रों की भौगोलिक स्थिति भी समान है। बोलीरूप भी नाममात्र के अंतर से व्यवहृत है, इसलिए यहाँ के बुन्देली रूपों में मूलभूत समानता को अस्वीकृत नहीं किया जा सकता है।

शुद्ध बुन्देली

बुन्देली का शुद्ध क्षेत्र या मध्यवर्ती क्षेत्र

बुंदेली बोली विस्तृत भू–भाग की स्वामिनी है। उसका अपना विशाल प्रसार क्षेत्र है, जहाँ इसके प्रयोगकर्ता बड़ी संख्या में उपलब्ध हैं। इसी क्षेत्र के बीचों बीच जो भाग आता है, उसे ही बुन्देली का मध्यवर्ती क्षेत्र कहा जाता है। चूँकि इस क्षेत्र की बुन्देली, भाषाई दृष्टिकोण से मानक अथवा शुद्ध है, इसलिये इसे शुद्ध बुन्देली का क्षेत्र माना जाता है।

इस क्षेत्र के अन्तर्गत झाँसी, टीकमगढ़, दतिया, सागर, दमोह, विदिशा (पश्चिमी भाग के अलावा) छतरपुर एवं पन्ना जिले का पश्चिमी हिस्सा नरसिंहपुर तथा जबलपुर जिले का पश्चिमी भाग, गुना एवं शिवपुरी का पूर्वी भाग एवं होशंगाबाद का मध्यपूर्वी जिला आता है।

यथार्थतः देखा जाय तो किसी भी भाषा अथवा बोली का संपूर्ण क्षेत्र एक स्वरूप नहीं लिए होता है, क्योंकि परम्पराओं एवं स्थान परिवर्तन के कारण बोली विशेष में स्थानीयता का प्रभाव पड़ता है। परिणामतः बोलीरूपों में भिन्नता स्पष्ट प्रतीत होने लगती है, जो स्वाभाविक है। कहावत भी है कि– 'चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर बानी'। बुन्देली के सीमावर्ती क्षेत्रों में बघेली, कन्नौजी, छत्तीसगढ़ी, मालवी, मराठी, ब्रज एवं राजस्थानी जैसी बोलियाँ प्रचलित हैं, जिनका बुन्देली पर स्पष्ट प्रभाव है और इसी प्रभाव ने बुन्देली के अनेक मिश्रित रूपों को जन्म दिया है, किन्तु बुन्देली का मध्य क्षेत्र इन बोलियों से दूर है, इसलिए यहाँ शुद्ध बुन्देली रूप है। शुद्ध बुन्देली से तात्पर्य इस अप्रभावित क्षेत्र की बोली से है, जो बुन्देली प्रधान है। इन जिलों में कुछ भिन्नताओं के साथ बुंदेली अपने शुद्ध रूप में विद्यमान है, जिसका विवरण इस प्रकार है–

बुन्देली का मानक – झाँसी (सूचक क्र.– 12)

झाँसी जिला बुन्देली भूमि एवं बुन्देली का आधार क्षेत्र है। भाषाविज्ञान इसी क्षेत्र को बुन्देली के विश्लेषण का मुख्य आधार बनाते हैं। यह बुन्देली के मध्य भाग में स्थित है, जो किसी अन्य बोली से पूर्णतः अप्रभावित है। इसी कारण भाषावैज्ञानिक इसे शुद्ध बुन्देली का क्षेत्र कहते हैं। इस क्षेत्र की सामान्य विशेषताएँ हैं –

अ. हकार लोप की प्रवृत्ति बुन्देली की प्रमुख विशेषता है, जो हमें झाँसी की बुन्देली में स्पष्ट दिखायी देता है। उदाहरणतः – उदनशाह – उदनशाय, उन्होंने – उनने, बहू – बऊ, पहुँची – पोंची।

ब. बुन्देली में संज्ञा शब्दों को बहुवचन रूप में परिवर्तित करने के लिए 'न' एवं 'ए' प्रत्यय लगाये जाते हैं। उदाहरण स्वरूप – सैनिक – सैनिकन, आदमी – आदमियन, बहू – बऊऐं, मोड़ी – मोड़ियें।

स. झाँसी क्षेत्र की बुन्देली में शब्दों के संयुक्त रूप भी देखने को मिलता है। उदाहरण के लिये–पड़ते ही – परतनई, जैसे ही– जैसई, स्नान कर रही – सपर्‌रई।

द. बुन्देली में अकारान्त संज्ञा एवं विशेषण शब्दों का उच्चारण रूप ओकारान्त हो जाता है। यही कारण है कि झाँसी की बुन्देली में भी यह प्रवृत्ति स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है– रजवाड़ा – रजवाड़ो, धोक – धोको, होता – होतो।

य. 'लेकिन' शब्द के लिए बुन्देली के क्षेत्र में अनेक शब्द प्रयोग किये जाते हैं। जैसे– पै, परन्तु इत्यादि। परन्तु झाँसी जिले में लेकिन के लिए 'अकेले' शब्द का प्रयोग देखने को मिलता है, जो क्षेत्रगत विशिष्टता प्रतीत होती है।

र. बुन्देली में तृतीय पुरुष 'वह' एक वचन सर्वनाम के लिए 'बो' अथवा ओकारान्त 'बौ' शब्द का प्रयोग होता है। प्रस्तुत उदाहरण में 'वह' के लिए 'ऊ' शब्द का प्रयोग मिलता है– ऊ कर लैहे जो काम, तम नें करो।

ल. बुन्देली का संपूर्ण क्षेत्र ही सानुनासिकता की प्रवृत्ति लिए हुए है, जिसका रूप झाँसी क्षेत्र में भी मिलता है– उन्होंने–उननें, नहीं–नईं, हती–हतीं, से–सें।

व. बुन्देली भाषी प्रदेश में हिन्दी के भूतकालवाची था, थी, थे रूपों का प्रयोग हतो, हती, हते रूपों में होता है, जिसका प्रचलन झाँसी क्षेत्र में भी मिलता है – अच्छे थे – अच्छे हते, दुखी नहीं था– दुखी नई हतो, फौजें थीं– फौजे हतीं।

श. सामान्य हिन्दी के भविष्य वाची प्रत्यय ग, गी, गे का प्रयोग बुन्देली में अन्य रूपों में मिलता है, जो झाँसी क्षेत्र में भी प्रचलित है– होगा–हुईए, चढ़ेगा–चढ़है, चढ़ चुका होगा–चढ़ चुको हुइए।

उपर्युक्त उदाहरण के आधार पर हम कह सकते हैं कि झाँसी जिला बुन्देली का मानक क्षेत्र है, जिसकी विशेषताओं के आधार पर हम बुन्देली के किसी भी क्षेत्र विशेष की बुन्देली का परीक्षण एवं विश्लेषण कर सकते हैं।

2. ललितपुर की बुन्देली (सूचक क्र.– 11)

झाँसी जिले के दक्षिण में ललितपुर जिला है, जो बुन्देली के मध्यवर्ती क्षेत्र के अंतर्गत ही परिगणित किया जाता है। झाँसी एवं ललितपुर की बोली–बुन्देली में विशेष नहीं मिलती है। यहाँ मानक बुन्देली का ही रूप प्रचलन में है। कुछ शब्दों में भिन्नता अवश्य दिखाई देती है –

अ. ललितपुर जिले की बुन्देली में 'ई' प्रत्यय का प्रयोग बहुतायत से मिलता है। प्रस्तुत उदाहरणों में इस प्रकार का प्रयोग दृष्टव्य है–दुःखी नईं होय, नाईं, नईं कई जात, फोर लाईं, जई की तईं, भईं, भीतरईं, भीतई इत्यादि।

ब. खड़ी बोली हिन्दी के तृतीय पुरुष बहुवचन रूप 'उन्होंने' जहाँ ललितपुर में 'उननें' के रूप में बहुवचन के लिए प्रयुक्त है, वहीं सम्मान सूचक शब्द के रूप में इसका प्रयोग एकवचन के रूप में किया जाता है। इसी प्रकार खड़ी बोली के 'उसने' के लिए सामान्य व्यक्तियों के लिए 'ऊने' एवं सम्मान दर्शाने के लिए 'उननें' का प्रयोग 'उसको' के लिए 'ऊखों' और सम्मानपूर्वक 'उनें' अथवा 'उनखों' शब्द का प्रयोग मिलता है। वैसे ये बहुवचन रूप में भी प्रयोग किये जाते हैं।

स. 'एकारान्त' शब्दों का 'ऐकारान्त' तथा 'ओकारान्त' शब्दों का 'औकारान्त' रूप में उच्चारण ललितपुर की बुन्देली में मिलता है, उदाहरण स्वरूप–ऊँच नीच–ऊँचे, नीचे, होकर – होकें, होता–होतो। इसी प्रकार–पर–पै, केबो–कैबो, के–कै, लरबे–लरबै।

उपरोक्त उदाहरणों के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ललितपुर जिले की बुन्देली कुछ शब्द रूपों को छोड़कर बुन्देली की सामान्य विशेषताएँ ही लिए हुए हैं। ललितपुर जिले का दक्षिण क्षेत्र सागर जिले की उत्तरी सीमा से लगा हुआ है, इसलिये इस क्षेत्र पर सागर जिले की बुन्देली का भी अत्यल्प प्रभाव देखने को मिलता है।

टीकमगढ़ का बुन्देली रूप (सूचक क्र.– 10)

टीकमगढ़ जिला बुन्देली का प्रमुख केन्द्र है, जिसके अन्तर्गत वर्तमान में ओरछा भी सम्मिलित है। ओरछा क्षेत्र बुन्देली के महान कवियों की काव्य–स्थली रहा है। यहाँ की बुन्देली भी मध्यवर्ती भाग के अन्य क्षेत्रों के समान ही है। यहाँ की विशेषताएँ निम्न हैं –

अ. हकार लोप की प्रवृत्ति अन्य क्षेत्रों की तरह ही है। उदाहरण स्वरूप–कहता–कत, बहुत–भोत, उन्होंने–उननें।

ब. बेई (वही), नोनें (अच्छे), घरके (पास के), नाँय – माँय (इधर–उधर), झपट कें कर लिआव (जल्दी कर लो), हओं (हाँ) इत्यादि शब्द टीकमगढ़ जिले की बुन्देली का स्थानीय वैशिष्ट्य लिए हुए हैं।

स. बुन्देली का अधिकांश क्षेत्र 'व' के 'ब' के रूप में उच्चारित करने के लिये जाना जाता है, किन्तु टीकमगढ़ क्षेत्र की बोली में 'व' के रूप में ही ज्यादातर प्रयोगकर्ता प्रयुक्त करते हैं, भव, रव, चढवे दीवान इत्यादि।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बुन्देली से अत्यल्प भिन्नताओं को छोड़कर टीकमगढ़ क्षेत्र की बुन्देली का स्वरूप मानक रूप जैसा ही है।

दतिया का बुन्देली रूप – (सूचक क्र.– 9)

दतिया जिला भी बुन्देली के शुद्ध रूप वाले क्षेत्र के अंतर्गत सम्मिलित किया जाता है। इस क्षेत्र में नब्बे प्रतिशत बुन्देली भाषी रहते हैं। दतिया जिले में पँवार (परमार) जाति के लोग बड़ी संख्या में निवास करते हैं, हालांकि इस जिले की अन्य जातियाँ भी उसी प्रकार की बुन्देली का प्रयोग करती हैं, जो पँवार लोग करते हैं। यहाँ की बुन्देली की सामान्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

अ. सानुनासिकता की प्रवृत्ति मानक रूप की तरह ही है।

ब. 'हकार' लोप की प्रवृत्ति भी बुन्देली के रूप को स्पष्ट करती है।

स. प्रस्तुत उदाहरण में 'अपने' के स्थान पर 'आपईं' शब्द दतिया क्षेत्र की बुन्देली के स्थानीय स्वरूप को प्रकट करता है, क्योंकि इस शब्द का प्रचलन अन्य कहीं नहीं मिलता है।

द. बुन्देली के अधिकांश क्षेत्रों में कर्मकारकीय परसर्ग 'खों' का प्रयोग किया जाता है, किन्तु इस क्षेत्र में यह 'कों' के रूप में मिलता है।

इ. मध्यवर्ती क्षेत्र में जहाँ प्रस्तुत उदाहरण में सम्मान सूचक हते, ते आदि शब्द मिलते हैं, वहीं यहाँ हतो, तो शब्द मिलते हैं– अच्छो हतो – अच्छो तो, मानत्तो, मानत तो, इत्यादि।

र. 'कहने' शब्द के लिए मध्यवर्ती क्षेत्र में 'कहते', केतते, कत्ते शब्द का प्रयोग किया जाता है, किन्तु यहाँ 'कऊत' शब्द का स्थान वैशिष्ट्य के रूप में प्रयोग प्राप्त होता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि दतिया जिले की बुन्देली थोड़ी सी भिन्नताओं के साथ बुन्देली के मानक रूप का ही प्रतिनिधित्व करती है।

विदिशा का बुन्देली रूप – (सूचक क्र.– 16)

बुन्देली के मध्यवर्ती क्षेत्रों के अन्तर्गत विदिशा जिले का पूर्वी एवं दक्षिणी भाग ही केवल सम्मिलित किया जाता है। क्योंकि इसका पश्चिमी भाग मालवी बोली के क्षेत्र से संपृक्त है। चूँकि इसका पूर्वी भाग सागर जिले से एवं दक्षिणी भाग रायसेन जिले से जुड़ा हुआ है और ये क्षेत्र शुद्ध बुन्देली के होने के कारण विदिशा के पूर्वी एवं दक्षिणी क्षेत्र की बुन्देली सागर एवं रायसेन की शुद्ध बुन्देली के समान ही है, फिर भी पूर्णतः नहीं। इस पर कहीं खड़ी बोली तो कहीं मालवी का प्रभाव देखने को मिलता है। इस क्षेत्र के बोलीरूप में निम्नांकित विशेषताएँ हैं –

अ. मध्यवर्ती क्षेत्र के अनेक हिस्सों की तरह इस क्षेत्र में भी एकारान्त को ऐकारान्त और ओकारान्त को औकारान्त रूप में प्रयोग करते हैं – सुना – सुनो, बार – बैर, होकर– होकें।

ब. हकार लोप की प्रवृत्ति बुन्देली की महत्त्वपूर्ण विशेषता है, जो इस क्षेत्र में भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। जैसे– कहता– कत, गढ़पहरा – गढ़पैरा, पहचानते– पैचानत इत्यादि।

स. खड़ी बोली का वह सर्वनाम बुन्देली के अन्य स्थानों पर बाए, बोई, बा आदि रूपों का प्रयोग मिलता है, किन्तु प्रस्तुत उदाहरण में 'बई' रूप का प्रयोग किया गया है, जो स्थानीय विशेषता ही कही जा सकती है।

द. खड़ी बोली के शब्दों का आंशिक प्रयोग भी खड़ी बोली के प्रभाव की ओर इंगित करता है। उदाहरण के लिए – लोगों, खुश, शत्रु, दीवान।

य. अनुस्वार की प्रवृत्ति भी विद्यमान है।

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर हम कह सकते हैं कि इस क्षेत्र में बोलीरूप का गठन पूर्णतः बुन्देली का है, जो मानक रूप का अनुकरण करता हुआ प्रतीत होता है।

सागर जिले का बुन्देली रूप – (सूचक क्र. 9)

शुद्ध बुन्देली के क्षेत्रान्तर्गत सागर जिले की बोली का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सागर जिले के चारों ओर शुद्ध बुन्देली क्षेत्र होने के कारण यहाँ की बोली पर अन्य किसी बोली

का प्रभाव नहीं है। इसी कारण यहाँ की बोली शुद्ध बुन्देली है, जिसका रूप झाँसी जिले की मानक बुन्देली से मिलता–जुलता है। वैसे भी सागर जिले की उत्तरी सीमा, झाँसी जिले की दक्षिणी सीमा को स्पर्श करती है।

डॉ. कृष्णलाल हंस ने अपने शोधग्रन्थ बुन्देली और इसके क्षेत्रीय रूप के अन्तर्गत इस जिले की बुन्देली को तीन भागों में वर्गीकृत किया है, परन्तु मेरी दृष्टि में यह असंगत ही है। चूँकि किसी भी बोली का क्षेत्र कितना ही शुद्ध क्यों न हो, उसमें दो चार शब्द किसी अन्य बोली के सम्मिलित हो जाना बहुत आसान सा है, क्योंकि वहाँ के निवासी अन्य क्षेत्रों के संपर्क में भी आते हैं और इसी आधार पर उसे 'विशेष' करार देना पूर्णतः गलत है। इस क्षेत्र की बुन्देली की सामान्य विशेषताएँ अधोलिखित हैं –

अ. मानक बुन्देली के अधिकांश क्षेत्रों की तरह जहाँ 'औकार' की प्रवृत्ति मिलती है, वहीं सागर क्षेत्र में 'औकारान्त' ही प्रयोग किये जाते हैं।

ब. सानुनासिकता की प्रवृत्ति यहाँ के बोलीरूप में बुन्देली की विशेषता के अनुरूप ही है।

स. 'हकार' लोप की प्रवृत्ति सर्वत्र परिलक्षित होती है। यह लोपीकरण आदि, मध्य और अन्त सभी प्रकार से मिलता है। हद ही कर दीं – हद्दई कर दईं, पहुँचे – पौचे, पहला – पैला।

द. कोमलीकरण बुन्देली की प्रमुख विशेषताओं में से एक है। परिणामतयः कठोर वर्ण 'ड' 'ड़' 'र' में तथा 'ढ' 'ढ़' 'र' वर्ण में परिवर्तित होते दिखायी देते हैं। पहाड़–पहार, चिड़िया – चिरिया।

क. नहीं के लिये 'नें' हम नें करहें।

ख. जो काम 'कह' के लिये 'के' को का के रओ।

ग. 'उलात' शब्द जल्दी के लिये उलात कर लो।

घ. संयुक्ताक्षर की प्रवृत्ति अब ही के लिये 'अब्बई', कर लिया के लिये कल्लव, तुम ही के लिये 'तुमई', हम ही के लिये 'हमई'।

ङ. एकवचन और बहुवचन दोनों में 'हम' शब्द का प्रयोग हम नें जैहें अर्थात् मैं नहीं जाऊँगा या जाऊँगी।

उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि 'सागर' क्षेत्र मानक बुन्देल के अन्य क्षेत्रों के समान ही विशेषताओं से संपन्न है, इसी कारण यह शुद्ध बुन्देली के क्षेत्र का प्रतिनिधि जिला है।

छतरपुर का बुन्देली रूप – (सूचक क्र.– 7)

छतरपुर जिले की बुन्देली बोली को सर जार्ज ग्रियर्सन ने 'खटोला' बुन्देली कहा है। इस क्षेत्र के अंतर्गत उन्होंने बिजावर, पन्ना, रामपुर, परगना, महराजनगर, छतरपुर खास, देवरा, रामनगर, लुगासी, गर्रोली, अलीपुरा, बीहट, बिलहरा आदि भाग सम्मिलित किये हैं। इसके 'खटोला' नामकरण का ऐतिहासिक तथ्य यह है कि छतरपुर जिले के बड़ा मलहरा कस्बे से पाँच कि.मी. दूर 'गंज' नामक ग्राम है, जहाँ विक्रम की तेरहवीं से पन्द्रहवीं सदी तक गौड़ राजाओं का छोटा सा राज्य था। महाराज छत्रसाल के समय में 'खटोला' परगना कहलाता था, जिसके अन्तर्गत बिजावर तहसील, छतरपुर का मध्य एवं उत्तरी भाग टीकमगढ़ का दक्षिणी भाग, दक्षिण में बक्स्वाहा तथा शाहगढ़, पन्ना का दक्षिणी क्षेत्र एवं दमोह का उत्तरी भाग इसी राज्य के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता था और इसी कारण 'खटोल' राज्य के इन क्षेत्रों में प्रचलित बुन्देली रूप को 'खटोला बुन्देली' के नाम से जाना जाता है। इस क्षेत्र की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

अ. 'खटोला' रूप की प्रमुख विशेषता हकार के लोपीकरण की है और यह प्रवृत्ति आद्याक्षर, मध्याक्षर एवं अन्त्याक्षर सभी जगह मिलती है। उदाहरण के लिए – खड़े – ठाढ़े, ठाड़े, पहचानते – चीनतो, ऊदनशाह – ऊदनशाय इत्यादि।

ब. 'कहना' के लिए अधिकांश क्षेत्र में कात, कहत जैसे शब्दों का प्रयोग मिलता है। 'कइत' शब्द का प्रयोग स्थानीय प्रवृत्ति का द्योतक है।

स. इसी प्रकार 'बार' शब्द के लिए 'दइंयाँ' शब्द का प्रयोग एक तरफ के लिए 'कोद' भी इसी स्थानीय वैशिष्ट्य को स्पष्ट करता है।

द. बुन्देली के अन्य क्षेत्रों में कर्मकारण परसर्ग खों, कों प्रचलित है, किन्तु इस क्षेत्र में यह 'खाँ' हो गया है।

य. शब्दों के अन्त में 'ही' के लिए 'ई' प्रत्यय जोड़कर संयुक्त शब्द रूप बनाये जाते हैं। उदाहरण के लिए – स्नान कर रही – सपर्रई, देखते ही – देखतइ, जैसे ही – जैसई, करते ही – करतई।

र. इसी प्रकार एकारान्त का ऐकारान्त एवं ओकारान्त का औकारान्त रूप भी यहाँ की विशेषता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि छतरपुर जिले का 'खटोला' रूप भी शुद्ध बुन्देली का प्रतिनिधि है।

पन्ना का बुन्देली रूप – (सूचक क्र.– 6)

बुन्देली के शुद्ध रूप के अंतर्गत पन्ना जिले का केवल पश्चिमी भाग ही सम्मिलित किया जाता है, क्योंकि इसके दूसरे भागों की सीमाएँ बघेली प्रभावित हैं। चूँकि यहाँ की बुन्देली में एवं पन्ना जिले के पश्चिमी भाग की बुन्देली में विशेष अन्तर नहीं है। इसी कारण इसे 'पन्ना का खटोला' भी कहा जाता है। इस क्षेत्र की विशेषताएँ अग्रांकित हैं –

अ. मध्यवर्ती क्षेत्रों में 'कहता' के लिए 'कात' 'केत' और 'कइत' जैसे शब्द प्रचलित हैं। यहाँ 'कहत' प्रयोग किया जाता है, जिसमें 'हकार' विद्यमान है।

ब. अन्य शब्दों में भी यह प्रवृत्ति कम ही देखने को मिलती है – गढ़पहरा, पहचानते, बहू इत्यादि। इससे सिद्ध होता है कि इस क्षेत्र में अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा हकार लोपीकरण की प्रवृत्ति बहुत कम है। इसके विपरीत कुछ शब्दों में यह अतिरिक्त विद्यमान है– होगा – हूहे, चढ़ेगा – चढ़है।

स. छतरपुर की खटोला में कर्मकारक परसर्ग 'खों' है। अन्यत्र यह 'को' रूप भी धारण किए हुए है, परन्तु पन्ना के इस क्षेत्र की खटोला बुन्देली में यह 'खों' 'खें' रूप में मिलता है। धरम खें, आँखन खों।

द. मध्यवर्ती क्षेत्र में जगह–जगह शब्द के लिए जगाँ–जगाँ, जगे–जगे, जगा–जगा, लंगन–लंगन आदि शब्द रूपों का प्रयोग मिलता है, लेकिन यहाँ पर यह जँहगन–जँहगन जैसे रूप में विद्यमान है, जो स्थानीय वैशिष्ट्य का परिचायक है।

य. इन विशेषताओं के अलावा ओकारान्त और एकारान्त शब्दरूपों का प्रचलन मध्यवर्ती बुन्देली के अन्य क्षेत्रों के समान ही है।

दमोह का बुन्देली रूप – (सूचक क्र.– 15)

बुन्देली के खटोला रूप के क्षेत्र में, दमोह जिले का उत्तरी भाग सम्मिलित है, जो कि पन्ना जिले के खटोला भाषी दक्षिणी क्षेत्र से जुड़ा हुआ है। इस क्षेत्र का पश्चिमी भाग सागर जिले के पूर्वी भाग से संपृक्त है। इस कारण इस जिले के बोलीरूप दो तरह के हो गये हैं। पन्ना सीमा से जुड़ा क्षेत्र खटोला रूप में और सागर से जुड़ा क्षेत्र सागरी रूप में विद्यमान है। इस क्षेत्र की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

अ. एकारान्त और ओकारान्त की प्रवृत्ति अन्य क्षेत्रों सदृश है।

ब. 'हकार' लोपीकरण भी है।

स. जहाँ पन्ना की बुन्देली में 'खाँ' कर्मकारक परसर्ग है, वहीं यहाँ 'खों' रूप में है।

शिवपुरी का बुन्देली रूप – (सूचक क्र.– 5)

भाषा–भूगोल के दृष्टिकोण से शिवपुरी बुन्देली का सीमावर्ती जिला माना जाता है, क्योंकि इसके दक्षिण पश्चिम में मालवी एवं उत्तर पश्चिम में जयपुरी का क्षेत्र है। शुद्ध बुन्देली की दृष्टि से इसका पूर्वी हिस्सा ही सम्मिलित किया जाता है। हालांकि इसमें भी अत्यल्प मात्रा में राजस्थानी, मालवी तथा खड़ी बोली का प्रभाव मिलता है। इस क्षेत्र की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

अ. 'यहाँ' के लिए 'हिना' शब्द का प्रयोग अनेक बार हुआ है, जो राजस्थानी का प्रभाव लिये हुए है।

ब. इसी प्रकार 'कहता' क्रिया वाचक शब्द के लिए जहाँ अन्य क्षेत्रों में कत, कहत, केत, कईत, कऊत शब्द मिलते हैं, वहीं प्रस्तुत उदहारण में 'कूत' शब्द का प्रयोग भी किया गया है, जो सम्भवतः उच्चारण वैशिष्ट्य ही कहा जा सकता है।

स. निजवाचक सर्वनाम खड़ी बोली 'अपने' एवं 'अपनी' शब्दों के लिए यहाँ क्रमशः 'अपयें' एवं 'अपई' शब्द रूपों का प्रयोग मिलता है।

द. तरफ के लिए 'तनें' देखने के लिए 'चिते' 'नहा रही' में 'नारई' जैसे शब्द जहाँ स्थान, वैशिष्ट्य के द्योतक हैं, वहीं हकारलोप की प्रवृत्ति को स्पष्ट करते हैं।

य. एकारान्त और ओकारान्त की प्रवृत्ति अन्य क्षेत्रों के समान ही वर्तमान है।

इन भिन्नताओं के अलावा शेष रूप मध्यवर्ती क्षेत्र के अन्य भागों की तरह ही है।

11. गुना का बुन्देली रूप – (सूचक क्र.– 2)

गुना जिले के पूर्वी भाग की उत्तरी सीमा शिवपुरी जिले की दक्षिणी सीमा से पूर्वी सीमा झाँसी जिले की पश्चिमी सीमा से तथा दक्षिणी सीमा विदिशा जिले की उत्तरी सीमा से संलग्न है।[5] मध्यवर्ती क्षेत्र की बुन्देली में गुना का पूर्वी हिस्सा ही सम्मिलित किया जाता है, क्योंकि अन्य भाग मालवी प्रभावित है। पूर्वी सीमा पर बुन्देली के अन्य क्षेत्रों के प्रभाव के कारण इसकी प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं –

अ. इस क्षेत्र का कर्मकारक परसर्ग विशुद्ध 'कों' रूप में ही मिलता है।

ब. प्रस्तुत कहानी में कई जगह 'था' के स्थान पर 'थो' का प्रयोग किया गया है, जो मालवी के प्रभाव को प्रदर्शित करता है।

स. इसी प्रकार 'सकता' का 'सक्त', जानता का 'जान्त' शब्दरूपों में आद्य अक्षर की प्रवृत्ति उच्चारण वैशिष्ट्य को प्रकट करती है, जिसकी समानता भिण्ड क्षेत्र की बोली में देखने को मिलती है।

द. इसी प्रकार 'होगा' का 'होयगा' का 'होयगो', 'चढ़ेगा' का 'चढ़ेगो' शब्द मालवी के हैं।

य. 'स्त्री' के लिए 'बैय्यर' शब्द का प्रयोग स्थानीयता का द्योतक है। इन विशेषताओं के अलावा अन्य रूप बुन्देली के शुद्ध क्षेत्रों के समान ही हैं।

होशंगाबाद का बुन्देली रूप – (सूचक क्र.– 3)

भाषा वैज्ञानिकों ने होशंगाबाद जिले के बोलीरूप को दो भागों में बाँटा है –

1. बुन्देली क्षेत्र – यह वह क्षेत्र है जहाँ बुन्देली बोली जाती है, इसके अंतर्गत सोहागपुर एवं होशंगाबाद तहसीलें सम्मिलित की गयीं हैं।

2. मालवी क्षेत्र – इस क्षेत्र में सिवनी तहसील एवं दूसरी हरदा तहसील है, जहाँ की मालवी पर बुन्देली अपने अल्प प्रभाव के साथ है। इसलिए शुद्ध बुन्देली के क्षेत्र के अन्तर्गत सोहागपुर एवं होशंगाबाद तहसीलें ही आती हैं, जबकि हरदा एवं सिवनी तहसीलें मिश्रित बुन्देली के अंतर्गत सम्मिलित की जाती हैं।
   सोहागपुर एवं होशंगाबाद तहसीलों में बोली जाने वाली बुंदेली की विशेषतायें निम्नलिखित हैं –

अ. बुन्देली के मध्यवर्ती क्षेत्रों में 'हकार' लोप की प्रवृत्ति प्रमुख विशेषता है, परन्तु लोपीकरण इस क्षेत्र में बहुत ही कम मात्रा में मिलता है। उदाहरण के लिए – गढ़पहरा, हूहे, होहे इत्यादि।

ब. दिखनों, चढ़ेगा आदि शब्दों में मालवी प्रभाव परिलक्षित होता है।

स. बहुत, नहीं, प्रजा, सहित, कभी इत्यादि शब्द खड़ी बोली के प्रभाव की ओर इंगित करते हैं।

द. बुन्देली की द्वितीय विभक्ति में खाँ, खें, खों, कों आदि शब्दों का प्रचलन है, किन्तु इस क्षेत्र में इनके स्थान पर 'हे' विभक्ति का प्रयोग भी होता है।

य. यहाँ के लिए 'झाँ' का प्रयोग स्थानी विशेषता का परिचायक है।

र. अन्य रूप बुन्देली के मानक रूप के समान ही हैं।

रायसेन का बुन्देली रूप – (सूचक क्र.– 4)

रायसेन जिले का पश्चिमी भाग ही केवल ऐसा है, जो मालवी प्रभावित बुन्देली भाषी भोपाल से संलग्न है। इसके अलावा इसके पूर्व में सागर जिला, उत्तर में बुन्देली भाषी विदिशा तथा दक्षिण में बुन्देली भाषी होशंगाबाद की सोहागपुर तहसील है। तीन ओर से शुद्ध बुन्देली एवं एक ओर से मालवी होने के कारण रायसेन क्षेत्र की बुन्देली शुद्ध रूप में ही है। अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा इस क्षेत्र में अनुनासिकता की प्रवृत्ति न्यून है।

अ. हकार लोपीकरण, शुद्ध बुन्देली की प्रवृत्ति के अनुसार ही है।

ब. एकारान्त का ऐकारान्त अधिक मिलता है, अपेक्षाकृत ओकारान्त के औकारान्त में परिवर्तित होने के।

स. लोगों, कोई, बहुत इत्यादि शब्द खड़ी बोली के प्रभाव का परिचय देता है।

द. थों, चढ़ेगा आदि शब्द मालवी का प्रभाव दर्शाते हैं।

य. सर्वाधिक शब्दों में 'उकार' की प्रवृत्ति देखने को मिलती हैं जैसे– का कह सकूँ, का कर सकूँ।

इनके अलावा अन्य विशेषताएँ बुन्देली के समान ही हैं।

नरसिंहपुर का बुन्देली रूप

नरसिंहपुर जिले के चारों ओर बुन्देली भाषी जिलों की सीमाएँ हैं, जिसके कारण इस क्षेत्र का बुन्देली रूप अपने मूल रूप में वर्तमान है। डॉ. ग्रियर्सन ने इस क्षेत्र को बघेली मिश्रित बुन्देली का क्षेत्र कहा है। लेकिन डॉ. कृष्णलाल हंस ने भी 'बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप' ग्रन्थ में स्पष्ट कहा है कि नरसिंहपुर की बुंदेली शुद्ध बुंदेली है।

नरसिंहपुर क्षेत्र के पूर्व में जबलपुर, पश्चिम में होशंगाबाद, उत्तर में सागर, दमोह एवं दक्षिण में सिवनी और छिन्दवाड़ा जिलों की सीमाएँ हैं। डॉ. ग्रिसर्यन ने इस जिले के बुन्देली रूप को बघेली से मिश्रित बताया है, लेकिन वास्तव में यह क्षेत्र शुद्ध

बुन्देली का ही है, क्योंकि यहाँ के भाषा रूप में बुन्देली का व्यवहार ही अधिक होता है। इस क्षेत्र की अन्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

अ. इस जिले की बुन्देली लोच लिये हुए है। उदाहरणतः 'कोइ' शब्द के लिए 'कुई' का प्रयोग यहाँ व्यवहार में प्रचलित है।

ब. भविष्यकालीन क्रियारूपों में 'हुइये' के लिए यहाँ 'हैगो' शब्द का प्रयोग मिलता है, जो पूर्वोत्तर छिन्दवाड़ा के समान ही है।

स. जहाँ बुन्देली के अधिकांश हिस्सों में 'अन' प्रत्यय जोड़कर बहुवचन के रूप तैयार किए जाते हैं, वहीं इस जिले में बहुवचन के लिए संज्ञा रूपों 'ओ' प्रत्यय का प्रयोग देखने को मिलता है।

द. 'फिर' शब्द के लिए यहाँ पर 'फिन' रूप का प्रचलन होता है, जो स्थानीय वैशिष्ट्य का प्रतीक है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि बुन्देली का व्यवहार क्षेत्र विस्तृत है और इस भू–भाग की सीमाएँ क्रमशः ब्रज, कन्नौजी, अवधी, मालवी, छत्तीसगढ़ी तथा राजस्थानी की भाषाई सीमाओं के समीप हैं। परस्पर व्यवहार के कारण सीमावर्ती भू–भाग पर इन्हीं बोलियों के मिश्रण का प्रभाव कहीं–कहीं कम और कहीं–कहीं अधिक बुन्देली पर हुआ है। इस तरह सीमावर्ती क्षेत्रों में बुन्देली के विविध रूप हो गये हैं। बुन्देली के इन विविध रूपों को सरलता की दृष्टि से शुद्ध तथा मिश्रित वर्गों में रखकर विश्लेषित करने से बुन्देली के विविध रूप स्थिर किये गये हैं। इन विविध रूपों के विश्लेषण के लिए जिन सूचकों को आधार बनाया गया है। उनके कथन पूर्णतः सहज और विश्वसनीय हैं।

संदर्भ

1. डॉ. कृष्णलाल हंस; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप; पृ. 304.
2. बालाघाट डिस्ट्रिक्ट गजेटियर; पृ. 78.
3. भारतीय भाषाओं का सर्वेक्षण; खंड 9, भाग 1; पृ. 451.
4. लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इंडिया; खण्ड 1, भाग 1; पृ. 574.
5. डॉ. कृष्णलाल हंस; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप; पृ. 462.

भाषा-शास्त्र एवं व्याकरण पर हुए कार्य

हिन्दी के पश्चिमी वर्ग की बोलियों में बुन्देली एक महत्त्वपूर्ण लोक बोली अथवा उपभाषा है। सशक्त, साहित्यिक उपलब्धियों की सम्पन्नता के बावजूद भी लम्बी समयावधि तक बुन्देली, ब्रज की सहोदरा के रूप में उपेक्षित भाव से इंगित की जाती रही हैं। उद्भव एवं विकास की दृष्टि से बुन्देली एवं ब्रज दोनों एक ही धरातल से संचालित हैं। इसी प्रकार दोनों बोलियों में साहित्य–सर्जना का इतिहास भी समकालिक एवं सम्बद्ध है। परन्तु तत्कालीन परिस्थितियों के परिणाम स्वरूप ब्रज, प्राचीन एवं मध्यकालीन हिन्दी काव्याकाश में साहित्यकारों की काव्य कल्पना का सहारा बनी, साथ ही राज्याश्रय का सुख भोगती हुई, कृष्ण भक्ति काव्य की मधुरिम, सरस क्रियाओं की प्रवक्ता सिद्ध हुई। परिमाणस्वरूप ब्रज, बुन्देली की तुलना में अग्रगण्य प्रतीत होती रही, लेकिन स्वतन्त्रता–आंदोलन के पश्चात् भारतीय भाषाविदों ने भारतीय बोलियों की ओर अनुसंधान और अध्ययन की मौलिक अभिरुचि दिखायी। बुन्देली इस प्रतियोगिता में अपनी सुदीर्घ साहित्य परम्परा के साथ, अनुसंधान की आकांक्षा एवं आवश्यकता के अनुरूप ब्रज, अवधी, भोजपुरी जैसी बोलियों के समक्ष, चुनौती पूर्ण ढंग से आ खड़ी हुई।

उत्तरप्रदेश के पाँच जिलों एवं मध्यप्रदेश के बाइस जिलों में किसी न किसी रूप में प्रयुक्त बुन्देली आदिकाल के काव्य कथाकार जगनिक, विष्णुदास की काव्य, साधना, रीति, भक्ति काव्य की सुनहली संध्या में केशव जैसे आचार्य महाकवि, अक्षर अनन्य, बख्शी हंसराज एवं बोधा जैसे कवियों के संस्पृश्य तो पद्‌माकर, ठाकुर जैसे कवियों की सहचरी बनकर बुन्देली साहित्यिक पक्ष को समृद्ध बनाती है, इसीलिये इस लोकभाषा का व्याकरणिक पक्ष अत्यंत उत्तम है।

बुन्देली के व्याकरणिक संकेतों के उद्घाटन का विधिवत् शास्त्रीय प्रयास सर्वप्रथम सन् 1891 से सन् 1924 की समयावधि में प्रसिद्ध भाषा–शास्त्री डॉ. ग्रियर्सन द्वारा 'भारतीय भाषाओं के सर्वेक्षण' के दौरान खण्ड 9 भाग 1 में बुन्देली के विभिन्न रूपों की संरचना एवं संक्षिप्त व्याकरण के रूप में सामग्री संकलित करके किया गया। इस कार्य के प्रकाशन (1964) एवं लिखे जाने के समयान्तराल में बुन्देली पर मन्थर गति से कार्य हुआ। परन्तु 60 के दशक के पश्चात् बुन्देली पर अनुसंधान की दिशा में किये जाने वाले प्रयासों में तेजी आयी। जिसके परिणामस्वरूप बुन्देली के भौगोलिक, ऐतिहासिक, साहित्यिक, भाषावैज्ञानिक, व्याकरणिक इत्यादि सभी स्वरूपों पर समुचित कार्य हुआ और बुन्देली एक विशिष्ट लोकभाषा के रूप में स्थापित हुई।

विशुद्ध व्याकरण की दृष्टि से सर्वेक्षण एवं अनुसंधान की उपलब्धियाँ बुन्देली में न्यून हैं। जिन शोध ग्रन्थों में न्यूनाधिक मात्रा में व्याकरण को स्थान दिया गया है, उन्हीं के कार्य को प्रस्तुत अध्याय में संक्षिप्त रूप में आधार बनाया है।

भारत का भाषा सर्वेक्षण– सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन

सन् 1891 से लेकर 1924 तक की समयावधि में भारतीय भाषाओं के सर्वेक्षण का कार्य सर जार्ज ग्रियर्सन के द्वारा सम्पन्न हुआ, जो ग्यारह खण्डों में प्रकाशित किया गया है। इस सर्वेक्षण के दौरान ग्रियर्सन के पश्चिमी हिन्दी, पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, खानदेशी, पहाड़ी तथा भीली भाषाओं पर विचार किया है। इनमें होने वाली अनियमितताओं पर भी विचार किया गया है। बुन्देली के अन्तर्गत इसकी भाषाई विशेषताओं एवं क्षेत्र संबंधी तथ्यों का विवेचन है।[1] ग्रियर्सन द्वारा प्रस्तुत बुन्देली के विभिन्न रूप एक ओर जहाँ अत्यन्त प्रामाणिक हैं तो वहीं दूसरी ओर बुन्देली के विभिन्न रूपों की संरचना पर विचार नहीं किया गया। अधिकांश में लेखक ने अपने बोली परिचय में विस्तार से जाने का प्रयत्न नहीं किया है। फलस्वरूप बुन्देली का सांगोपांग व्याकरणिक अध्ययन सम्भव नहीं हो सकता। ग्रियर्सन का सामग्री संकलन भी विश्वसनीय नहीं है, क्योंकि सामग्री संकलन स्वयं नहीं, अपितु दूसरों से करवाया गया है, परिणामस्वरूप ध्वन्यात्मक विशेषताएँ पूर्णतः नहीं आयी हैं। ग्रियर्सन द्वारा प्रस्तुत बुन्देली व्याकरण संक्षिप्त है, इसलिए यह मात्र मार्ग–दर्शन का कार्य करता है, परन्तु बुन्देली के प्रामाणिक व्याकरण की जानकारी नहीं दे सकता। इसके सिवा व्याकरण के अपेक्षित सभी रूपों का अध्ययन नहीं किया गया है। केवल व्याकरणिक विशेषताओं का अंतर ही प्रस्तुत किया गया है। बुन्देली के क्षेत्र विभाजन के अन्तर्गत शुद्ध या परिनिष्ठित बुन्देली को केन्द्र में रखकर विचार किया गया है। बुन्देली के संदर्भ में सीमा विभाजन

नहीं किया। इन सारी त्रुटियों के बावजूद भी ग्रियर्सन का कार्य अनूठा एवं प्रारंभिक प्रयासों की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, जिसके प्रकाशन के बाद से बुन्देली शोधार्थियों को दिशा मिली है।

भारत का भाषा सर्वेक्षण भाग 9 के अन्तर्गत पश्चिमी हिन्दी के हिन्दोस्तानी, बांगरु, ब्रज, कन्नौजी, बुन्देली बोलीरूपों का विश्लेषण है। स्थानों की दृष्टि से उन्होंने झाँसी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, ओरछा, सागर, नरसिंहपुर, होशंगाबाद, सिवनी, पन्ना, दमोह, दतिया की बुन्देली पर विचार किया है।[2] बुन्देली भाषी भू–भाग में व्यवहृत होने वाले बोलीरूपों को उन्होंने प्रामाणिक पंवारी, लोधान्ती, खटोला, बनाफरी, कुण्डरी, निभट्टा, भदावरी, तोवंरगढ़ी, तिरहारी नाम दिये हैं।[3] व्याकरण की दृष्टि से इनके संज्ञारूपों और क्रियारूपों का विश्लेषण किया है।[4]

बुन्देली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन– रामेश्वरप्रसाद अग्रवाल
(हिन्दी प्रकाशन, लखनऊ 1963)

प्रस्तुत पुस्तक, विषय प्रवेश, ध्वनि–विचार, पद विचार, शब्द रचना और वाक्य विचार जैसे पाँच शीर्षकों में विभाजित है। परिशिष्ट में भाषा मानचित्र वाक्य, सामग्री और विशिष्ट शब्दावली संकलित है। विषय प्रवेश के अंतर्गत लेखक ने बुन्देली क्षेत्र के अंतर्गत उत्तरप्रदेश के जालौन, हमीरपुर, बाँदा और झाँसी जिले एवं मध्यप्रदेश के अन्तर्गत टीकमगढ़, छतरपुर, पन्ना, दमोह, सागर, नरसिंहपुर, भिण्ड, दतिया, ग्वालियर, शिवपुरी, मुरैना, गुना, विदिशा, रायसेन और होशंगाबाद जिलों को सम्मिलित किया है। परिणामतः इन क्षेत्रों के अन्तर्गत बुन्देली के सभी रूपों का समावेश नहीं हो सका है। वस्तुतः भाषावैज्ञानिक दृष्टि से भी तथा व्याकरणिक अध्ययन की दृष्टि से भी यह आवश्यक था कि नरसिंहपुर, सिवनी, बैतूल, छिन्दवाड़ा आदि स्थानों के नमूने भी लिये जाते। यह अध्ययन की सम्पूर्णता में बाधक हुई है। लेखक ने बुन्देली को 'खाँ' बोली, 'खों' बोली जैसी तीन विशेषताओं के आधार पर विभाजित किया है, जो भाषाविज्ञान की दृष्टि से स्थूल विभाजन ही प्रतीत होता है। इसी प्रकार के विभाजन को ग्रियर्सन ने अपने भाषा–सर्वेक्षण के खण्ड 9 में प्रस्तुत किया है। अध्ययन की दृष्टि से यह प्रशंसनीय कार्य है, जो बुन्देली व्याकरण को समझाने में सहायता देता है। परन्तु लेखक ने इसे व्यापक परिप्रेक्ष्य में विचारा होता तो अधिक सामग्री मिलती। इसी प्रकार लेखक ने बुन्देली व्याकरण को सरल, बोधगम्य बनाने का प्रयत्न तो किया है, पर भाषागत् क्लिष्टता आम बुन्देली अध्येता के लिये बाधक बनती है। वैसे यह पुस्तक भाषाशास्त्रीय अध्ययन में मील का पत्थर है।

बुन्देली का व्याकराणिक अनुशीलन – डॉ. आरती दुबे
(प्रकाशक – सार्थक प्रकाशन, गौतम नगर, नई दिल्ली)

मैंने बुंदेली के व्याकरणिक अनुशीलन पुस्तक में बुंदेली के उद्‌भव और विकास के साथ–साथ इसके विभिन्न क्षेत्रों का निरूपण, निर्धारण किया है। वैसे तो यथासंभव इसमें प्रस्तुत किये गये निष्कर्षों से मैं संतुष्ट हूँ। चूँकि यह शोध प्रबंध था इसलिये इसमें मैंने एक शोध छात्र की सीमाओं तक ही कार्य किया था इस कार्य के दौरान मेरे मनोमस्तिष्क में इस पुस्तक की विस्तृत भूमिका थी विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सहयोग प्रकाशित होकर साकार रूप में है। इस पुस्तक को मैंने तीन खण्डों में विभाजित कर विश्लेषिति किया है। खण्ड प्रथम के अध्याय प्रथम में बुन्देली के उद्‌भव और विकास नामक शीर्षक में बुन्देली मध्यप्रदेश की महत्वपूर्ण भाषा, भाषा विज्ञान के सिद्धांतों के अनुसार बुन्देली का उद्‌भव और विकास, बुन्देली पूर्व भाषा का स्वरूप, बुन्देली के क्षेत्र एवं बुन्देली की सीमाएँ, उपशीर्षकों के अंतर्गत प्रस्तुत किया है। दूसरे अध्याय में बुन्देली के विविध रूप शीर्षक के अंतर्गत बुन्देली के दो मुख्य भाग (1) बुन्देली का मिश्रित रूप एवं (2) बुन्देली का शुद्ध रूप, किये हैं। तृतीय अध्याय में बुन्देली बोली पर हुए कार्य एक सर्वेक्षण शीर्षक के अंतर्गत बुन्देली बोली और उसके व्याकरण पर कार्य करने वाले मुख्य विद्वानों के कार्यों को भी सम्मिलित किया है। चतुर्थ अध्याय पूर्व शोध की कमियाँ और दिशाएँ नाम से आलेखित है जिनमें बुन्देली पर अभी तक जितने भी मुख्य शोध कार्य हुए हैं लगभग सभी की कमियों का उल्लेख आग्रह किया है। पाँचवा अध्याय बुन्देली व्याकरण के स्रोत एवं आधार नाम से है। इसमें बुन्देली के उन समस्त प्रमुख स्रोतों एवं आधारों का उल्लेख है जिन्हें ध्यान में रखकर, अर्थात जिनके आधार पर मैंने बुन्देली की यह व्याकरण तैयार की है।

पुस्तक का द्वितीय खण्ड शोध की मूल विषय वस्तु बुन्देली व्याकरण से संबंद्ध है। जिसके अन्तर्गत मैंने विषय–वस्तु को विस्तार से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। यूँ तो किसी भी बोली का संपूर्ण व्याकरण संग्रहीत करना अत्यंत दुष्कर कार्य है किन्तु मेरे समक्ष पूर्व व्याकरणाचार्यों की परंपरा स्पष्ट थी जिसके आधार पर मैंने अपनी सामर्थ्यानुसार बुन्देली व्याकरण को विश्लेषित करने का प्रयास किया है।

पुस्तक के तृतीय एवं अंतिम खण्ड परिशिष्ट के रूप में है। इस खण्ड को मैंने चार भागों में विभाजित किया है। परिशिष्ट का प्रथम भाग सूचक जो कि कहानी के अनुवाद एवं सूचक की स्वयं की कहानी के रूप में है। शोध की आधार विषय वस्तु यही प्रथम परिशिष्ट है। द्वितीय परिशिष्ट में बुन्देली व्याकरण की मूलाधार संस्कृत से ली गई

चार पाटियाँ है जिनका बुन्देली रूप भी साथ में है। परिशिष्ट के तृतीय भाग में बुन्देली बोली में लिखे गये कवित्वों एवं दोहों का प्रस्तुतीकरण है जिनमें बुन्देली व्याकरण के साथ बुन्देलखण्ड के जन जीवन की पद्यात्मक जानकारी प्राप्त होती है। परिशिष्ट चतुर्थ में है

ए लिंविस्टिक स्टडी ऑफ बुन्देली– डॉ. एम.पी. जायसवाल
(प्रकाशक – लीडेन ई.जै. ब्रिज 1962)

प्रस्तुत पुस्तक डॉ. जायसवाल की डी.लिट् का शोध–प्रबंध है, जिसे उन्होंने विदेशी प्रवास काल के दौरान उट्रिच विश्वविद्यालय में तैयार किया था। भूमिका में लेखक ने अपने इस कार्य को हिन्दी बोलियों के संबंध में किये जाने वाले कार्यों का प्रारम्भिक प्रयास माना है। लेखक के मतानुसार –

THE MAIN AIM OF THIS TREATISE IS TO FILL A GAP IN THE EXPLORATION OF HINDI DIALECTS. AT THE SAME TIME IT IS HOPED THAT IT WILL ALSO PREPARE A SCIENTIFIC BASE FOR MORE DETAILED STUDY OF WESTERN HINDI AND PROVIDE THE FUTURE STUDENT WITH SOME AUTHENTIC MATERIAL WHICH PREVIOUSLY WAS INACCESSIBLE.[5]

इस पुस्तक में लेखक ने प्रारम्भ में भूमिका के तत्पश्चात् प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दों के संक्षिप्त रूप को प्रस्तुत किया है। भूमिका में बुन्देली भूमि का इतिहास, पश्चिमी हिन्दी की विशेषताएँ, बुन्देली के विविध रूप और अध्ययन सामग्री का विश्लेषण किया है। शोध ाप्रबंध का मुख्य विषय ध्वनिविज्ञान के प्रथम अध्याय के रूप में प्रारंभ होता है। इसमें स्वर– व्यंजनों का वर्गीकरण स्थान प्रयत्न भेद के आधार पर किया गया है। इसी अध याय में ही अनुनासिक स्वराघात, उच्चारण, स्वर परविर्तन और व्यंजनों का सांगोपांग विवेचन हुआ है। द्वितीय अध्याय जो कि रूप विज्ञान से संबंधित है– में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, संख्या सम्बंध सूचक, अपरिवर्तनशील क्रिया, कारक प्रक्रिया और बलाघात[6] के अलावा परिशिष्ट में प्रामाणिक बुन्देली के नमूने और बुन्देली का संक्षिप्त शब्दकोश दिया गया है। यदि प्रस्तुत पुस्तक का हिन्दी रूपान्तर उपलब्ध होता तो इसकी आलोचना–प्रत्यालोचना के अधिक अवसर होते। क्योंकि इस पुस्तक में बुन्देली का भाषावैज्ञानिक अध्ययन तो प्रस्तुत किया गया है, परन्तु अध्ययन सामग्री संकलन का क्षेत्र केवल टीकमगढ़ जिला ही है, जो कि प्रामाणिक बुन्देली का व्याकरण नहीं माना जा सकता, क्योंकि बुन्देली को अनेक रूपों में अलग–अलग बोला जाता है और इनका

तुलनात्मक रूप में अध्ययन अपेक्षित है। वैसे भी लेखक ने स्पष्ट किया है कि वे हिन्दी बोलियों के अंतराल को भरने का प्रयत्न कर रहे हैं। निष्कर्षतः डॉ. जायसवाल की यह पुस्तक, लक्ष्मीचंद नुना के बुन्देली के संबंध में किए गये प्रयत्नों से आगे किया गया एक समृद्ध प्रयास है, जो बुन्देली की भाषावैज्ञानिक प्रवृत्ति को समझने में सहायक है।

बुन्देलखण्डीय भाषा– लक्ष्मीचंद नुना
(प्रकाशक नुना ब्रदर्स, टीकमगढ़, मध्यप्रदेश, 1966)

बुन्देली व्याकरण के प्रारम्भिक प्रयत्नों के रूप में प्रस्तुत पुस्तक का महत्त्व निर्विवाद है। लेखक ने स्वयं ही भूमिका में स्वीकार करते हुए लिखा है कि– 'बुन्देली भाषा की यह प्राथमिक पुस्तक है। अतः शुरुआत की कमियाँ होते हुए भी यह अपना काम करेगी। पुस्तक का मुख्य उद्देश्य साहित्य सौन्दर्य नहीं, अपमान में पड़ी अपनी मातृभूमि के अस्तित्व का प्रकाशन एवं रक्षा था।'[7]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है कि नुना जी ने प्रामाणिक व्याकरण लिखने का प्रयास नहीं किया है। 108 पृष्ठों की इस पुस्तक में बुन्देली भाषा, बुन्देलखण्ड के इतिहास, ध्वनि और उच्चारण क्रिया, बुनियादी क्रिया, क्रियाओं के कालसम्बन्धी रूपान्तर, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया विशेषण, संबंध वाचक, समुच्चयवाचक, विस्मयादि बोधक, वाक्यगठन, समास और बुन्देलखण्ड भूमि आदि जैसे शीर्षकों[8] से बुन्देलखण्ड और बुन्देली की समग्र जानकारी देने की चेष्टा की है। यद्यपि यह पुस्तक बुन्देली की स्थूल रूपरेखा ही प्रस्तुत करती है, फिर भी इसमें विषय को किंचित भी काम करने वालों ने एक मत से बुन्देली की दस स्वर ध्वनियों को स्वीकार किया है। व्यंजन ध्वनियों के संदर्भ में अन्तर मिलते हैं। लक्ष्मीचंद नुना ने केवल 27 व्यंजन माने हैं। देवनागरी लिपि के 16 अक्षर ऋ, म, लृ, अं, अः, न, ङ, ण, ढ़, श, ष, य, व, क्ष, त्र, ज्ञ आपने सम्मिलित नहीं किए हैं।

नुना जी ने स्वरों के उच्चारण के संदर्भ में कोई निर्देश नहीं दिया है। वे बुन्देली और हिन्दी के उच्चारणों में स्पष्ट भेद बताने में भी असमर्थ रहे हैं। उन्होंने स्पष्ट करना चाहा है कि हिन्दी स्वरों का प्रयोग करते समय उनमें 'अ' का विशेष योग होता है और इस 'अ' को समाप्त कर देने पर बुन्देली की ध्वनि बन जाती है। इसी प्रकार 'उ' 'इ' के उच्चारण में देखा जा सकता है।[9] शेष व्याकरण में नुना जी ने हिन्दी व्याकरण का आधार बनाकर बुनियादी क्रियायों की लम्बी तालिका दी है। बुन्देली की 750 मूल क्रियाएँ देकर उसकी 2050 से अधिक धातुएँ बतायी हैं। नुना जी ने बुन्देली भाषा का क्षेत्र भी बहुत व्यापक माना है। भाषाविदों की मान्यता है कि उत्तरप्रदेश के पाँच जिले

और मध्यप्रदेश के पाँच जिले मिलकर विशुद्ध बुन्देली का क्षेत्र बनाते हैं। परन्तु नुना जी ने इस क्षेत्र में सत्ताइस जिले, उत्तरप्रदेश के झाँसी, जालौन, हमीरपुर, बाँदा तथा मध्यप्रदेश के तेइस जिले जबलपुर से राजगढ़ तक नरसिंहपुर, छिन्दवाड़ा, बालाघाट समेत भिण्ड, मुरैना सम्मिलित हैं।[10] वास्तव में यह विश्लेषण वृहत्तर बुन्देलखण्ड की रूपरेखा तो प्रस्तुत करता है, लेकिन बुन्देली के शुद्ध क्षेत्र को प्रदर्शित नहीं करता। क्योंकि नर्मदा के नीचे का हिस्सा मिश्रित बुन्देली का है। इसी प्रकार चंबल और कालीसिंध के ऊपर का हिस्सा मालवी और ब्रज प्रभावित है। निष्कर्षतः नुना जी की यह पुस्तक प्रारंभिक प्रयत्नों के रूप में वंदनीय है, परन्तु बुन्देली व्याकरण को पूर्ण रूप में प्रस्तुत करने में सक्षम नहीं है।

बुन्देली : एक भाषावैज्ञानिक अध्ययन— आ. दुर्गाचरण शुक्ल/कैलाशबिहारी द्विवेदी (प्रकाशक — कला परिषद, टीकमगढ़)

प्रस्तुत पुस्तक बुन्देली से संबंधित निबंधों का संकलन है, जिनके माध्यम से रचनाकारों ने बुन्देली की भाषावैज्ञानिक प्रकृति विश्लेषित करने की चेष्टा की है। अपने इस प्रयास को लेखकों ने बुन्देली के क्षेत्रीय रूप, बुन्देली का समाजैतिहासिक स्वरूप, बुन्देली स्वरों का ध्वनि वैज्ञानिक अध्ययन, शब्द सम्पदा, लुप्तप्राय शब्दावली, बुन्देली शब्दों का व्युत्पत्ति मूलक अध्ययन, अर्थ वैज्ञानिक अध्ययन, लिंग व्यवस्था एवं बुन्देली की चार पाटियों, जैसे विषय शीर्षकों के माध्यम से स्पष्ट किया है। हालांकि पुस्तक का शीर्षक वैज्ञानिक विधि से बुन्देली के अध्ययन को उजागर करता है, परन्तु पुस्तक की विषयवस्तु वैज्ञानिकता को प्रमाणित नहीं करती है। सम्पादक के मात्र इस कथन से कि— 'दोनों लेखक इसी क्षेत्र के हैं, भाषा विज्ञान के विद्यार्थी रहे हैं। उनका प्रस्तुतीकरण निर्विवाद रूप से अधिक आत्मीय एवं प्रामाणिक माना जायेगा', प्रस्तुत विषयवस्तु की भाषावैज्ञानिक प्रामाणिकता सिद्ध नहीं हो जाती। यदि विषयवस्तु सूचकों के आधार पर संकलित की जाती और उसका विस्तृत रूप से विश्लेषण कर निष्कर्ष लिये जाते तो पुस्तक का अलग ही रूप होता।

लेखकद्वय ने डॉ. महेशप्रसाद जायसवाल और डॉ. रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल की पुस्तकों को आधार बनाकर संस्कृत की परम्परा से जोड़ा है एवं निष्कर्ष दिये हैं। बुन्देली एक विस्तृत क्षेत्र एवं समृद्ध साहित्य की बोली है। लेखक ने अपने विषयान्तर्गत सूत्र शैली को अपनाया है, जिसके कारण विषयवस्तु अधूरी एवं किंचित दुरुह हो गयी है, जिसके कारण पुस्तक में बुन्देली व्याकरण के समस्त अंगोपांगों को समाविष्ट नहीं किया जा सकता है। 'बुन्देली की लुप्तप्राय शब्दावली' एवं 'ओना मा सी घम' जैसे निबन्ध

नवीन हैं। निष्कर्षतः यह पुस्तक बुन्देली के स्वरूप विश्लेषण के प्रयासों की शृंखला की एक कड़ी है, जो अपने आप में महत्त्वपूर्ण है।

बुन्देली काव्यपरम्परा भाग–1 (प्राचीन काव्य) – डॉ. बलभद्र तिवारी (प्रकाशक – बुन्देली पीठ, हिन्दी विभाग, सागर विश्वविद्यालय, सागर 1971)

प्रस्तुत पुस्तक में डॉ. तिवारी ने बुन्देलखण्ड एवं बुन्देली पर विचार प्रकट करते हुए, बुन्देली व्याकरण को किंचित् विस्तार के साथ विश्लेषित किया है। बुन्देली को विगत 1000 वर्षों के लम्बे समयान्तराल में अनेकानेक रूपों को धारण करना पड़ा है, उनकी चर्चा इस पुस्तक में विशद रूप में विद्यमान है। साथ ही 55 पृष्ठों में बुन्देली व्याकरण का विवेचन भी किया गया है।[11]

लेखक ने ग्रियर्सन के आधार पर ही बुन्देली को 13 प्रमुख भागों में बाँटा है और प्रत्येक भाग के बुन्देली रूप के विभिन्न स्थानों का निर्देश भी दिया है। डॉ. ग्रियर्सन ने अपने भाषा सर्वेक्षण में जिन तथ्यों को छोड़ दिया था वे समग्र रूप में नहीं तो किंचित् रूप में ही इस पुस्तक में हैं। लेखक ने बुन्देली की सामान्य विशेषताएँ दर्शाते हुए थोड़े से उदाहरण भी दिये हैं, जो बुन्देली साहित्य और बुन्देली भाषा की प्रकृति को समझाने में सहायता प्रदान करते हैं। बुन्देली व्याकरण के अंतर्गत डॉ. तिवारी ने दस स्वर एवं इक्तीस व्यंजन माने हैं, जिन्हें स्थान–प्रयत्न के आधार पर उच्चारण रूप में वर्गीकृत किया गया है। तत्पश्चात् संज्ञा, लिंग, वचन, कारक–विधान, सर्वनाम और उनका रूप विवेचन, विशेषण क्रिया बनाने के नियम काल, विस्मयादि बोधक समास एवं कृदन्त आदि व्याकरण संबंधी विषयों पर लेखक ने विचार किया है।[12] इस सबके बावजूद विषयवस्तु की संक्षिप्तता पुस्तक में कमी का आभास कराती है। इसी प्रकार सीमावर्ती बुन्देली के व्याकरण रूपों को छोड़ दिया गया है। निष्कर्षतः बुन्देली पर लिखी गयी यह एक प्रामाणिक पुस्तक है, जो विस्तार की अपेक्षा रखती है।

बुन्देली में शोध की नयी–नयी दिशाओं के अन्तर्गत जितने शोधप्रबंध हुए हैं, उनमें डॉ. पवनकुमार जैन का शोधप्रबंध 'बुन्देली क्षेत्र के व्यवसाय एवं उनकी शब्दावली' भी एक है जो कि बुन्देली के क्षेत्र में हुए प्रारंभिक शोधप्रबंधों का प्रतिनिधित्व करता है। लेखक ने स्पष्ट किया हैं कि– 'अभी तक बुन्देली बोली का कोई भी शब्दसंग्रह देखने में नहीं आया है। इस प्रकार यह प्रबंध बुन्देली की व्यावसायिक शब्दावली के शब्द संग्रह के अभाव की पूर्ति करने का प्रथम मौलिक प्रयास है।'

इस शोधप्रबंध को डॉ. पवनकुमार जैन ने पाँच अध्यायों में विभक्त किया है। प्रथम

अध्याय के अन्तर्गत जो कि 'कृषि' शीर्षक से नामांकित है; में तेरह प्रकरण हैं, जिनमें भूमि का वर्गीकरण से लेकर खेत, खाद, जुताई, वुबाई, सिंचाई, फसलें, खेती के साधन आदि विषयों को शोध का आधार बनाया गया है। दूसरे अध्याय में भोजन, सब्जी, फल, मिठाई, मांस, दूध, पान, तेल, चलता–फिरता व्यवसाय बड़ी, पापड़, किराना, घी, पानी आदि से संबंधित शब्दावली है।

तीसरे अध्याय 'वस्त्राभूषण और साज–सज्जा' में बजाजी, सिलाई, सराफा, मनिहारी, केशकर्तन, धुलाई, चर्म उद्योग आदि विषय हैं।

चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत 'गृह निर्माण और गृह सामग्री' से संबंधित सामग्री संगृहीत है, जिसमें बढ़ईगिरी, मिट्‌टी और बाँस के बर्तन, भट्‌टा, रस्सी बनाना, झाड़ू, घर के विभाग इत्यादि विषय शोध की विषयवस्तु है।

पंचम अध्याय में 'इतर व्यवसाय' शीर्षक से विषय सामग्री प्रस्तुत की गयी है। यह अध्याय शोध का सबसे बड़ा अध्याय है, जिसमें जंगली व्यवसायों से लेकर जुआ, साहूकारी, सपेरे, लोहा, देशी दवाइयों की शब्दावली संग्रह की गयी। इन अध्यायों की सामग्री के अलावा परिशिष्टों में भी विषय–सामग्री प्रस्तुत की गई है। परिशिष्ट प्रथम में बुन्देली तथा ब्रजभाषा शब्दावली का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस परिशिष्ट में बुन्देली और ब्रज के ऐसे शब्दों को प्रस्तुत किया है, जो दोनों बोलियों में उच्चारण तथा अर्थ की दृष्टि से समानता लिए हुए हैं।

द्वितीय परिशिष्ट में बुन्देली और ब्रज के ऐसे शब्दों की तुलनात्मक व्याख्या प्रस्तुत है, जिनमें कि अर्थगत समानता तो है, परन्तु उच्चारण में अंतर है। अंतिम परिशिष्ट में बुन्देली और ब्रज के ऐसे शब्दों का अध्ययन है, जिनमें शब्दसाम्य तो है, परन्तु अर्थ में भिन्नता है।

उपर्युक्त विषयवस्तु के अलावा शब्दानुक्रमणिका, पुस्तकों की सूची एवं अंत में व्यवसायों की कुछ वस्तुओं के चित्र प्रस्तुत किये गये हैं।

यों तो 'बुन्देली में शोध प्रयत्नों की दृष्टि से' यह शोधप्रबंध महत्त्वपूर्ण है, किन्तु परिवर्तन कुछ और होते तो प्रबंध का एक अलग ही रूप लिये होता एवं वैज्ञानिक प्रयत्नों के समीप होता। प्रथमतः प्रस्तुत प्रबंध केवल सागर जिले की बुन्देली को आधार बनाकर लिखा गया है। निश्चय ही बुन्देली के अन्य जिलों के अनेक शब्दों में विभिन्नताएँ हैं, जिन्हें तुलनात्मक रूप से प्रस्तुत किया जाना चाहिए था। शीर्षक में 'बुन्देली क्षेत्र के

व्यवसाय एवं उनकी शब्दावली' अंकित है, जबकि शब्दावली केवल सागर जिले की ही है। सामग्री का विभाजन भी यथोचित प्रतीत नहीं होता। उदाहरणार्थ– खाने–पीने संबंधी शब्दावली को पृथक् एवं उससे संबंधित व्यवसायों की शब्दावली को अलग शीर्षकों के अन्तर्गत चलते–फिरते व्यवसाय एवं गल्ला व्यवसाय की शब्दावली में संगृहीत किया है। जबकि 'इतर व्यवसाय' शीर्षक में व्यवसायों के शब्द संगृहीत हैं। इसी प्रकार 'वस्त्राभूषण और साज–सज्जा' जैसे शीर्षक की शब्दावली में 'चर्म उद्योग' को सम्मिलित किया है, जबकि 'चर्म उद्योग' शीर्षक ही व्यवसाय विशेष का प्रतिनिधित्व करता है न कि साज–सज्जा की श्रेणी का, इसे व्यवसायों की सूची में स्थान दिया जाना चाहिए था। इसी प्रकार शब्दों के संकलन में अनेक प्रमुख वस्तुओं की शब्दावली को छोड़ दिया है। उदाहरणार्थ– कृषि की शब्दावली में 'बैलगाड़ी' जैसे शब्द को छोड़ दिया गया है, जबकि 'बुन्देलखण्ड में बैलगाड़ी' प्रमुख साधन है। इसी प्रकार खेती की शब्दावली तो है, अनाज निकालने की क्रिया जिसे 'दाँय' करना कहते हैं, कि शब्दावली का उल्लेख ही नहीं है। 'चकिया चलाना' गृह सामग्री या गृह संबंधी कार्य है, जिसे लेखक ने व्यवसाय की श्रेणी में रखा है। इसके सिवा इस शीर्षक में पीसने, फटकने आदि क्रियाओं का उल्लेख है, जबकि कूटने जैसी महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया को छोड़ दिया गया है। इस सबके सिवा रूई संबंधी व्यवसाय, रंगने संबंधी व्यवसाय, बीड़ी व्यवसाय, पत्थर से वस्तुओं बनाने जैसे गाँवों के व्यवसाय को लेखक ने अपने शोध की विषयवस्तु में स्थान नहीं दिया है।

बुन्देली का फाग साहित्य– श्याम सुन्दर बादल
(प्रकाशक – हिन्दी साहित्य परिषद, राठ, उ.प्र. 1964)

प्रस्तुत पुस्तक में श्री श्यामसुन्दर बादल ने प्रारंभ में बुन्देली की लोककविता फाग के साहित्य पर अपनी विश्लेषणात्मक दृष्टि डालने के पश्चात् बुन्देली के फाग साहित्य की भाषागत सीमा बतलाते हुए उसके विविध प्रकारों की चर्चा की है।[13] अपनी इस पुस्तक में बुन्देली के संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, क्रियार्थक संज्ञा, विशेषण, अव्यय, उपसर्ग, कृदन्त आदि पर विचार किया है और फाग साहित्य में आये कुछ शब्दों का विश्लेषण प्रस्तुत किया है। ये उर्दू, अंग्रेजी और ब्रज के शब्द हैं। वास्तव में बुन्देली की विशेषताओं को औपचारिक रूप से प्रस्तुत कर बादलजी का मुख्य उद्‌देश्य बुन्देली फाग साहित्य में पाठकों की रूचि जाग्रत करना ही है और यही कारण है कि इस पुस्तक में बुन्देली व्याकरण को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया गया है।[14] यह काव्य को समझने में सहायक सिद्ध होता है, परन्तु बुन्देली व्याकरण को समग्र रूप में विश्लेषित नहीं कर पाता। इसी

प्रकार लेखक ने ग्रियर्सन के विश्लेषण को आधार बनाकर बुन्देली की विभिन्न बोलियों पर अपने विचार प्रकट किये हैं। यही कारण है कि इस पुस्तक के माध्यम से बुन्देली व्याकरण का संपूर्ण और सही परिज्ञान संभव नहीं हो सका है।

बुन्देली का लोकसाहित्य– डॉ. रामस्वरूप श्रीवास्तव
(प्रकाशक – रंजन प्रकाशन, आगरा, 1976)

लोक साहित्य की भूमिका को स्पष्ट करने वाली यह पुस्तक बुन्देली के उद्‌गम और विकास[15] पर संक्षेप में प्रकाश डालती है। इस पुस्तक में बुन्देली के विभिन्न रूपों को परिचयात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है।[16] खड़ी बोली के साथ बुन्देली की उप–बोलियों के नमूने प्रस्तुत करने के लिये लेखक ने हमीरपुर, छतरपुर, बाँदा, होशंगाबाद, ग्वालियर, गुना, सागर आदि जिलों की बालियों को केवल तीन वाक्यों[17] के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है, व्याकरण के किसी अन्य पक्ष को नहीं। इसके अलावा बुन्देली कहावतों को भी लेखक ने अपनी विषय–वस्तु में स्थान दिया है। निष्कर्षतः यह पुस्तक बुन्देली की व्याकरणिक संरचना पर विशेष प्रकाश नहीं डालती। वस्तुतः बुन्देली लोकसाहित्य की सामान्य सी प्रस्तुति ही है।

बुन्देली में शोधार्थियों की संख्या दिन प्रति–दिन बढ़ती जा रही है। डॉ. भगवानदीन मिश्र भाषाविज्ञान से जुड़े ऐसे बुन्देली प्रेमी भाषावैज्ञानिक हैं, जिन्होंने बुन्देली में शोध की नवीन दिशाओं का परिचय कराया है। मिश्रजी ने बुन्देली की भौगोलिक स्थिति के नवीन विश्लेषण की दृष्टि से सागर विश्वविद्यालय की मध्यभारती पत्रिका के 1973 के अंक 14–16 में 'बुन्देली की सीमाएँ मानचित्रगत एक अध्ययन सर्वेक्षण नामक लेख में डॉ. ग्रियर्सन के बुन्देली से संबंधित कार्य, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, डॉ. बलभद्र तिवारी, डॉ. रामेश्वरप्रसाद अग्रवाल, डॉ. एम.पी. जायसवाल, डॉ. हरदेव बाहरी, डॉ. लता दुबे, डॉ. हीरालाल शुक्ल एवं स्वयं के कार्य को अपने विश्लेषण का आधार बनाया है। हालांकि उपर्युक्त लेखकों के कार्यों पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ ही प्रस्तुत की गयी हैं, परन्तु सटीक हैं। लेख को पढ़कर कम से कम समय में बुन्देली से संबंधित शोधकार्यों की (विशेषतः बुन्देली की भौगोलिक स्थिति पर) जानकारी प्राप्त की जा सकती है। डॉ. मिश्र का दूसरा लेख सागर विश्वविद्यालय के हिन्दी के बुन्देली पीठ की वार्षिक पत्रिका 'ईसुरी 83–84' में उद्धृत है। पत्रिका के प्रथम खण्ड में 'सागर जिला का कलानिधि' कृष्ण भट्ट देवर्षि नामक शीर्षक बुन्देली की विस्मृत प्रतिभा का परिचय कराया है, जबकि इसी पत्रिका के खण्ड तीन में भाषा और बोली के अंतर्गत 'बुन्देली का अबुन्देली क्षेत्र' नामक लेख में बाँदा जिले की भाषायी स्थिति का मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। क्योंकि कुछ

भाषावैज्ञानिक बाँदा जिले को बुन्देली क्षेत्र के अंतर्गत मानते हैं तो कुछ नहीं। प्रस्तुत लेख में डॉ. मिश्र ने बताया है कि बाँदा जिले की बोली पर बैसवाड़ी एवं अवधी की एक प्रधान उपबोली का प्रभाव अधिक है, अपेक्षाकृत बुन्देली के। अपने निष्कर्ष की पुष्टि में लेखक ने भाषावैज्ञानिक पद्धति के आधार प्रमाण प्रस्तुत किये हैं। डॉ. मिश्र के उपर्युक्त लेख बुन्देली के शोधार्थियों के लिए दिशा– निर्देशन करते हैं। लेखक का स्वयं का शोध–प्रबंध 'बाँदा जिले के भाषा भूगोल' पर है, जिससे हमें बुन्देली की सीमाओं के संबध में निष्कर्ष निकालने में सहायता मिलती है।

परिनिष्ठित बुन्देली का व्याकरणिक अध्ययन– डॉ. रमा जैन
(प्रकाशक – विन्ध्याचल प्रकाशन, छतरपुर म.प्र.)

प्रस्तुत शोधप्रबंध अवधेशप्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा की पी.एच.डी. की डिग्री के लिए प्रस्तुत किया गया था। इसमें बुन्देली व्याकरण को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया गया है। विषय प्रवेश में लेखिका ने बुन्देलखण्ड के भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक परिचय के साथ बुन्देली भाषा के उद्‌गम विकास तथा उसकी बोलियों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। प्रथम खण्ड में वर्ण विचार है। द्वितीय खण्ड में शब्द विचार है। इसमें बुन्देली भाषा के विकारी और अविकारी शब्दों का उदाहरण सहित अनुशीलन है। प्रचलित भाषा के विविध उदाहरणों से परिपूर्ण है। तीसरा खण्ड वाक्य विचार से संबंधित है। इसमें बुन्देली वाक्यरचना, वाक्यों के विविध प्रकारों, विराम चिह्नों आदि विषयों पर सम्पर्क प्रकाश डाला गया है। परिशिष्ट में इस क्षेत्र में प्रचलित व्याकरण तथा संधि संबंधी पाटियाँ दी गयी हैं। ये बुन्देली की पाटियाँ संस्कृत व्याकरण सूत्रों के बुन्देली रूप हैं।

लेखिका ने यह शोधप्रबंध ग्रियर्सन के भाषा सर्वेक्षण का आधार बनाकर ही प्रस्तुत किया है। इसमें तब के प्रकाशित संक्षिप्त व्याकरणों की कहीं भी चर्चा नहीं है और न ही लेखिका ने कोई ऐसा प्रयत्न ही किया है कि वह श्यामसुन्दर बादल, गौरीशंकर द्विवेदी, राजेन्द्र सिंह, डॉ. महेशप्रसाद जायसवाल, डॉ. बलभद्र तिवारी के द्वारा लिखित ग्रंथों का अवलोकन करे और बुन्देली व्याकरण को सही दिशा दे सकें। बुन्देली साहित्य का किंचित अध्ययन श्रीमती रमा जैन को करने की आवश्यकता ही महसूस नहीं हुई, अन्यथा 'श्यामसुन्दर बादल जैसे मनीषी द्वारा लिखित संक्षिप्त व्याकरण का उल्लेख वे अवश्य करतीं। एक अन्य तथ्य यह है कि ग्रंथ की संरचना में संस्कृत और संस्कृत के व्याकरण का प्रभूत मात्रा में प्रयोग किया गया है। 'परिनिष्ठित बुन्देली' का अर्थ ग्रियर्सन के द्वारा प्रतिपादित प्रामाणिक बुन्देली को मानकर लेखिका ने अपनी इतिकर्तव्यता समझ

ली है। जहाँ तक बुन्देली की सामान्य विशेषताओं की बात है, लेखिका इन्हें भी ठीक ठाक प्रस्तुत करने में असमर्थ रहीं हैं। ऐसा लगता है कि बुन्देलखण्ड में सरसरी तौर पर और बुन्देली व्याकरण पर सतही तौर पर विचार करके लेखिका हिन्दी व्याकरण को बुन्देली बोली पर आरोपित कर रही हैं। यदि श्रीमती रमा जैन ने डॉ. कृष्णलाल हंस की 'बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप' नामक पुस्तक (सन् 1976) का अध्ययन किया होता तो 'बुन्देली के व्याकरणिक अध्ययन' में अधिक सटीक आधार मिला होता। इस प्रकार श्रीमती रमा जैन ने व्याकरण लिखा है और जिसमें सूचकों का आधार नहीं है और न ही परिनिष्ठित बुन्देली को व्याकरण में बाँधने की चेष्टा की गयी है।

बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप– डॉ. कृष्णलाल हंस
(हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1976 में प्रकाशित शोध प्रबंध)

बुन्देली के भाषा वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से किया गया अत्यंत महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक अध्ययन है। डॉ. प्रेमनारायण शुक्ल ने इस शोधप्रबंध के महत्त्व को उद्धृत करते हुए लिखा है– 'डॉ. हंस ने इस ग्रंथ के प्रणयन में अधुनातन तकनीकों के साथ–साथ व्यापक परिभ्रमण कर अपनी अध्ययन सामग्री का सार्थक संयोजन, संपादन एवं संकलन किया है। बुन्देली लोकगीतों, लोककथाओं, लोकोक्तियों, मुहावरों एवं क्षेत्रीय शब्दावलियों का श्रमसाध्य संग्रह करके प्रत्येक दृष्टि से सर्वांगपूर्ण ग्रंथ प्रस्तुत करने का उनका यह स्तुत्य प्रयास है।'[18]

हंस जी का यह प्रयास रामेश्वरप्रसाद अग्रवाल, महेशप्रसाद जायसवाल और पी. सी. श्रीवास्तव की परम्परा में ही है। प्रस्तुत–शोध प्रबंध में बुन्देली के सभी रूपों एवं उपरूपों का भाषावैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया है। यह शोध प्रबंध तीन खण्डों में विभाजित है।

प्रथम खण्ड में 'बुन्देली का उद्‌भव और विकास' शीर्षक के अंतर्गत बुन्देलखण्ड क्षेत्र के नामकरण संबंधी मान्यताओं, क्षेत्र की भौगोलिक सीमा, भाषाई सीमांकन आदि के संक्षिप्त विवेचन के पश्चात् प्रथम अध्याय से लेकर तृतीय अध्याय तक में बुन्देली के उद्‌भव, बुन्देली के विविध रूपों का विकास तथा लोकभाषा की शब्द सम्पदा के भण्डार का विश्लेषणात्मक विवेचन प्रस्तुत किया गया है। द्वितीय खण्ड में विशुद्ध भाषावैज्ञानिक दृष्टि से बुन्देली का विश्लेषण किया गया हैं, जिसमें 'बुन्देली का ध्वनि ग्रामिक एवं पद ग्रामिक अध्ययन' नामक शीर्षक देकर पाँच अध्यायों के अंतर्गत क्रमशः बुन्देली की ध्वनि, ध्वनि विकास, ध्वनि संगठन और विस्तृत पदग्रामिक अध्ययन विवेच्य है। तृतीय एवं

अंतिम खण्ड में 'बुन्देली के क्षेत्रीय रूप' शीर्षक के अंतर्गत संपूर्ण बुन्देली भाषी क्षेत्र में प्रयुक्त एवं प्रचलित बुन्देली के विभिन्न क्षेत्रीय रूपों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस खण्ड के प्रथम अध्याय में बुन्देली के भौगोलिक स्वरूप का प्रस्तुतीकरण है। अगले अध्याय में दक्षिणी, पूर्वी, पश्चिमी एवं मध्यवर्ती क्षेत्र के बुन्देली रूपों का वैज्ञानिक विवेचन विश्लेषित किया गया है। इन सबके साथ परिशिष्ट में निमाड़ी और बुन्देली का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

लेखक का प्रयास सभी दृष्टियों से उल्लेखनीय है। बुन्देली की शब्दसम्पत्ति का विवेचन अभूतपूर्व है। बुन्देली के उपरूपों का विश्लेषण लेखक के श्रमसाध्य प्रयास की दृष्टि का प्रमाण है। बुन्देली के विकास के सम्बन्ध में हंस जी का विवेचन बुन्देली की ऐतिहासिकता का तार्किक प्रमाण है, जो इतने व्यवस्थित तरीके से इसी ग्रंथ में देखने में मिल सका है, जिसे लेखक ने काव्यभाषा के रूप में, राजभाषा के रूप में बुन्देली का विकास दिखाया। इसी प्रकार तत्सम शब्दों का बुन्देली में रूपांतरण भी इस शोधप्रबंध की अभूतपूर्व विशेषता है।

डॉ. कृष्णलाल हंस ने कई पत्रों, सनदों, शिलालेखों तथा दानपत्रों के आधार पर यह स्थापना दी है कि पश्चिमी हिन्दी की बोलियों में बुन्देली एक मात्र ऐसी बोली है, जिसे निरंतर 400 वर्षों तक राजभाषा के गौरवपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित रहने का अवसर मिला है।[19] इस स्थापना के आरम्भिक प्रमाण में उन्होंने निम्न सनद दी है।[20]

'पं. श्री गुसाई जगजीवनदास जू को दिवान भगवान राई जू देव आपर दछिना दाखल पा रख दियों मुमको परगने डामरीन के इमलिया मौजी बमौरा रकम हबूब माफ परवानगी रोहबरौ कोउ मुजाई न हुए बरकरार, बेदखकन आषाढ़ सदी। संवत् 1635 मुकाम जैरौन लिखत प्राः माखन।'

इस सनद के अन्तर्गत संवत् 1635 की बुन्देली का वह गद्य रूप है, जो इस समय राजकाज के रूप में स्वीकार कर लिया गया था। केन्द्रीय सत्ता में मुस्लिम आधिपत्य के कारण फारसी का प्रभाव बुन्देली पर भी स्पष्ट दिखायी देता है और परगने, मौजो, परवानगी, रौहबरौ, मुजाईन, रिकरार, बेदखल शब्द रूप इसी प्रभाव के परिणाम हैं।

बुन्देली क्षेत्र की बुन्देली के ध्वनिगत् विभेदों की चित्रावली का अध्ययन–
डॉ. लता दुबे, निर्देशक – डॉ. रमेशचंद्र मेहरोत्रा

प्रस्तुत शोधप्रबंध पूर्णरूपेण क्षेत्रीय कार्य पर आधारित बोली– भूगोल की दिशा में

महत्त्वपूर्ण प्रयास है। इसमें बुन्देली की सीमा रेखाओं एवं उनके क्षेत्र निर्धारण समुदायों और सूचकों का विवरण तथा इस क्षेत्र में प्राप्त ध्वनि विभेदों को 94 मानचित्रों में, ध्वनिकुल समुदायों के रूप में दर्शाया गया है।

ध्वन्यात्मक विभेदों की सामग्री को देवनागरी लिपि में न लिखा जाकर INTERNATIONAL PHONIXC ALAPHABATE में लिखा गया है। डॉ. लता दुबे ने यह शोध प्रबंध छह अध्यायों में लिखा है।

पहले अध्याय में– बुन्देली जिलों का मानचित्र, बुन्देली क्षेत्र की सीमाएँ, बुन्देली की उपबोलियाँ, कार्यप्रणाली, कार्यविस्तार आदि का उल्लेख है।

दूसरे अध्याय में– समुदायों का मानचित्र बनाया गया है। समुदायों को जनसंख्या के आधार पर कुछ वर्गों में रख लिया था।

तीसरे अध्याय में– सूचक सूची तैयार की है, सूचकों के प्रकार इस तरह बनाये गये हैं – शहरी, शिक्षित, सामाजिक, वृद्ध आदि।

चौथे अध्याय में– तथ्य संग्रह पेश किया गया है।

पाँचवें अध्याय में– मानचित्र बनाये गये हैं, जैसे– भेद के मानचित्र (क्र. 38), स्वरभेद के मानचित्र (क्र. 34), स्वरागम तथा स्वरलोप के मानचित्र (क्र. 4), व्यंजनागम तथा व्यंजन लोप के मानचित्र (क्र. 6), बढ़ाकर बोलने की प्रवृत्ति के मानचित्र (क्र. 6), द्वित्व के मानचित्र (क्र. 2), समीकरण में अनुनासिकता वाले मानचित्र (क्र. 2), विषमीकरण के मानचित्र (क्र. 1), विपर्यय के मानचित्र (क्र. 3)।

अंतिम छठे अध्याय में – समीक्षा और निष्कर्ष उच्चारण के आधार पर बुन्देली की ध्वनिगत विशेषताओं का अध्ययन किया गया है। पर उनमें परिवर्तनों की संख्या इतनी अधिक है कि उपबोली की रेखाएँ स्पष्ट नहीं खींची जा सकती। भाषाविज्ञान की दृष्टि से डॉ. लता दुबे का यह प्रयास बहुत महत्त्वपूर्ण है। विशिष्ट योगदान करने वाला यह शोध–प्रबंध बुन्देलखण्ड की भाषा को प्रस्तुत करने वाले समग्र व्याकरण की कमी पूर्ति नहीं करता है। वस्तुतः बुन्देली व्याकरण को संक्षेप में समझा दिया गया है या उसका भाषावैज्ञानिक अध्ययन क्षेत्रीय रूपों के आधार पर दिया गया है, जो अंशतः तो अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य है, पर बुन्देली के व्याकरणिक अध्ययन में सहज–सरल और बोधगम्यता के पक्ष से शून्य है। वास्तव में बुन्देली व्याकरण पर अभी तक सांगोपांग विवेचन हुआ ही नहीं। कुछ शोधप्रबंध अवश्य लिखे गये हैं पर वे बुन्देली के व्याकरणिक अनुशीलन के लिये पूर्ण नहीं हैं।

बुन्देली क्षेत्र की बुन्देली के अर्थगत् विभेदों की चित्रावली का अध्ययन—
डॉ. राधेश्याम दुबे, निर्देशक — डॉ. भगवानदीन मिश्र

डॉ. राधेश्याम दुबे का प्रस्तुत शोधप्रबंध 'बुन्देली के अर्थगत् विभेदों की चित्रावली का अध्ययन'[24] पूर्णरूपेण क्षेत्रीय भाषा सर्वेक्षण पर आधारित कार्य है। इस शोधप्रबंध में बुन्देली के अर्थगत विभेदों के अंतर्गत शब्द के पर्यायों और अर्थभेदों के विवरण का अध्ययन है। इसमें उपबोली क्षेत्रों के निर्माण पर प्रकाश पड़ता है। बुन्देली क्षेत्र संबंधी गलतफहमियाँ दूर करने में यह शोध प्रबंध सहायक है। डॉ. राधेश्याम दुबे का यह कार्य अनुसंधान के क्षेत्र में भाषाविज्ञान के साथ कला, मानविकी तथा जीवविज्ञान के अनुसंधान कर्ताओं को भी जानकारी दे सकता है। डॉ. दुबे ने तोड़ा तरफदार, झाँसी आदि में भ्रमण कर प्रश्नावलियाँ तैयार की हैं तथा सूचक तैयार किये हैं, फिर सूचकों को मानचित्र पर दर्शाया है। प्रस्तुत प्रबंध में दो प्रकार के मानचित्र बनाये गये हैं— पर्याय और अर्थभेदक। डॉ. दुबे ने कुल 302 मानचित्र तैयार किये हैं। लेखक ने प्रश्नावली से लेकर मानचित्र में वितरण आदि को अपने ढंग से रखा है। यह अध्ययन छह अध्यायों में रखा गया है। पहला अध्याय (भूमिका)— सर्वेक्षित बुन्देली क्षेत्र का निर्धारण और परिचयात्मक जानकारी के साथ विषय का प्रस्तुतीकरण है।

दूसरा अध्याय — समुदायों के संबंध में है।

तीसरा अध्याय — सूचकों के प्रकार तथा उनके वितरण का है।

चौथे अध्याय में संकलित सामग्री तीन श्रेणियों में— एकरूप, पर्याय और अर्थभेद में संपादित है। इसके पूर्व में शब्दावली (प्रश्नावली) दी गयी है। पाँचवाँ अध्याय बुन्देली के मानचित्रों में संकलित सामग्री के वितरण को दर्शाता है।

छठे अध्याय में संकलित सामग्री और मानचित्रों के आधार पर विश्लेषण किया गया है, और निष्कर्ष दिये गये हैं। अंत में परिशिष्ट है।

वेध, केका, चुका, नरता, सार्थवाही और व्यास बुन्देली उपबोली क्षेत्रों का विभाजन बिल्कुल नवीन है। इनका शोधप्रबंध अनुसंधान की नयी दिशा है।

जैसा कि उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि यह शोधप्रबंध बुन्देली के भाषावैज्ञानिक आधार पर लिखा गया है। यह बुन्देली के व्याकरणिक पक्ष को बिल्कुल भी स्पष्ट नहीं करता, अतः बुन्देली के व्याकरणिक पक्ष की कमी को पूरा नहीं करता, जो कि बुन्देली बोली के विकास के लिए अत्यंत आवश्यक पक्ष है।

झाँसी की बोली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन– डॉ. रामजीशरण दांगी

यह शोध कार्य अपेक्षाकृत विशिष्टता लिए हुए है। अनुसंधित्सु ने झाँसी जिले के बोली रूप को विशुद्ध, स्टेंडर्ड मानक और परिनिष्ठित बुन्देली माना है।[21]

स्वर व्यंजनों को आधार बनाकर झाँसी जिले की बोली के ध्वनि संगठन पर विचार करते हुए डॉ. दांगी ने आँतर, उकरुँ और आँत की सानुनासिकता पर तथा अकुइया, आलसी और भाग आदि कई शब्दों की निरनुनासिकता पर विचार किया है।[22] उन्होंने नौं, मौं, लौं, भौं, दी, काँ, जाँ और मा जैस एकाक्षरी व्यवहारों को विश्लेषित किया है जो क्रमशः नाखून, मुख, तक, भौह, दीमक कहाँ, जहाँ, वहाँ के अर्थ में प्रचलित हैं।

झाँसी जिले में व्यवहार में लाई जाने वाली बोली की व्याकरणिक रूपरेखा को इस शोध–प्रबंध में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रियाविशेषण, कारकीय संरचना शीर्षकों के अन्तर्गत विवेचित किया गया है।[23] निठुवई, नातर, ठउआ, जालंग, वालंग, जाजोर, तपसिया और हिंना जैसे विशिष्ट शब्द व्यवहारों को भी विश्लेषण का आधार बनाया गया है, जो क्रमशः बिल्कुल नहीं, नहीं तो, कुछ, इधर–उधर, इस समय, समझौता और इधर के अर्थ देते हैं। झाँसी जिले की बोली के सम्बन्ध में यह शोध–प्रबंध उल्लेखनीय है।

बुन्देलखण्डी भाषा और साहित्य–श्री कृष्णानंद गुप्त

बिहार राष्ट्रभाषा परिषद– पटना के नवम वार्षिकोत्सव पर 28 मार्च 1960 ई. को दिया गया यह भाषण प्रकाशित है। अपने 35 पृष्ठों के इस भाषण में श्री कृष्णानंद गुप्त ने प्रारंभ में बुन्देलखण्ड की सीमाओं का उल्लेख किया है। भाषागत सीमाओं को निर्धारित करने के पश्चात् उन्होंने बुन्देली के क्षेत्रीय रूपों का विवरण दिया है। उनके विवेचनानुसार बुन्देली का सर्वप्रथम उल्लेख सन् 1843 ई. में मेजर आर. लीच ने एशियाटिक सोसायटी के जनरल में किया था।[24] बुन्देली की विशेषताओं को उद्घाटित करते हुए श्री गुप्त जी ने सबसे बड़ी विशेषता औकारान्तता को माना है। अनुनासिकता, हकारलोप तथा हकार लोप की प्रवृत्ति को भी उन्होंने विश्लेषित किया है। व्याकरण संबंधी संक्षिप्त रूपरेखा को दर्शाने के बाद बुन्देली शब्दसंपत्ति, साहित्य, लोकसाहित्य का विवरण इस आलेख के अन्तर्गत ही परिशिष्ट में सोहर, विवाहगीत, नौरता, दादरे, गोटें, पँवारे, भागें, कनातें, बुझौबलें उदाहरण के रूप में सम्मिलित किये गये हैं। इस तरह बुन्देली भाषा और साहित्य की परिचयात्मक विश्लेषण में इस आलेख का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

भिण्ड की बोली का अनुशीलन– डॉ. श्यामसुन्दर सोनकिया

बुन्देलखण्ड वि.वि. झाँसी की पीएच.डी. उपाधि के लिए यह अप्रकाशित शाध–प्रबंध विषय प्रवेश से लेकर परिशिष्ट तक दस अध्यायों में वर्गीकृत है। इसके अन्तर्गत भिण्ड जिले की बोली के शब्द सम्पदा का पदार्थपरक वर्गीकरण, व्याकरणिक रूपरेखा, ध्वनि संबंधी विश्लेषण और वाक्यरचना पर विचार किया गया है। व्याकरणिक रूपरेखा के अंतर्गत शब्द पद, संज्ञा, लिंग, वचन, कारक, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, अव्यय तथा शब्दरूपों का विवेचन है।[25] भिण्ड जिले की बोली में समीकरण की प्रवृत्ति (हद्दई तो कद्दई) की भाँति सर्वत्र उपलब्ध है।[26]

कुछ जातियाँ भिण्ड जिले के अंतर्गत समूह बनाकर बसी हुईं हैं। समूह में बसने की यह प्रवृत्ति एक ओर सत्ता के प्रति अनुराग की परिचायक है, तो दूसरी ओर जातिगत सुरक्षा का आधार है। इन जातिसमूहों को 'घार' कहा जाता है। अर्थ केधरातल पर विशिष्टता लिये होता है, ऐसे घारों को आधार बनाकर भिण्ड जिला भदावर घार, जटवारा घार, राजपूत घार, नरवरिया घार, और कछवाय घार में बँटा हुआ है तथा इस शोधप्रबंध के अन्तर्गत इनकी ध्वनिगत विशिष्टताओं को बोली भूगोल के माध्यम से दर्शाया गया है।

नरसिंहपुर की बुन्देली बोली का अध्ययन– डॉ. कमलनारायण दुबे

जबलपुर विश्वविद्यालय द्वारा पी.–एच.डी. शोधोपाधि के लिए स्वीकृत अप्रकाशित शोधप्रबंध डॉ. कमलनारायण दुबे का है। प्रारंभ में बुन्देली की भाषाई सीमायें निर्धारित करने के पश्चात् बुन्देली की भाषाई सीमाओं का विश्लेषण किया गया है। उत्तर में बुन्देली भाषाक्षेत्र को डॉ. दुबे चंबल नदी के आगे आगरा और मैनपुरी तक स्वीकार करते हैं।[27]

नरसिंहपुर जिले के अंतर्गत दैनिक व्यवहार में आने वाली बुन्देलखण्डी बोली की व्याकरणिक रूपरेखा पर विचार करने के लिये डॉ. दुबे ने ध्वनि शब्द, पद और वाक्य रचना पर विचार किया है। उपसर्ग तथा प्रत्ययों के योग से शब्दावली के निर्माण में जो सहयोग मिलता है, उसको विश्लेषित करते हुए उन्होंने लिंग एवं वचन का विवेचन किया है।

इस शोध–प्रबंध के अन्तर्गत सभी व्याकरणिक कोटियों का विश्लेषण जिले में व्यवहृत बोलीरूपों को आधार बनाकर किया गया है। पूँछत–पूँछत, ढिंगा–ढिंगा जैसी

पुनरुक्तियों[28] भुनसारा, दिन चढ़े, तुरतऊँ, अगारुँ–पछारुँ, भाँ–झाँ, अगीति–पछीति जैसे विशेषणों[29] कारकों के विकारी और अविकारी रूपान्तरों[30] का विश्लेषण नामक पदसंज्ञा सर्वनाम की भाँति[31] किया गया है।

बुन्देली क्षेत्र के स्थान– अभिधानों का भाषावैज्ञानिक अध्ययन – डॉ. कामिनी

जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर की डी.लिट्. उपाधि के लिए स्वीकृत शोधप्रबंध तेरह अध्यायों में वर्गीकृत है, जिसमें बुन्देली भाषी क्षेत्र के स्थान की रूप–रचना पर विचार किया गया है। इस शोधप्रबंध के अंतर्गत बुन्देली के स्वरूप, विकास और व्याकरणिक रूपरेखा का विवरण प्रस्तुत किया गया है।[32]

इस शोधप्रबंध के अन्तर्गत लट्ठ, गाजर, मूरा, बोरका, छोलन और चमचा जैसे जीवन्त शब्दरूपों को भी विवेचित किया है।[33]

दतिया जिले के ग्रामनामों की रूपरचना को विश्लेषित करते हुए भी डॉ. कामिनी ने दतिया जिले की बोली के व्याकरणिक रूप को संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रियाविशेषण शीर्षकों के अन्तर्गत विवेचित किया है।[34]

बुन्देलखण्ड के रासो काव्य– डॉ. श्यामबिहारी श्रीवास्तव

'बुन्देलखण्ड के रासो काव्य' शोध प्रबंध के अंतर्गत डॉ. श्यामबिहारी श्रीवास्तव ने रासो रचनाओं के मूल प्रतिपाद्य को लक्षित करते हुए बुन्देली भाषा सम्बन्धी विशिष्टताओं को रेखांकित किया है और बुन्देली भाषा संबंधी विशिष्टताओं में ध्वनिगत प्रखरता को वे सर्वोपरि मानते हैं।[35]

इसी प्रकार हिन्दी और दतिया जिले की बोली के सर्वनाम, अव्यय तथ कारक चिह्नों का तुलनात्मक अध्ययन के अन्तर्गत भी बुन्देली के पँवारी बोलीरूप की व्याकरण संबंधी विशेषताओं का उल्लेख है।[36]

बुन्देली का स्वरूप– श्री दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव

हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, आगरा विश्वविद्यालय की शोधपत्रिका 'भारतीय साहित्य' में प्रकाशित यह शोधनिबंध बुन्देली के स्वरूप को स्पष्ट करने में मदद करता है। इस आलेख के प्रारंभ में बुन्देली का स्वरूप और बुन्देली भाषी क्षेत्र का परिचय दिया

गया है तथा बुन्देली के शुद्ध और मिश्रित रूपों पर विचार किया है। संज्ञारूपों के वचन और लिंग निर्धारण का विश्लेषण भी महत्त्वपूर्ण है।[37] दैनिक व्यवहार संबंधी शब्दावली को इस आलेख में वस्त्र, शरीरांग, बर्तन, आभूषण, पशु–पक्षी, रिश्ते, भोजन सामग्री, फल, तरकारी, समय मापक संबंधी शब्दों के अन्तर्गत रखकर विश्लेषित किया गया है और इन्हीं आधारों पर बुन्देली की ब्रज से पृथकता लक्षित की गयी है।

विशेषण, अव्यय, क्रिया, काल के आधार पर बुन्देली के संरचनात्मक स्वरूप को विश्लेषित करने वाले इस आलेख में बुन्देली व्याकरण की प्रारंभिक रूपरेखा समावेशित है।

ग्वालियर जनपद की हिन्दी– डॉ. विनयमोहन शर्मा

डॉ. विनयमोहन शर्मा ने अपने आलेख में ग्वालियर स्थान नाम की व्युत्पत्ति के संबंध में विचार किया है और इस जनपद को उन्होंने 'मध्यप्रदेश की मणि' माना है। ग्वालियर संभाग की सीमा में आने वाले छह जिलों के भाषायी रूपों को डॉ. शर्मा ब्रज अथवा ग्वालियरी और बुन्देली तथा बुन्देलखण्डी मानते हैं। उन्होंने प्रमुखता के आधार पर ग्वालियर को ऐसी बुन्देली का क्षेत्र माना है, जिसमें ब्रज के साथ भदावरी और मुरैना की तँवरघारी का छिड़काव है।

ग्वालियर संभाग की बोली में डॉ. शर्मा ने आठ स्वर और छब्बीस व्यंजनों का उल्लेख किया है। साथ में उच्चारण संबंधी विशेषताओं को विश्लेषित किया है। उनके ध्वनि प्रणाली और शब्दप्रयोग की विशिष्टता संबंधी विश्लेषण महत्त्वपूर्ण हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार इस अध्याय में बुन्देली के अब तक बने व्याकरणों पर चर्चा की गयी है। मध्यप्रदेश के बाइस और उत्तरप्रदेश के पाँच जिले मिलकर बुन्देली का क्षेत्र निर्धारण करते हैं। बुन्देली के अब तक विविध व्याकरण बन चुके हैं। इनमें से कुछ ग्रंथ पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुके हैं और कुछ विभिन्न विश्वविद्यालयों में शोधप्रबंध के रूप में रखे हैं। इन शोधग्रंथों से बुन्देली का व्याकरण समझने में काफी हद तक मदद मिलती है। मैंने अपने लेखन सांगोपांग बनाने के लिए इन ग्रंथों से पर्याप्त सहायता ली है।

संदर्भ

1. सर जार्ज ग्रियर्सन; भारत का भाषा सर्वेक्षण; खण्ड 9
2. वही; पृ. 174, 125—244,
3. वही; पृ. 88—89।
4. वही; पृ. 248—252, 5. डॉ. एम.पी. जायसवाल; ए लिंग्विस्टिक स्टडी ऑफ बुन्देली; पृ. 9.
6. वही; पृ. 7, 7. लक्ष्मीचंद नुना; बुन्देलखण्डी भाषा व्याकरण एवं शब्दकोष भूमिका.
8. वही; विषय—सूची, 9. वही; पृ. 20
10. वही; पृ. 107—108
11. डॉ. बलभद्र तिवारी; बुन्देली काव्य परंपरा भाग 1; पृ. 83
12. वही; पृ. 141।
13. श्यामसुन्दर बादल; बुन्देली का फाग साहित्य; पृ. 414—418
14. वही; पृ. 141.
15. डॉ. रामस्वरूप श्रीवास्तव; बुन्देली लोक साहित्य; पृ. 19.
16. वही; पृ. 25. 17. वही; पृ. 26.
18. डॉ. कृष्णलाल हंस; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप
19. वही; पृ. 75, 20. वही; पृ. 78.
21. डॉ. रामजीशरण दांगी; झांसी जिले की बोली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन; पृ. 40.
22. वही; पृ. 42.
23. वही; पृ. 24—248.
24. कृष्णानंद गुप्त; बुन्देलखण्डी भाषा और साहित्य; पृ. 5.
25. डॉ. श्यामसुन्दर सोनकिया; भिण्ड जिले की बोली का अनुशीलन पृ. 38, 45, 46, 53.
26. वही; पृ. 310.
27. डॉ. कमलनारायण दुबे; नरसिंहपुर जिले की बुन्देलखण्डी बोली का संकलिक अध्ययन; पृ. 2.
28. वही; पृ. 147.
29. वही; पृ. 202—203.
30. वही; पृ. 164.
31. वही; पृ. 165—166.
32. डॉ. कामिनी; बुन्देली भाषी क्षेत्र के स्थान अभिधानों का भाषावैज्ञानिक अध्ययन; पृ. 35—38.
33. वही; पृ. 40.
34. डॉ. कामिनी; आंचलिक स्थान अभियान अनुशीलन; पु. 70—71.
35. डॉ. श्यामबिहारी श्रीवास्तव; बुन्देली के रासो काव्य; पृ. 87, 103, 129.
36. डॉ. सीता किशोर; दतिया जिले की बोली तथा हिन्दी के सर्वनाम, अव्यय तथा कारकों का अध्ययन.
37. डॉ. दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव; भारतीय साहित्य; पृ. 90.
38. डॉ. आरती दुबे; बुंदेली का व्याकरणिक अनुशीलन।

बुन्देली के विविध रूपों का भाषा शास्त्र

संपूर्ण बुन्देली भाषा को आठ अलग–अलग क्षेत्रीय रूपों में विभाजित किया गया है। बोली भाषा का एक आरंभिक रूप मानी जाती है। 'भाषा का लिखित रूप जो केवल बोली जाने वाली भाषा का चित्र मात्र है, इसी से भाषा के उच्चरित रूप को सहज और प्रभावकारी माना जाता है। भाषा का लिखित रूप बद्ध सरोवर जल है, जो कालान्तर में सड़ भी सकता है और उच्चरित रूप उस कल–कल नाद करती हुई सरिता की भाँति है, जो कितने ही गंदे नालों को अपने में मिलाती हुई प्रवाहयुक्त और गतिशील होने के कारण आनंदमयी होती है।'[1] इस प्रकार लिखित रूप की अपेक्षा दैनिक व्यवहार का रूप सर्वेक्षण में अधिक महत्त्वपूर्ण होता है।

बुन्देली बोली को वर्गीकृत करने में शोधकर्ता एकमत नहीं है। डॉ. ग्रियर्सन ने बुन्देली बोली को तेरह वर्गों में विभाजित किया है तथा इनके नामकरण क्षेत्र–विशेष अथवा जाति–समूह के आधार पर किये हैं। डॉ. राधेश्याम दुबे ने इन बोलीरूपों को क्रमशः बेद, चका, केका, नरता, सार्थवाही व्यास, संक्रमण बुन्देली क्षेत्र, आदिवासी क्षेत्र और मराठी क्षेत्र संज्ञायें प्रदान की हैं। डॉ. रामेश्वरप्रसाद अग्रवाल इन बोलीरूपों को खौं बोलीरूप, कौं बोलीरूप और खाँ बोलीरूप नाम देते हैं। डॉ. कैलाशबिहारी द्विवेदी ने बुन्देली रूपों को भद्र, व्यावहारिक, ग्राम्य और संपर्क–भाषा संज्ञाएँ प्रदान की हैं। इसी तरह डॉ. कृष्णलाल हंस इन बोली रूपों को परिनिष्ठित, शुद्ध और मिश्रित कहते हैं। बोली वर्गीकरण करते समय इन शोधकर्ताओं ने सर्वमान्य पद्धति तक पहुँचने का प्रयास

नहीं किया है। इसी से वर्गीकरण पृथक्–पृथक् हो गया है। किसी भी बोली का व्यवहार क्षेत्र थोड़ी–थोड़ी दूर के पश्चात् परिवर्तित हो जाता है। शुद्ध व्यवहार क्षेत्र की सीमा थोड़ी ही होती है, इसी से यदि बुन्देली बोली को मध्यवर्ती शुद्ध बोली रूप और सीमावर्ती मिश्रित बोलीरूप में वर्गीकृत किया जाता है तो सुगम और सहज हो जाती है तथा एकरूपता का मान स्थिर हो जाता है। बुन्देली के विविध रूपों की जब हम चर्चा करते हैं, तो उसके अंतर्गत संपूर्ण बुन्देलखण्ड में बोली जाने वाली विभिन्न क्षेत्रीय बोलियों को लिया जाता है। इस अध्याय में प्रमुख रूप से बुन्देली के आठ रूपों की चर्चा की गयी है। प्रामाणिक बुन्देली, खटोला बुन्देली, पँवारी बुन्देली, लोधान्ती बुन्देली, बनाफरी बुन्देली, कुन्द्री बुन्देली, निभट्टा बुन्देली, भदावरी या तंवरगढ़ी बुन्देली। इसके क्षेत्र, सीमाएँ, शब्द सामर्थ्य, व्याकरणिक रूपरेखा, ध्वनिसमूह एवं विशेषताएँ आदि की विस्तृत चर्चा इस अध्याय में की गयी है। बुन्देली के इन भाषारूपों को क्षेत्र के अुनसार अलग–अलग अध्यायों में विभक्त कर उनके ध्वनिसमूहों और विशेषताओं आदि पर विस्तार से प्रकाश डालने का प्रयास है। बुन्देली के विविध रूपों को हम दो वर्गों में भी बाँट सकते हैं– शुद्ध बोलीरूप। मिश्रित बोलीरूप।

शुद्ध बोलीरूप – शुद्ध बोली रूप के अंतर्गत बुन्देलखण्ड की उस क्षेत्र की बोली को रखा गया है, जो शुद्ध रूप में बोली जाती है। तात्पर्य यह कि बुन्देली का वह रूप जिसमें किसी दूसरी भाषा अथवा बोली के शब्दों का प्रयोग न के बराबर होता है। शुद्ध बोलीरूप को ही प्रामाणिक बुन्देली रूप की संज्ञा भी दी जाती है। प्रामाणिक बुन्देली पर विस्तृत रूप से आगे अलग चर्चा की गयी है।

मिश्रित बोलीरूप – मिश्रित बोलीरूप बुन्देली की वे उप–बोलियाँ हैं, जिनमें स्थानीय बोलियों अथवा भाषाओं के शब्द का प्रयोग हुआ है। बुन्देलखण्ड के आस–पास जो बोलियाँ बोली जाती हैं, उनमें स्थानीय बोलियों के शब्दों का मिश्रण पाया जाता है। इस कारण इन्हें बुन्देली की प्रधानता लिये हुए अन्य उपनामों से भी पुकारा जाता है। मिश्रित बोलियों के अंतर्गत खटोला बुन्देली, पंवारी बुन्देली, लोधान्ती बुन्देली, बनाफरी बुन्देली, कुन्द्री बुन्देली, निभट्टा बुन्देली और भदावरी अथवा तंवरगढ़ी बुन्देली को लिया गया है। इन बुन्देली रूपों को विस्तृत रूप में अलग–अलग अध्यायों में रखा गया है।

प्रामाणिक बुन्देली

बुन्देलखण्ड के मध्य क्षेत्र में बुन्देली का जो रूप बोला जाता है, वह शुद्ध बुंदेली रूप अथवा प्रामाणिक बुन्देली रूप माना गया है। इसका क्षेत्र विस्तृत है। यह मध्यप्रदेश के मध्य उत्तर तथा उत्तरप्रदेश के दक्षिण क्षेत्र तक विस्तृत है। शुद्ध बुन्देली अथवा प्रामाणिक बुन्देली संपूर्ण बुन्देली रूपों का आधार मानी गयी है। इस दृष्टि से प्रामाणिक बुन्देली को ही शुद्ध रूप में माना जाता है।

बुन्देली के प्रामाणिक रूप को लेकर विद्वानों में अलग–अलग मत है। लेकिन विद्वान् इससे सहमत हैं कि प्रामाणिक बुन्देली का क्षेत्र मध्यप्रदेश की उत्तरी सीमा से लगे उत्तरप्रदेश के दक्षिणी क्षेत्र तक जाता है। प्रामाणिक बुन्देली का कन्द्रीय भू– भाग झाँसी जिला स्वीकार किया गया है। इस बोलीरूप की परिधि, टीकमगढ़, छतरपुर एवं पन्ना जिले का पश्चिमी हिस्सा, दतिया, सागर, दमोह आदि से बनती है। विदिशा का पूर्वी भाग, नरसिंहपुर तथा गुना एवं शिवपुरी का पूर्वी भाग एवं होशंगाबाद जिले का मध्यवर्ती भाग भी इसके अन्तर्गत आता है। इन जिलों में आंशिक उच्चारण विभेद के साथ शुद्ध बुन्देली दैनिक व्यवहार में प्रयोग की जाती है।

प्रामाणिक बुन्देली की सीमारेखा उत्तरप्रदेश की दक्षिणी और मध्यप्रदेश की उत्तरी सीमा से मिलकर बनती है। विद्वानों ने प्रामाणिक बुन्देली की सीमारेखा झाँसी, टीकमगढ़, छतरपुर, पन्ना जिले का पश्चिमी हिस्सा दतिया, सागर, दमोह, विदिशा का पूर्वी भाग, नरसिंहपुर, गुना एवं शिवपुरी का पूर्वी भाग एवं होशंगाबाद, जिले का मध्यवर्ती भाग से मिलकर निर्धारित की है। इस सीमारेखा के अंतर्गत बुन्देली के प्रामाणिक क्षेत्र में बोली जाने वाली बुन्देली आंशिक उच्चारण विभेद के साथ दैनिक व्यवहार में प्रयोग

की जाती है। जो स्पष्ट करती है कि प्रामाणिक बुन्देली बोली भी स्थानीय प्रभाव में शुद्ध होते हुए भी कुछ अलग रूप देती है और यह रूप बुन्देली के अन्य क्षेत्रीय बोलीरूपों का आधार स्तंभ होता है प्रामाणित बुन्देली की सीमा एक विस्तृत भू– भाग को लेकर ही निश्चित की गई है।

शब्द सामर्थ्य

भाषा अथवा बोली की समृद्धि उसके शब्द भंडार अथवा शब्द सामर्थ्य से लगायी जाती है। बुन्देली एक विस्तृत भू–खण्ड की बोली है। बुन्देली एक ऐसी बोली है, जिसे भाषा अथवा राष्ट्रभाषा का सम्मान भले ही प्राप्त न हुआ हो लेकिन उसे 400 वर्षों तक राजभाषा के रूप में अवश्य सम्मानित किया जाता रहा है। बुन्देली (जिसे यहाँ हम प्रामाणिक बुन्देली की संज्ञा दे रहे हैं) अपने शब्द भण्डार से हिन्दी की भांति ही समृद्ध है। बुन्देली किसी दूसरी भाषा अथवा बोली के शब्दों की वैसी मोहताज नहीं है कि विदेशी शब्दों के द्वारा इसका काम न चल सके, पर वह आवश्यक होने पर विदेशी शब्दों को भी अपनी प्रकृति के अनुसार ढाल लेती है। आगे इसके शब्द भण्डार के हजारों शब्दों का प्रयोग दर्शाया गया है।

व्याकरणिक रूपरेखा

शुद्ध बुन्देली बोलने वालों की संख्या अधिक है। प्रामाणिक बुन्देली का व्याकरण हिन्दी के व्याकरण की तरह ही है। इसकी विशेषताएँ हिन्दी के व्याकरण की तरह ही हैं, केवल उनमें उच्चारण विभेद ही पाया जाता है। प्रामाणिक बुन्देली का व्याकरण बुन्देली के अन्य मिश्रित या क्षेत्रीय रूपों के व्याकरण का भी आधार माना गया है।

बुन्देली में हिन्दी के समान कुछ ऐसी ध्वनियाँ हैं, जो स्वयं तो सार्थक नहीं हैं, पर शब्दों के साथ जोड़ी जाने पर सार्थक होकर शब्दों के अर्थ और रूप में विकार उत्पन्न करती हैं। इन्हें वैयाकरण 'शब्दांश' कहते हैं। ये ध्वनियाँ दो प्रकार की होती हैं – उपसर्ग और प्रत्यय।

<u>उपसर्ग</u> – उस शब्दांश को कहते हैं, जो किसी सार्थक शब्द के पूर्व जोड़ा जाता है जैसे – सपूत, कपूत।

<u>प्रत्यय</u> – उस शब्दांश को कहते हैं, जो किसी सार्थक शब्द के अंत में जोड़ा जाता है जैसे – पालनहार, झुंझलाबौ।

शब्दसाधन के प्रमुख तीन खण्ड हैं –

शब्द भेद

प्रयोग के अनुसार पदों में परिवर्तित शब्दों को शब्दभेद कहते हैं।

शब्दभेद के आठ प्रकार हैं – संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रियाविशेषण, संबंध सूचक, समुच्चय बोधक, क्रिया और विस्मयादिबोधक शब्द समूह।

(संस्कृत में) वैयाकरण शब्दों के– प्रतिपादिक, धातु और अव्यय भेद मानते हैं। ये शब्दों के अनुसार रूपांतर करते हैं। व्याकरण शास्त्र में प्रधानतः रूपांतर पर ही विचार किया जाता है, पर जहाँ शब्दों के केवल रूपों से उनका पारस्परिक संबंध प्रकट नहीं होता, वहाँ उनके प्रयोग अथवा अर्थ का भी विचार किया जाता है। संस्कृत पूर्णतः रूपांतर–शील भाषा है, इससे उसमें शब्दों का प्रयोग अथवा अर्थ उनके रूपों से ही प्रकट होता है, पर बुन्देली में हिन्दी भाषा के समान शब्द के रूप से उसका अर्थ अथवा प्रयोग सदा प्रकट नहीं होता। इसमें कभी–कभी बिना रूपांतर के एक ही शब्द के भिन्न–भिन्न प्रयोग भिन्न–भिन्न शब्द भेदों में होते हैं, जैसे– बे घोड़ा के संग दौड़े– (क्रिया विशेषण)। वे मौड़िये मताई के संग चली– (संबंध सूचक)। बिपदा में कोउ संग नइँ देत– (संज्ञा)।

इसलिए हिन्दी तथा बुन्देली में शब्दों के प्रयोगानुसार तथा शब्दों की विभिन्न जातियों के अनुसार शब्द के आठ प्रकार होते हैं –

1. संज्ञा – प्राणी, वस्तु, स्थान या भाव के नाम बोधक शब्द को संज्ञा कहते हैं, जैस– घुड़वा, बकरिया, रामान, सागर, दया।
2. सर्वनाम – जो शब्द पूर्व संबंध से संज्ञा शब्दों के बदले में आते हैं, उन्हें सर्वनाम कहते हैं, जैसे – तुमें, हमें, उनें, जौ, बे, बौ।
3. विशेषण – जो शब्द संज्ञा या सर्वनाम शब्द की विशेषता बतलाते हैं, उन्हें विशेषण कहा जाता है, जैसे – बुरौ आदमी, अच्छी लुगाई, नोंनी धुतिया, मीठे आम, करिया गैया।
4. क्रिया विशेषण – जो शब्द क्रिया, विशेषण अथवा दूसरे क्रिया विशेषण की विशेषता बतलाते हैं, क्रिया विशेषण शब्द कहलाते हैं, जैसे – गुपाल भौत भलो है। घोड़ा (घुड़वा) तनक धीमें चलो तों। परों गये ते। काल चले गये।
5. समुच्चय बोधक – जो शब्द दो शब्दों, दो वाक्यों अथवा दो वाक्याशों को जोड़ता है– हम और तुम।

6. संबंध सूचक – जो संज्ञा शब्द और सर्वनाम शब्दों का संबंध वाक्य के अन्य शब्दों से सूचित करते हैं, उन्हें संबंध–सूचक कहते हैं।

7. क्रिया – किसी कार्य या व्यापार को प्रकट करने वाले शब्द 'क्रिया शब्द' कहलाते हैं, जैसे – दौड़बौं, खेलबौ, हँसबौ, तैरबौ।

8. विस्मयादि बोधक – जिन शब्दों से हर्ष, शोक या घृणा आदि मनोभावों का ज्ञान हो, उन्हें विस्मयादि बोधक शब्द कहते हैं जैसे – अरे, ओ, ओहा, आहा, हाहा आदि।

संस्कृत में संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण इन तीनों शब्द–भेदों को संज्ञा के वर्ग का माना है, क्योंकि सर्वनाम और विशेषण संज्ञा शब्दों से संबंधित और उन्हीं के समान लिंग तथा वचन आदि के कारण परिवर्तित होने वाले रूप होते हैं। इसी प्रकार संस्कृत के व्याकरण में क्रिया विशेषण, समुच्चय बोधक, संबंध सूचक और विस्मयादि बोधक इन चारों को अव्यय माना है, क्योंकि इनमें रूप, लिंग, वचन या कारक के कारण भी किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता। यथार्थ में इन अव्यय शब्दों का लिंग, वचन या कारक से कोई संबंध नहीं होता।

रूपांतर

अर्थ में अंतर करने के लिए शब्द के रूप में जो परिवर्तन होता है, उसे रूपांतर कहते हैं।

रूपांतर के अनुसार शब्दों के दो भेद हैं– विकारी शब्द और अविकारी शब्द।

विकारी शब्द– जिन शब्दों के रूप में लिंग, वचन, कारक अथवा काल के अनुसार अंतर होता है, उन्हें विकारी शब्द कहते हैं, जैसे– आदमियों ने – आदमियन नें, घर पे– घरों में।

इसी तरह उनको, उनके, उनकी, भलौ, भले और भली आदि। संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण शब्द विकारी शब्द रूप हैं।

अविकारी शब्द – अविकारी शब्द वे हैं, जिनके रूप में लिंग, वचन, कारक अथवा काल के अनुसार कुछ भी अंतर नहीं होता। क्रियाविशेषण, समुच्चय बोधक, संबंध–सूचक और विस्मयादि–बोधक शब्द अविकारी कहलाते हैं, इन्हें अव्यय भी कहते हैं। जैसे – आजकाल, कहूँ, इतै, उतै, अरे और वा बा (वाह–वाह) आदि।

व्युत्पत्ति

मूल शब्द से दूसरे शब्द तक आने की प्रक्रिया को व्युत्पत्ति कहते हैं। व्युत्पत्ति के अनुसार शब्द तीन प्रकार के होते हैं– रूढ़ि, यौगिक और योग–रूढ़ि।

1. रूढ़ि – वे शब्द जो परंपरा से किसी विशेष अर्थ में आते हैं और जिनका कोई खण्ड सार्थक नहीं होता है, जैसे – बंदर, घर, गाड़ी, आदि।

2. यौगिक – वे शब्द जो दो शब्दों, शब्द और प्रत्यय मिलकर बनते हैं, यौगिक शब्द कहलाते हैं, जैसे– गाड़ी बारौ, जीवधारी, गिरधारी आदि।

3. रूढ़ियौगिक (योग रूढ़ि) – जो शब्द यौगिक शब्द परंपरा से किसी विशेष सांकेतिक अर्थ को प्रकट करते हैं योगरूढ़ि कहलाते हैं, जैसे– गनेश, चक्रधारी, नीलकण्ठ आदि। इनसे गजानन देव, विष्णुजी और शंकर जी का अर्थ परंपरा से ज्ञात होता है।

अर्थभेद

शब्द के सुनते ही बुद्धि उससे जिस आशय को ग्रहण करती है, उसे उस शब्द का अर्थ कहते हैं। अर्थ के मुख्य तीन प्रकार हैं – वाच्यार्थ, लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ। इन तीन प्रकार के शब्दों की उपर्युक्त तीन प्रकार के अर्थ प्रकट करने की शक्ति भी त्रिविध है– अभिधा, लक्षणा और व्यंजना।

1. वाच्यार्थ –शब्द के रूढ़ि से बँधे साधारण अर्थ को वाच्यार्थ कहते हैं। इसमें एक निश्चित अर्थ का बोध होता है, जिसे शब्द सीधे ढंग से प्रकट करता है, जैसे– बैल जोतो जात है।

इस वाक्य में बैल शब्द से सीधा अर्थ एक चार पैर वाला पशु निकलता है, जिसे बैल शब्द की अभिधा शक्ति प्रकट करती है, इससे बैल यहाँ वाच्यार्थ वाला शब्द है।

2. लक्ष्यार्थ – शब्द के आरोपित अर्थ को लक्ष्यार्थ कहते हैं। इससे किसी वाच्यार्थ से भिन्न किसी अर्थ की ओर श्रोता अथवा पाठक का लक्ष्य कराया जाता है, जैसे – गुपाल ढोर है।

इस वाक्य में गुपाल को ढोर कहा गया है, जो वाच्यार्थ के अनुसार असंभव है, क्योंकि दो पैर वाला गुपाल और चार पैर वाले ढोर में कोई साम्य नहीं है। यहाँ ढोर का अर्थ मूर्ख से आरोपित है, इसमें इस उदाहरण में लक्ष्यार्थ है, जो लक्षक शब्द ढोर से उसकी लक्षणा–शक्ति प्रकट करता है।

3 व्यंग्यार्थ– वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ से भिन्न अर्थ को जो ध्वनि से निकलता है, व्यंग्यार्थ कहते हैं, जैसे – तुम तो बड़ी सती सावित्री हो।

इसमें 'सती सावित्री' शब्द पथभ्रष्टा नारी के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, जो व्यंजनाशक्ति या ध्वनि से आया है।

संज्ञा

किसी प्राणी, वस्तु, स्थान, भाव अथवा गुण के नाम का बोध कराने वाले विकारी शब्द को संज्ञा कहते हैं, जैसे – राम, घोड़ा, पीतल, देवरी, सुख, गहराई। इसके दो मुख्य भेद हैं– पदार्थवाचक संज्ञा और भाववाचक संज्ञा।

पदार्थ वाचक संज्ञा – किसी पदार्थ या पदार्थ समूह के नाम का बोध होता है, जैसे– श्यामू, घोड़ा, घर। पदार्थ वाचक में जड़ और चेतन दोनों प्रकार के पदार्थों का वर्णन रहता है। इसके दो भेद हैं – अ. व्यक्तिवाचक, ब. जातिवाचक।

अ. व्यक्तिवाचक संज्ञा – जिस नामबोधक शब्द से किसी जाति के एक ही पदार्थ के नाम का बोध होता हैं, उसे व्यक्तिवाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे – मोहन, इंदौर, यमुना, अयोध्या, बाइबिल।

ब. जातिवाचक संज्ञा – जिस नाम बोधक शब्द से किसी जाति के संपूर्ण पदार्थ या प्राणियों का बोध होता है, उसे जातिवाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे – मानुस, पहार, देस, गाँव, नदी, ताल।

विशेष

1. व्यक्तिवाचक संज्ञा का प्रयोग जब किसी जाति के पदार्थ अथवा प्राणियों के एक विशेष वर्ग का बोध कराने में अथवा उसके किसी असाधारण धर्म को सूचित कराने में किया जाता हैं, तब वह जातिवाचक हो जाती है, जैसे– राम तीन हैं। यहाँ सौन्दर्य, पराक्रम और लोकोत्तर शक्ति वाले दाशरथी राम, यादव बलराम, भार्गव परशुराम को सूचित करने के कारण 'राम' 'व्यक्तिवाचक' 'जातिवाचक' है।

2. व्यक्तिवाचक में केवल नाम का अंतर होता है। जैसे–'राम' 'व्यक्तिवाचक'–'जातिवाचक' है और श्याम भी व्यक्तिवाचक है।

3. व्यक्तिवाचक में केवल नाम का अंतर होता है, पर जातिवाचक में अर्थ का अंतर होता है, जैसे– हिमालय और अरावली में केवल नाम का अंतर है, पर पहाड़ और नदी में अर्थ का अंतर है।

4. व्यक्तिवाचक संज्ञा के नामवाचक शब्द से हम किसी भी पदार्थ या प्राणी का बोध करा सकते हैं, पर जातिवाचक संज्ञा के नामवाचक शब्द से हम किसी पदार्थ या प्राणी का ही बोध करा सकते हैं क्योंकि वह सार्थक होता है, जैसे– चम्पा आओ। इसमें चम्पा लड़की, गाय या कुतिया किसी का भी नाम रखा जा सकता है, पर जातिवाचक संज्ञा लड़की से मानवीय संतान का ही बोध होगा।

पदार्थवाचक संज्ञा के दो और भी प्रकार हैं– ग. समूहवाचक, घ. द्रव्यवाचक।

ग. समूहवाचक संज्ञा – जो संज्ञा शब्द किसी प्रकार के पदार्थों या प्राणियों के समूह का बोध कराता है, उसे समूहवाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे – सेना, भीर, गोंखर, झुण्ड।

घ. द्रव्यवाचक संज्ञा – जिस संज्ञा शब्द से किसी द्रव्य पदार्थ के नाम का बोध होता है उसे द्रव्यवाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे – सोनों, पीतर, लोहा।

विशेष – अनेक वैयाकरण इन्हें जातिवाचक ही मानते हैं।

भाववाचक संज्ञा

जिस नाम–वाचक शब्द से पदार्थ या प्राणी में पाये जाने वाले किसी धर्म, गुण, व्यापार, अवस्था का बोध होता है, उसे भाववाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे – मलाई, लड़कपन, मीठों, गुरीरो, बुढ़ापा आदि।

भाववाचक संज्ञा शब्द व्युत्पत्ति के अनुसार तीन प्रकार के होते हैं– संज्ञा से बनने वाले, विशेषण से बनने वाले और क्रिया से बनने वाले।

अ. संज्ञा से बनने वाले –	लड़का से लड़कपनौ।
	दुकान से दुकानदारी।
ब. विशेषण से बनने वाले–	मीठी से मिठास, मीठो, खटाई, खट्टो
	मूरख सें मूर्खता, मूरखता।
स. क्रिया से बनने वाले –	खेल से खेलबो, मार से मारबो
	मारबौ पीटबौ से मारपीट।

संज्ञास्थानी प्रयोग

निम्नलिखित शब्द या शब्द समूह का प्रयोग संज्ञा के स्थान पर होता है।

अ. सर्वनाम	–	राम की जमीन हमाई काँ हो सकत ?
		हरी को घर मोरो काँ हो सकत ?

ब. विशेषण	–	अन्यायी को नास थोरे दिनों में हो जात।
स. क्रियाविशेषण	–	बो उलायतो चलत है।
द. विस्मयादिबोधक	–	हाय–हाय नें करौ। आईरे बो ऐसों आहे ?
इ. क्रिया	–	पढ़बौ हितकारी होत। काम अच्छो होत है। जो काम करत रेत, बो बीमार नई परत।
ई. वाक्यखंड	–	प्राणियों कौ भोजन देबो, पुन्न कौ काम होत।
उ. वाक्य	–	मैं का जानौ के रामू को खे़त काँ है? तें का जाने हरी को खेत काँ है?

सर्वनाम

'किसी भी संज्ञा शब्द के स्थान पर प्रयोग में आने वाले विकारी शब्द को सर्वनाम कहते हैं।' सर्वनाम वे शब्द हैं, जो किसी नाम को बार–बार दुहराने से बचाने के लिए उसके बदले में कहे जाते हैं। सर्वनाम शब्द के संबंध में ध्यान देने वाली बातें ये हैं –

1. सर्वनाम शब्द संज्ञा शब्दों के बदले में आता है, इससे वह उस संज्ञा शब्द के समान ही नामवाचक होता है, जिसके बदले में आता है।

2. सर्वनाम शब्द का प्रयोग उस संज्ञा शब्द के प्रयोग के पूर्व नहीं होता, जिसके बदले में वह आता है। गुपाल को व्याब हो रओ, ऊकी मताई की तबियत अच्छी नई रेत, सो ओके बाप ने सोची की बऊ आ जाये सो तनक सहारो हो जैहैं।

3. सर्वनाम शब्द के लिंग, वचन और पुरुष उस संज्ञा शब्द के समान होते हैं, जिसके बदले में वह आता है। कमल पढ़बौ चाऊत, ऊकै बाप की गुंजाश नईंया। सीता मेला देखने गई, ऊकी सहेली गीता हमाये लाने का ने कईं।

सर्वनाम के प्रकार – सामान्यतः छह प्रकार के माने गये हैं – पुरुषवाचक सर्वनाम, निजवाचक सर्वनाम, निश्चयवाचक सर्वनाम, अनिश्चयवाचक सर्वनाम, सम्बन्ध ावाचक सर्वनाम और प्रश्नवाचक सर्वनाम।

पुरुषवाचक सर्वनाम

सर्वनाम संज्ञा का ही एक भेद है। संस्कृत व्याकरण में 'सर्व' (प्रतिपादिक) के समान जिन नामों (संज्ञाओं) का रूपान्तर होता है, उनका एक पृथक् वर्ग मानक उसका नाम सर्वनाम रखा गया है। वैसे सर्व (सब) नामों (संज्ञाओं) के स्थान में प्रयुक्त होने से सर्वनाम कहा जाता है। संज्ञा से सदा उस प्राणी या पदार्थ का बोध होता है, जिसका

वह नाम होता है, जैसे– आदमी , घर, नगर, झील आदि। इनमें 'नगर' शब्द आदमी, घर अथवा झील के स्थान में प्रयुक्त नहीं हो सकता। पर सर्वनाम शब्द 'वह' भिन्न संबंध से आदमी, घर, नगर, झील सबके स्थान पर प्रयुक्त हो सकता है। सर्वनाम की इसी विशेषता के कारण इसे पृथक् शब्द मानना समीचीन है।

जिस सर्वनाम शब्द से वक्ता, श्रोता अथवा उसके विषय में जिसके बारे में कुछ कहा या जाना जाता है, वह पुरुषवाचक सर्वनाम कहलाता है। पुरुषवाची सर्वनाम शब्द तीन प्रकार के माने गये हैं। उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष।

उत्तम पुरुष

इसमें लेखक या वक्ता अपने विषय में जिस सर्वनाम का प्रयोग करता है, वह उत्तम पुरुष माना जाता है जैसे– मैं, मोरी, हम, हमें, हमाई आदि।

ध्यान देने की बात है कि उत्तम पुरुष के एकवचन में 'मैं' और बहुवचन में 'हम' का प्रयोग होता है, पर बुन्देली में 'मैं' के स्थान पर 'हम' का प्रयोग होने से बोलचाल में बहुवचन प्रदर्शित करने के लिये 'हम' के साथ 'लोग' या 'सब' जोड़ देते हैं, जैसे– हम लोग, हम सब, हम औरें।

मध्यम पुरुष

इसमें श्रोता या पाठक से बात करते समय जिस सर्वनाम का प्रयोग होता है, उसे मध्यम पुरुष कहते हैं, जैसे– तू, तुम, तें। तें, तू, एकवचन और 'तुम' बहुवचन है, पर व्यवहार में 'तें' 'तू' के समान में 'तुम' का प्रयोग एकवचन में किया जाता है, जैसे– राम तुम जो कार कर लो।

'तें' 'तू' का प्रयोग एक मध्यम पुरुष में कभी–कभी क्रोध, तिरस्कार अपमान दिखलाने के लिये भी किया जाता है जैसे– (तें) 'तू' बड़ौ मूरख है। तें बड़ौ मूर्ख है, (तें) तू नीच करम मैं लजात तक नैंया। (तें) 'तू' एकवचन के स्थान में आदरार्थ 'आप' का प्रयोग किया जाता है, जैसे– गुरुजी आप पैले पधारों। आप हमपे किरपा करियो।

'आप' आदर सूचक मध्यम पुरुष का प्रयोग दोनों वचनों में किया जाता है, पर कभी–कभी बहुवचन में 'आपके' साथ 'लोग' या 'सब' या और शब्द जोड़कर बोला या लिखा जाता है, जैसे– आप (औरे) लोग मंदर में आ जैयो। आप सब मो गरीब के इते अईयो।

अन्य पुरुष

जिसके विषय में कुछ कहा या लिखा जाता है, उसे अन्य पुरुष कहा जाता है, जैसे– बौ (वह), बा (वह), बे (वे)। 'उ'।

उत्तम पुरुष 'मैं' और 'हम' तथा मध्यम पुरुष 'तू' (तें) और 'तुम' को छोड़कर शेष सब सर्वनाम अन्य पुरुष में आ जाते हैं।

वह कि स्थान में एकवचन में (उ) 'बे' का प्रयोग होता है और बहुवचन में 'बे' के साथ 'सब' 'औरें' अथवा 'लोग' का प्रयोग होता है, जैसे– बस आ गये, इतैके एक महात्मा तीरथ गये ते, पे परौं आ जैहें, गाँधी बड़े उदार हते, बे संसार में पूजे जैहें, उ की बातें नें करौ।

आदर प्रदर्शित करने के लिए 'बौ' के स्थान पर 'आप' का भी अन्य पुरुष एकवचन में प्रयोग होता है, जैसे– ऊदनशाय महाराज भारी प्रतापी राजा हते, आप अपने समय के बड़े धरमात्मा पुरुष हो गये हैं।

निजवाचक सर्वनाम

जो सर्वनाम स्वयं या निज का बोध कराता हो, उसे निज वाचक सर्वनाम कहते हैं, जैसे– आप अपनौ काम करो, अपनौ काम आपई कर लैहो। तुम अपनौ भलौ देखत हो। दूसरे की कोई परवा नईये।

'आप' और 'अपनौ' के प्रयोग

1. निजवाचक सर्वनाम 'आप' किसी संज्ञा या सर्वनाम की अवधारणा के लिये आता है, जैसे– मैं आप को घोरा लैहों। कभी–कभी इसमें बल देने के लिये 'ऐ' (ही) प्रत्यय जोड़ देते हैं, जैसे– मैं आपै बना दै हौं।

2. निजवाचक सर्वनाम 'आप' का प्रयोग सर्वसाधारण के अर्थ में भी होता है। जैसे– आप भले तौ जग भलौ।

3. निजवाचक सर्वनाम 'आप' के स्थान में 'खुद' का प्रयोग भी होता है। स्वयं या स्वतः का प्रयोग साहित्यिक हिन्दी की तरह बुन्देली में नहीं किया जाता है। जैसे– तुम खुद देख लो, कर लो। हम खुद चले जैहैं। हम खुद कर लैहैं।

4. आपै, अपनै आप, आप सैं आप और आपै आप का अर्थ मन से 'स्वभाव' से होता है तथा ये क्रिया विशेषण वाक्यांशों के समान प्रयुक्त होते हैं, जैसे– बा आपै गई ती। तुम अपनै आप कर लियौ। हम तौ उतै आपसै आप गये ते। बे आपै आप आ जैहें ।

5. 'अपना' शब्द निजवाचक सर्वनाम तो है ही, इसके साथ संज्ञा और विशेषण के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। अपनौ के आगे किसी कारक की विशेषकर संबंध कारक की विभक्ति रहने पर इसका प्रयोग संज्ञा के समान होता है, जैसे– जब अपनौ नैं संग छोड़ दव तौ दूसरौ की बातें का कानै। अपनौ को भलौ सबई चाउत। जो अपनौ को नईं भव वो हमाओ का हुईये। संसार अपनौ को पच्छ करत।

6. जब 'अपनौ' के आगे कोई संज्ञा अथवा सर्वनाम विशेष के रूप में प्रयुक्त होता है, तब इसका यह विशेष रूप होता है जैसे– मोरो अपनौ इतै कैबे बारौ कौ ठांड़ौ।

दुखिया की अपनी जात बिरादरी में कोऊ काम नें आओ।

निश्चयवाचक सर्वनाम

किसी निश्चित व्यक्ति या वस्तु का बोध कराने वाले सर्वनाम शब्द को निश्चयवाचक कहते हैं। यह दो प्रकार के होते हैं – निकटवर्ती (जौ) यह और दूरवर्ती (बौ) वह (ओ)।

जौ–जा और बौ–बा का प्रयोग

1. पूर्वकथित संज्ञा या संज्ञा वाक्यांश के स्थान में 'जौ' का प्रयोग होता है जैसे– बिहीं कौ पेड़ों जो है। इतनो काम करबौ मेनत कौ काम आय। जौ मोरे बस कौ नैंयाँ।

2. पूर्वकथित वाक्य के स्थान में भी 'जौ' का प्रयोग होता है, जैसे– जौ तुमने मोरौ बड़ौ कामकर दओ, जौ मैं जानत हौं।

3. पश्चात् कहे जाने वाले वाक्य के स्थान में 'जौ' का प्रयोग होता है, जैसे– जा बात बड़ी खुशी की है, कै तुम मोरे मोड़ा से संबंध करबौ चाउत हौ।

4. जौ–जा का प्रयोग कभी–कभी क्रिया विशेषण के समान अभी या अब कि अर्थ में होता है, जैसे– तुम रुठत काये, लो मैं जौ चलो। जा तो मोरी हँसी उड़ाउत।

5. पूर्व कथित दो वस्तुओं में पहली के लिये बौ, बा और पिछली के लिये जौ, जा का प्रयोग होता है, जैसे– चकिया से पिसे आटे में और मशीन से पिसे आटे में जौ अंतर है, कै बौ दरदरो है और जौ बारीक है। बौ मोटो है, जौ पतरो है। बौ भौतई बुरओ हतो, जौ तनक अच्छो है।

6. बौ और बा का प्रयोग कभी–कभी क्रियाविशेषण के समान होता है और इनका अर्थ वहाँ अथवा इतना होता है, जैसे– श्यामू की मौड़ी 'ब' जा रई। बौ बिचारो अधमरौ हो गओ। 'बौ' दौड़ रओ हतो। बौ काम कर रओ हतो।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम

जो सर्वनाम शब्द किसी निश्चित पदार्थ या व्यक्ति का बोधक न हो, उसे अनिश्चयवाचक सर्वनाम कहते हैं जैसे– काऊ, कौनऊ। काऊ तौ खाव। कौनऊ खात तौ।

'कोऊ' का प्रयोग

1. 'कोऊ' का प्रयोग केवल प्राणीवाचक और अप्राणीवाचक दोनों के लिये होता है, जैसे– इतै कोउ आदमी है। इते कोउ है। उतै कोनऊँ पोथी धरी हती।

2. निषेधवाचक वाक्य में 'कोऊ' का प्रयोग 'सब' के अर्थ में होता है, जैसे– ऐसों काम कोऊ नँई चाहत। भला कोउ अमर है?

3. जब कोऊ के साथ 'सब' और 'हर' का प्रयोग होता है, तब 'सब कोऊ' का अर्थ सब लोग और 'हर काऊ' का अर्थ प्रत्येक व्यक्ति होता है।

4. किसी अज्ञात पुरुष या बड़े पशु आदि के लिये 'कोऊ' का प्रयोग होता है, जैसे– उतै कोऊ ठाड़ो है। नरदा में कोऊ बोलत है। जँगल में कोऊ नें आ जाये?

5. जब अनिश्चय की अधिकता हो, तब 'कोऊ' के साथ 'एक' जोड़ देते हैं, जैसे– तुम में सै कोऊ एक बजार लों चले जइयो। उनमें सें कोऊ एक ने मारो तो। तुममें से कोऊ एक झूठी बोलत है।

6. किसी अज्ञात व्यक्ति को छोड़कर दूसरे अज्ञात व्यक्ति का बोध कराने के हेतु कोऊ के साथ 'और' या 'दूसरा' लगा देते हैं, जैसे– जा बात कोऊ और न सुन सकै। कोऊ दूसरौ होतौ, तो मैं न छोरतौ।

7. कोऊ–कोऊ का प्रयोग अनिश्चयवाचक के बहुवचन के अर्थ में होता है, जैसे– कोऊ–कोऊ आदमी बिना काम करें सुख चाहत।

8. कोऊ का प्रयोग विशेषण के पूर्व परिणाम वाचक क्रियाविशेषण के समान 'लगभग' के अर्थ में होता है, जैसे– कोऊ बीसक जनें हुईयें। कोऊ पन्द्राक जनीं हती।

9. अवधारण के हेतु 'कोऊ–कोऊ' के बीच में लगा देते हैं, जैसे– जो काम कोऊ ने कोऊ तो करै दैहे। इतने जनों में कोऊ नें कोऊ तो हमाव दरद समझ है।

'कछू' (कुछ) के प्रयोग

1.'कछू' का प्रयोग किसी कार्य 'तुच्छ' जंतु या पदार्थ के लिये होता है, जैसे– ई डब्बा में कछू धरौ हतौ। शक्कर में कछू मिलो है। हमई हम में कछू नइया। उँ पटिया पै कछू नें धरियो।

2.'कछू' का प्रयोग अज्ञात पदार्थ या धर्म के लिए किया जाता है, जैसे– ई दूध में कछु है। इ पानी में कछू डरौ है। तोरे मन में कछू खोट है। वो हमाये लानें कछू कपट रखत है।

3.किसी अज्ञात पदार्थ या धर्म का बोध कराने के हेतु 'कछू' के साथ 'औरइ' (और ही) जोड़ दिया जाता है, जैसे– उनके मन में कछू औरइ हतो। जे कछू औरइ सोच रयते। बा बछू औरइ बात हती।

4. विपरीत या भिन्नता सूचित करने के लिये 'कछू' के स्थान पर 'कछू' को 'कछू' हो जाता है, जैसे– बा कछू को कछू कर बैठी तो का कर लैहों। भूले से कछू को कछू हो गयो। वो परीक्षा में कछू को कछू लिख आओ है।

5. 'कछू' के साथ सब अथवा बहुत का योग 'सब कछू' का संपूर्ण पदार्थ या ध र्म और बहुत कछू का अर्थ 'अधिकता' से हो जाता है, जैसे– तें तो सब कछू जानत। मैं तो सब कछू समझत हों। अब ओकी हालत में भौत कछू सुधार है। सब कछू भगवान के हाँत है।

6. कभी–कभी 'कछू' का भिन्न वाक्यों में दो बार प्रयोग समुच्चयबोधक के समान किया जाता है, जैसे– कछू सुना जाओ।

7. कभी–कभी 'कछू' का प्रयोग भिन्नता के अर्थ में दो बार किया जाता है, जैसे– बाई ने कछू कई और हमनें कछू सुनीं। एक कछू बतात, दूसरो कछू बतात। उनें कछू कई और हमने कछू सुनी।

सम्बन्धवाचक सर्वनाम

जो सर्वनाम शब्द किसी संज्ञा शब्द से संबंध सूचित करता है, उसे संबंधवाचक सर्वनाम कहते हैं, जैसे– जो, सो–जो पढ़हे, सो पास हुइये। जो पेड़ पै चढ़ है, सो फल खैहे। जो सोहै, सो खोहै।

'जो' और 'सो' का प्रयोग

1. 'जो' के साथ 'सो' का नित्य संबंध रहता है, इसी से इनको नित्य संबंधी सर्वनाम भी कहते हैं, जैसे– जो खेत जोत है, सो फसल काट है। जो हो गव, सो हो गव।

2. कभी–कभी 'सो' और 'सो' के स्थान पर 'जौन' और 'जौन' का प्रयोग होता है, जैसे– जौन सलूका चानें होय तौन ले लो।

3. जिस संज्ञा के बदलें में 'जो' आता है, उसके अर्थ की सुस्पष्टता के हेतु कभी–कभी 'जो' का प्रयोग विशेष के समान होता है, जैसे– जो थानेदार आओ हतो, सो चलो गओ। जौन किताब चानें होय, सो उठा लो। जौन सब्जी चाहो, सो बन जैहे।

4. निश्चय के हेतु कभी–कभी 'जौन और 'तौन' के साथ पुल्लिंग में से– सो और स्त्रीलिंग में सी–सी लगा देते हैं। जैसे– जौन सी गैया चाऊत हो, तौन सी लै लो।

5. कभी–कभी 'जौ' का प्रयोग समुच्चयबोधक के समान होता है, जैसे– ओकी का औकात जो हमाय सामने बोले। तुमाइ इतनी हिम्मत, जो हमाय सामने लड़ौ। काँहो गये तें कि गिर गये। जो हमाइ मानों तो सुनों।

6. कभी–कभी 'जो' के साथ 'कोऊ' या 'कछू' अनिश्चयवाचक सर्वनाम आते हैं, जैसे– कोऊ हमसें बोलो सो पिट है। जो कछू कैनें सो के देओ। जो कछू करनें सो कर लेव।

7. समूह के अर्थ में 'जो'– 'सो' विरक्ति कर देते हैं, जैसे– जो–जो करने हतो सो–सो कर दव। जो–जो चाहत तें, सो–सो धरौ। जो–जो पसंद आओं, सो–सो खरीदौ।

8. कभी–कभी संबंधवाचक तथा नित्यवाचक संबंधी सर्वनाम का लोप हो जाता है, जैसे– जो हो चुकौ, सो हो चुकौ, जो अग्यां।

9. 'सो' नित्य संबंधी के स्थान पर कभी–कभी 'बौ' या 'बा' का प्रयोग किया जाता है, जैसे– जो पाप कर है, बौ फल पा है। जो कर है, बौ मोड़ा पाहै।

10. 'सो' कभी–कभी समुच्चयबोधक के समान 'इस कारण' या 'तब' के अर्थ में प्रयुक्त होता है, जैसे– बसकारौ आ गओ, सो घर को छप्पर सुधरबौ जरूरी है। हमनें तुमसे पैसा नइं लय, सो का हम खरच नइं चला सकत।

प्रश्नवाचक सर्वनाम

जिस सर्वनाम शब्द से प्रश्न का बोध हो, उसे प्रश्नवाचक कहते हैं, जैसे – को (कौन), का (क्या)। तुम को आव ? बौ का जानत, बात का है ?

'को', 'कौन', 'का' के प्रयोग

1. को (कौन) प्राणीवाचक 'का' अप्राणीवाचक है, जैसे– हमें रोकबे बारे तुम को होत ? बा कौन कौं बुलातती ? बौ का देखततौ ? तुम का खात ते ? इ काम में का पुन्न का पाप।

2. कभी–कभी अवधारणा के हेतु कौन के साथ 'सो' (सी) का योग कर दिया जाता है और तब इसका प्रयोग विशेषण की रीति पर होता है, जैसे– राम कौं कौन सो नाज देनें ? बा कौन सी मोड़ी आय जौन गात है? बे कौन से मौड़ा आय जौन लड़त हैं। ई में कौन सी साड़ी अच्छी आय ?

3. कभी–कभी आश्चर्य, तिरस्कार तथा दुःख में भी 'कौन' का प्रयोग होता है, जैसे– इ में रौबे की कौन बात है ? अब हमाइ बेर खों कौन आ है ? पता नइं कौन नें हमाइ घड़ी ले लइ?

4. पदार्थों की भिन्नता, विपुलता तथा आश्चर्य दर्शित करने के लिए 'कौन' का प्रयोग होता है, जैसे– कौन–कौन फल उनखों चानें ? उते कौन–कौन गव तो ? उननै कौन–कौन से काम कर लय।

5. कभी–कभी 'कौन' का प्रयोग क्रिया विशेषण के समान होता है, जैसे– जो काम उनें कौन भारी आय ? उनको मान कौन उठा सकत ? इत्तो नखरा कौन उठा सकत ?

6. किसी प्राणी या पदार्थ का तात्विक लक्षण जानने हेतु 'का' का प्रयोग किया जाता है, जैसे– आदमी 'का' है ? हवा 'का' है ? भूगोल 'का' है ?

7. धमकी या तिरस्कार के अर्थ में 'का' का प्रयोग किया जाता है, जैसे– धन तो का, धरम के लाने तन तक लगा है। तुमने जो का कर डारो। वे हमाओ का कर लैहें। को का कै रओ।

8. 'का' का प्रयोग असमर्थता प्रकट करने के लिये भी किया जाता है, जैसे– गरीब आदमी पैसा बारों को का कर सकत। दुर्बल सबल को का कर सकत। हम भगवान के आगें का कर सकत। हमाई का औकात।

9. दशा या अवस्था सूचित करने के लिए 'का' का प्रयोग 'सै' मध्य में रखकर दो बार करते हैं, जैसे– आज बड़े–बड़े राजवंश का सै का हो गये ? जो नियाँ हमाये तुमाय देखत का सै का बन गयौ।

10. पछतावा प्रकट करने में भी 'का' का प्रयोग किया जाता है, जैसे– हाय–काय में जो का कर बैठो? को जानत कि बा का कर बैठे। बे हमारे घरैं का आहें ? बे गरीब की का मदद कर सकत।

11. 'का' की विभक्ति समुच्चयबोधक के समान होती है, जैसे– का तुम और का तुमाय भैया। का तुम और का तुमाव घर।

उपर्युक्त छह प्रकारों के सिवा एक प्रकार का सर्वनाम और है– आपस – आपस का प्रयोग संबंध और अधिकरण कारकों में होता है जैसे– जौ उनको आपस कौ मामलो है। वे आपस में समझ लेवें, सोईं भलो।

एक दूसरे – एक दूसरे का प्रयोग दो व्यक्तियों अथवा पदार्थें का संबंध प्रदर्शित करने में होता है, जैसे– बे किसान एक दूसरे के हेती हैं। बे मोड़ा एक दूसरे के दुश्मन बन गये हैं। वे एक दूसरे खों देखकें जियत। वे एक दूसरे के लाने कछु बी कर सकत।

सर्वनाम शब्दों के रूपांतर

सर्वनाम शब्दों के रूप में लिंग, वचन और कारक के कारण अंतर होता है, केवल सम्बोधन कारक के रूप नहीं होते हैं।

हिन्दी में सर्वनाम शब्दों में लिंग के कारण रूपान्तर नहीं होता, पर बुन्देली में अन्य पुरुष एक वचन पुल्लिंग में बौ (वह) और स्त्रीलिंग में बा (वह) रूप होता है। क्रिया में लिंग के कारण रूप परिवर्तन नहीं होता, जैसे– बौ जात है (जाता है)। बा जात है (जाती है)।

पुरुषवाचक सर्वनाम में, तू (तें) बो, बा, आप आदि होते हैं। 'तू' (तें) कर्ताकारक के एकवचन में ज्यों के त्यों रहते हैं, पर बहुवचन में क्रमशः 'हम' और 'तुम' हो जाते हैं। कर्ता कारक और संबंध कारक को छोड़कर शेष कारकों के एक वचन में 'मैं' को 'मों' और 'तू' को 'तो' तथा बहुवचन में 'हम' और 'तुम' कर देते हैं।

संबंध कारक के एकवचन में 'मैं' को 'मो' और 'तू' को 'तो' तथा बहुवचन में 'हमा' और 'तुमा' कर देते हैं। संबंध कारक एकवचन 'मों' और 'तो' में भी रौ, रे, री जोड़ देते

हैं। सम्प्रदान में मो कौं– खौं अथवा 'मोर लाने' के स्थान पर 'मोय' और –तौकौ' अथवा तोरे लाने के स्थान पर तोय प्रयोग अधिक प्रचलित है। इसी प्रकार हम कौं– खौं के लाने एवं तु कौं, खौं के लाने के स्थान पर हमें, हमाये लानें तथा तुमैं, तुमाये लाने का प्रयोग किया जाता है।

स्पष्टता के लिये दोनों के रूप इस प्रकार हैं –

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	में, मेंनें	हम, हमनें
कर्म	मोकौं, खौं, मोय	हमकौ, खौं, हमें
करण	मो सैं, मोरे द्वारा	हमसें सौ, हमाये द्वारा
सम्प्रदान	मोय, मोर लानै, मोकों, खौं	हमें, हमाये लाने, हमकों, हमखों
अपादान	मोसें	हमसें
संबंध	मोरो, मोरी, मोरे	हमारो, हमारी, हमारे, हमाइ, हमाये, हमाऔ
अधिकरण	मो में – मो पे	हममें, हमपे

इन रूपों के अतिरिक्त एकवचन में 'मोरें' और बहुवचन में 'हमाये' अथवा 'हमारें' का प्रयोग होता है, जिनका अर्थ क्रमशः मेरे पास, मेरे घर तथा मेरे शरीर में और हमारे पास, हमारे अधिकार में, हमारे घर तथा हमारे शरीर में होता है जैसे– मोरें का धरौ (मेरे पास), तुम मोरैं अइयो (मेरे घर), हमारें (हमारे पास), अब का रै गओ ? तुम सब साजन, सजन हमायें न्यौते हो। मौरैं सोना चाँदी भौत हतौ।

मध्यम पुरुष 'तू' के रूप इस प्रकार हैं–

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	(तें) तूं, तूने, तेंने	तुम, तुमने
कर्म	तोय, तोकों खों	तुमकों खौं, तुमैं
करण	तोसैं, तोरे द्वारा	तुमसें, तुमाय द्वारा
सम्प्रदान	तोकों, खौं, तोर लानै, तोय	तुमकौं, खौ, तुमाये लानै, तुमें
अपादान	तो सैं	तुम सैं
संबंध	तोरो, तोरे, तोरी	तुम्हारौ, तुमारे, तुमारी, तुमाओ, तुमाइ, तुमायें
अधिकरण	तो, मैं, पै	तुम में, तु पै

इन रूपों के अतिरिक्त एकवचन में तोरैं और बहुवचन में 'तुमारैं' का प्रयोग किया जाता है, जिनका अर्थ तेरे पास, तेरे घर तथा तेरे शरीर में और तुम्हारे पास, तुम्हारे

अधिकार में होता है। जैसे– तोरें का धरौ, हम तोरैं (तेरे घर) काल गये ते, तुमारैं (तुम्हारे अधिकार में) अब का रै गओ, हम सब तुमायें (तुम्हारे घर) न्यौते आहें, तुमायें भौत धन हतो।

अन्य पुरुष सर्वनाम– 'वह' का रूप पुल्लिंग एकवचन में 'बौ' और स्त्रीलिंग एकवचन में 'बा' होता है। बौ पढ़त है– वाक्य से पुरुष या लड़का पढ़ता है, का बोध होता है। बा पढ़त है से वह स्त्री या लड़की पढ़ती है, अर्थ निकलता है। इनके रूप कर्ता एकवचन में 'बौ' और 'बा' तथा बहुवचन में 'बे' हो जाते हैं। विभक्ति सहित कर्ता एकवचन में 'बे' या 'ऊ' (उन) और बहुवचन में 'उन' होता है। कर्म और सम्प्रदान कारकों में कों–खों के अतिरिक्त बहुवचन में उनें हो जाता है। कभी–कभी 'उन' बहुवचन का रूप उनहूँ (उनहीं) होता है।

अन्य पुरुष सर्वनाम के रूप इस प्रकार हैं –

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	बौ, बा, ऊने, ओनें	बे, उननैं, उनइँ ने
कर्म	उनकौं, ऊखौं, बाय औकौं, ओय	ऊखौं उनको, खौं ऊनैं
करण	उनसैं, ओसैं	उनसें, उनइँ सैं
सम्प्रदान	आये, उनकौं, ऊखौं, उनके लानै, औकों, ओखौं, ओके लाने, ओइकों, ओइखाँ, ओइ के लाने	उनकौं, उनखौं, उनइँ, कौं, उनइ, खौं उनके लाने, उनइँ के लाने
अपादान	ऊसैं, ओसै, ओइ से,	उनकौ, उनइ सैं,
संबंध	उनकौ, ऊके, उनकी, ओइ कौ, ओइके, ओइकी ओकौ, ओके, ओकी	उनकौ, उनके, उनकी उनइँ को, उनइँ के, उनइँ की
अधिकरण	ऊमें, ऊपै, ओमें, ओपै ओइ में – ओइ पै	उनमैं, उनपै, उनइं में, उनइं पै

आदर सूचक – 'आप' शब्द में वचन और कारक के कारण रूपांतर नहीं होता है, परन्तु बहुत्व वाचक लोग शब्द जोड़ देने पर इसके रूप अकारान्त पुल्लिंग संज्ञा शब्दों के समान विकारी हो जाते हैं।

आदरसूचक शब्द 'आप' के रूप –

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	आप, आपनें, आपइनें	आप, आपनें, आपइ नें आप सबने, आप सब लोगन नें
कर्म	आपकौं, आपखौं, आपइकौं आपइखौ	आपकौ, आपखौं, आपइकौं, आपइखौं, आप सबकौं, खौं आप लोगन कौं, आप लोगन खौं
करण	आप सैं, आपके द्वारा आपइ सें, आपइ के द्वारा	आपनैं, आपके द्वारा, आपइ सैं आपइ के द्वारा, आप बस सैं आप लोगन सैं
सम्प्रदान	आपकौ, आपखौं, आपइकौं, आपइखौं, आपइ के लाने आपके लाने	आपकों, आपखौं, आपइ कौं आपइ खौं, आपके लाने आपइ के लाने, आप सबकौं, आप सब खौं, आप लोगन कौं, आप लोगन के लाने
अपादान	आपसैं, आपइसैं	आपसै, आपइसैं, आप सबसैं, आप आप लोगन सैं
संबंध	आपकौ, आपके, आपकी आपइ कौ, आपइके, आपइ की	आप सबके, आप सबकी, आप लोगन की, आप लोगन के, आप लोगन की।
अधिकरण	आपमैं, आपपै, आपइ मैं, आपइ पै	आप में, आप पै, आपइ में, आपइ पै, आपइ सब में –पै आप लोगन में – पै

निजवाचक सर्वनाम

निजवाचक सर्वनाम 'आप के' रूप अविकृत रहते हैं। यह दोनों वचनों में एकसा रहता है। यह केवल कर्ता कारक के विभक्तिरहित रूप में प्रयुक्त होता है और शेष कारकों में इसका विकृत रूप 'अपनौ' आता है।

संबंध कारक में जब आपका प्रयोग किया जाता है, तब कौ, के, की के स्थान में क्रमशः नौ, ने, नी लगाते हैं। जैसे– अपनौ, अपने, अपनी। सम्प्रदान कारक में 'के लाने' के स्थान में 'लाने' का प्रयोग होता है, 'के' का नहीं। जैसे– अपने लाने शेष कारकों

में 'अपनौ' के रूप अकारान्त पुल्लिंग संज्ञा शब्दों के समान होते हैं। कभी–कभी संबंध कारक को छोड़कर शेष कारकों में 'अपना' और 'आप' मिलकर आते हैं, जैसे – अपने आप सैं, अपने आप के लाने आदि।

संबंधकारक में कभी–कभी अपनो–ने–नी के स्थान में निज–कौ–के–की का प्रयोग होता है, जैसे– निज कौ घर। निज कौ, के, की का प्रयोग होता है। निज कौ घर, निज कौ, के, की के स्थान में बुन्देली में केवल निजी या अपने निजी का प्रयोग भी किया जाता है।

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	आप, अपने आप	आप, आपने आप, अपनों नें
कर्म	अपने कौं, अपने खौं अपने आपकौं–खौं	अपने कौं–खौं, अपने आप कौ–खौं
करण	अपने सैं, अपने द्वारा अपने आप सैं, अपने आपके द्वारा	अपने सैं, आपके द्वारा
सम्प्रादान	अपनै कौं, खौं, अपने लानै अपने आपके लाने	आपनो कौं–खौं, अपने के लाने अपने आपकौ–खौं अपने आपके लानै
अपादान	अपने सैं, अपने आपसैं	अपने सैं, अपनै आप सैं
संबंध	अपनै, कौ, के, की अपनौ, अपनी	अपनौ, कौ–के–की
अधिकरण	अपने मै–पै, अपने आप मैं, पै, अपनों में–पै	अपने आपमें–पै, अपनों में–पै

'अपनौ' शब्द निज लोगों के अर्थ में संज्ञा के अर्थ में भी आता है, जैसे– अपनों को सब चाउत हैं। वे अपनौं तक कौ भलौ नईं करत तो दूसरों को का करहैं।

अनिश्चयवाचक कोऊ – कर्ताकारक के विभक्ति रहित एकवचन में इसका रूप 'कोऊ' हो जाता है। बुन्देली में यह रूप नहीं होता। इसका बहुवचन का रूप नहीं होता। बहुवचन का बोध कराने के हेतु इसके द्विरुक्ति प्रयोग देखने को मिलते हैं –

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	कोउ, कोउ ने	कोऊ, कोऊ, कोऊ, कोउ ने

कर्म	कोऊ, कोऊ कौं कोऊ खौं, कोऊ–कोऊ खौं	कोऊ, कोऊ, कोऊ, कोऊ कौं, कोऊ, कोऊ खौं
करण	कोऊ सैं	कोऊ कोऊ सें
सम्प्रदान	कोऊ कौं, कोऊ खौं कोऊ के लाने	कोऊ, कोऊ खौं, कोऊ कोऊ कौं, कोऊ कोऊ के लाने
अपादान	कोऊ सैं	कोउ कोउ सैं
संबंध	कोउ कौं, कोउ के, कोउ की	कोउ–कोउ कौं, कोउ–कोउ के, कोउ–कोउ की
अधिकरण	कोउ में, कोउ पै	कोउ कोउ में, कोउ कोउ पै

कभी–कभी 'कोउ' के स्थान पर 'काउ' का प्रयोग भी किया जाता है, जैसे – काउ ने, काउ कौं, काउ की, काउ पै।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम – 'कछू' के रूप में परिवर्तन नहीं होता है और इसीलिये इसकी कारक रचना नहीं होती। जब 'कछू' का प्रयोग संज्ञा के समान होता है, तब इसकी कारक रचना संबोधन को छोड़कर शेष कारकों के बहुवचन में होती है।

कारक	**बहुवचन**
कर्ता	कछू कछू नैं
कर्म	कछू–कछू कौं, कछू–कछू खौं
करण	कछू–कछू सैं, कछू के द्वारा
सम्प्रदान	कछू कौं, कछू खौं, कछू के लाने
अपादान	कछू सैं
संबंध	कछू कौ, कछू के, कछू की
अधिकरण	कछू में, कछू पै

संबंधवाचक सर्वनाम

संबंध कारक सर्वनाम 'जो' और 'सो' के कर्ता कारक के विभक्तिरहित एकवचन के रूप 'जो' और 'सो' तथा बहुवचन के रूप में भी जो और सो रहते हैं। विभक्तिसहित कर्ता और शेष कारकों के एकवचन में जो और सो के रूप 'जी' और 'सी' तथा बहुवचन में 'जिन' और 'तिन' होते हैं। आधुनिक बुन्देली में 'सो' के स्थान पर 'बौ' (वह) का प्रयोग अधिक प्रचलित है, जिसके रूप अन्य पुरुष 'बों' के समान ही होते हैं। कर्म और सम्प्रदान कारक में बहुवचन में 'जो' और 'सो' के रूप 'जिनै' और 'तिनै' भी प्रयोग होते है।

'जो' और 'सो' के सभी वचनों और कारकों के भिन्न रूप इस प्रकार है–

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	जो, जी ने	जो, जिनने
कर्म	जी कौं, जी खौं	जिनकौं, जिनखौं, जिनै
करण	जी सैं, जी के द्वारा	जिन सैं, जिनके द्वारा
सम्प्रदान	जी कौं, जी खौं, जी के लाने	जिन को, जिन खौं, जिनके लाने
अपादान	जी सैं	जिन सैं
संबंध	जी कौ, जी के	जिन कौ, जिनके
अधिकरण	जी में, जी पै	जिनमें, जिनपै

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	सो, ती, नैं	सौ, तिन नैं
कर्म	ती कौं, तो खौं	तिन कौं, तिन खौं, तिनैं
करण	ती सैं, ती के द्वारा	तिन सैं, तिनके द्वारा
सम्प्रदान	तीकौं, तीखौं, ती के लाने	तिन कौं, तिनखौ, तिन के लाने
अपादान	ती सैं	तिन सैं
संबंध	ती मैं, ती पै	तिन मैं, तिन पै

अधिकरण रूप : प्रश्नवाचक सर्वनाम

1. प्रश्नवाचक सर्वनाम शब्द को (कौन) के कर्ताकारक के विभक्तिरहित एकवचन और बहुवचन के रूप 'को' ही रहते हैं। विभक्तिसहित कर्ता तथा शेष कारकों के एकवचन में 'कौ' का रूप 'की' और बहुवचन का रूप 'किन' हो जाता है। आजकल बुन्देली में दोनों वचनों में 'कौन' का प्रयोग अधिकता से प्रचलित है। कर्म और सम्प्रदान के बहुवचन में 'किनै' रूप भी आता है। प्रश्नवाचक सर्वनाम शब्दों के रूपों की तालिका इस प्रकार है –

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	कौ, कौन नैं, की नैं को	किननैं, कौन नै कीने
कर्म	की कौं–खौं, कौन कौं, कीये	कौन कौं–खौं, कीसैं–कीयै
करण	की सैं, की के द्वारा	किन सैं, किन के द्वारा
	कौन सैं, कौन के द्वारा	कौन सैं, कैन के द्वारा

सम्प्रदान	की कौं, की खौं, की कै लाने,	किन कौं, किन खौं, किन के लाने किनै
अपादान	की सैं, कौन सैं	किन सैं, कौन सैं
संबंध	की, कौ, की के, की–की, किनको, कौन–कौ, कौन की, कौन के	किनके, किनकी कौनको कौन के, कौन की
अधिकरण	की में, की पै कौन में, कौन पै	किन में, किन पै कौन में कौन पै

2. प्रश्नवाचक सर्वनाम का के रूप विभक्तिरहित कर्ता और कर्म के एकवचन में 'का' ही रहते हैं। शेष कारकों में तथा विभक्तिसहित कर्ता और कर्म में भी इसका रूप 'काये' (काहे) हो जाता है।

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	का, काये नैं	एक सा रूप
कर्म	का, काये, कौं, खौं	एक सा रूप
करण	काय सैं	एक सा रूप
सम्प्रदान	काये कों, काये खौं, काये के लाने	एक सा रूप
अपादान	काये सैं	एक सा रूप
संबंध	काये कौं, के, की, काये में कार्य पै	एक सा रूप

1. आप, कोऊ का और कछू का सर्वनाम शब्दों को छोड़कर शेष सर्वनाम शब्दों के कर्म और सम्प्रदान कारकों के दो–दो रूप होते हैं, जिनमें एक कौं–खौं विभक्ति सहित होता है और दूसरा विभक्तिरहित होता है। इससे वाक्य में 'कौं' अथवा 'खौं' की पुनरुक्ति से भद्दापन नहीं आता। जैसे – रामू ने अपनी गैया खौ मोखौं दै दओ। इसमें रामू ने अपनी गैया खौ मोये दे दओ। खौं, उनखौं दिखा देतौ। खाँ, उनै दिखा देतो।

2. बहुत से सर्वनाम शब्दों के साथ अधिकृत रूपों के संबंध कारक की विभक्ति आती है। जैसे – बौ को बौ नें मिलो और जो कौ जो चलौ गऔ। कछू को कछू होत, कछू को कछू अर्थ लगा सके। काँ को काँ ले आउत। काँ की काँ बात खेंच रये।

3. जौ, बौ, सो, कौन सर्वनाम शब्दों के रूपों में 'तनौ' आदेश करके परिणाम वाचक, विशेषण बनाते हैं, जैसे–

जौ	जितनौ	कौ (कोन)	कितनौ
बो	उतनौ	सो	तितनौ

बुन्देली में कभी–कभी 'तनों' के स्थान पर ध्वनि विपर्यय के कारण इतनों–इत्तो, इत्ती, जितनों–जित्ती, जित्तौ, उतनों–उत्तौ, उत्ती, कितनों–कित्तौ, कित्ती और तितनों–तित्तो, तित्ती का प्रयोग होता है।

जब इनका प्रयोग अनिश्चिय, संख्या वाचक विशेषण के रीति पर होता है, तब बहुवचन में इत्ते और इत्ती का प्रयोग होता है जैसे– इत्ते घरों में, इत्ती किताबों में।

4. जौ, बौ, सो और को से प्रकार बोधक विशेषण शब्द भी बनाये जाते हैं। इस प्रकार जैसे, उस प्रकार, वैसो, तैसो और किस प्रकार, कैसें रूप सिद्ध होते हैं।

5. पुरुषवाचक सर्वनाम को छोड़कर अन्य सर्वनाम शब्दों का प्रयोग विशेषण की रीति पर होता है।

लिंग

लिंग वह रूप है, जिससे यह पता चलता है कि संज्ञा या सर्वनाम का नाम बोधक शब्द पुरुष जाति या नारी जाति का सूचक है। बुन्देली में लिंग दो ही हैं– पुल्लिंग और स्त्रीलिंग। बुन्देली में नपुंसकलिंग का प्रयोग नहीं होता।

पुल्लिंग – जिससे नामवाचक, शब्द पुरुष जाति का होना सूचित हो, उसे पुल्लिंग कहते हैं, जैसे –मनक, लोग, आदमी, बैल, बंदर, सूरज, पेड़।

स्त्रीलिंग – जिस नामवाचक शब्द से स्त्री जाति का होना सूचित हो, उसे स्त्रीलिंग कहते हैं, जैसे– लुगाई, गैया, बंदरिया, लता।

अचेतन या जड़ वस्तुओं में लिंग निर्णय व्यवहार के अनुसार होता है तथापि संस्कृत, मराठी, गुजराती और अंग्रेजी में नपुंसकलिंग माना गया है, परन्तु उनमें भी अनेक जड़ पदार्थों को उनके गुण विशेष के आधार पर स्त्रीलिंग अथवा पुल्लिंग में माना गया है, जिसमें कठोरता, सबलता, श्रेष्ठता आदि गुण दिखते हैं, उन्हें पुल्लिंग और जिनमें कोमलता, नम्रता और सुन्दरता आदि गुण दिखते हैं, उन्हें स्त्रीलिंग में रखा गया है।

प्राणीवाचक

1. जिन प्राणीवाचक शब्दों से जोड़े या मिथुन का बोध होता है, उनमें पुरुषबोधक को पुल्लिंग और स्त्रीलिंग में मानते हैं, जैसे– लोग, मोड़ा, बैल आदि पुल्लिंग और लुगाई, मोड़ी, गाय और भौजी स्त्रीलिंग हैं।

नामवाचक शब्दों के इन उभय लिंगों के शब्दों में सदैव पति–पत्नि का संबंध नहीं रहता। कभी–कभी उनसे केवल पुरुष जाति या नारी जाति का बोध होता है जैसे– भैया–बहिन, चेला–चेली, सारो–सारी, लरका–लरकनी।

2. अनेक मानवेतर प्राणीवाचक संज्ञा शब्दों से दोनों लिंगों का बोध होता है, जैसे – नीलकण्ठ, कौआ, माछी, मछरी, चील, खटमल, ककुआ, गिलेरी, कोइल।

3. प्राणियों के समूहवाचक संज्ञा का लिंग भी व्यवहारिक प्रयोग के अनुसार होता है, जैसे कुटम, परबार, बंस, झुंड, भीर, टोली, परजा, गोल पुल्लिंग हैं।

4. कभी–कभी एक ही अर्थ के द्योतक अप्राणीवाचक संज्ञा शब्द भिन्न–भिन्न लिंगों में रहते हैं, जैसे –

पुल्लिंग	**स्त्रीलिंग**
नैन	आँख
मारग	गैल
हाँत	भुजा
पाँव	टाँग
ग्रंथ	पोथी
घर	बखरी

अप्राणीवाचक शब्दों के लिंगविषयक नियम इस प्रकार हैं –

अप्राणीवाचक पुल्लिंग

जिन अप्राणीवाचक शब्दों के अंत में 'ओ' अथवा 'आ' हो तो प्रायः पुल्लिंग होता है, जैसे– लोटा, पलीता, पटिया, थैला, फाबरो, जाड़ो, बसकारो, खैरो, डोरा, डेरा।

निर्जीव बोधक अप्राणीवाचक शब्दों के पुल्लिंग के विषय में निम्नांकित नियम जानने योग्य हैं –

1. संपूर्ण ग्रहों और तारा ग्रहों के नाम प्रायः पुल्लिंग होते हैं जैसे– सूर्य, चंद्रमा (चँद्र), बुध, राहु, केतू, ध्रुव, मंगल, शनि, विरस्पत (वृहस्पति)।

2. जिन अप्राणीवाचक शब्दों के अंत में 'न' हो वे प्रायः पुल्लिंग होते हैं, जैसे– पालन, पोसन, वचन, नैन, दिन, गमन, हरन, मरन, तरन।

3. जिन अप्राणीवाचक संज्ञा शब्दों के अंत में 'ता' हो वे प्रायः पुल्लिंग होते हैं, जैसे– लत्ता, पत्ता, कुत्ता–छत्ता।

4. जिन अप्राणीवाचक शब्दों के अंत में 'ख' हो वे प्रायः पुल्लिंग होती हैं, जैसे– मुख, नख, सुख, दुख, संख, लेख।

5. जिन संज्ञा शब्दों के अंत में आन, आर, आस, आप हो वे पुल्लिंग होते है, जैसे– नहान, सहाय, उपाय, विकास, मकान, मिलान, लगान। अपवाद स्वरूप दुकान, सरकार, बलाय, मिठास, प्यास, तकरार स्त्रीलिंग हैं।

6. जिन भाववाचक शब्दों के अंत में बो, आब, पन तथा पौ हो वे पुल्लिंग होते हैं, जैसे– गाबो, लेबौ, देबौ, चढाब, बुढ़ापौ, लड़कपन।

7. वर्णमाला के अक्षर प्रायः पुल्लिंग होते हैं, जैसे– अ, आ, क, ख, ग, फ, म आदि। अपवाद इ, ई, उ, ऊ और श्र (रि)।

8. शरीर के अवयवों क नाम प्रायः पुल्लिंग होते हैं, जैसे– हाँत, पाँव, गोड़, कान, गला, ओंठ, दाँत आदि। अपवाद– आँख, नाक, जीभ, जाँघ।

9. वर्ष, मास, दिन के नाम पुल्लिंग होते हैं, जैसे– बुधवार, मंगलवार, शनिवार, सोमवार, चैत, बैशाख, पूस आदि।

10. जल और थल के मार्गों के नाम प्रायः पुल्लिंग होते हैं जैसे– देस, नगर, दीप, पहार, तलाब, आकास, पाताल, घर आदि।

11. पहाड़ों और देशों के नाम प्रायः पुल्लिंग होते हैं, जैसे– हिमालै, विंध्या, आबू, बंगाल, गुजरात, पंजाब, जापान, ईरान।

12. अनाजों के नाम प्रायः पुल्लिंग होते हैं, जैसे– गेहूँ, जौ, बाजरा, मटर, उरदा, चना, अपवाद ज्वार, मका, मूँग, राहर आदि।

13. द्रव पदार्थों के नाम प्रायः पुल्लिंग होते हैं, जैसे– दूध, तेल, घी, दही, मही, पानी, सरबत, अतर, फुलेल। अपवाद छाँछ और स्याई स्त्रीलिंग।

14. रत्नों के नाम प्रायः पुल्लिंग होते हैं, जैसे– हीरा, मोती, पन्ना, जबाहर, लाल, पुखराज आदि। अपवाद मणि स्त्रीलिंग हैं।

15. वृक्षों के नाम प्रायः पुल्लिंग होते हैं, जैसे– पीपर, बबूल, खजूर, सागौन। अपवाद बरिया, बेरी, जामुन, बिही, इमली।

16. धातुओं के नाम प्रायः पुल्लिंग होते हैं, जैसे– सोना, तामौ, लोहा, काँसो, पीतर, टीन, सीसौ। अपवाद चाँदी, माटी, धात।

अप्राणीवाचक स्त्रीलिंग

1. क्रिया से बनने वाले 'अकारान्त' भाववाचक संज्ञा शब्द प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे – लूटमार, समझ, रहन, जरन, छाप, पुकार, चमक, खोज आदि। अपवाद खेल, चलन, नाच, विमार, उतार, चढ़ाव, बोल पुल्लिंग।

2. तद्धित शब्द से बने 'इया' प्रत्ययान्त संज्ञा शब्द स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे – डबिया, खटिया, हड़िया, फुड़िया, दुकनिया, लुटिया, कुटिया, पुरिया आदि।

3. किसी भी भाषा, नदी या तिथि का नाम स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे – हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगला, अंग्रेजी, उर्दू, गंगा, बेतवा, धसान, नरबदा, काबेरी, दोज, तीज, चौथ, आठें, ग्यारस आदि।

4. अकारान्त अप्राणीवाचक संज्ञा शब्द प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे – दया, माया, ममता, छमा, करुना, हबा, दबा, सजा, जमा, पाठशाला, दुनियाँ और देवता आदि।

5. जिन अप्राणीवाचक शब्दों के अंत में 'त' होता है वे प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे – बात, रात, जात, लात, रीत, कसरत, कीमत, दौलत। अपवाद – भात, खात, गात, दसखत, सरबत।

6. द्रव पदार्थों को छोड़कर शेष ईकारान्त अप्राणीवाचक शब्द प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे– बोली, चिट्ठी, छुरी, लाठी, बीमारी, चालाकी, गरीबी, गरमी, सरदी, रूचि, आगी, बिंदी, नदी, टोपी, उदासी।

7. जिन भाववाचक शब्दों के अंत में 'आई' 'ता' 'बट' या 'हट' प्रत्यय हों वे प्रायः स्त्रीलिंग होते हैं, जैसे – बनाबट, सजाबट, बुनबाई, बुलाहट, कोमलता, कायरता, धुबाई, चराई, कटाई, आदि। यौगिक शब्दों के लिंग का बोध उसके अंतिम शब्द या (स्त्रीलिंग) जिन यौगिक शब्दों का अंतिम शब्द आत्मा होता है, वे सब पुल्लिंग होते हैं, जैसे– परमात्मा, जीवात्मा, महातमा, दुरातमा, आदि।

जब यौगिक शब्दों का अंतिम शब्द द्रव्य सूचक हो, तब उनका औकारान्त, ईकारान्त हो जाता है – ठंडौ–ठंडी।

पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने के नियम

'इ' प्रत्यय लगाने से – अकारान्त और ओकारान्त पुल्लिंग प्राणीवाचक शब्दों के अन्त्य स्वर का लोप कर उसमें 'इ' प्रत्यय लगाने से स्त्रीलिंग शब्द बनते हैं, जैसे–

देब	देबी	मौड़ा	मौड़ी
दास	दासी	नर	नारी
नाना	नानी	बेटा	बेटी
दादा	दादी	आजा	आजी
फूफा	फूफी	काका	काकी
चाचा	चाची		
अपवाद–गधा	गधैया	कुत्ता	कुतिया

'इ' अथवा 'इया' प्रत्यय लगाने से – औकारान्त पुल्लिंग प्राणीवाचक शब्दों के अन्त्य स्वर का लोपकर 'इ' तथा 'इया' प्रत्यय लगाने से स्त्रीलिंग बनते हैं जैसे –

मेंदरो	मिंदरिया	दूधबारौ	दूधबारी
चोंखरों	चुखरिया	कूंजरो	कुंजरिया
कातनहारौ	कातनहारी	भतीजौ	भतीजी

अन प्रत्यय लगाने से – प्राणीवाचक पुल्लिंग शब्दों के अन्त्य स्वर का लोपकर 'अन' प्रत्यय लगाने से स्त्रीलिंग वाची शब्द बनते हैं जैसे –

अहीर	अहीरन	तमेरो	तमेरन
गमार	गमारन	तेली	तेलन
पुजारी	पुजारन	धोबी	धोबन
ग्वाला	ग्वालन	मास्टर	मास्टरन
मोची	मोचन	कुम्हार	कुम्हारन
चपरासी	चपरासन	काछी	काछन
नाई	नाईन	जमादार	जमादारन
अपवाद–वामन	वामन्नी	ठाकुर	ठकुराईन

'नी' प्रत्यय लगाने से – कतिपय मानवेत्तर प्राणीवाचक शब्दों के अंत में 'नी' प्रत्यय लगाने से स्त्रीलिंग बनते हैं, जैसे –

ऊँट	ऊँटनी	रीछ	रीछनी

सेर	सेरनी	स्यार	स्यारनी
हिन्ना	हिन्नी	सर्प	सर्पनी
मोर	मोरनी		

'इन' प्रत्यय लगाने से – अनेक उपनाम वाचक पुल्लिंग के अंत में अन्त्य स्वर का लोपकर 'इन' (अन्) प्रत्यय लगाने से बनते हैं, जैसे–

ठाकुर	ठाकुराइन	मिसर	मिसराइन
पाठक	पठकान	सुकल	सुकलान

'आनी' प्रत्यय लगाने से – अनेक पुल्लिंग उपनाम वाचक शब्दों के स्त्रीलिंग शब्द बनाने में अंत्य स्वर का लोप कर 'आनी' प्रत्यय लगाते हैं जैसे –

सेठ	सेठानी	देवर	देवरानी
मेहतर	मेहतरानी	पंडित	पंडितानी
नौकर	नौकरानी	जेठ	जेठानी

अनेक पुल्लिंग शब्दों का स्त्रीलिंग शब्द में प्रत्यय लगाकर बनाते हैं, जैसे –

भेड़	भेड़िया	बहिन	बहिनोई
भैंस	भैंसा	ननद	ननदोई
जीजा	जीजी	मौसी	मौसिया

कई प्राणीवाचक पुल्लिंग शब्दों के स्त्रीलिंग शब्द निम्न होते हैं, जैसे –

भाई	बहिन	ससुर	सास
राजा	रानी	मामा	मामी
दुबे	दुबैन	बैल	गाय
बाबा	बाई	पुरुष	त्रिया

वचन

संज्ञा या अन्य विकारी शब्द के जिस रूप से संख्या का बोध होता है, उसे वचन कहते हैं। बुन्देली बोली में वचन दो प्रकार के होते हैं – एकवचन और बहुवचन।

एकवचन – विकारी शब्दों के जिस रूप से एक का बोध होता है, उसे एकवचन कहते हैं, उदाहरणार्थ – लुटिया, घुरवा, पलका, पल्ली, चदरा, धुतिया, पोलका।

बहुवचन – विकारी शब्द के जिस रूप से एक से अधिक पदार्थों का बोध होता है, उसे बहुवचन कहते हैं, उदाहरणार्थं – उड़ते तोते, गइयाँ, बकरियाँ, मोड़ियें, बउयें, बकरियें, बिलियें।

वचनभेद के चार शब्दभेदों के रूप विकृत होते हैं– संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया।

सर्वनाम और विशेषण शब्दों के रूप संज्ञा–शब्दों के रूपों के अधीन रहते हैं और क्रिया शब्दों के रूप कुछ भिन्न होते हुए भी संज्ञा या सर्वनाम शब्दों के अधीन रहते हैं जो प्रधानतया उन क्रिया शब्दों के कर्ता व कर्म हुआ करते हैं। इन कारणों से प्रधान विचार संज्ञा के रूपों पर किया जाता है। क्योंकि अन्य विकारी शब्दभेदों के रूपविकार संज्ञाशब्दों के रूपों के प्रायः अधीन होते हैं। संज्ञाशब्दों के रूपभेद वचनभेद के अनुसार होते हैं – 1. विभक्तिसहित, 2. विभक्तिरहित। इन दोनों में एक शब्द के समान दो रूपों के अर्थ में अंतर रहता है। उदाहरण के लिये– घोड़े ने भूसा खाया और घोड़े भूसा खाते हैं। पहले वाक्य में 'घोड़े' के साथ 'ने' विभक्ति होने से 'घोड़े' 'घोड़ा' शब्द का एकवचन का रूप हैं और दूसरे वाक्य में 'घोड़े' के विभक्ति रहित होने से 'घोड़ा' शब्द का बहुवचन का रूप है। विभक्ति के साथ 'घोड़ा' शब्द बहुवचन एवं 'घोड़ों' होगा'।

संज्ञा शब्दों के विभक्ति रहित एकवचन और बहुवचन रूपों में सामान्यतः भेद नहीं रहता, उनका निर्णय क्रिया के संबंध से करते हैं, जैसे– शेर पानी पीता है और शेरों ने पानी पिया, इन दोनों में क्रमशः पहला और दूसरा वाक्य, एकवचन और बहुवचन है।

एकवचन से बहुवचन बनाने के नियम

1.(अ) पुल्लिंग संज्ञा शब्दों के विभक्तिहीन अकारान्त रूपों के अंतिम 'आ' को 'ए' कर देने से उनके बहुवचन के रूप बन जाते हैं उदाहरणार्थ– कुत्ता–कुत्ते, जूता–जूते, केला–केले, तारा–तारे।

(ब) विभक्तिरहित अकारान्त पुल्लिंग संज्ञा शब्दों के बहुवचन के रूप बनाने में उनके एकवचन के रूपों के 'अन्त्य' 'आ' को 'ओं' कर देते हैं तथा एकवचन के रूप में विभक्ति लगाने के पूर्व 'अन्त्य' 'आ' को 'ए' कर देते हैं उदाहरणार्थ –

एकवचन	**बहुवचन**	**एकवचन**	**बहुवचन**
हाथी ने	हाथियों ने	हाथी पर	हाथियों पर
घर में	घरों में	गधे से	गधों से

विशेष – बुन्देली के व्यावहारिक रूप में अकारान्त रूप में अकारान्त पुल्लिंग संज्ञा शब्दों के विभक्तिसहित एकवचन का प्रायः विकास नहीं होता, उदाहरण– घर में, हाथी पै, गधा से।

(स) स्त्रीलिंग एकवचन संज्ञा शब्दों विभक्तिरहित अकारान्त रूपों के अंत में 'ए' जोड़ने से उनके बहुवचन के रूप बन जाते हैं, उदाहरणार्थ –

एकवचन	**बहुवचन**	**एकवचन**	**बहुवचन**
नदी	नदियें	बहिन	बहिनें
पुस्तक	पुस्तकें	झील	झीलें

द. एकवचन स्त्रीलिंग संज्ञा शब्दों के विभक्तिसहित अकारान्त रूपों के अंत में 'ओ' लगाने से उनके बहुवचन रूप बन जाते हैं –

एकवचन	**बहुवचन**	**एकवचन**	**बहुवचन**
नदी में	नदियों में	बहिन को	बहिनों को
पुस्तक से	पुस्तकों से	झील में	झीलों में

2. (अ) पुल्लिंग संज्ञा शब्दों के विभक्तिरहित दोनों वचनों के रूप समान रहते हैं, उदाहरणार्थ– मोरें एक बैल है– मोरें चार बैल हैं। राजा कें एक पुत्री है– राजा कें चार पुत्री हैं।

(ब) स्त्रीलिंग संज्ञा शब्दों के विभक्तिरहित आकारान्त दोनों वचनों में एक जैसे रहते हैं या रूपों के अन्त्य में 'अ' के स्थान पर 'ए' कर देने से उनके बहुवचन के रूप बन जाते हैं। उदाहरणार्थ– इन्नें एक पुड़ी खाइ– इन्नें चार पुड़ी खाइं। लरका की एक कमीज है– लरका की चार कमीजें हैं।

(स) पुल्लिंग संज्ञा शब्दों के एकवचन के विभक्तिसहित अकारान्त रूपों में अन्त्य में 'अ' को 'ओ' कर देने से बहुवचन के रूप बन जाते हैं। उदाहरणार्थ– कुंआ सें – कुंओं सें, मेड़ पै– मेड़ों पै।

3. (अ) इकारान्त अथवा ईकारान्त विभक्तिरहित पुल्लिंग संज्ञा शब्द दोनों वचनों में एक समान रहते हैं। उदाहरणार्थ – उतै एक चिरैया हती– उतै पाँच चिरैया हतीं। ऊने एक लडुआ खाब– उनने दस लडुआ खाय।

(ब) विभक्तिरहित ईकारान्त अथवा इकारान्त स्त्रीलिंग एकवचन के संज्ञा शब्दों के बहुवचन रूप बनाने में अन्त्य 'इ' अथवा 'ई' को 'इयां' कर देते हैं उदाहरणार्थ– इते

एक खाट है– इते पाँच खटियाँ हैं। इके पास एक गैया है– ईके पास पाँच गैयाँ हैं।

(स) विभक्ति इकारान्त अथवा ईकारान्त स्त्रीलिंग एकवचन के संज्ञा शब्दों के अन्त्य में 'इ' अथवा 'ई' को 'इयों' करने से उनके बहुवचन रूप बनाये जाते हैं। उदाहरणार्थ– थारी को–थारियों को, कुतिया खों–कुतियों खों, पहिया–पहियों।

(द) इकारान्त अथवा ईकारान्त संज्ञा शब्दों के विभक्तिसहित एकवचन के अन्त्य में इ, ई के स्थान पर 'यन' कर देने से बहुवचन का रूप बन जाता है। उदाहरणार्थ– कुलारी सें– कुलारियन सें, गाड़ी सें– गाड़ियँन से।

4. (अ) ऐसे विभक्ति वाले एकवचन पुल्लिंग संज्ञा शब्द जिनके अन्त्य में 'इया' है, उनका एक रूप परिवर्तित नहीं होता – लड़िया अच्छो है। सबरे लड़िया अच्छे हैं। जो गुरिया कच्चो है– जे गुरिया कच्चे हैं। एक छिड़िया चढ़ गओ। पाँच छिड़िया चढ़ गओ।

(ब) बिना विभक्ति वाले स्त्रीलिंग, एकवचन संज्ञा शब्दों के अन्त्य में 'इया' हो, उनके बहुवचन बनाने के लिए 'इया' के स्थान पर 'इयाँ' कर देते हैं, उदाहरणार्थ– उनके एक बिटिया है– उनकें तीन बिटियाँ हैं।

(स) ऐसे विभक्तियुक्त, एकवचन स्त्रीलिंग वाले शब्दों के अन्त्य में, बहुवचन बनाने के लिए 'इया' के स्थान पर 'इयों' भी कर देते हैं–लठिया से–लठियों सें, डुकरिया ने–डुकरियों ने।

(द) एकवचन पुल्लिंग संज्ञा शब्दों के विभक्तियुक्त रूपों के अन्त्य में 'इया' के स्थान पर बहुवचन बनाने के लिए 'आ' का लोप कर 'न' जोड़ देते हैं, उदाहरणार्थ– कुठिया में– कुठियन में, बछिया ने– बछियन ने, भैसिया कों– भेसियन कों।

5. एकवचन को बहुवचन बनाने के लिए संज्ञा शब्दों के अन्त्य में जन–जनों, गन आदि शब्द भी लगाये जाते हैं। उदाहरणार्थ– गुरु– गुरुजन/ गुरुजनों, रिसि, रिसिगनों– रिसिजन/ रिसिजनों।

6. जातिवाचक संज्ञा शब्दों के एकवचन से भी जाति के समूह या बहुवचन का बोध होता है, उदाहरणार्थ – भटा दो रूपइया किलो हैं। बैलबा माँगे हो गए।

7. सामान्यतः द्रव्य अथवा पदार्थवाची संज्ञा का प्रयोग एक ही वचन के रूप में होता है। परन्तु पदार्थ अथवा द्रव्यविशेष की भिन्न–भिन्न जातियों को बताने में भी उनके प्रयोग बहुवचन में भी होते हैं– दुकानदार के बन्न–बन्न के उन्ना हैं। फूला अच्छे लगत हैं।

8. (अ) जिन विभक्तियुक्त एकवचन पुल्लिंग संज्ञा शब्दों के अन्त्य में 'उ' अथवा 'ऊ' हो तो उनके बहुवचन रूप बनाने के लिए दीर्घ 'ऊ' के स्थान पर 'ओं' लगाते हैं। उदाहरणार्थ– आलू खों– आलुओं खों, झाडू सें– झाडुओं सें।

(ब) जिन विभक्तिरहित एकवचन पुल्लिंग संज्ञा शब्दों अन्त्य में 'उ' अथवा 'ऊ' हो उन दोनों वचनों के रूप समान होते हैं। उदाहरणार्थ– जो हमाव कुत्ता आय– बे हमाय कुत्ता आंय। तुम भौत गुस्सैल हो – उते सबइ गुस्सैल हैं।

(स) एकवचन पुल्लिंग संज्ञा शब्दों के विभक्ति वाले रूपों के अन्त्य में 'उ' अथवा 'ऊ' को हृस्व बनाकर 'अन' जोड़ते हैं, उदाहरणार्थ– बाबू ने – बाबुअन ने।

(द) विभक्तिरहित एकवचन स्त्रीलिंग संज्ञा शब्दों के अन्त्य में 'उ' अथवा 'ऊ' को बहुवचन के रूप में बदलने के लिए 'ऊ' को हृस्व करके 'अन' जोड़ते हैं, उदाहरणार्थ–बहू– बहुअन।

9. बुन्देली में हिन्दी की भाँति आदरसूचक रूप में भी बहुवचन का प्रयोग करते हैं, उदाहरणार्थ– उननें तो सांची कई ती। इंदिरा जी भौत अच्छी हती।

10. बुन्देली में दूसरी भाषाओं से लिये गये शब्दों के बहुवचन रूप बुन्देली के अनुसार ही बनते हैं, उदाहरणार्थ –

विभक्तिसहित	**विभक्तिरहित**
एक फौजी हतो – चार फौजों हते	फौज ने – फौजन ने
उतै कुर्सी पे बैठने – कुर्सियन पे बैठे तें	कुर्सी पै – कुर्सियन पै
एक लालटेन – पाँच लालटेनें हैं	रेल में – रेलों में

11. बुन्देली के स्त्रीलिंग और पुल्लिंग दोनों रूपों में एकवचन से बहुवचन के लिए शब्दों के अन्त्य में 'अन' प्रत्यय लगाते हैं। उदाहरणार्थ– लरका ने – लरकन नें, मोड़ी ने – मोड़ियन नें।

कारक

वाक्यरचना में कारक अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। वाक्य में संज्ञा या सर्वनाम शब्दों का क्रिया या अन्य संज्ञा सर्वनाम शब्दों से संबंध को कारक कहते हैं, जैसे– श्यामू नैं, उनकौ घर, उनसैं, उनके लाने आदि में नैं, कौ और सैं से युक्त श्यामू और उन संज्ञा शब्दों के वे रूपांतर हैं, जो इनका संबंध वाक्य के दूसरे शब्दों से सूचित करते हैं, ये

प्रत्यय विभक्तियाँ कहलातीं हैं। बुन्देली में विभक्ति के आगे फिर कोई प्रत्यय नहीं लगता, परन्तु अन्य प्रत्यय के बाद भी विभक्ति लगायी जाती है, जैसे– घर भर मैं, गाँव भरे मैं, घरे कै। बुन्देली में आठ कारक होते हैं –

1. कर्ता कारक	नैं, ने
2. कर्म कारक	कों, कौ, खों, खौं, खाँ
3. करण कारक	सें, सैं
4. सम्प्रदान कारक	कों, कौं, खों, खौं, ए के लाने
5. अपादान कारक	सें, सैं
6. संबंध कारक	का, कौ, के, की, खो, खी, रो, री, नौ, ने, नी
7. अधिकरण कारक	में, पै, अै (ए)
8. सम्बोधन कारक	अरे, औ, ए

1. कर्ता कारक

संज्ञा व सर्वनाम शब्द के उस रूप को कर्ता कारक कहते हैं, जिससे वह सूचित हो कि क्रिया उसमें विषय में विधान करती है। इस कारक में ने विभक्ति के स्थान पर बुन्देली में नैं, नें का प्रयोग होता है, जैसे– श्याम नै उननैं, हमनैं, इननैं। कर्ता कारक के दो भेद होते हैं– प्रधान कर्ता, अप्रधानकर्ता।

क. प्रधानकर्ता कारक – जिस कर्ता कारक के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष होते हैं, उसे प्रधानकर्ता कहते हैं, जैसे – मोहन दौड़त हतौ– इसमें दौड़त हतौ क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष 'मोहन' कर्ता के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार हैं, इसमें मोहन प्रधान कर्ता है। प्रधान कर्ता के साथ नैं (नें) विभक्ति का प्रयोग नहीं होता।

ख. अप्रधानकर्ता कारक – जिस कर्ता कारक के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष नहीं होते, उसे अप्रधानकर्ता कहते हैं, जैसे – घोड़ा ने खुर मारौ इसमें घोड़ा, कर्ता के अनुसार न होकर 'कर्म' के अनुसार है, इससे यह अप्रधान कर्ता है। 'मौड़ों नैं रोटी खा लई'। हम नैं भी 'खा लई' क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष 'मौड़ों' कर्ता के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार न होकर 'रोटी' कर्म के अनुसार हैं। अप्रधानकर्ता के साथ 'नैं' विभक्ति का प्रयोग अवश्य किया जाता है।

2. कर्म कारक

संज्ञा या सर्वनाम के उस रूप को कर्म कारक कहते हैं, जिससे उस पदार्थ का बोध हो, जिस पर क्रिया का फल पड़ता है, जैसे– घोड़ा चारो चरत, रामू ने बैल खौं हाँकौ, कमला रोटी बनाउत।

अप्राणीवाचक कर्म का चिह्न प्रायः लुप्त रहता है। जैसे– मोहन किताब पढ़त, गैया भुसा खात। यदि एक ही वाक्य में 'कर्म कारक' और सम्प्रदान कारक दोनों आयें तो प्रायः कर्म की विभक्ति लुप्त रहती है, जैसे तुम रामू कौं अनाज दै दो। कर्मवाच्य की क्रिया के साथ कर्म में कर्ता की विभक्ति हो जाती है और कर्ता कारक में 'सैं' विभक्ति हो जाती है, जैसे– घोड़ा सें चारौ नईं चरौ गओ। मो सें रोटी नईं खायी गयी। गुपाल सें मेनत नईं होत।

3. करण कारक

संज्ञा या सर्वनाम शब्द के उस रूप को करण कारक कहते हैं, जिसमें क्रिया के साधक हेतु का बोध होता है, जैसे – मजूर नै कुलारी से पेड़ काटौ। यहाँ काटौ क्रिया का साधक हेतु 'कुलारी' है।

'करण कारक' का प्रयोग क्रिया करने की विधि या प्रकार बतलाने में होता है, जैसे – मंत्री नें खुसी से अँगूठी दई। उनने मन सें काम करौ। मूल्यवाचक संज्ञा के करण कारक का प्रयोग होता है, जैसे– पैसों सें गैया लै लो। व्यक्ति या वस्तु की उत्पत्ति आदि को स्पष्ट करने के लिए 'करण कारक' का उपयोग करते हैं, जैसे– आटो सें रोटी बना दइं, गैया सें बछिया होत, बीज से नाज होत, हल सें खेत जोतो जात। कहीं–कहीं करण कारक की 'सैं' विभक्ति का लोप होता है, जैसे – आँखन देखी, नैं कानन सुनीं।

4. सम्प्रदान कारक

संज्ञा या सर्वनाम के उस रूप को 'सम्प्रदान कारक' कहते हैं, जिससे उस पदार्थ का बोध हो, जिसके लिये क्रिया की जाये। जैसे– श्याम नें सोहन कौं नाज दओ।

इसकी विभक्ति प्रधानता 'कौं' या 'खौं' है, परन्तु कभी–कभी 'कै लाने' का भी प्रयोग होता है, जैसे – रामू के लाने फूल दे दैओ। चोरों ने पैसों के लानें सेठ की जान ले लइ। राजा नें रानी के लानें उम्दा महल बनबाओं।

योग्यता, उपयुक्तता और औचित्य आदि प्रदर्शित करने के लिये सम्प्रदान कारक आता है, जैसे – लरका, बिटियन खों मताइ–बाप की बात मानौ चैये, जो काम अच्छे आदमन के जोग तौ नइयाँ, ई आसन पै तो राजा कौं बैठारौ चैये।

5. अपादान कारक

संज्ञा या सर्वनाम शब्द के जिस रूप से अलग होना पाया जाये, उसे अपादान कारक कहते हैं। इसकी विभक्ति 'सें' है, जैसे– पेड़ सें फूल झरत, हिमाले सें गंगा निकरी। पेड़ से फल गिरो, टेबल सें पुसतक गिर गई।

भिन्नता, परिचय, अपेक्षा के अर्थं का बोध कराने में भी अपादान कारक आता है, जैसे– ऊ मोड़ा सें जो मोड़ा अच्छो है। मूरख दोस्त सें ग्याँनी दुश्मन अच्छों विद्या हीन खों कोऊ नइं पूँछत, भगवान तौ बुद्वि सें परे हैं, ऊं के काम दुनिया से हटके है।

6. संबंध कारक

संज्ञा सर्वनाम शब्द के जिस रूप से उसके बोधक पदार्थ का निजत्व या स्वामित्व सूचक संबंध किसी दूसरे पदार्थ बोधक संज्ञा या सर्वनाम शब्द से जाना जाये, उसे संबंध कारक कहते हैं, जैसे – हरिया को घोड़ा ऊँचों पूरौ है। असलम की होटल खुली है। उनको भैया बड़ौ लड़ैया है। इसकी विभक्तियाँ को, के, की हैं, जो उत्तम और मध्यम पुरुष वाचक सर्वनाम शब्दों के साथ रौ, री, रे अथवा उच्चारण भेद से औ, ए, ई हो जाती हैं, जैसे– मोहन कौ, के, की। मौरो, मौरे, मोरी। तुमाओ, तुमाए, हमाऔ, हमाए, हमाई।

संबंध कारक में जो शब्द संबंध रखता है, उसके साथ विभक्ति होती है और उसे 'भेदक' कहते हैं, तथा जिससे संबंध रखा जाता है, उसे 'भेद्य' कहते हैं, जैसे– हरिया को बगीचा बड़ौ उपजाऊ है। इसमें हरिया 'को' भेदक और 'बगीचा' भेद्य है। संबंध कारक का विभक्ति चिह्न भेद्य संबंध लिंग और वचन के अनुसार बदलता है, जैसे– हरिया कौ बगीचा, रामू की गाड़ी आदि। सोने के कंगना (कंकना) माटी कौ घर। बराबर, सौ (समान), सरीखौ (सादृश्य) अधीन तथा वश का आदि शब्दों के योग में संबंध कारक होता है, जैसे– जा गैया मोरी गैया सी नैयाँ, रामू कौ मोड़ा बाप के बसको नईयाँ, ऊं को मोड़ा मौत उज्जड कहाव, काय के वो तो कोनऊ की बातई नई सुन रव।

सेव्य–सेवक–भाव, कर्तृ–कर्म–भाव, अंग भाव और जन्य–जनक भाव में संबंध कारक होता है, जैसे– भगवान कौ संसार, राजा की रैयत, नगर कौ पुरा, चाँदी की डिबिया, हाँत की अँगुरियाँ, तेली को बेटा और कौंदों की रोटी।

परिणाम, अवस्था, काल, योग्यता, शक्ति और मूल्य को बतलाने में संबंध कारक आता है, जैसे– चार मील की गैल, दस साल की मोड़ी। बारा साल को पेड़। सौ की साड़ी हजार को घुरबा।

समरसता, भेद, अधीनता और सामीप्य को बतलाने में संबंध कारक का प्रयोग होता है, जैसे– गाँव को गाँव टूट परौ, देस के देस मिट गये। आदमी–आदमी को अंतर, नदिया के पास, राजा के अधीन।

7. अधिकरण कारक

संज्ञा, सर्वनाम शब्द के उस रूप को अधिकरण कहते हैं, जिससे क्रिया का आध ार जाना जाता है जैसे– तला में पानी है। बिस्तर पै मोड़ा परो, मटका में मठा धरो।

अधिकरण कारक की विभक्ति 'में' और 'पै' पर कहीं–कहीं कौं, खौं विभक्ति से भी अधिकरण का प्रयोग होता है, जैसे – भोपाल खौं गऔ, मंदर खौं गये ते। कहीं–कहीं अकारान्त संज्ञा शब्दों को ऐकारान्त करके भी 'अधिकरण कारक' बनाते हैं, जैसे– घरै हैं, बजारै जात।

निर्धारण में अर्थात् अनेक के बीच में एक का निश्चय करने में अधिकरण कारक होता है, जैसे– देवों में महादेव बड़े हैं। नदियों में गंगा पवित्र है, सब मोड़ियन में राधा सुंदर है।

हेतु प्रकार में अपादान और अधिकरण दोनों कारक होते हैं, जैसे– अपादान– ऐसौ काम करौ, जीमें जस मिलै, इत्ती पढ़ाई करौ जीमें पास तो हो जाओ।

8. सम्बोधन कारक

संज्ञा शब्द के उस रूप को सम्बोधन कहते हैं, जिससे किसी को पुकारा जाये या चेतावनी दी जाये, जैसे– हे राम! रच्छा करो। अरी बिटिया! कुआँ में नै झाँक। इसकी विभक्तियाँ हे, हो, अरे और अरी हैं।

सम्बोधन कारक की विभक्तियाँ संज्ञा शब्दों के आदि में उप वर्गों के समान लगायी जाती हैं, यद्यपि वे प्रत्यय हो जाती हैं। जिस शब्द के अंत में जो स्वर है, वह उस शब्द, उन स्वर का अन्त कहलाता है, जैसे– घोड़ा शब्द अकारान्त, बहू शब्द ऊकारान्त और मंत्री ईकारान्त है। निम्नांकित कुछ उदाहरणों से स्पष्ट होगा कि बुन्देली में एकवचन से बहुवचन बनते समय शब्दों में क्या परिवर्तन होते हैं तथा कारक रचना किस प्रकार की जाती है ?

अकारान्त पुल्लिंग 'मालक'

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	मालक, मालक नैं	मालक, मालकों नैं
कर्म	मालक, मालक कौं (खौं) मालक,	मालकों कौं, मालकों खौं
करण	मालक, मालक सैं	मालकों सैं
सम्प्रदान	मालक कौं, खौं, के लाने	मालकों कौं खौं, मालकों के लाने
अपादान	मालक सैं	मालकों सैं
संबंध	मालक कौ, के, की	मालकों कौ, मालकों के, की मालकों में पे
अधिकरण	मालक मैं पे	मालकों मैं पे
सम्बोधन	ए, ओ, अरे मालक	ए, ओ, अरे मालकों

अकारान्त स्त्रीलिंग 'भैंस' शब्द

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	भैंस, भैंस ने	भैंस, भैंसौं नें, भैंसन नें
कर्म	भैंस, भैंस कों (खों)	भैंसें, भैंसों कों, भैसौं खौं, भैंसन कों, खों
करण	भैंस सैं	भैंसों सैं, भैंसन सैं
सम्प्रदान	भैंस कौं,खौं, भैसन के लाने	भैसौं कौं, खौं, भैसों के लाने
अपादान	भैंस सैं	भैसों सैं, भैंसन सैं
संबंध	भैंस कौ, के, की	भैसों कौ, के, की, भैंसन कौ, के, की
अधिकरण	भैंस मैं, पै	भैंसों में, भैंसों पै
सम्बोधन	ओ, ए, अरी, भैंस	ओ, ए, अरी, भैंसों

अकारान्त पुल्लिंग 'राजा' शब्द

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	राजा, राजा नैं	राजा राजाओं नैं
कर्म	राजा, राजा कौं, खौं	राजा, राजाओं कौं, खौं, राजन कौं खौं
करण	राजा सैं	राजाओं सैं, राजन सैं
सम्प्रदान	राजा कौं, खौं के लाने	राजाओं कौं, खौं, के लाने, राजन कौं, खौं के लाने
अपादान	राजा सैं	राजाऔं सैं, राजन सैं
संबंध	राजा कै, के, की	राजाऔं कौं, के, की, राजन कौं, के, की

अधिकरण	राजा में पे	राजाओं में–पै, राजन में–पै
सम्बोधन	ओ, ए, अरे, राजा	ओ, ए, अरे, राजा

अकारान्त स्त्रीलिंग 'गैया' (गाय) शब्द

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	गैया, गैया नैं	गैएँ, गैयों ने, गैयन नें
कर्म	गैया, गैया कौं, खौं	गैएँ, गैयों कौ, खौं, गैयन कौं, खौं
करण	गैया सैं	गैयों सै, गैयन सैं
सम्प्रदान	गैया कौं, खौं, के लाने	गैयों, कों, खौं, के लाने, गैयन कौं खौं, के लाने
अपादान	गैया सैं	गैयों सै, गैयन सै
संबंध	गैया कौं, के, की	गैयों कौ, के, की, गैयन कौ, के, की
अधिकरण	गैया मैं, पै	गैयों मैं, पै, गैयन में पै
सम्बोधन	ए, ओ, अरी गैया	ए, ओ, अरी गैयों

अकारान्त स्त्रीलिंग 'कन्या' शब्द

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	कन्या, कन्या नें	कन्याएँ, कन्यौं नें, कन्यन नैं
कर्म	कन्या कौं, कन्या खौं	कन्याएँ, कन्यौं कौं, खौं कन्यन कौं, खौं
करण	कन्या सैं	कन्यौं सैं, कन्यन सैं
सम्प्रदान	कन्या कौं, खौं के लाने	कन्यौं कौं, खौं, के लाने, कन्यन कौं खौं, के लाने
अपादान	कन्या सैं	कन्यौं सैं, कन्यन सैं
संबंध	कन्या कौ, के, की	कन्यौं को, के, की
अधिकरण	कन्या मैं, पै	कन्यौं मैं, पै, कन्यन मैं, पै
सम्बोधन	ए, ओ, अरी, कन्या	ए, ओ, अरी, कन्याओं

इकारान्त पुल्लिंग 'कवि' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	कवि, कवि नैं	कवि, कवियों नैं, कवियन नैं
कर्म	कवि, कवि कौं, खौं	कवि, कवियों कौं, खौं, कवियन कौं, खौं
करण	कवि सैं	कवियों सैं, कवियन सैं

सम्प्रदान	कवि कौं, खौं, कवि के लानें	कवियों कौं, खौं, के लाने, कवियन कौं, खौं, के लानें
अपादान	कवि सैं	कवियों सैं, कवियन सैं
संबंध	कवि कौ, के, की	कवियों कौ, के, की कवियन कौ, के, की
अधिकरण	कवि मैं, पै	कवियों मैं, पै,
सम्बोधन	ए, ओ, अरे कवि	ऐ, ओ, अरे कवियों

ईकारान्त स्त्रीलिंग 'स्रुति' शब्द (श्रुति)

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	स्रुति, स्रुति नैं	स्रुतियाँ, स्रुतियों नैं
कर्म	स्रुति, स्रुति कौं	स्रुतियों, स्रुतियों कौं, खौं, स्रुतियन कौं, खौं
करण	स्रुति सैं	स्रुतियों सैं, स्रुतियन सैं
सम्प्रदान	स्रुति कौं, खौं के लाने	स्रुतियों कौ, खौं के लाने, स्रुतियन कौं, खौं, के लाने
अपादान	स्रुति सैं	स्रुतियों सैं, स्रुतियन सैं
संबंध	स्रुति कौ, के, की	स्रुतियों कौ, के, की स्रुतियन कौ, के, की
अधिकरण	स्रुति मैं पै	स्रुतियों मैं, पै, स्रुतियन मैं, पै
सम्बोधन	ए, ओ, अरी स्रुति	ए, ओ, अरी स्रुतियों

ईकारान्त पुल्लिंग 'मंत्री' शब्द

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	मंत्री, मंत्री नैं	मंत्री, मंत्रियों नैं, मंत्रियन नैं
कर्म	मंत्री, मंत्री कौं, खौं	मंत्री, मंत्रियों कौं, खौं, मंत्रियन कौं, खौं
करण	मंत्री सैं	मंत्रियों सैं, मंत्रियन सैं
सम्प्रदान	मंत्री कौं, खौं, के लाने	मंत्रियों कौं, खौं के लाने, मंत्रियन कौं, खौं, के लाने
अपादान	मंत्री सैं	मंत्रियों सैं, मंत्रियन सैं
संबंध	मंत्री कौ, के, की	मंत्रियों कौ, के, की, मंत्रियन कौ, के, की
अधिकरण	ए मंत्री, नैं पै	मंत्रियों नैं, पैं, मंत्रियन नैं पै
सम्बोधन	ऐ, ओ, अरे, मंत्री	ए, ओ, अरे मंत्रियों

ईकारान्त स्त्रीलिंग 'दासी' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	दासी, दासी नैं	दासियाँ, दासियों नैं
कर्म	दासी, दासी कौं, खौं	दासियाँ, दासियों कौं, खौं, दासियन कौं, खौं
करण	दासी सैं	दासियों सै, दासियन सै।
सम्प्रदान	दासी कौं, खौं के लाने	दासियों कौं, खौं, के लाने, दासियन कौं, खौं, के लाने
अपादान	दासी सैं	दासियों सैं, दासियन सैं
संबंध	दासी कौ, के, की	दासियों कौ, के, की, दासियन कौ, के, की
अधिकरण	दासी मैं पै	दासियों नैं, पैं, दासियन मैं, पै
सम्बोधन	ए, ओ, अरी दासी	ए, ओ, अरे दासियों

उकारान्त पुल्लिंग 'जंतु' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	जंतु, जंतु नैं	जंतुओं, जंतुओं नैं
कर्म	जंतु, जंतु कौं, खौं	जंतु, जंतुओं कों खौं, जंतुअन कौं, खौं
करण	जंतु सैं	जंतुओं सैं, जंतुअन सैं
सम्प्रदान	जंतु कौं, खौं, के लाने	जंतुओं कौं, खौं, के लाने, जंतुअन कौ, खौं, के लाने
अपादान	जंतु सैं	जंतुओं सैं, जंतुअन सैं
संबंध	जंतु कौ, के, की	जंतुओं कौ, के, की, जंतुअन कौ, के, की
अधिकरण	जंतु मैं, पै	जंतुओं मैं, पै, जंतुअन मैं, पै
सम्बोधन	ए, ओ, अरे जंतु	ए, ओ, अरे, जंतुओं

ऊकारान्त स्त्रीलिंग 'बहू' (वधू) शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	बहू, बहू नैं	बहुएँ, बहुओं नैं
कर्म	बहू, बहू कौं, खौं	बहुएँ, बहुओं कौं, खौं
करण	बहू सैं	बहुओं सैं, बहुअन सैं

सम्प्रदान	बहू कौं, खौं, के लाने	बहुओं कौं, खौं, के लाने, बहुअन कौं, खौं, के लाने
अपादान	बहू सैं	बहुओं सैं, बहुअन सैं
संबंध	बहू कौ, के, की	बहुओं कौ, के, की बहुअन कौ, के, की
अधिकरण	बहू मैं, पै	बहुओं मैं, पै, बहुअन मैं, पै
सम्बोधन	ए, ओ, अरी बहू	ए, ओ, अरी बहुओं

एकारान्त पुल्लिंग 'चौबे' शब्द

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	चौबे, चौबे ने	चौबे, चौबौं ने
कर्म	चौबे, चौबे कौं, खौं	चौबे, चौबौं कौं, खौं
करण	चौबे सैं	चौबौं सैं
सम्प्रदान	चौबे कौं, खौं, के लाने	चौबौं, कौं, खौं, के लाने
अपादान	चौबे सैं	चौबौं सैं
संबंध	चौबे, कौ, के, की	चौबौं कौ, के, की
अधिकरण	चौबे, मैं, पै	चौबौं मैं, पै
सम्बोधन	ए, ओ, अरे चौबे	ए, ओ, अरे चौबों

औकारान्त स्त्रीलिंग 'गौ' शब्द

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	गौ, गौ नैं	गौएँ, गौओं नें
कर्म	गौ, गौ कौं, खौं	गौ, गौओं कौं, खौं गौअन कौ, खौं
करण	गौ सैं	गौओं सैं, गौअन सैं
सम्प्रदान	गौ कौं, खौं, गौ के लाने	गौओं कौं, खौं के लाने, गौअन कौ, खौं, के लाने
अपादान	गौ सैं	गौओं सैं, गौअन सैं
संबंध	गौ कौ, के, की	गौओ कौ, के, की, गौअन कौ, के, की
अधिकरण	गौ मैं, पै	गौओं मैं, पै, गौअन मैं पै
सम्बोधन	ए, ओ, अरी गो	ए, ओ, अरी गौओं

बुन्देली में 'कौदो' शब्द ऐसा है, जिसके विभक्तिरहित और विभक्तिसहित रूप एक समान रहते हैं तथा जिसके रूपों में वचन के कारण विकार उत्पन्न नहीं होता।

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	कौदो, कौदों नैं	कौदो कौदो, कौदो नैं
कर्म	कौदो, कौदो कौ, खौ	कौदो, कौदो कौं, खौं
करण	कौदो सै	कौदो सै
सम्प्रदान	कौदो कौ, खौं, के लाने	कौदो कौं, खौं, के लाने
अपादान	कौदो सै	कौदो सै
संबंध	कौदो कौ, के, की	कौदो कौ, के, की
अधिकरण	कौदो मैं, पै	कौदो मैं, पै
सम्बोधन	ए, ओ, अरे कौदो	ए, ओ, अरे कौदो

विशेषण

विशेषण वे विकारी शब्द होते हैं, संज्ञा या सर्वनाम के गुण अथवा परिमाण आदि की विशेषता बताते हैं और उसकी व्याप्ति को मर्यादित करते हैं। जैसे – गंगा पवित्र नदी है। इस उदाहरण में नदी जातिवाचक संज्ञा शब्द की व्याप्ति 'पवित्र' विशेषण के कारण मर्यादित हो गयी है, क्योंकि ऐसी भी नदियाँ है, जो पवित्र नहीं होती हैं। जो संज्ञा शब्द की विशेषता बताकर व्युत्पत्ति मर्यादित करता है, उसे विशेषण और जिस संज्ञा की विशेषता बताता है वह 'विशेष्य' कहलाता है। ऊपर के उदाहरण में 'नदी' विशेष्य और 'पवित्र' विशेषण है। विशेषण शब्द भाषा में दो प्रकार से प्रयुक्त होते हैं, इन्हें क्रमशः विशेष्य विशेषण और विधेय विशेषण कहते हैं।

विशेष्य विशेषण – जो विशेषण संज्ञा के साथ उसके पहले आता है, उसे विशेष्य विशेषण कहते हैं, जैसे– ओकी बड़ी नाक है। रामू को बड़ो पेट है। स्यानें आदमों की संगत अच्छी होत है।

विधेय विशेषण – जो विशेषण विशेष्य के पीछे और क्रिया से पहले आता है, वह क्रिया की सहायता से विशेष्य की विशेषता बतलाता है, जैसे– कल्पना चित्रकारी में हुसियार है। शक्ति खेलबें में चतुर है।

बुन्देली में रूप और अर्थ की दृष्टि से विशेषण पाँच प्रकार के होते हैं –

व्यक्ति वाचक, गुण वाचक, संख्या वाचक, परिमाण वाचक और सर्वनामी (सर्वनामिक)।

व्यक्तिवाचक विशेषण – ये व्यक्तिवाचक संज्ञा से बनते हैं, ये विशेषण शब्द व्यक्ति की विशेषता बतलाते हैं, जैसे– तिब्बत–तिब्बती, असम–असमी, बंगाल–बंगाली, मदरास–मदरासी।

अ. व्यक्तिवाचक संज्ञा शब्द के अन्त्य 'अ' अथवा 'आ' को 'इ' करने से मद्रास–मद्रासी, पाकिस्तान–पाकिस्तानी, अमरीका–अमरीकी, नेपाल–नेपाली, भूटान–भूटानी, सिंध–सिंधी, राजस्थान–राजस्थानी।

ब. कभी–कभी अन्त्य 'अ' अथवा 'आ' को 'इया' करने से जैसे– कलकत्ता – कलकतिया, रायपुर–रायपुरिया, रामपुर–रामपुरिया, कानपुर–कानपुरिया, भोजपुर–भोजपुरिया।

गुणवाचक विशेषण – ये विशेषण संज्ञा शब्दों के गुण बतलाते हैं, इसलिए गुणवाचक विशेषण कहलाते हैं, जैसे– पीरौ, हरौ, सुपेत, करिया, मटैलो, ऊजरौ, मैलो, गोरी, भूरो, दूबरो, मोटौ, पतरौ, इकारौ, ऊँचो, नैंचो, हलको, चौंरो, सँकरौ, कड़ो (कर्रो), कौंरो, गदरौ, कच्चौ, पक्कौ, दरदरो, चिकनौ, सूको, गीलौ, निचरौ, तींतौ, नऔ, पुरानौं, सरौ (सड़ो), नौंनी, कटौ, जुड़ौ (जुड़ा), ठंडौ, तातौ आदि। उदाहरण– नयी गैया, गीलो कपड़ा, ऊँचौ मकान, पीली धुतिया, दूबरौ आदमी, मौटो सेठ, करिया मोड़ा, गोरी मोड़ी, सूकरो सो मोड़ा, जो बड़ो बुद्धीमान है।

1. हीनता ज्ञापित करने के लिये गुणवाचक विशेषणों के साथ पुल्लिंग एकवचन में 'सौ' पुल्लिंग बहुवचन में 'से' स्त्रीलिंग एकवचन में 'सी' और स्त्रीलिंग बहुवचन में 'सी' जोड़ते हैं, जैसे– बड़ौ सौ घर, छोटी से संदुकिया, लंबौ सौ पेड़, हाथी सो जानवर, छोटीं सी बिलियाँ, मोटी सीं कुतियाँ।

2. कभी–कभी गुणवाचक विशेषण, जातिवाचक संज्ञा शब्दों से बने विशेषणों द्वारा सूचित होते हैं, जो उन जातिवाचक संज्ञा शब्दों के संबंध कारक के रूप में परिवर्तित हो सकते हैं, जैसे– आपसी झग़ड़ा, घरू दबाई, शहरी लोग आदि।

3. जब विशेषण लुप्त रहता है, तब गुणवाचक विशेषण शब्दों का प्रयोग संज्ञा के समान होता है, जैसे– अपनौं को हेत करौ, गरीबों पै दया राखौ।

4. अनेक संज्ञा शब्दों के अंत में ईलौ, ईले, ईली, ईलीं प्रत्यय लगाने से गुणवाचक विशेषण बनते हैं, जैसे– छवि–छबीलौ, छबीले, छबीली, छबीलीं। गाँठ– गँठीलौ, गँठीले, गँठीली, गँठीलीं। लाज– लजीलौ, लजीले, लजीली, लजीलीं। सुर– सुरीलौ, सुरीले, सुरीली, सुरीलीं। हठ– हठीलौ, हठीले, हठीली, हठीलीं।

5. संज्ञा शब्दों में बान्, बंत, बती अथवा बंती प्रत्यय लगाने से गुणवाचक विशेषण शब्द बनते हैं, जैसे– लाज (बंती प्रत्यय) लाजबंती। रूप (बती प्रत्यय) रूपबती। धन (बान् प्रत्यय) धनवान्। गुन (बान् प्रत्यय) गुनबान्। गुन (बती प्रत्यय) गुनबती। भाग्य (बान प्रत्यय) भाग्यबान, (बंती प्रत्यय) भाग्यबंती।

6. अनेक संज्ञा शब्दों में 'ए' अथवा 'ओ' प्रत्यय लगाने से गुणवाचक विशेषण बनते हैं, जैसे– भूख–भूखौं, भूखे। प्यास–प्यासौ, प्यासे, छयास–छयासौ, छयासे। रूआस–रूआँसौ, रुआसे।

7. कुछ भाववाचक संज्ञा शब्दों में 'ल' प्रत्यय लगाने से गुणवाचक विशेषण बन जाते हैं, जैसे– कृपा–कृपाल, दया–दयाल।

8. कभी–कभार भाव वाचक संज्ञा शब्द में 'सील' जोड़कर भी गुणवाचक विशेषण बन जाते हैं, जैसे– छमासील, दयासील आदि।

9. बुन्देली के कुछ शब्दों 'सरीखो' 'जैसो' 'बराबर' विशेषण शब्दों का प्रयोग संबंध सूचक अव्यय की तरह भी होता है, जैसे– तुमरे सरीखों को हो सकत। तुमाय मौंड़ा जैसो मोरा सोई मौंड़ा है। ओके घर बराबर मोरो घर है।

10. संबंध सूचक अव्यय 'लायक' (लाक भी) का प्रयोग कभी–कभी गुणवाचक विशेषण के रूप में देखा जाता है, जैसे– हमाय (हमरे) लाक कोई काम हो तो बोलो।

11. जब गुणवाचक विशेषण शब्दों से विशेष्य लुप्त हो जाता है, तब वे संज्ञा शब्द बन जाते हैं, जैसे– गरीब खौं काय सताउत हो। बड़ौ के मों काय लगत हो।

संख्यावाचक विशेषण– बुन्देली में इसके दो प्रकार हैं– निश्चित संख्या वाचक और अनिश्चितसंख्या वाचक।

निश्चित संख्या वाचक विशेषण– निश्चित संख्या का बोध कराने वाले विशेषण शब्द, निश्चित संख्या वाचक विशेषण कहलाते हैं, जैसे– बीस आदमी, आँठमो भाग, चौथा भाग, तीन गैयें। इनके पाँच प्रकार होते हैं– गणनाबोधक, क्रमबोधक, आवृति बोधक, समुदाय बोधक और प्रत्ययबोधक।

1. गणनाबोधक – विशेष्य वस्तुओं को ठीक गिनती का बोध कराने वाले विशेषण गणनाबोधक विशेषण कहलाते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं – अ. पूर्णांकबोधक, ब. अपूर्णांकबोधक।

अ. पूर्णांकबोधक – जिस विशेषण शब्द से पूरे अंकों का बोध होता है, उसे पूर्णांकबाधक विशेषण कहते हैं, जैसे– एक, बीस, छब्बीस, उनतालीस, चालीस, पचास, पचपन, छप्पन।

ब. अपूर्णांकबोधक– जिससे गणना के अधूरे अंकों का भी बोध हो, उस संख्यावाचक विशेषण को अपूर्णांकबोधक विशेषण कहते हैं, जैसे – दो तिहाई, तीन चौथाई, एक चौथाई, पौने चार सेर, साढ़े पाँच गज।

पूर्णांक बोधक संख्यावाचक विशेषणों के अंक और उनके बुन्देली नाम जैसे–

1	एक	26	छब्बीस
2	दो	27	सत्ताइस
3	तीन	28	अट्ठाइस
4	चार	29	उनतीस
5	पाँच	30	तीस
6	छै	31	इकतीस
7	सात	32	बत्तीस
8	आठ	33	तेतीस
9	नौ	34	चोंतीस
10	दस	35	पेंतीस
11	ग्यारा	36	छत्तीस
12	बारा	37	सेंतीस
13	तेरा	38	अड़तीस
14	चौदा (चौउदा)	39	उनतालीस
15	पँन्द्रा	40	चालीस
16	सोला	41	इकतालीस
17	सत्तरा	42	ब्यालीस
18	अठारा	43	तेतालीस
19	उन्नैस (उनईंस)	44	चबालीस
20	बीस, बिसी	45	पेंतालीस
21	इकैस (इकईस)	46	छियालीस
22	बाइस	47	सेंतालीस
23	तेइस	48	अड़तालीस
24	चौबीस	49	उननचास
25	पच्चीस	50	पचास
51	इंक्याउन	76	छियत्तर

52	बाउन	77	सतत्तर
53	तिरेपन	78	अठत्तर
54	चौअन (चऊअन)	79	उन्यासी
55	पचपन	80	अस्सी
56	छप्पन	81	इक्यासी
57	संताउन	82	ब्यासी
58	अंठाउन	83	तेरासी
59	उनसठ	84	चौरासी
60	साठ	85	पचासी
61	इकसठ	86	छियासी
62	बासठ	87	सतासी
63	तिरेसठ	88	अठासी
64	चौंसठ	89	नबासी
65	पैंसठ	90	नब्बे
66	छियासठ	91	इकानबै
67	सड़सठ	92	बानबै
68	अड़सठ	93	तेरानबै
69	उनत्तर	94	चौरानबै
70	सत्तर	95	पंचानबै
71	इकत्तर	96	छियानबै
72	बहत्तर	97	सन्तानबै
73	तिहत्तर	98	अंठानबै
74	चौंहत्तर	99	निन्यान्बै
75	पचत्तर	100	सौ

मैथिली, अवधी, भोजपुरी तथा खड़ी बोली में ग्यारह से अठारह तक की गिनती में 'हे' का प्रयोग होता है। पर बुन्देली में 'हे' अकार में बदल जाता है।

1. सौ के ऊपर की संख्या गिनने में एक सौ कहकर फिर एक से निन्यानवे तक की संख्या कहते हैं, जैसे – 101 (एक सौ एक), 114 (एक सौ चौदा), 145 (एक सौ पैंतालीस)। इसी प्रकार दो सौ के पीछे दो सौ एक, दो सौ पच्चीस आदि कहते हैं। नौ सौ तक यही क्रम रहता है।

गणनाबोधक पूर्णांक में 'ठौ' अथवा 'ठौल' का भी प्रयोग किया जाता है, जैसे – दो ठौ, चार ठौल। कभी–कभी 'ठौ' को 'ठौआ' भी कहते हैं, जैसे – दो ठौआ, दो ठौल, चार ठौ।

2. अपूर्णांक बोधक विशेषणों के नाम और अंक नीचे दिये जाते हैं, जैसे –

पाव	1/4	सवाओ	1 1/2
पौनो	3/4	पौने दो	1 3/4
चौथाई	1/4	तिहाई	1/3
आधौ	1/2	डेवढ़ौ	1 1/2

बुन्देली पहाड़े में डेवढ़ा, अढ़ैया, ढ्यौंचा क्रमशः 1), 2), 3) के अर्थ में प्रयुक्त किये जाते हैं। इनकी बारह तक की गिनती भी होती है।

3. कभी–कभी भाग शब्द का प्रयोग भी किया जाता है, जैसे – चौथो भाग, आधौ भाग, तिहाई भाग, दूसरो भाग, तीसरो, छठओं, सातऔं, सातौं भाग, आठौं भाग, नवौं भाग।

अपूर्णांकबोधक संख्या – वाचक विशेषणों का प्रयोग माप–तौल वाचक संज्ञा शब्दों के साथ किया जाता है, जैसे – सवा सर, डेढ़ मन, पौन गज।

गणनाबोधक विशेषण – इस वर्ग के विशेषण शब्दों में संख्या का एक क्रम होता है, जैसे – पहलौ, दूसरौ, चौथी, दसबीं, आठवीं, पाँचवाँ, सातबौ, आठबौ। पाँच संख्या से 'बौ' 'बा' 'बी' जोड़ते हैं, जैसे– पाँचवाँ, बीसवाँ, अड़तीसवाँ आदि। आठवीं, इकैसवीं। संस्कृत के तिथि–सूचक शब्द बुन्देली में इस तरह से आते हैं– दोज, तीज, चौथ, पाँचें, छठें, सातैं, आठैं, नबैं, दसैं, ग्यारस, बारस, तेरस, चौदस, पूनौं, अमाउस, परमा।

आवृत्तिबोधक – जिस निश्चित संख्याबोधक विशेषण से यह पता चले कि विशेष संख्या का वाच्य कितने गुना है, उसे आवृत्ति बोधक गणना वाचक विशेषण कहते

हैं, जैसे– दुगनौ, चौगुनौ, पचगुनौ, सौगुनौं। आवृत्तिबोधक पूर्णांक में गुना या गुनी लगाने से बनते हैं। गुना या गुनी लगाने से पहले दो से साठ तक की संख्याओं के शब्दों में आदि स्वर के नीचे लिखे अनुसार विकार होते हैं– दो–दुगना, तीन–तिगुना, चार–चौगुना, पाँच–पचगुना, छै–छैगुना, सात–सतुगना, आठ–अठगुना।

पहाड़े में (दूनिया) आवृत्तिबोधक विशेषणों के रूप – एक दूनी – दो, दो दूनी – चार, दो तिया – छै, दो चौके – आठ, दो पंचैं – दस, दो छक्के – बारा, दो सत्ते– चौदा, दो अट्ठे– सोला, दो नवमें – अठारह, दो धाम – बीस।

समुदायबोधक – इस वर्ग के रूपांतरित संख्यावाचक विशेषण एक समुदाय या समूह के द्योतक होते हैं, जैसे– पचासौ आदमी, सैकड़ों लोग, दर्जनों अलमारियाँ, बीसों मौड़ा आदि। इन सैकड़ों शब्द में पर प्रत्ययों का योग होता है। सैकड़ों का सैकरों, सैकरन शब्द का भी प्रयोग होता है।

अ. पूर्णांकबोधक विशेषण शब्दों कें ओं 'औ' जोड़ने से समुदायबोधक विशेषण बनते हैं, जैसे– तीनौं, पाँचौं, दसौं, पचीसौं।

ब. समुदायबोधक गणना वाचक विशेषण का प्रयोग कभी–कभी बीच में 'के' अथवा 'की' रखकर दो–दो बार किया जाता है, जैसे – दस के दस, पचास के पचास, बीस के बीस, तीस के तीस।

स. कभी–कभी अवधारणा के लिये समुदायबोधक विशेषण की द्विरुक्ति भी होती है, जैसे – पाँचे के पाँचै, तीनैं की तीनैं, दसैं की दसैं।

3. समुदायबोधक विशेषण में जोड़ी दो के अर्थ में और गँडा (गड़ा) चार और पाँच के अर्थ में आते हैं, जैसे– एक जोड़ी–दो, चार जोड़ी–आठ, एक गँडा या गड़ा–चार या पाँच, दो गड़ा आठ और दस, छह गड़ा चौबीस या तीस आदि।

4. कभी–कभी 'विसी' का प्रयोग भी होता है, जैसे– एक विसी बीस, दो विसी चालीस, पाँच विसी सौ, छैः विसी एक सौ बीस।

प्रत्येकबोधक – जिस संख्या बोधक विशेषण से यह जाना जाये कि विशेष्य संज्ञा के वाच्यप्राणी या पदार्थ प्रत्येक पृथक–पृथक समूह में हैं, उसे प्रत्येक बोधक कहते हैं। इसका नाम विभाजक संख्याबोधक विशेषण हो सकता है, जैसे– हर दिन, हर तीसरी साल, हर चौथे महीने।

अ. गणनाबोधक पूर्णांक विशेषण शब्दों की द्विरुक्ति से प्रत्येक बोधक विशेषण का

अर्थ निकलता है, जैसे– उनकौ एक–एक वीर दस–दस के बराबर है, तीन–तीन घंटे पै पहरो बदलो जात।

ब. अपूर्णांकबोधक विशेषण शब्दों में मुख्य शब्द की द्विरुक्ति से प्रत्येकबोधक विशेषण का अर्थ निकलता है जैसे – पौने दो–दो रूपैया, साड़े तीन–तीन गज कपड़ा, डेड़–डेड़ रोटी।

अनिश्चित संख्याबोधक विशेषण

किसी निश्चित संख्या का बोध न कराने वाले विशेषण अनिश्चित संख्याबोधक विशेषण कहलाते हैं। इनसे विशेष्य वस्तु की निश्चित संख्या का बोध नहीं होता, जैसे – कछू आदमी, कितनी गैयां, तीसक जनीं, बीसक आदमी।

निश्चित संख्या – संख्यावाचक विशेषण शब्दों में 'एक' जोड़ने से अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण बनते हैं। 'एक' शब्द जोड़ने के पूर्व 'ए' का लोप कर दिया जाता है। जैसे –

पचास + एक = पचासक
दस + एक = दसक
तीस + एक = तीसक

इसी प्रकार कभी–कभी हजारक, सौक।

1. निश्चित संख्यावाचक विशेषण शब्द के अंत में 'ओं' जोड़ने से अनिश्चित संख्या वाचक विशेषण शब्द बनते हैं, जैसे– बीसों बेर तुमने चोरी करी है। दसों ढोर मर गये। लाखों को नुकसान हो गव। सैकड़ों रूपैया हार गये, हजारक भनक तो आयक हुइयें।

2. दो निश्चित गणनाबोधक विशेषणों के साथ–साथ प्रयोग करने से भी विशेषण बनते हैं, जैसे तीन–चार सेर अनाज हुइये। आठ दस दिनों में आ जैहैं, चार पाँच जनीं चल हैं।

3. परिमाणवाचक विशेषण – इसमें थोरो, भौत, बिलात, मुलक, अदियाँ तनक मुतकौ, कछू, गल्लन, सबरो, पूरो, अधूरो, हँातक, सेरक, मनक, टिपरियाक, टिपइअँन, आदो (आधो), कौंचन, गरैट, जितनो, उतनो, उतनों आदि बुन्देली के परिमाणवाचक विशेषण शब्द हैं। ये सभी शब्द किसी न किसी प्रकार का परिमाण या माप बतलाते हैं। परिमाणवाचक विशेषण शब्दों के प्रयोग –

थोरो–थोरो पानी।
भौत–भौत, थोरो सो काम, बिलात जनें, मुलक के सुआ।
तनक–तनक दूद।
मुतको–मुतको सामान।
गल्लन–गल्लन मसालो।
पूरो–पूरा घर, गाँव।
अधूरो–अधेरो काम, अदियाँ घेला।
हातक–हातक कपड़ा।
सेरक–सेरक आटो।
मनक–मनक चाउर।
टिपरिआक–टिपरिआक बेर।
टिपइअँन–टिपइअँन माटी।
आदो (आधा)–आदो फल।
घूँटन–घूँटन पानी (घुँटने तक पानी)।
गरन–गरन पानी (गले तक पानी)।
गरैट (गले तक)–गरैट कसेंड़ो पानी।
इतनो–इतनो काम, इतनौ नाज।
जितनौ–जितनो माल।
उतनो–उतनो नाज, इत्तो–इत्तो सो पानी, जित्तो–जित्तो देने होय सो दे देओ।

इसी प्रकार अन्य परिमाणवाचक शब्दों का प्रयोग होता है, ध्यान देने योग्य बातें –

अ. परिमाण बोधक शब्दों का प्रयोग जब बहुवचन विशेषणों के साथ होता है, तब वे बहुवचन में होने से अनिश्चित संख्या वाचक विशेषण हो जाते हैं।

परिमाणबोधक	**अनिश्चित संख्याबोधक**
कछू – लौटा में कछु दूध है।	उतै कछू ढोर बगरे हैं।
सब – सब बर्तन ले आओ।	बे सब जने हँसन लगे।
थोरौ – नदिया में थोरो पानीहै।	गाँव में थोरे आदमी हैं।
कितनौ – बाबरी में कितनौ पानी है।	रामू कौं कितने पैसा मिले।
जितनो – जितनों नाज चाहे ले लो।	जितने फल चाने ले लो।
इतनो – इतनौ गल्लौ काँ धरो।	इतने ढोर काँ बाँध हो।
पूरौ – ऊने पूरो फायदो उठाव।	अबे पूरे आदमी काँ आय।

ब. निश्चित परिमाण बताने में संख्या बोधक विशेषणों के साथ परिमाण बोधक संज्ञा शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जैसे– छै गज कपड़ा, दस मन खोबा, तीन मन गुड़।

स. परिमाणबोधक संज्ञा शब्दों के अंत में 'ओं' जोड़ने से अनिश्चित परिमाणबोधक विशेषण बनते हैं जैसे– मनों घी, गजों कपड़ा, सेरों दूध।

द. एक का परिमाण बतलाने में परिमाणबोधक संज्ञा शब्द में 'भर' प्रत्यय लगाते हैं। जैसे– गज भर कपरा, मन भर दूध, सेर भर नाज आदि।

य. अवधारणा के लिये कई परिमाणबोधक विशेषणों में पुल्लिंग विशेष्य के साथ 'सौ' और स्त्रीलिंग विशेष्य के साथ 'सी' प्रत्यय जोड़ते हैं, जैसे– इतनौ सौ काम, कितनौ सौ पानी, उतनी सी दार आदि।

र. कई परिमाणबोधक विशेषण शब्दों में निश्चिय के अर्थ में 'सो' अथवा 'सी' जोड़ते हैं, जैसे– इतनौ सो नुकसान, इतनी सी पड़ाइ आदि।

सार्वनामिक विशेषण

बौ, बा, जो, जाइ, ई, ऊ, जे, बे, उन, ऊ को कौन आदि बुन्देली के सार्वनामिक विशेषण हैं। ये वास्तव में सर्वनाम हैं, पर ये जब किसी संज्ञा की विशेषता बतलाते हैं, तब सार्वनामिक विशेषण बन जाते हैं।

व्युत्पत्ति के आधार पर सार्वनामिक विशेषण दो प्रकार के होते हैं – मूल सर्वनाम और यौगिक सर्वनाम।

मूल सर्वनाम – वे हैं, जो बिना किसी रूपान्तर के सर्वनाम शब्द के मूल रूप में आते हैं, जैसे – बे खत, बे आदमी, कछू जनीं, बो बेल।

अ. 'बो' और 'बे' तथा 'जोई' और 'सोई' निश्चयवाचक सार्वनामिक विशेषण की रीति पर आते हैं। इनको संकेतवाचक विशेषण भी कहते हैं। क्योंकि इनका प्रयोग किसी संस्था शब्द के वाच्य की ओर संकेत कराने में होता है, जैसे– बो घर, बे खेत, जोई लड़का, जई लड़की।

ब. 'को' (कौन) और 'का' (क्या) प्रश्नवाचक सर्वनाम शब्दों का प्रयोग प्रश्नवाचक सार्वनामिक विशेषण की रीति पर होता है, जैसे – कौन जगा (जगह), का बात, का दसा, का हाल, कौन आदमी, कौन साधू।

स. 'कोई' और 'कछू' अनिश्चयवाचक सर्वनाम शब्दों का प्रयोग अनिश्चयवाचक सार्वनामिक विशेषण की रीति पर होता है, जैसे– कई आदमी, कछू लरका, कोई किसान, कछू काम, कछू उपाय, कछू दबाइ।

यौगिक सर्वनाम – ये विशेषण शब्द सर्वनाम में प्रत्यय लगाने से बनने वाले विशेष्य हैं। यौगिक सार्वनामिक विशेषण शब्द दो प्रकार के होते हैं –

1. परिमाण अथवा अनिश्चित संख्याबोधक सार्वनामिक विशेषण।
2. प्रकारवाचक सार्वनामिक विशेषण।

अ. जिस, किस, तिस, उस और इसके अन्त्य 'स' को तनौ, तने, आदेश करने से परिमाण अथवा अनिश्चित संख्या बोधक सार्वनामिक विशेषण बनते हैं। जैसे –

सर्वनाम	**सार्वनामिक परिमाण बोधक विशेषण**	**सार्वनामिक संख्या बोधक विशेषण**
जिस	जितनौ काम	जितने लोग
किस	कितनौ पानी	कितने ढोर
उस	उतनौ तेल	उतने लरका
तिस	तितनौ नुकसान	तितने फल
इस	इतनौ सुख	इतने सिपाही

ब. जिस, किस, तिस, उस और इसके 'इ' को 'ऐ' और 'उ' को 'वै' करके अन्त्य 'स' को 'सौ' कर देने से प्रकारवाचक सार्वनामिक विशेषण बन जाते हैं, जैसे –

इस	ऐसौ , उस	वैसो , तिस	तैसौ
किस	कैसो , जिस	जैसो	

स. मैं 'निज' और 'पराया' भी आते हैं, क्योंकि ये विशेषण रीति पर आते हैं। 'निज' का अर्थ 'अपना' और 'पराया' का अर्थ दूसरे का, जैसे – निज धर्म, निज धन, पराया घर, निज काम, पराया काम, पराया दुख।

द. 'ऊ' तथा 'बा' का प्रयोग एक साथ होने पर वे अनिश्चयवाचक हो जाते हैं, जैसे – ऊ आदमी के आय सें, बा लुगाई लर परी ती।

य. यौगिक सार्वनामिक विशेषणों के साथ उनके नित्य संबंधी शब्दों का प्रयोग होता है, जैसे – जैसो देस–वैसो बेस (भेस)।

र. 'कछू' परिमाणवाचक शब्द का प्रयोग भी सार्वनामिक विशेषण के रूप में प्रायः भाववाचक संज्ञाओं के साथ ही होता है– कछू बात तो हुइये, कछू जतन तो करिया, कछू काम तो करो।

ल. यौगिक सार्वनामिक विशेषणों का प्रयोग कभी–कभी क्रिया विशेषणों की तरह भी होता है, जैसे – हम कितनोंइ करैं, कछू नें हुइये, जित्तो करो उतनई कम परत।

स. 'का' सार्वनामिक विशेषण का प्रयोग भाववाचक संज्ञाओं के साथ ही होता है। प्रश्न– 'का' काम है ?, का कै रय ? का अंधेर हो गओ ?

इस तरह उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि 'का' सार्वनामिक विशेषणों का प्रयोग आश्चर्य व्यक्त करने तथा प्रश्न करने में किया जाता है।

ध्यान देने योग्य बातें

क. यौगिक सार्वनामिक विशेषणों के साथ जब विशेष्य नहीं होता, तब उनका प्रयोग प्रायः संज्ञाओं के समान होता है, जैसे– जैसी करनी – बैसी भरनी, जैसे को तैसो मिलो।

ख. सार्वनामिक विशेषण शब्दों का प्रयोग तब क्रिया विशेषण के रूप में होता है, जब वे विशेषण शब्दों की विशेषता बतलाते हैं, जैसे– इतनौ बड़ौ खेत, कैसो मीठो फल, कैसी अच्छी घड़ी।

ग. कभी –कभी किसी एक यौगिक सार्वनामिक विशेषण का लोप होता है, जैसे– जितनौ दान आपने दव उतनौ कोउ नई दे सकत, जैसे बेइज्जती तुमने करी बैसी कोउ नें कर पैहे।

घ. कभी–कभी दो सार्वनामिक विशेषणों का द्विरुक्ति से उत्तरोत्तर घटती बढ़ती का बोध होता है, जैसे– जितनौ ज्ञान बढ़त जात, उतनौ मान बढ़त। जितनी बिद्या आइ, उतनौ ज्ञान बढ़ौ। जित्तो चद्दर होये उत्ते पाँव पसारो।

कुछ संख्यावाचक विशेषणों का प्रयोग सर्वनामों की भाँति होता है, जैसे – एक दूसरे में प्रेम होय।

विशेषणों का रूपान्तर – विशेषणों के लिंग, वचन विशेष्य के लिंग वचन के अनुसार होते हैं, जैसे– बड़ौ बैल को, बड़े बैलों कौ, बड़ी गैया कौ, भले सैं, दयाबती सैं।

1. बुन्देली में केवल 'औकारान्त विशेषण' शब्दों में विकार होता है, जैसे – भलौ आदमी, भले आदमियों ने।

अ. औकारान्त विशेषण शब्द पुल्लिंग एकवचन विभक्तिरहित विशेष्य के साथ विशेषण के अन्त्य 'औ' को 'ए' कर देते हैं, जैसे– बड़ौ कुटम, भलो मोड़ा, कारौ घोड़ा, कारे घोड़ा कौ।

ब. कभी–कभी विभक्ति लुप्त रहने पर भी उसका संस्कार रहता है और ऐसी दशा में विशेष्य के विभक्तिरहित एकवचन के साथ भी औकारान्त विशेषण के अन्त्य 'औ' को 'ए' कर देते हैं, जैसे– बड़े घर जाने है। भले घर के लोगों सा व्यवहार करो।

स. औकारान्त विशेषण शब्द पुल्लिंग बहुवचन विशेष्य के साथ एकारान्त हो जाता है, जैसे – भले लोगों की संगत करबौ अच्छो है। बड़े पेड़ों की छाया घनी है।

द. औकारान्त विशेषण स्त्रीलिंग विशेष्य के साथ दोनों वचनों में ईकारान्त हो जाते हैं, जैसे– बड़ी गैया ने, बड़ी गैया ने।

2. अकारान्त विशेषण शब्दों के लिंग, वचन के कारण कोई विकास नहीं होता, जैसे– दुरलभ काम, दुरलभ घड़ी, चंचल मोड़ा, चंचल मोड़ी।

3. मूल सार्वनामिक विशेषणों के रूप सर्वनाम शब्दों के अनुसार विकारी होते हैं। केवल विभक्तियों का लोप रहता है, जैसे– बो आदमी, ऊ आदमी ने, उन आदमियों ने।

4. यौगिक सार्वनामिक विशेषण बुन्देली में औकारान्त होते हैं, जैसे – ऐसी, जैसौ, इतनौ, उतनौ आदि। इनमें औकारान्त विशेषण विशेष्य के लिंग, वचन और कारक के अनुसार गुणवाचक औकारान्त विशेषणों के समान विकार होते हैं, जैसे– ऐसौ मौड़ा, ऐसे मोड़ा ने, ऐसे मौड़ा कौं, ऐसी मोड़ी कौं, इतनो काम, इतने काम, इतनी बातें।

5. जिन विशेषणों के अंत में –'वान' या 'भान' होता है, उनके पुल्लिंग दोनों वचनों में 'बान' या 'मान' और स्त्रीलिंग दोनों वचनों में 'वती' या 'मती' होता है, जैसे – धनबान आदमी ने, धनमान आदमी कौं, धनबान आदमियों ने, बुद्धिवति नारी कौ, बुद्धिमती नारियों कौं।

6. ईकारान्त पुल्लिंग विशेषण के अन्त्य 'ई' को स्त्रीलिंग में प्रायः 'अन' कर देते हैं, जैसे पापी नर, पापन नारी, बैरागी नर, बैरागन नारी।

7. औकारान्त और कुछ ईकारान्त विशेषणों को छोड़कर शेष विशेषण शब्दों में नारी, गुणी (गुनी) नर, गुनी।

8. जब विशेषण शब्दों का प्रयोग संज्ञा शब्दों के अर्थ में होता है, तब इसके रूपों में संज्ञा शब्दों के समान ही लिंग, वचन और कारक के कारण विकार होते हैं। जैसे– बूड़ौ जात है, बूड़े जात हैं, बूड़े ने कई, बूढ़ो ने कई, बूढ़ौ की आग्याँ पालौ, बड़े की आग्याँ पालौ।

9. संख्यावाचक विशेषणों के क्रम वाचक, आवृत्तिवाचक और औकारान्त परिमाणवाचक विशेषणों का रूपान्तर होता है। जैसे– पहलौ घर, पहली कहानी, दूसरौ दिन, दूनो दाम, तीसरे आदमी सैं।

10. अपूर्णांक विशेषणों में केवल आधौ और पौनौं शब्द विकारी होता है, जैसे– आधौ हिस्सा, आधे गाँव में, पौनों खेत, पौनी कीमत, पौनौ भाव।

विशेषणों की तारतम्यमयी तुलना

दो या दो से अधिक प्राणियों या पदार्थों के गुणों के मिलान को तारतम्यमयी तुलना कहते हैं। इस प्रकार की तुलना की दृष्टि से विशेषण की तीन अवस्थाएँ हैं – मूलावस्था, उत्तरावस्था और उत्तमावस्था।

मूलावस्था – विशेषण शब्द के जिस रूप से उसके विशेष्य संज्ञा या सर्वनाम एक के वाच्य प्राणी या पदार्थ की अन्य प्राणी या पदार्थ से किसी भी प्रकार की तुलना का बोध न हो, उसे मूलावस्था कहते हैं। उदाहरण – बैलगाड़ी जा रई है।

विशेष – यहाँ स्मरण रहे कि समता मूलक तुलना में विशेषण की मूलावस्था ही रहती है। यद्यपि उसमें सो, समान 'और' के बराबर आदि वाचक होते हैं। जैसे– मोहन भीम सो बली है। मोहन भीम के समान बली है। मोहन भीम के बराबर बली है।

उत्तरावस्था – विशेषण शब्द के जिस रूप से दो प्राणियों या पदार्थों में से किसी एक के गुण अथवा दोष की अधिकता या न्यूनता का बोध होता है, उसे उत्तरावस्था कहते हैं। जैसे – गंगा से नील नदी बड़ी है।

उत्तमावस्था – ठेठ बुन्देली के विशेषणों में कुछ विकार नहीं होता। उन्हें पहचानने का नियम यह है कि जिन दो या दो से अधिक प्राणियों या पदार्थों में किसी एक की न्यूनता या अधिकता दिखाने हेतु जो तुलना की जाती है, उनमें जिनसे तुलना करते हैं, उन्हें अपादान की 'सैं' एवं अधिकरण की 'मैं' विभक्ति से युक्त रखते हैं। कभी–कभी विशेषण के पूर्व अधिक या कम लगा देते हैं। जैसे –

मूलावस्था	**उत्तरावस्था**	**उत्तमावस्था**
बलराज साहसी है	बलराज, राजेश से साहसी है।	बलराज सब लरकन सैं साहसी है। बलराज सब लरकन में बड़ों साहसी है।

कभी–कभी उत्तमता बताने में विशेषण के पहिले सब सैं या सब मैं लगाते हैं। विशेषण के पहले बड़ौं, भौत और थोरों या कम लगाते हैं –

मूलावस्था	**उत्तरावस्था**	**उत्तमावस्था**
राजेश चतुर है।	राजेश सबमें चतुर है। राजेश सबसैं कम चतुर है। राजेश सबसैं बड़ौ चतुर है।	राजेश सबमें चतुर है।

उत्तमावस्था – उत्तमता सूचित करने के लिए कभी–कभी विशेषण शब्द को दुहरा देते हैं, पर कभी–कभी दुहराये हुए विशेषण के पहले मैं, सैं जोड़ते हैं। जैसे– इते अच्छे सैं, अच्छे आदमी आऊत हैं। सबसे ज्यादा पानी ऐई कुँआ में है।

अपादान की 'सैं' अथवा अधिकरण की 'में' विभक्ति के चिह्न से मुक्त रखते हैं। कभी–कभी अधिक और कम भी जोड़ते हैं। जैसे –

मूलावस्था	**उत्तरावस्था**	**उत्तमावस्था**
सीता लम्बी है।	सीता, राधा से लम्बी है।	सीता और राधा में सीता लम्बी है। सीता राधा से अधिक लम्बी है। सीता और राधा में सीता अधिक लम्बी है।
मोहन सुन्दर है।	मोहन, सोहन सें सुन्दर है।	मोहन और सोहन में मोहन सुन्दर है। मोहन, सोहन से अधिक सुन्दर है। मोहन और सोहन में मोहन अधिक सुन्दर है।

कभी–कभी अधिक या कम के साथ कछू जोड़ा जाता है। जैसे– मोहन सुन्दर है। मोहन, सोहन सें कछू अधिक सुन्दर है। मोहन, सोहन से कछू कम सुन्दर है।

1. कभी–कभी उत्तरावस्था में 'बढ़कैं' अथवा 'घटकैं' पूर्वकालिक क्रिया का प्रयोग

किया जाता हैं, जैसे— दिनेश महेश सें बढ़कें पढ़बें में तेज है। दिनेश महेश सें घटकें पढ़बें में तेज है।

कभी—कभी उत्तरावस्था में विशेषण के पूर्व 'कहूँ' क्रिया विशेषण लगाते हैं, जैसे— मोहन को घोड़ा दौरबें में कहूँ तेज है। हंसिया सें चाकू कहूँ पैंनो है।

2. विशेषण शब्द के जिस रूप से दो से अधिक प्राणियों या पदार्थों में किसी एक के गुण या दोष की जब न्यूनता या अधिकता का बोध होता है, उसे विशेषण की उत्तरावस्था कहते हैं। जैसे— अनेक प्राणियों या पदार्थों के किसी प्रकार की न्यूनता अथवा अधिकता एक साथ दिखाने हेतु संख्यावाची विशेषण एक की विरुक्ति करते हैं, जिनमें पहले एकमें सें विभक्ति जोड़ते हैं। जैसे— एक सैं एक लरबै बारे। एक सैं एक पइसा बारे। एक सैं एक सुंदर।

काल

क्रिया के जिस रूपान्तर से उसके व्यापार का समय और उसकी पूर्ण अवस्था का बोध हो, उसके काल कहते हैं। यद्यपि काल अनन्त और अखण्ड है, पर क्रिया के व्यापार के होने के अनुसार काल के मुख्य तीन प्रकार माने जाते हैं — भूतकाल, वर्तमान काल और भविष्य काल।

भूतकाल — क्रिया के जिस रूपान्तर से उसके व्यापार की समाप्ति व्यतीत हुए समय में जानी जाती है, उसे भूतकाल की क्रिया कहते हैं, जैसे— वे सब जने इतै आयेते। कमला ने कईती। श्याम गओ तो।

वर्तमानकाल — क्रिया के जिस रूपान्तर से उसके व्यापार का वर्तमान समय में होना पाया जाये, उसे वर्तमानकाल कहते हैं या वर्तमानकाल की क्रिया कहते हैं। जैसे— घोड़ा दौरत है। रामू खाना खात है।

वर्तमान काल जहाँ एक ओर भूतकाल से मर्यादित होता है, वही दूसरी ओर भविष्यतकाल से भी मर्यादित होता है, इसके भूतकाल के अंत और भविष्यतकाल के आरंभ के मध्य का कोई भी समय वर्तमान काल कहलाता है।

भविष्यतकाल — क्रिया के जिस रूपान्तर से उसके व्यापार का आगे आने वाले समय में होना बताया जाये, उसे भविष्यतकाल कहते हैं, जैसे — वे सब जैहैं। में शहर कों जैहों। डाकिया इतै आहै। में खाना खा लैहों। तुम काल आ जईयो, बो पास हो जैहै।

सामान्य अवस्थाबोधक काल

क्रिया के जिस रूपान्तर से केवल व्यापार का समय जाना जाये, पर उसकी पूर्ण अथवा अपूर्ण अवस्था का बोध न हो, उसे काल की सामान्य अवस्था कहते हैं। यह भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों में होती है।

सामान्य भूतकाल – क्रिया के जिस रूपान्तर से उसके व्यापार की समाप्ति भूतकाल में जानी जाये, परन्तु उसकी पूर्ण अथवा अपूर्ण अवस्था का बोध न हो, उसे सामान्य भूतकाल का रूप कहते हैं। जैसे– नाटक खतम भओ, परदा गिरौ। राजा आये, घोड़ा गाड़ी चली। मंत्री आये, कार्यक्रम शुरु भओ।

सामान्य वर्तमानकाल – क्रिया के जिस रूपान्तर से उसके व्यापार का वर्तमान समय में होना पाया जाये, परन्तु उसकी पूर्णता अथवा अपूर्णता का बोध न हो, उसे सामान्य वर्तमान–काल कहते हैं। जैसे– सीता खाना बनात है। पंडत जी पूजा करत हैं। तुम काम करत हो। मोड़ी पड़त है।

सामान्य भविष्यतकाल – क्रिया के जिस रूपान्तर से उसके व्यापार का आरंभ आगे वाले समय में होना पाया जाये, पूर्णता अथवा अपूर्णता अथवा संभावना न जानी जाये, उसे सामान्य भविष्यतकाल कहते हैं। जैसे– वे सब आहैं। हम पूजा कर है। तुम खाना खाहो। तुम ओखों मार हो।

पूर्ण अवस्था–बोधक काल

क्रिया के जिस रूपान्तर से उसके व्यापार की पूर्णता का बोध हो, उसे काल की पूर्ण अवस्था कहते हैं। यह भूत, वर्तमान और भविष्यतकाल तीनों में होती है।

पूर्ण भूतकाल – इससे जाना जाता है कि क्रिया के व्यापार को भूतकाल में पूर्ण हुए समय बीत गया है। जैसे– मैंने पढ़ौ तो। तुम उतैं गये ते। तुमने ओसें पूँछीती। हमने तो खाना खाव तो।

पूर्ण वर्तमानकाल – काल के इस रूप से जाना जाता है कि क्रिया का व्यापार निकट भविष्य में पूर्ण हो जायेगा। जैसे– मैंने खाना बनाव है। पप्पू ने किताब पढ़ी है। घोड़ा भौत दौरों है।

पूर्ण भविष्यतकाल– काल के इस रूप से जाना जाता है कि क्रिया का व्यापार अभी–अभी पूर्ण हुआ है। जैसे– मैं पढ़ चुक हों। तुम जा चुक हो। खाना बन चुक है। घोड़ा भग चुक है।

अपूर्ण अवस्था बोधक काल

क्रिया के जिस रूपान्तर से उसके व्यापार की अपूर्णता का बोध हो, उसे काल की अपूर्ण अवस्था कहते हैं। यह भूत, वर्तमान और भविष्यत तीनों कालों में होती है।

अपूर्ण भूतकाल – इससे जाना जाता है कि क्रिया का व्यापार बहुत समय पूर्व भूतकाल में जारी रहा, पर उस समय पूर्ण नहीं हुआ। जैसे – बौ खात तौ। तें जात तौ। सीता खाना बनात ती।

जिस अपूर्ण भूत का होता रहना उसी क्षण जान पड़े, उसे 'तात्कालिक भूत' कहते हैं। जैसे– तुम पढ़ रये ते। घोड़ा दौड़ रये ते। सीता खाना बना रयी ती।

अपूर्ण वर्तमान काल – क्रिया के जिस रूपान्तर से व्यापार का वर्तमानकाल में होता रहना सूचित हो, उसे अपूर्ण वर्तमानकाल का रूप कहते हैं। जैसे – घोड़ा दौर रऔं है। श्यामू काम कर रऔ है। सीता खाना खा रइ है। राम आम तोड़ रऔ है। पंडत जी पूजा कर रये हैं।

अपूर्ण भविष्यतकाल – क्रिया के जिस रूपान्तर से यह जाना जाये कि उसका व्यापार निकट भविष्य में पूर्ण न होकर अनजाने समय तक होगा, वह अपूर्ण भविष्यतकाल का रूप कहलाता है। जैसे – कमला पढ़त रैहे। तुम काम करत रैहो। हरिया खेती करत रैहे।

बुन्देली की कालरचना विषयक विशेषताएँ

1. बुन्देली की सामान्य क्रियाएँ ब्रज, निमाड़ी की तरह औकारान्त होती हैं, जिनकी धातुओं में विभिन्न प्रत्ययों के योग से विभिन्न कालीन क्रियारूप उत्पन्न होते हैं।

2. सामान्य भूतकाल का धातु में लगने वाला मूल प्रत्यय 'आ' है, जिसके विडन्तीय रूप लिंग–वचन, पुरुष के विभेद के साथ प्रयुक्त होते हैं।

3. बुन्देली का सामान्य भूतकालीन क्रिया का लिंग, वचन, पुरुष विषयक रूपान्तर सामान्य हिन्दी के समान ही है।

4. हिन्दी की सामान्य वर्तमानकालीन क्रिया धातु के आगे 'ता' प्रत्यय के रूप लगने के अतिरिक्त 'होना' क्रिया के रूप भी लगते हैं, बुन्देली में होना क्रिया के रूपों का प्रयोग होता है।

5. एकाक्षरी धातु में 'उत' और 'त' प्रत्यय का प्रयोग होता है। यह बुन्देली की संक्षिप्तीकरण की प्रवृत्ति का द्योतक है।

6. सामान्य भविष्यत् 'ग' का बुन्देली में कोई स्थान नहीं है, इसका स्थान 'हों' प्रत्यय के रूपों ने (कुछ जगहों पर ओं) ग्रहण कर लिया है।

7. सामान्य भविष्यतकालीन रूप – खैहों, लैहों, एहौं आदि तथा खई हों, लईहौं, दईहौं, अईहौं आदि।

अर्थ

क्रिया के उस रूपान्तर को अर्थ कहते हैं, जिससे करने की रीति मानी जाती है। जैसे– रामू हँसत है (निश्चय), चाय रामू खाय (संभावना), जो खात तो ओखों लगतौ (संभावना), बुन्देली में क्रियाओं के अर्थ पाँच होते हैं– निश्चयार्थ, सम्भावनार्थ, आज्ञार्थ, संकेतार्थ और संदेहार्थ।

निश्चयार्थ – क्रिया के उस रूपान्तर को निश्चयार्थ कहते हैं, जिससे किसी विधान का निश्चय जाना जाये। जैसे – सीता नैं अबे नई सपरो। ऊने अबे रोटी नइं खाइ।

भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों की सामान्य, पूर्ण और अपूर्ण तीनों अवस्थाएँ निश्चयार्थ में आती हैं। इससे इन अवस्थाओं के काल के पूर्व लिखित उदाहरण निश्चयार्थ के उदाहरण हैं।

संभावनार्थ – क्रिया के उस रूपान्तर को संभावनार्थ कहते हैं, जिससे कल्पना, अभिलाषा अथवा कर्त्तव्य का ज्ञान हो सके। जैसे – मोहन जात होय, सोहन गव होय, रामू जैहे।

संभावनार्थ के अनुसार भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों के रूप के एक रूप हैं, जो– संभाव्य भूत, संभाव्य वर्तमान और संभाव्य भविष्यत् कहलाते हैं।

संभाव्य भूत – क्रिया के जिस रूप से भूतकाल में घटित प्रत्येक व्यापार की संभावना ज्ञात हो सके, उसे संभाव्य भूत कहते हैं। जैसे– रामू ने मोटर चलाइ होय। बरेदी ने गउएँ हाँकी होयँ। बुन्देली में इस रूप में लेना सहायक क्रिया का संयोग भी होता है। जैसे – बरेदी ने गइया लगा लई हुइये। कुम्हार ने घैला बना लय हुइये।

ब. संभाव्य वर्तमान – क्रिया के जिस रूप से वर्तमान काल में उसके व्यापार की संभावना ज्ञात हो, उसे संभाव्य वर्तमानकाल कहते हैं। जैसे– बरेदी गइया लगा रव

होय, कुम्हार घेला बना रव होय।

स. संभाव्य भविष्यत् – क्रिया के जिस रूप से भविष्य काल में घटित होने वाले व्यापार की संभावना ज्ञात हो, उसे संभाव्य भविष्ययकाल कहते हैं। जैसे– बरेदी गइया लगे है, कुम्हार घेला बने है।

संदेहार्थ – क्रिया के जिस रूप से क्रिया के व्यापार में संदेह या संशय जाना जाये, उसे संदेहार्थ कहते हैं। संदेहार्थ में भूत और वर्तमान काल की क्रिया के दो रूप होते हैं– संदिग्ध भूत, और संदिग्ध वर्तमान।

अ. संदिग्ध भूतकाल – भूतकालिक क्रिया के उस रूप को संदिग्ध भूतकाल की क्रिया कहते हैं, जिसमें उसके व्यापार के भूतकाल में घटित होने में संदेह माना जाये। जैसे – कुमार ने घैला बनाय होंय, बरेदी ने गइया लगाइ होय।

ब. संदिग्ध वर्तमानकाल – वर्तमानकालिक क्रिया के उस रूप को संदिग्ध वर्तमानकाल की क्रिया कहते हैं जिससे उसके व्यापार के वर्तमानकाल में होने में संदेह माना जाये, जैसे– मोहन खात होय, लुहार कुलरिया बनाउत होय।

संकेतार्थ – क्रिया के उस रूपान्तर को संकेतार्थ कहते हैं, जिससे ऐसी दो घटनाओं या व्यापारों की असिद्धि जानी जाये और जिनमें कार्य और कारण का संबंध हो, जैसे– बजारें जाते तो साग ल्याते।

संकेतार्थ के अनुसार भूतकाल की क्रिया का एक रूप बनता है, जिसे 'हेतुमद्काल' कहते हैं। हेतुमद्काल की तीन अवस्थाएँ होती हैं, जिन्हें– सामान्य हेतुहेतुमद्भूत, पूर्ण हेतुहेतुमद्भूत और अपूर्ण हेतुहेतुमद्भूत कहते हैं।

अ. सामान्य हेतुहेतुमद्भूत – भूतकालिक क्रिया के जिस रूप से सामान्य संकेतार्थ ज्ञात हो, पर उस पर संकेतार्थ की पूर्ण अथवा अपूर्ण अवस्था का बोध न हो सके, उसे सामान्य हेतुहेतुमद्भूतकाल कहते हैं। जैसे– गइया खरी खाती तौ, खूब दध देती।

ब. पूर्ण हेतुहेतुमद्भूत – भूतकालिक क्रिया के जिस रूप से संकेतार्थ की पूर्ण अवस्था का बोध होता है, उसे पूर्ण हेतु हेतु मद्भूतकाल कहते हैं। जैसे– खरी खाती, पढ़ो होतो।

स. अपूर्ण हेतु हेतु मद्भूतकाल – भूतकालिक क्रिया के जिस रूप से

संकेतार्थ की अवस्था का बोध होता है, उसे अपूर्ण हेतुहेतुमदभूतकाल कहते हैं, जैसे– सीता चलत होती, मोहन पढ़त होतो।

आज्ञार्थ – क्रिया के उस रूपान्तर को आज्ञार्थ कहते हैं, जिससे आदेश, उपदेश प्रार्थना अथवा निषेध का बोध होता है, जैसे– तें उन्ना धो, तें पानी भर। तें ढोर ढील दे, तें हारे चले जा।

आज्ञार्थ के अनुसार क्रिया का जो रूप बनता है, उसे विधि क्रिया कहते हैं। यह दो प्रकार की होती है– परोक्ष विधि और प्रत्यक्ष विधि।

परोक्ष विधि – क्रिया के उस आज्ञार्थक रूप को परोक्ष विधि कहते हैं, जिसका व्यापार परोक्ष रूप में होने वाला हो। जैसे – तुम स्कूलें जइयौ, तुम पढ़बे जइयौ। तुम खेत में खर पतवार साफ कर लइयो।

प्रत्यक्ष विधि – क्रिया के उस आज्ञार्थक रूप को प्रत्यक्ष विधि कहते हैं, जिसका व्यापार प्रत्यक्ष रूप से होने वाला हो, जैसे – तुम दूध पियो, तुम रोटी खाव। तुम पड़ने बैठो और बताओ कि का का पड़ लओ।

इनके अतिरिक्त क्रिया का एक रूप और है, जिसे पूर्वकालिक क्रिया कहते हैं। जब कोई कर्ता एक क्रिया समाप्त करके दूसरी क्रिया किसी काल में करता है, तब समाप्त की हुई पहली क्रिया समाप्त पूर्वकालिक क्रिया कही जाती है। पूर्वकालिक क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष आदि का बोध नहीं होता और उसका फल दूसरी समापिका क्रिया से जाना जाता है, जैसे– मोहन दूध लैकें गव है। सीता पानी भरकें ल्याइ है।

कालानुसार क्रियारूपों की बनावट

सामान्य धातु की क्रियाओं से अन्य संपूर्ण क्रियाओं के रूप बनते हैं। इन तीनों के रूपों की बनावट निम्नानुसार है –

धातु – क्रिया के साधारण रूप के अन्त्य 'बा' का लोप करने से जो बच जाता है, वह क्रिया की धातु है।

हिन्दी	**बुन्देली**	**धातु**
लिखना	लिखबौ से	लिख
खेलना	खेलबौ से	खेल
हँसना	हँसबौ से	हँस

करना　　　　करबौ से　　　　कर

सामान्य हेतुहेतुमद्भूत – क्रिया की धातु के अंत में पुल्लिंग एकवचन 'तौ' और बहुवचन में 'ते' स्त्रीलिंग एकवचन में 'ती' जोड़ने से सामान्य हेतुहेतुमद्भूत काल की क्रिया के रूप बनते हैं, जैसे – गोपाल लिखतौ, हम लिखते, तू लिखती, तुम लिखतीं।

क्रिया की धातु के अंत में यदि 'अ' हो, तो सामान्य भूतकाल में पुल्लिंग एकवचन में 'ओ' और बहुवचन में 'ये' तथा स्त्रीलिंग एकवचन में 'ई' तथा स्त्रीलिंग बहुवचन में 'ईं' कर देते हैं। जैसे– रोना से रोओ–रोये–रोई–रोईं।

क्रिया की धातु के अंत में यदि 'ओ' हो तो सामान्य भूतकाल में पुल्लिंग एक वचन में 'ओ' तथा बहुवचन में 'ये' जोड़ते हैं, अथवा 'दओ' या 'दये' क्रिया का संयोग कर देते हैं और स्त्रीलिंग एकवचन में 'ई' तथा 'ईं' जोड़ते हैं। जैसे– रोओ, रोये, रोंओ, रोवे (रोदये, रोदयो), रोई, रोंई, रोई, रोंई (रोदई, रोदईं, रोदई, रोदईं)।

क्रिया की धातु के अंत में यदि 'ई' हो तो सामान्य भूतकाल में 'ई' के स्थान में पुल्लिंग एकवचन 'इयौ' तथा 'इये' तथा स्त्रीलिंग एकवचन में 'ई' और 'ईं' कर देते हैं। जैसे – सिंओ, सिंये, सीई, सींई।

ईकारान्त धातु में सामान्य भूतकाल में 'देना' के दओ, दये, दई, दईं तथा 'लेना' के लइयो, लये, लई, लईं आदि रूप हो जाते हैं। जैसे – पीलओ, पीलये, पीलई, पीलईं, सींदओ, सींदये, सींदई, सींदईं।

क्रिया की धातु के अंत में 'ए' हो तो सामान्य भूतकाल उसे 'अ' कर पुल्लिंग एकवचन में 'ओ' तथा बहुवचन में 'ये' और स्त्रीलिंग एकवचन में 'ई' तथा बहुवचन में 'ईं' कर देते हैं। जैसे– देना, लेना को दे, ले में दओ, दये, लओ, लये। इन रूपों के साथ कभी–कभी धातु के मूलरूप को प्रारंभ में रख देते हैं। जैसे– दै दवो, दैदये, दैदओ, दैदये, लैलवो, लैलये, लैलओ, लैलये। जाना से गओ, गये, गई, गईं। करना से करौ, करे, करी, करीं आदि प्रयोग भी मिलते हैं, जो नियम के अपवाद हैं।

धातु से बनने वाली क्रियाओं के रूप

धातु से –1. संभाव्य भविष्यत्　　2. सामान्य भविष्यत्
3. प्रत्यक्ष विधि　　4. परोक्ष विधि
5. पूर्ण भविष्यत् और　　6. अपूर्ण वर्तमान काल की क्रिया बनती है।

संभाव्य भविष्यत् – क्रिया की अकारान्त धातुओं में निम्नलिखित प्रत्यय के लगाने से दोनों लिंगों के संभाव्य भविष्यत् की क्रिया के रूप बनते हैं। जैसे –

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	औ	ऐ
मध्यम पुरुष	ऐ	औ
अन्य पुरुष	ऐ	एं

जैसे – लिखौं–लिखै, लिखै–लिखौ, लिखै–लिखें

देना और लेना क्रिया की धातु के अन्त्य 'ए' का 'अ' कर निम्नलिखित प्रत्यय लगाते हैं–

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	ऊँ	यें
मध्यम पुरुष	य	ओ
अन्य पुरुष	य	यें

जैसे – दऊँ, दएँ, दो, दय, दयँ। लऊँ, लएँ, लो, लय, लयँ।

यदि क्रिया की धातु अकारान्त न हो, तो निम्नलिखित प्रत्यय लगाते हैं–

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	ऊं	बैं
मध्यम पुरुष	बै	आ
अन्य पुरुष	बै	बैं

जैसे – खाऊं, खाबै, खाबै, खाओ, खाबैं, खाबैं।

सामान्य भविष्यत् – इसकी क्रिया बनाने में धातु के आगे निम्नलिखित प्रत्यय लगाते हैं –

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	हौं	हैं
मध्यम पुरुष	है	हौ
अन्य पुरुष	है	हैं

जैसे – लिख हौं, लिख हैं। लिख है, लिख हौ। लिख है, लिख हैं।

'आवौ' को छोड़कर शेष अकारान्त धातुओं में उक्त प्रत्यय लगाने से पूर्व 'आ' के स्थान पर 'ए' कर देते हैं।

जैसे –	'खा' –	खैहों, खैहैं, खैहैं, ,खैहैं।
	'ला' –	लैहों, लैहैं, लैहै, लैहैं।

प्रत्यक्ष विधि – इसके रूप संभाव्य भविष्यतकाल के रूपों के समान ही होते हैं। प्रत्यक्ष विधि में केवल मध्यम पुरुष एकवचन में धातु ही का मूल रूप रहता है।

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	करौ	करै
मध्यम पुरुष	कर	करौ
अन्य पुरुष	करै	करैं

परोक्ष विधि – इसका प्रयोग केवल मध्यम पुरुष में दोनों वचनों में होता है।

मध्यम पुरुष	ये	औ

जैसे – तें, करिये, तुम करियौ। तें जैये, तुम जैयौ।

देना	दैये	दैऔ
कहना	कैये	कैऔ
धरना	धरिये	धरियौ
भरना	भरिये	भरियौ
चलना	चलिये	चलियौ
करना	करिये	करियौ
रहना	रहिये	रहियौ
लाना	लैये	लैयौ
पाना	पैये	पैयौ

पूर्ण भविष्यत् – धातु के आगे 'चुकना' क्रिया के सामान्य भविष्यतकाल के रूप लगनो से पूर्ण भविष्यत् काल की क्रिया के रूप बनते हैं। जैसे –

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं पढ़ चुक हो	हम पढ़ चुक हैं।
मध्यम पुरुष	तू पढ़ चुक है	तुम पढ़ चुक हौ।
अन्य पुरुष	बो पढ़ चुक है	वे पढ़ चुक हैं।

सामान्य हेतुहेतुमद्भूत से – 1. सामान्य वर्तमान, 2. अपूर्ण भूत, 3. संदिग्ध वर्तमान, 4. संभाव्य वर्तमान, 5. अपूर्ण भविष्यत्, 6. अपूर्ण हेतुहेतु मद्भूतकाल की क्रियाएँ बनती हैं।

सामान्य वर्तमान – धातु के आगे 'त' जोड़कर निम्नलिखित प्रत्ययों के लगाने से सामान्य वर्तमानकाल की क्रिया के रूप बनते हैं।

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	में जात हों	हम जात हैं
मध्यम पुरुष	जू जात है	तुम जात हो
अन्य पुरुष	बौ जात है	वे जात हैं

जैसे – में जात हों, हम जात हैं। तू जात है, तुम जात हौ। बौ जात है, बे जात हैं।

अपूर्ण भूत – धातु के आगे 'त' जोड़कर तौ, ते, ती, ती प्रत्यय लगाने से अपूर्ण भूतकाल की क्रिया बनती है। जैसे –

मैं खात तौ – खात ती	हम खात ते – खाततीं
तू खात तौ – खात ती	तुम खात ते – खाततीं
बौ खात तौ – खात ती	बे खात ते – खात तीं

तात्कालिक अपूर्ण भूतकाल में धातु के आगे 'रहना' क्रिया के रूप जोड़कर तौ, ते, ती, तीं प्रत्यय लगाते हैं। जैसे –

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं सोरऔ तो	हम सो रये ते
मध्यम पुरुष	तू सो रऔ तो	तुम सो रये ते
अन्यय पुरुष	बौ सो रऔ तो	बे सो रये ते।

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं सो रइ ती	हम सो रइ तीं
मध्यम पुरुष	तू सो रइ ती	तुम सो रइ तीं
अन्य पुरुष	बा सो रइ ती	बे सो रइ तीं

संदिग्ध वर्तमान – धातु के आगे 'त' जोड़कर 'होना' क्रिया के रूप लगाने से संदिग्ध वर्तमानकाल की क्रिया बनाते हैं। जैसे –

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	हुइऔ	हुइयैं
मध्यम पुरुष	हुइयै	हुइऔ
अन्य पुरुष	हुइयै	हुइयैं

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	में पढ़त हुइओं	हम पढ़त हुइयैं
मध्यम पुरुष	तू पढ़त हुइयै	तुम पढ़त हुइयौ
अन्य पुरुष	बो पढ़त हुइयै	वे पढ़त हुइयैं।

संभाव्य वर्तमान – धातु के आगे 'त' जोड़कर 'होना' क्रिया के होऊँ, होयं, होओ, होयं रूप लगाने से संभाव्य वर्तमान काल की क्रिया बनाते हैं।

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं जात होऊं	हम जात होयं
मध्यम पुरुष	तू जात होय	तुम जात हाओ
अन्य पुरुष	बो जात होय	बे जात होयं

हिन्दी में लिंग के अनुसार ता, तीं बदलते हैं, पर बुन्देली में दोनों लिंग समान रहते हैं। जैसे– खात था, खाते थे, खाती थी, के स्थान पर खात तौ, खातते, खातती, खाततीं रूप रहते हैं।

अपूर्ण भविष्यत् – धातु के आगे 'त' जोड़कर 'रहना' क्रिया के रै, हो, रै है, रैहै, रैहौ लगाने से अपूर्ण भविष्यत् काल के रूप में बनते हैं। जैसे –

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मै आत रैहों	हम आत रैहैं
मध्यम पुरुष	तू आत रैहै	तुम आत रैहौ
अन्य पुरुष	बो आत रैहे	बे आत रैहैं।

खड़ी बोली में लिंगभेद से विकृति है, जैसे – आता रहूँ, आती रहूँगी।

अपूर्ण हेतुहेतुमद्भूत – धातु के आगे 'त' जोड़कर 'होना' क्रिया के होतौ, होती, होते, होतीं रूप लगाने से अपूर्ण हेतुहेतुमद्भूत काल की क्रिया के रूप बनते हैं। जैसे –

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं करत होतौ	हम करत होते
मध्यम पुरुष	तू करत होतौ	तुम करत होते
अन्य पुरुष	बो करत होतौ	बे करत होते

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं करत होती	हम करत होतीं
मध्यम पुरुष	तू करत होती	तुम करत होतीं
अन्य पुरुष	बो करत होती	बे करत होतीं

सामान्य भूत

सामान्य भूत से – 1. पूर्ण भूत, 2. संदिग्ध भूत, 3. संभाव्य भूत, 4. पूर्ण वर्तमान, 5. पूर्ण हेतुहेतु मद्भूतकाल की क्रियाएँ बनती हैं।

पूर्ण भूत – सामान्य भूतकाल की क्रिया के रूपों में पुल्लिंग एकवचन में 'तौ' बहुवचन में 'ते' तथा स्त्रीलिंग एकवचन में 'ती' और बहुवचन में 'तीं' लगाने से पूर्ण भूतकाल की क्रिया के रूप बनते हैं। जैसे –

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं आऔ तौ	हम आये ते
मध्यम पुरुष	तू आऔ तौ	तुम आये ते
अन्य पुरुष	बो आऔ तौ	बे आत ते

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं आइ ती	हम आइ तीं

मध्यम पुरुष	तू आइ ती	तुम आइ तीं
अन्य पुरुष	बा आइ ती	बे आइ तीं

संदिग्ध भूत – सामान्य भूतकाल की क्रिया के रूपों में पुल्लिंग एकवचन में होऊं, होय, होओ, होय, होयँ लगाने से संदिग्ध भूतकाल की क्रिया के रूप में बनते हैं। जैसे –

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	में दौरो	हम दौरे होयँ
मध्यम पुरुष	तू दौरो होय	तुम दौरे होओ
अन्य पुरुष	बौ दौरो	बे दौरे होयँ

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं दौरी होऊं	हम दौरी होयँ
मध्यम पुरुष	तू दौरी होय	तुम दौरी होओ
अन्य पुरुष	बा दौरी होय	बे दौरी होयँ

संभाव्य भूत – सामान्य भूतकाल की क्रिया के रूपों में दोनों लिंगों के उत्तम पुरुष एकवचन में 'होऊँ' बहुवचन में होयँ, मध्यम पुरुष एकवचन में 'होयँ' बहुवचन में होओ, अन्य पुरुष एकवचन में होय और बहुवचन में होयँ लगाने से संभाव्य भूतकाल की क्रिया के रूप बनते हैं, जैसे –

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं दौरौ होऊं	हम दौरे होयं
मध्यम पुरुष	तू दौरौं होय	तुम दौरे होओ
अन्य पुरुष	बौ दौरौ हाय	बे दौरे होयँ

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं दौरी होऊं	हम दौरी होयं

मध्यम पुरुष	तू दौरी होय	तुम दौरी होओ
अन्य पुरुष	बा दौरी होय	बे दौरी होयं

पूर्ण वर्तमान – सामान्य भूतकाल की क्रिया के रूपों में हौं, है, हो जोड़ने से पूर्ण वर्तमानकाल के रूप बन जाते हैं, जैसे –

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं दौरो हौं	हम दौरे हैं
मध्यम पुरुष	तू दौरो हौ	तुम दौरे हौ
अन्य पुरुष	बौ दौरौ है	बे दौरे हैं

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं दौरी हौं	हम दौरी हैं
मध्यम पुरुष	तू दौरी है	तुम दौरी हो
अन्य पुरुष	बा दौरी है	बे दौरीं हैं

पूर्ण हेतुमदभूत – सामान्य भूतकाल की क्रिया के रूपों में होतौ, होती, होते, होतीं लगाने से पूर्ण हेतुहेतुमद्‌भूत की क्रिया के रूप बन जाते हैं, जैसे –

पुल्लिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं दौरौ होतौ	हम दौरे होते
मध्यम पुरुष	तू दौरौ होतौ	तुम दौरे होते
अन्य पुरुष	बो दौरी होतो	बे दौरे होते

स्त्रीलिंग

पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	मैं दौरी होती	हम दौरी होती
मध्यम पुरुष	तू दौरी होती	तुम दौरी होती
अन्य पुरुष	बा दौरी होती	बे दौरी होतीं

क्रिया

'क्रिया वह विकारी शब्द है, जिससे किसी का कुछ करना या होना ज्ञात होता है।' जैसे–'गोपाल खाता है।' इसमें गोपाल के खाने का कार्य ज्ञात होता है। इसी प्रकार 'लोटा अलमारी पै रखौ है।' इस वाक्य में लोटा का अलमारी पर होना ज्ञात होता है।

क्रिया के बिना भावों का स्पष्टीकरण असंभव है। वाक्य में स्पष्ट या अस्पष्ट रूप में क्रिया अवश्य विद्यमान रहती है, बिना क्रिया के वाक्य नहीं बन सकता है। जिस वाक्य में क्रिया स्पष्ट रूप से समझ नहीं आती, वहाँ उसकी कमी समझ में आती है, पर वह अस्पष्ट रूप से सम (हाँ में खाना खाऊंगी) वाक्य में रहती अवश्य है। जैसे– गीता का तुम खाना खैहौं। (गीता क्या तुम खाना खाओगी)। गीता–हाँ।

अग्रांकित उदाहरण में क्रिया का बोध स्पष्ट रूप से नहीं हो रहा है। प्रत्यक्ष रूप में क्रिया अवश्य नहीं है, पर क्रिया का अस्तित्व छिपा हुआ है, अस्पष्ट है। गीता के 'हाँ' कहने का अर्थ है कि वह खाना खायेगी, अतः क्रिया है। स्पष्ट है कि क्रिया के बिना वाक्य नहीं बन सकता।

क्रिया प्रकट या अप्रकट रूप से वाक्य में विद्यमान रहती है। करना, उठना, बैठना, सोना, खाना आदि हिन्दी की सामान्य क्रियाएँ हैं। बुन्देली में इन सामान्य क्रियारूपों का अंत 'ना' के स्थान पर 'बौ' अथवा 'नें' के साथ होता है। अधिकांश बुन्देलभाषी क्षेत्रों में 'बो' 'बौ' उच्चारित होता है। इस तरह बुन्देली में यही क्रियाएँ– करबौ, उठबौ, बैठबौ, सोबो, खाबौ आदि हुईं।

कुछ बुन्देली भाषी क्षेत्रों में 'बौ' के स्थान पर 'नौ' अथवा 'नै' का प्रयोग होता है, इसके अनुसार यही क्रियाएँ करनै, उठनै, बैठने, खाने आदि उच्चारित होती हैं।

क्रियाओं के प्रकार – (व्यापार) कर्म और फल के आधार पर क्रिया के दो प्रकार होते हैं –

अ. अकर्मक क्रिया – सामान्य रूप में ये वे क्रियाएँ हैं, जिनमें कर्म नहीं होता है, अकर्मक क्रिया का सारा संबंध कर्ता तक ही सीमित होता है, इसके लिंग, वचन और पुरुष सभी कर्ता के अनुसार होते हैं, जैसे – मैं निगो, बे निगैं, बा निगी, तै निग।

ब. सकर्मक क्रिया – ये वे क्रियाएँ हैं, जिनमें कर्म प्रधान होता है, जिस क्रिया के कार्य का व्यापार का फल कर्ता पर न पड़कर कर्म पर पड़ता है, वह सकर्मक क्रिया

कहलाती है। इस क्रिया के साथ कर्म अनिवार्यतः रहता है, जबकि अकर्मक क्रिया के साथ कर्म नहीं रहता, यदि रहता भी है, तो गौण रूप में ही।

अर्थ की पूर्णता के अनुसार, पूर्ण और अपूर्ण दो प्रकार के भेद होते हैं

पूर्ण अकर्मक – सोहन दौरत हैं। इसमें 'दौरत' है से पूर्ण अर्थ का बोध होता है।

अपूर्ण अकर्मक – सिंधिया ग्वालियर के राजकुंवर आँय। गोपाल तो चोर निकरौ।

इन उदाहरणों में क्रिया पूर्ण अर्थ नहीं देती, पहले वाक्य में पूर्ण अर्थ के लिये 'राजकुंवर' शब्द की अपेक्षा रहती है। इसी प्रकार 'निकरौ' भी अपूर्ण अर्थ वाली क्रिया होती है, जिसकी पूर्णता के लिये 'चोर' शब्द के प्रयोग की आवश्यकता होती है।

अकर्मक क्रिया की पूर्ति से उसके कर्ता की दशा या गुण का बोध होने से उसे उद्देश्य पूर्ति कहते हैं। जब कोई अकर्मक क्रिया अपने ही धातु से बनी हुई भाववाचक संज्ञा को सजातीय कर्म के रूप में चाहती है, तब वह सकर्मक हो जाती हैं, जैसे – गुपाल अच्छी लड़ाइ लड़त। हरिया के घुड़बा अच्छी चाल चलत। इसमें लड़ाइ और चाल सजातीय कर्म हैं।

पूर्ण सकर्मक – संपूर्ण सकर्मक क्रियाएँ अपूर्ण क्रियाओं के अंतर्गत आ सकती हैं, क्योंकि कर्म के बिना उनसे पूर्ण अर्थ का बोध नहीं होता, पर यहाँ ऐसी सकर्मक क्रियाएँ, जिनका आशय एक ही कर्म से प्रकट होता है, पूर्ण सकर्मक मानी जाती हैं। पूर्ण सकर्मक क्रिया को किसी दूसरे कर्म या पूर्ति शब्द की आवश्यकता नहीं होती और वह पूर्ण अर्थ स्पष्ट करती है। जैसे– रामू ने किताब पढ़ी। इसमें 'पढ़ी' क्रिया सकर्मक है, जिसके कार्य का करने वाला 'रामू' और उसकी क्रिया पढ़ने का फल जिस पर पड़ता है, वह किताब कर्म उसके अर्थ को पूर्णतः स्पष्ट करती है।

अपूर्ण सकर्मक क्रिया – कई सकर्मक क्रियाएँ अपना अर्थ पूर्ण रूप से प्रकट करने के लिये दो कर्म वाली होती हैं, क्योंकि एक कर्म से उनका अर्थ पूर्णतया प्रकट नहीं होता। इसी से ऐसी क्रियाएँ 'द्विकर्मक' कहलाती हैं। इनके पहले कर्म को वस्तु वाचक मुख्य कर्म कहते हैं। जैसे– गोपाल ने सोहन कों किताब दइ।

इस उदाहरण में 'दई' सकर्मक क्रिया अपूर्ण हैं, क्योंकि इसका अर्थ 'किताब' कर्म से पूर्णतः स्पष्ट नहीं होता। इसमें 'मोहन को' अन्य प्राणी वाचक कर्म पूर्ण आशय प्रकट

कर लेता है। 'दइ' सकर्मक क्रिया द्विकर्मक कही जाती है, जिसका बोधक कर्म मुख और प्राणी बोधक 'मोहन को' गौण कर्म है। कभी–कभी गौण कर्म लुप्त रहता है। जैसे– गुरु किताब पढ़ाउत। गैया दूध देत।

गौण कर्म प्रायः सम्प्रदान कारक में रहता है, परन्तु माँगबौ और कहबौ आदि ऐसी द्विकर्मक क्रियाएँ हैं, जिनका गौण कर्म अपादान कारक में आता है। जैसे– गरीब ने भगवान सैं दुआ माँगी। सीता ने मताइ सैं खाबे मांगौ। अनेक ऐसी क्रियाएँ हैं, जिनका प्रयोग अकर्मक और सकर्मक दोनों रूपों में होता है, जैसे– अकर्मक क्रिया – बहू की बातों से मोरो जी जरत है। सीता की मूड़ खुजाउत है। मिठाई कौं मोड़ा कौ जी ललचाअत है। सकर्मक क्रिया– बा मोड़ी कुँआ से पानी भरत है। हाथी अपनी सूड़ खुजाउत है। राम, मोहन कौं पैसों कौं ललचाउत है।

क्रिया धातुरूप

व्युत्पत्ति के आधार पर क्रिया की धातु के दो रूप होते हैं– मूल रूप और यौगिक रूप।

मूल रूप या धातुएँ– जो धातु किसी दूसरे शब्द से बनी हुई नहीं होती, उन्हें 'मूल धातु' कहते हैं। जैसे– काटबौ, खाबौ, चलबौ (काट, खा और चल आदि)।

यौगिक रूप या धातुएँ – जो धातुएँ मूल धातु में प्रत्यय लगाने से बनायी जाती हैं, उन्हें यौगिक धातु कहते हैं। जैसे– कटबाबौ, चलबाबौ, छिदबाबौ और जुड़बाबौ आदि (काट, छिद, जुड़)।

यौगिक धातु चार प्रकार से बनती हैं – अकर्मक व सकर्मक धातु में प्रत्यय जोड़ने से, अकर्मक धातुओं में प्रत्यय जोड़ने से, सकर्मक धातु में एक या दो धातुओं के संयोग से संयुक्त धातु और दूसरे शब्दों में दो प्रत्यय जोड़ने से नाम धातु।

प्रेरणार्थक क्रिया

क्रिया के मूल धातु में विकास होने से जो विकृत धातु बनती है, जिसकी क्रिया के व्यापार में कर्ता पर किसी की प्रेरणा जानी जाती है, उसे प्रेरणार्थक क्रिया कहते हैं। जैसे– साहूकार आदमियन सें मजूरी करबाउत है।

यहाँ करबा के 'कर' में विकार उत्पन्न होने से विकृत धातु करबाउत बनता है,

उसकी क्रिया के व्यापार करबाबै में साहूकार प्रेरणा माना जाता हैं, जिसकी प्रेरणा से क्रिया का व्यापार होता है, वह 'प्रेरक कर्ता' और जो किसी की प्रेरणा से प्रेरित होकर कार्य करता है, उसे प्रेयकर्ता कहते हैं।

आबौ, जाबौ, सकबौ, होबौ आदि क्रियाओं को छोड़कर शेष क्रिया वाले धातु से दो प्रकार की प्रेरणार्थक क्रियाएँ बनती हैं, जिनमें से पहले प्रकार की प्रेरणार्थक को सकर्मक कहते हैं। क्योंकि वह सकर्मक के अर्थ में रहती है। संपूर्ण प्रेरणार्थक क्रियाएँ सकर्मक ही होती हैं, पर सकर्मक से बनी प्रेरणार्थक क्रियाएँ द्विकर्मक होती हैं।

जब अकर्मक का प्रयोग प्रेरणार्थक के रूप में होता है, तब पहले अकर्मक से सकर्मक क्रिया और फिर सकर्मक क्रिया से प्रेरणार्थक क्रिया बनाते हैं। जैसे – फूल गिरत हैं, किसान फल गिराउत है। किसान मजूरों से फल गिरवाउत है।

निम्नांकित सकर्मक क्रियाओं का प्रथम प्रेरणार्थक रूप द्विकर्मक ही होता है, जैसे–

सकर्मक	**द्विकर्मक**	**प्रेरणार्थक**
खाबौ	खुबाबौ	खुवायबौ
धोबौ	धुबाबौ	धुवायबौ
देबौ	दुबाबौ	दुवायबौ
पीबौ	पियाबौ	पियायबौ
सींबौ	सिंयाबौ	सिंयायबौ
सीखबौ	सिखबौ	सिखबाबौ

प्रेरणार्थक क्रियाओं के बनाने के नियम

1. क्रिया के दो अक्षरों के मूल धातु के अंत में 'आ' जोड़ने से प्रथम प्रेरणार्थक और मूल धातु में 'बौ' जोड़ने से द्वितीय प्रेरणार्थक या यथार्थ प्रेरणार्थक क्रिया बनती है, जैसे –

धातु	**प्रथम प्रेरणार्थक**	**द्वितीय प्रेरणार्थक**
उठ	उठ–बौ	उठवा–बौ
गिर	गिरा–बौ	गिरवा–बौ
फैल	फैल–बौ	फैलवा–बौ
पढ़	पढ़–बौ	पढ़वा–बौ

2. द्वि–अक्षरी धातु में 'ए' तथा 'ओ' स्वरों के अतिरिक्त आदि स्वरों को दीर्घ से हृस्व और द्वितीय वर्ण के अक्षर को हृस्व से दीर्घ कर देने से प्रथम प्रेरणार्थक तथा आदि स्वरों को हृस्वकर 'बौ' प्रत्यय लगाकर द्वितीय प्रेरणार्थक क्रिया बन जाती है –

धातु	**प्रथम प्रेरणार्थक**	**द्वितीय प्रेरणार्थक**
जाग	जगा–बौ	जगवा–बौ
भाग	भाग–बौ	भगवा–बौ
डूब	डुबा–बौ	डुबवा–बौ
पीस	पिसा–बौ	पिसवा–बौ
लूट	लुटा–बौ	लुटवा–बौ
मार	मार–बौ	मरवा–बौ

3. त्रि–अक्षरी धातु के तृतीय वर्ण को अकारान्त करने से प्रथम प्रेरणार्थक तथा धातु में 'बौ' प्रत्यय का योग करने से द्वितीय प्रेरणार्थक क्रिया बन जाती है –

धातु	**प्रथम प्रेरणार्थक**	**द्वितीय प्रेरणार्थक**
चमक	चमका–बौ	चमकबा–बौ
समझ	समझा–बौ	समझबा–बौ
बदल	बदला–बौ	बदलबा–बौ
भटक	भटका–बौ	भटकबा–बौ
टहल	टहला–बौ	टहलबा–बौ

4. एकाक्षरी धातु के अंत में प्रथम प्रेरणार्थक में 'ला' तथा द्वितीय प्रेरणार्थक में 'लबा' प्रत्यय लगाकर बनाये जाते हैं, जैसे –

धातु	**प्रथम प्रेरणार्थक**	**द्वितीय प्रेरणार्थक**
छू	छुला–बौ	छुलबा–बौ
सी	सिला–बौ	सिलबा–बौ
जी	जिला–बौ	जिलबा–बौ
खा	खिला–बौ	खिलबा–बौ

5. जब मूल धातु के अंत में 'ओ' हो तो प्रेरणार्थक बनाने में उसका स्थान 'उ' ले लेता है, अर्थात् 'ओ' के स्थान पर 'उ' कर देते हैं, जैसे –

धातु	**प्रथम प्रेरणार्थक**	**द्वितीय प्रेरणार्थक**
दोरबौ	दुरा–बौ	दुरबा–बौ
फोरबौ	फुरा–बौ	फुरबा–बौ
खोदबौ	खुदा–बौ	खुदबा–बौ
धोबौ	धुबा–बौ	धुबबा–बौ

6. जब मूल धातु के प्रथम वर्ण के अंत कें 'ए' 'ऐ' हो तो उसके स्थान में 'इ' कर देते हैं, तो प्रेरणार्थक धातुएँ बनती हैं, जैसे –

धातु	**प्रथम प्रेरणार्थक**	**द्वितीय प्रेरणार्थक**
देख	दिखा–बौ	दिखवा–बौ
बेल	बिला–बौ	बिलवा–बौ
सैंक	सिंका–बौ	सिंकवा–बौ
खेल	खिला–बौ	खिलवा–बौ
बैठ	बिठा–बौ	बिठवा–बौ

7. कुछ धातुओं में प्रथम और द्वितीय प्रेरणार्थक एक ही अर्थ के द्योतक होते हैं–

मूल धातु	**प्रथम प्रेरणार्थक**	**द्वितीय प्रेरणार्थक**
बाँध	बँधा–बौ	बँधबा–बौ
रख	रखा–बौ	रखबा–बौ
धर	धरा–बौ	धरबा–बौ
खुल	खुला–बौ	खुलबा–बौ
हँस	हँसा–बौ	हँसबा–बौ

8. कुछ सकर्मक धातुएँ ऐसी होती हैं, जिनमें केवल प्रथम प्रेरणार्थक धातुएँ ही बनती हैं– गा– गाबौ, गबाबौ। खो – खो–बौ, खुबाबौ। ले – ले ले बो, लुबाबौ।

9. कुछ धातुओं के प्रथम प्रेरणार्थक में 'ला' अथवा 'बा' लग का योग होता है, द्वितीय प्रेरणार्थक में 'बा' प्रत्यय लगता है, जैसे –

मूल धातु	**प्रथम प्रेरणार्थक**	**द्वितीय प्रेरणार्थक**
सीख	सिखबौ, सिखलाबौ	सिखबा–बौ
बैठ	बिठाबौ, बैठाल बौ	बिठबा–बौ
दिख	दिखबौ, दिखलाबौ	दिखबा–बौ

10. अकर्मक धातु में 'आउत' प्रत्यय जोड़ने से वह सकर्मक तथा प्रथम प्रेरणार्थक क्रिया और 'आउत' के स्थान पर 'बाउत' प्रत्यय जोड़ने से द्वितीय सकर्मक क्रिया बन जाती है, जैसे–

मूल धातु	प्रथम प्रेरणार्थक	द्वितीय प्रेरणार्थक
तप	तपाउत	तपबाउत
चल	चलाउत	चलबाउत

यौगिक सकर्मक क्रिया

यौगिक सकर्मक धातुएँ वे हैं, जो अकर्मक धातुओं से बनतीं हैं। जैसे– कट से कटाबौ– कटबाबौ। छि से छिदाबौ– छिदबाबौ।

अकर्मक धातुओं से यौगिक सकर्मक धातु बनाने के नियम

1. दो वर्णों के अकर्मक मूल धातु के प्रथम वर्ण को दीर्घ करने से यौगिक सकर्मक धातु बनाती हैं, जैसे –

कट	काट–बौ	लद	लाद–बौ
दब	दाब–बौ	फँस	फाँस–बौ
लुट	लुटा–बौ		

2. तीन अक्षरों के मूल अकर्मक धातु के द्वितीय अक्षर को दीर्घ करने के यौगिक सकर्मक धातु बनती हैं, जैसे–

पकर	पकरा–बौ	समर	समरा–बौ
निकर	निकरा–बौ	सुधर	सुधरा–बौ
सरक	सरका–बौ	बिगर	बिगर–बौ

3. यदि मूल अकर्मक धातु का प्रथम वर्ण इकारान्त अथवा ऊकारान्त है, तो उसे एकारान्त वा ओकारान्त कर देने से यौगिक सकर्मक धातु बन जाती हैं। जैसे एकारान्त वा ओकारान्त कर देने से यौगिक सकर्मक धातु बन जाती हैं, जैसे –

घिर	घेर–बौ	खुल	खोल–बौ
दिख	देख–बौ	घुर	घोर–बौ
छिद	छेद–बौ	मुड़	मोड़–बौ

4. यदि मूल अकर्मक धातु के अंत में 'ट' हो, तो उसे 'रे' करके यौगिक सकर्मक बनाते हैं, और प्रथम वर्ण को यदि 'ऊ' हो तो 'औ' कर देते हैं, जैसे –

फूट	फोर–बौ	छूट	छोर–बौ
कट	काट–बौ	टूट	तोड़–बौ

5. कुछ सकर्मक धातुओं से अनियमित रूप से सकर्मक धातुएँ बनती हैं –

बिक	बेंच–बौ	रह	रख–बौ

संयुक्त क्रिया

जब एक से अधिक क्रियाएँ एक साथ आती हैं, तब संयुक्त क्रियाएँ कहलाती हैं। ये क्रियाएँ एक से अधिक धातुओं से निर्मित होती है, जैसे –

पौंच गओ' क्रिया में पौंच (पहुँच) और 'जा' दो धातुएँ हैं। इस प्रकार 'जातै हैं' क्रिया में 'जा' तथा 'हो' धातुओं से निर्मित क्रिया रूप संयुक्त है। इस प्रकार की क्रियाओं में प्रथम क्रिया मुख्य और द्वितीय क्रिया सहायक होती है।

संयुक्त क्रिया के प्रकार – बुन्देली में प्रयुक्त संयुक्त क्रियाएँ छह प्रकार की होती है –

1. जिनमें प्रथम क्रिया सामान्य रूप में रहती है – करबौ, चाऔ।
2. जिनमें प्रथम क्रिया हेतुहेतुमद्भूत काल में होती है – बौ पढ़त जात तौ।
3. जिसमें प्रथम क्रिया सामान्य भूतकाल के रूप में होती है – बौ चलो गऔ।
4. जिसमें प्रथम क्रिया धातु के रूप में रहती है – बौ लिख सकत तो।
5. जिसमें प्रथम क्रिया पूर्ण द्योतक कृदन्त के रूप में रहती है – बौ पढ़त रहतो।
6. पुनरुक्त संयुक्त क्रियाएँ – आबौ, जाबौ, रोबौ, गाबौ आदि।

नामबोधक क्रिया

दूसरे शब्द भेदों के प्रत्यय जोड़ने से जो धातु बनती हैं, उन्हें –नाम' धातु कहते हैं। इनमें संज्ञा या विशेषण शब्दों में 'बौ' प्रत्यय जोड़ने से क्रिया के साधारण रूप बनते हैं, जैसे –

डकार	डाकार बौ	खरीद	खरीदबौ
दुख	दुख बौ	बदल	बदल बौ
खरच	खरच बौ	त्याग	त्याग बौ
दाग	दाग बौ		

अनुकरणबोधक क्रिया

किसी ध्वन्यात्मक शब्द की ध्वनि में 'बौ' प्रत्यय जोड़ने से क्रिया शब्द बनाये जाते हैं, उन्हें अनुकरण बोधक क्रिया कहते हैं, जैसे –

खट खट	खटखटाबौ	कट कट	कट कटाबौ
भन भन	भनभनाबौ	थर थर	थर थराबौ
फर फर	फर फराबौ	भर भर	भर भराबौ
मच मच	मच मचाबौ	ठक ठक	ठक ठकाबौ
रख रख	रख रखाबौ		

आज्ञार्थक क्रिया

इस क्रिया का उपयोग आज्ञा अथवा उपदेश देने में किया जाता है, जैसे– तुम लिखो, घर जा आदि।

'आना' क्रिया की 'आ' धातु से बुन्देली के पुरुष, लिंग, वचन रूप इस प्रकार बनेंगे–

प्रथम पुरुष	पुल्लिंग	आऔ	आएं, आबी
प्रथम पुरुष	स्त्रीलिंग	आओ	आएं, आबी
द्वितीय पुरुष	पुल्लिंग	आ, आइए	आऔ, आइ अऔ
द्वितीय पुरुष	स्त्रीलिंग	आ, आइए	आऔ, आइअ्औ
तृतीय पुरुष	पुल्लिंग	आए, आबे	आएं, आबैं
तृतीय पुरुष	स्त्रीलिंग	आए, आबे	आएं, आबे

पूर्वकालिक क्रिया

जो क्रियाएँ वाक्य की मुख्य क्रिया के पूर्व आती हैं, ये पूर्व कालिक क्रियाएँ कही जाती हैं। इन क्रियाओं से मुख्य कार्य के पूर्व कर्त्ता द्वारा कार्य होना ज्ञात होता है। जैसे – बौ पढ़कें सो गऔ। इस वाक्य में 'बौ' कर्ता है। वह पढ़ने का काम पहले करता है। इसके पश्चात् सोता है। अतः 'पढ़कै' 'पूर्वकालिक क्रिया' है।

हिन्दी में धातु के आगे 'कर' प्रत्यय लगा देने से 'पूर्वकालिक क्रिया' बनती है। बुन्देली में 'कर' के स्थान पर 'कै' प्रत्यय का प्रयोग होता है।

सहायक क्रिया

ये क्रियाएँ वस्तुतः अपूर्ण क्रियाएँ होती हैं। तब तक मुख्य क्रियाओं के साथ नहीं जुड़ती, जब तक उनकी कोई सार्थकता नहीं होती। इसके विपरीत मुख्य क्रिया भी बिना

इसकी सहायता के अपने व्यापार में असमर्थ रहती है, जैसे– 'में जात हौं' इस क्रिया की मुख्य क्रिया 'हौं' है, पर जब तक वह मुख्य क्रिया 'जात' सहायक क्रिया का योग प्राप्त नहीं करती, तब तक केवल 'मैं हौं' कहने का तात्पर्य स्पष्ट नहीं होता।

बुन्देली में जान, आत, खात, लात आदि क्रियारूपों के स्थान पर जाउत, आउत, खाउत, लाउत आदि का प्रयोग भी सहायक क्रिया के रूप में होता है। जैसे– मैं जाउत हौं, बौ आउत है आदि।

बुन्देली की सहायक क्रियाओं के रूप हमें अनेक बार हिन्दी की सहायक क्रिया से भिन्न दिखायी देते हैं। जैसे– हिन्दी में 'वह आ गया' वाक्य में 'गया' मुख्य क्रिया है और 'आ' उसकी सहायक क्रिया है। बुन्देली में 'बो आ गऔ' वाक्य में भी 'आ' सहायक क्रिया है, किन्तु इस 'आ' के अन्य रूप 'आय' का भी प्रयोग होता है। यह कभी मुख्य क्रिया के रूप में भी प्रयुक्त होता है, जैसे– 'जो बकील आय' तें को आय? और कभी–कभी निश्चय प्रकट करने के लिए भी प्रयुक्त होता है, जैसे– बा आय गई हती।

क्रिया शब्दों का रूपान्तर

क्रिया शब्दों के प्रयोग में एक विधायिका शक्ति है। इसमें काल, रीति, लिंग, पुरुष और वचन की अवस्था का उल्लेख आवश्यक होता है। इसी के निमित्त सहायक क्रिया शब्दों का प्रयोग किया जाता है। क्रिया शब्दों में वाच्य प्रयोग (लिंग और पुरुष) काल और अर्थ के कारण विकार होता है।

वाच्य

क्रिया शब्द के उस रूपान्तर को वाच्य कहते हैं, जिससे यह जाना जाता है कि विधानकर्त्ता के कर्म अथवा भाव में से किसके विषय में किया गया है। इस विधान के अनुसार वाच्य के तीन प्रकार होते हैं– कर्तृ वाच्य, कर्म वाच्य और भाव वाच्य।

कर्तृ वाच्य – क्रिया के जिस रूपान्तर से वाच्य का उद्देश्य क्रिया का कर्ता माना जाये, उसे कर्तृ वाच्य कहते हैं। जैसे– पानी बरस रओ है। बाने चिठिया लिख दइ।

कर्तृ वाच्य अकर्मक और सकर्मक दोनों क्रियाओं में होता है। उपर्युक्त उदाहरणों में प्रथम वाच्य की क्रिया अकर्मक और द्वितीय वाच्य की क्रिया सकर्मक है।

कर्म वाच्य – क्रिया के जिस रूपान्तर से क्रिया का उद्‌देश्य क्रिया का कर्म माना जाये, उसे कर्म वाच्य कहते हैं, जैसे– खाना खाओ जात। मौड़ी सें पानी भरबाओ जात। गुरु ने किताब पढ़ाई। खेती करी जात है।

अ. कर्म वाच्य केवल क्रियाओं में होता है।

ब. कर्म वाच्य में वाच्य का उद्देश्य कभी–कभी विभक्तिरहित कारक में और कभी–कभी विभक्तिसहित कर्म कारक में होता है। जैसे– पोथी पड़ी जाय। मजूर बुलबाओ जाय। गठरियों कौं उतरबा लव जाय।

स. कभी–कभी कर्मवाच्य में कर्ता प्रकट नहीं होता, जैसे– रोटी बनाइ गई। खेत में नाज बोओ गऔ।

सकर्मक क्रियाओं के कर्मवाच्य में मुख्य कर्म उद्देश्य होता है और गौण कर्म ज्यों का त्यों रहता है। जैसे– भिखारी कौं पैसा दव गओ। रोगी कौं दबाइ खुबाइ गई।

भाव वाच्य – इनका प्रयोग प्रायः निषेध वाचक अव्यय के साथ होता है और इसकी क्रिया एकवचन, पुल्लिंग, अन्य पुरुष के रूप में रहती है। जैसे – मौसैं ठण्डौ खाना नइं खाब जात। बूढ़े सैं उठौ नईं जात। तोसैं उतै रव नइं जात।

अ. भाव वाचक केवल अकर्मक क्रिया के साथ ही होता है, यह सकर्मक क्रियाओं के साथ नहीं होता जो कि उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है।

ब. बुन्देली में भाव वाच्य का प्रयोग हिन्दी की तरह प्रयोग निषेधात्मक अव्यय न, नी अथवा नइं के साथ होता है।

स. भाव वाच्य की क्रिया का सदैव एकवचन पुल्लिंग अन्य पुरुष में ही होता है।

वाच्य परिवर्तन

बुन्देली का वाच्य परिवर्तन कठिन नहीं है। कर्ता कारक की विभक्ति 'ने' करण कारक की विभक्ति 'सैं' कर देने से कर्तृ वाच्य–भाव वाच्य में परिवर्तित हो जाता है।

बुन्देली के वाच्य परिवर्तन को स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित उदाहरणों पर ध्यान देना आवश्यक है।

कर्तृ वाच्य – रामू रोटी खा रओ। बहू रोटी बनाउत है। पंडत पोथी पढ़त है। कमला काम करत है। बूढ़ो उठत है।

कर्म वाच्य – रामू से रोटी खाइ जात है। बहू सें रोटी वनबाई जात है। पंडत से पोथी पढ़ी जात है। कमला से काम होत है। बूढ़े से उठो जात है।

भाव वाच्य – रामू सें रोटी नईं खाइ जात। बहू से रोटी नईं बनाइ जात। पंडत से पोथी नईं पड़ी जात। कमला से काम नइं होत। बूढ़े से नईं उठो जात।

प्रयोग

जिस क्रियापद द्वारा विधान होता है, उसके लिंग, वचन और पुरुष या तो कर्ता या कर्म के अनुसार होते हैं अथवा दोनों के अनुसार न होकर भाव के अनुसार होते हैं। इस प्रकार के प्रयोग के अनुसार क्रिया के तीन रूप होते हैं– कर्तरि प्रयोग, कर्मणि प्रयोग और भावे प्रयोग।

कर्तरि प्रयोग – क्रिया के जिस रूपान्तर के लिंग, वचन और पुरुष कर्ता के लिंग वचन और पुरुष के अनुसार होते हैं उसे कर्तरि प्रयोग कहते हैं, जैसे– घोड़ा दौड़त जात। लुगाई पानी लिया रई है। मोड़ा किताब पढ़त है। नौकर सामान ला रओ है।

कर्तरि प्रयोग अकर्मक और सकर्मक दोनों प्रकार की क्रियाओं में होता है और कर्तरि प्रयोग में कर्ता कारक विभक्तिरहित होता है।

कर्मणि प्रयोग – क्रिया के जिस रूपान्तर में लिंग, वचन और पुरुष, कर्म के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार होते हैं, उसे कर्मणि प्रयोग कहते हैं। जैसे– गैया नें दूध दओ। राधा ने मौंड़ा खौं मारो। कमला बर्तन ले आओ।

कर्मणि प्रयोग की क्रिया सदैव सकर्मक होती है और कर्मवाच्य कर्मणि प्रयोग में कर्ता करण कारक की 'सैं' विभक्ति से युक्त रहता है।

भावे प्रयोग – क्रिया के जिस रूपान्तर में क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्ता या कर्म के अनुसार न होकर भाव के अनुसार होते हैं, उसे भावे प्रयोग कहते हैं। जैसे– उननें मोड़ी को बुला लव हतो। मोड़ा नें रामू खौं पथरा मार दव हतो। सेठ ने सब्जी बारे कौं बुला लव तौ।

बुन्देली में जो भावे प्रयोग देखे जाते हैं, वे तीन प्रकारों में विभक्त किये जा सकते हैं– कर्तवाच्य भावे प्रयोग, कर्मवाच्य भावे प्रयोग और भाववाच्य भावे प्रयोग।

कर्तवाच्य भावे प्रयोग – क्रिया के जिस रूपान्तर से वाक्य का पूरा उद्‌देश्य क्रिया का कर्ता माना जाये और पुरुष कर्त्ता अथवा कर्म के अनुसार न हों उसे कर्तवाच्य भावे प्रयोग कहते हैं, जैसे– मैंने आँदरें भिखारी कौं देखो हतो। हमनैं सपर लऔ। मौड़ी ने भिखारिन कौ पथरा मार दऔ।

कर्तवाच्य भावे प्रयोग में यदि क्रिया अकर्मक हो तो कर्ता विभक्तिसहित होता है और यदि क्रिया सकर्मक है तो कर्ता और कर्म दोनों विभक्तिसहित होते हैं।

कर्मवाच्य भावे प्रयोग — क्रिया के जिस रूपान्तर से वाक्य का उद्देश्य क्रिया का कर्म जाना जाये और क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्ता अथवा लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार न हों तो उसे कर्मवाच्य भावे प्रयोग कहते हैं, जैसे— उनकों सोई ब्याब को बुलौआ दे दैओ। आज लुहार कौं बी गाँव की तरफ सें न्यौत लओ जाये।

कर्मवाच्य भावे प्रयोग में कर्म विभक्तिसहित रहता है और यदि कर्ता का प्रयोग आवश्यक हो तो उसे करण कारक में सैं, सौं विभक्ति रखते हैं। वैसे प्रायः कर्ता का लोप रहता है।

भाववाच्य भावे प्रयोग — क्रिया के जिस रूपान्तर से वाक्य का उद्देश्य क्रिया का कर्ता अथवा कर्म न जाना जाये और क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्ता या कर्म के लिंग वचन और पुरुष के अनुसार न हो, भाव के अनुसार न हो, भाव के अनुसार हों उसे भावे प्रयोग कहते हैं जैसे — इतै बैठो नईं जात। लूली गैया सैं चलौ नईं जात। बूढ़े सें उठो नईं जात।

भाववाच्य भावे प्रयोग की क्रिया सदैव अकर्मक रहती है और यदि कर्ता का प्रयोग किया जाता है तो उसे करण कारक की विभक्ति से युक्त रखते हैं।

संयुक्त क्रिया

जब किसी वाक्य में एक से अधिक क्रियाएँ एक साथ आती हैं, तब वे संयुक्त क्रियाएँ कहलाती हैं। ये क्रियाएँ एक से अधिक धातुओं के योग से बनती हैं। जैसे— चलो गऔ। जानै है। कर लेबी। दे डारौ।

उपर्युक्त उदाहरणों में — चलो और गऔ दो धातुयें हैं 'जा' और 'है' धातुओं का योग है। 'कर लेबी' क्रिया में 'कर' और 'लेबी' (लेंगे) धातुओं का योग है।

संयुक्त क्रियाओं में पहली क्रिया मुख्य और द्वितीय क्रिया सहायक होती है। रूप के अनुसार संयुक्त क्रियाएँ छह प्रकार की होती हैं —

1. जो प्रथम क्रिया की धातु में 'न' अथवा 'ने' जोड़ने से बनती हैं, जैसे— करने परत, जान लगे, पढ़न लगौ, खान देहे। इस प्रकार की संयुक्त क्रियाओं के चार भेद होते हैं— अ. आवश्यकता बोधक, ब. आरंभ बोधक, स. अनुमति बोधक, द. अवकाश बोधक।

आवश्यकता बोधक — ऐसी संयुक्त क्रिया जिससे क्रिया की आवश्यकता अथवा कर्तव्य का बोध होता है, उसे आवश्यकता बोधक संयुक्त क्रिया कहते हैं। आवश्यकता बोधक क्रिया धातु में 'नैं' जोड़कर उसमें 'परबौ' और 'होबौ' क्रिया रूप

लगाने से बनती है। जैसे– जाने परहै। छापनै हुइयै। कटनै हुइयै। हटनै चइयै। दौरने परहै। करने परहै।

धातु में 'और' प्रत्यय जोड़कर उसमें 'चाहबौ' क्रिया के रूप लगाने से भी आवश्यकता बोधक क्रिया के रूप बनते हैं। जैसे– करौ चैये। मारो चाहत् तौ।

कभी–कभी मुख्य क्रिया के साधारण रूप में 'चाहबौ' क्रिया के रूप लगाते हैं। जैसे– मरबौ चाहत (चाउत), जाबौ चाहत, (चाउत), परबौ चाहत, (चाउत), लगबौ चाहत, (चाउत)।

आरंभ बोधक – ऐसी संयुक्त क्रिया जिससे कार्य का आरम्भ ज्ञात होता है, उसे आरंभ बोधक संयुक्त क्रिया कहते हैं। यह क्रिया धातु में 'न' जोड़कर उसमें 'लगबौ' क्रिया के रूप लगाने से बनती है। जैसे– पानी बरसन लगौ। बो जान लगौ। बो काम करन लगौ। पढ़न लगी। करन लगी।

अनुमति बोधक – जिस संयुक्त क्रिया से क्रिया के व्यापार को करने की अनुमति दिये जाने का बोध होता है, उसे अनुमति बोधक कहते हैं।

यह धातु में 'न' प्रत्यय जोड़कर 'दैबौ' क्रिया के रूप लगाने से बनती है। जैसे– जान दैबौ। करन दैबौ। मारन दैबौ। जोतन दैबौ। हँसन दओ। खान दओ। सोन दओ।

अवकाश बोधक – ऐसी संयुक्त क्रिया जिससे कार्य करने में अवकाश मिलने का बोध हो, उसे अवकाश बोधक संयुक्त क्रिया कहते हैं, यह धातुओं में 'न' प्रत्यय जोड़कर उसमें 'पाबौ' क्रिया के रूप लगाने से बनती है। जैसे– पढ़ पाहै। छोरन पाउत। फोरन पाउत। जान पाहै।

2. वे सभी संयुक्त क्रियाएँ हैं जिनमें आदि की क्रिया में 'त' प्रत्यय जोड़ने से बनती है। जैसे– दौरत जात। खात जात। पढ़त बनौ। करत रैहै। पैरत रैहै।

इस प्रकार की संयुक्त क्रियाएँ दो प्रकार की होती हैं – अ. नित्यता बोधक, ब. योग्यता बोधक।

अ. नित्यता बोधक – ऐसी संयुक्त क्रिया जिससे कार्य की नित्यता अर्थात् उसके अविराम गति से होने का बोध होता है, उसे नित्यता बोधक क्रिया कहते हैं। यह आदि की क्रिया की धातु में 'त' प्रत्यय जोड़कर उसमें 'रहबौ' 'आबौ' तथा 'जाबौ' क्रिया के रूप लगाने से बनती है। जैसे – खात रैहै, जात रैहै, आत रैहै। पढ़त जैहैं, करत जैहै, लगत जैहै, करत आऔ, काटत आऔ, मारत आऔ।

सामान्य भूतकाल की क्रिया में 'करबौ' क्रिया के रूप लगाने से भी नित्यता बोधक संयुक्त क्रिया बनती है। जैसे— देखौ करत, खैलौ करत, (देखबौ करत, खेलबौ करत)।

ब. योग्यता बोधक — ऐसी संयुक्त क्रिया से जिससे कार्य को करने की योग्यता अथवा समर्थता जानी जाये, उसे योग्यता बोधक संयुक्त क्रिया के रूप लगाने से बनती है। जैसे— बढ़त बनौ, चलत बनौ। खात नइ बनत, करत नइ बनत। काटत बन है, खात बन है। सोत बन है। पढ़त बनतौ, हँसन बनतौ, उठत बनतौ। (सोत) सोउत बनत, उठत बनत, खात बनत।

3. वे क्रियाएँ जिसमें आदि की क्रिया सामान्य भूतकाल के रूप में रहती है। इन संयुक्त क्रियाओं के दो प्रकार होते हैं— अ. इच्छा बोधक, ब. अभ्यास बोधक।

अ. इच्छा बोधक — ऐसी संयुक्त क्रिया जिससे कार्य करने की इच्छा व्यक्त होती है, उसे 'इच्छा बोधक' संयुक्त क्रिया कहते हैं। यह सामान्य भूतकाल की क्रिया में 'चाहबौ' क्रिया के रूप लगाने से बनती है। जैसे — बौ जान चाहत तो (चाउत तौ)। बा सीखन चाहत ती (चाउत तौ)। बौ दौरौ चाहत तौ (चाउत तौ)। बा बैठौ चाहत ती (चाउत तौ)।

क्रिया के साधारण रूप में 'चाहबौ' क्रिया के रूप लगाने से भी 'इच्छा बोधक' संयुक्त क्रिया बनती है। जैसे— बा आबौ चाहत ती (चाउत ती) (उतौ)। बौ आबौ चाहत तौ (चाउतौ)। बौ पढ़बौ चाहत तौ (चाउतौ)। बौ दौड़बौ चाहत है (चाउतै)। बौ सोबौ चाहत है (चाउतौ)। बनाबौ चाहत तो (चाउत हो)। सीखबौ चाहत हो (चाउत हो)।

कभी—कभी इच्छा बोधक संयुक्त क्रिया के रूप से यह भी जाना जाता है कि क्रिया का व्यापार निकट भविष्य में आरंभ होने पर है। जैसे— पानी बरसौ चाहत या गिरौ चाहत (चाउत)। दिन डूबौ चाहत या चंदा डूबौ चाहत (चाउत)। उजेरो होबो—चाहत (चाउत)। भुन्सरा होबो चाहत (चाउत)। दू लगबौ चाहत (चाउत)।

ब. अभ्यास बोधक — ऐसी संयुक्त क्रिया जिसको करने के सतत अभ्यास का बोध हो, उसे अभ्यास बोधक कहते हैं। यह सामान्य भूतकाल की क्रिया में 'करबौ' क्रिया के रूप लगाने से बनती है। जैसे— पढ़ौ करत। सोऔ करत। रोऔ करत।

धातु में 'ते' प्रत्यय जोड़कर 'रहबौ' क्रिया के रूप लगाने से भी अभ्यास बोधक संयुक्त क्रिया बनती है। जैसे— खाते रैत है। पढ़ते रैत है। आते रैहै। जाते रैहै

4. वे संयुक्त क्रियाएँ जिनमें आदि की क्रिया, धातु के रूप में रहती है। जैसे– पढ़ लैबौ। खा सकबौ। उठा लैबौ। गिरा दैबौ। इन संयुक्त क्रियाओं के तीन प्रकार होते हैं– अ. अवधारणा बोधक, ब. शक्ति बोधक, स. पूर्णता बोधक।

अ. अवधारणा बोधक – ऐसी संयुक्त क्रिया जिससे मुख्य क्रिया अधिक निश्चयात्मक होती है, वह अवधारणा बोधक संयुक्त क्रिया कहलाती है। यह संयुक्त क्रिया धातु के आगे उठना, बैठना, पढ़ना, डालना आदि क्रियाओं के रूप लगाने से बनती है। जैसे– उठ बैठौ। कर डारौ। खो दऔ। जा परौ। दे डारौ।

ब. शक्ति बोधक – ऐसी संयुक्त क्रिया जिससे करने की शक्ति का बोध हो, उसे 'शक्ति बोधक' संयुक्त क्रिया कहते हैं। यह धातु में 'सकबौ' क्रिया के रूप लगाने से भी बनती है। जैसे– बौ नई जा सके। जो काम हम नई कर सकत। कर सकबौ, खा सकबौ, पढ़ सकबौ। दे सकबौ, ले सकबौ, खा सकबौ।

स. पूर्णता बोधक – ऐसी संयुक्त क्रिया जिससे कार्य का पूर्ण होना ज्ञात हो, उसे 'पूर्णता बोधक' संयुक्त क्रिया कहते हैं। संयुक्त क्रिया का यह रूप धातु के आगे 'चुकना' या 'चुकबौ' क्रिया के रूप लगाने से बनता है। जैसे– जा चुकौ। खा चुकौ। पढ़ चुकौ। कर चुकौ। चाट चुकतौ।

5. वे संयुक्त क्रियाएँ जिनमें आदि की क्रिया द्योतक कृदन्त के रूप में रहती है। जैसे – करैं देत। लयैं जात। लटकायैं गयौ। इनके दो प्रकार होते हैं – अ. निरन्तरता बोधक, ब. निश्चय बोधक।

अ. निरन्तरता बोधक – ऐसी संयुक्त क्रिया जिससे कार्य की निरन्तरता का बोध हो, उसे निरन्तरता बोधक संयुक्त क्रिया कहते हैं। यह पूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त के रूप में 'जाबौ', रहबौ क्रिया के रूप लगाने से बनती है। जैसे– बौ खातई जात। बा आतई रहत (रैत)।

ब. निश्चय बोधक – ऐसी संयुक्त क्रिया जिससे मुख्य क्रिया के व्यापार का निश्चय जाना जाये, उसे निश्चय बोधक संयुक्त क्रिया कहते हैं। यह पूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त के रूप में लैबो, दैबो, डारबौ और बैठबौ क्रिया के रूप लगाने से बनती है। जैसे– बो मारे डारत तो। मैं दे दैहों मैं लयैं देत। लटकाये देत।

6. जब दो समान अर्थ अथवा ध्वनि वाली क्रियाओं का संयोग होकर एक क्रियारूप बनता है, तब उसे 'पुनरुक्त संयुक्त क्रिया' कहते हैं। जैसे– समझाबौ–बूझबौ, देखबौ–भालबौ, उठाबौ– धरबौ।

पुनरुक्त संयुक्त क्रियाओं में दोनों क्रियाओं के रूपों में विकार होता है और सहायक क्रिया केवल अंत की क्रिया के साथ आती है। जैसे– समझ बूझत हौ। करत धरत ती। कमाबे धमाबे जात तौ।

संयुक्त क्रियाओं से संबंधित विशेष नियम

1. संयुक्त क्रिया में अंतिम सहायक क्रिया की धातु को पिछली क्रियाओं के संयोग सहित धातु मानते हैं। जैसे–दौरत रैहे, पढ़न लगौ, तरसत रैहे, रौउत रैहे। इन उदाहरणों में क्रमशः दौरत रह, पढ़न लग, तरसत रह, रोत रह (रोउत रह) धातु हैं।

2. संयुक्त क्रियाओं में आदि का खंड मुख्य समझा जाता है, जैसे– पढ़त है, और करन लगत है, में क्रमशः 'पढ़' और 'कर' मुख्य हैं।

3. संयुक्त क्रियाएँ केवल सकर्मक, केवल अकर्मक और सकर्मक–अकर्मक दोनों क्रियाओं के संयोग से बनती हैं। जैसे–

केवल सकर्मक	–	खा लेबौ, देख लेबौ।
केवल अकर्मक	–	सो जाबौ, उठ जाबौ।
अकर्मक–सकर्मक	–	चल दैबो, दै आबौ।

क्रिया विशेषण

जो शब्द, क्रिया विशेषण अथवा दूसरे क्रिया विशेषण शब्द की विशेषता बतलाते हैं, वे क्रिया विशेषण कहलाते हैं। जैसे– बौ तुरन्त चलो गऔ। शक्ति बड़ी अच्छी खिलाड़ी है। तुम बड़ी जल्दी काम कर रइं। बा बड़ी अच्छी रोटी बनाउत।

क्रिया विशेषण शब्दों का वर्गीकरण तीन आधारों पर किया जाता है – रूप, प्रयोग और अर्थ।

1. रूपानुसार क्रिया विशेषण के प्रकार – मूल, यौगिक और स्थानीय क्रिया विशेषण।

अ. मूल क्रियाविशेषण – वे क्रिया विशेषण शब्द, जो किसी दूसरे शब्द से नहीं बनते, मूल क्रिया विशेषण कहलाते हैं, जैसे – फिर, सदा, पाछूँ, आँगें, दूर, ठीक, अचानक आदि।

ब. यौगिक क्रियाविशेषण – जो क्रिया विशेषण शब्द भेदों में प्रत्यय लगाने से बनते हैं, वे यौगिक क्रिया विशेषण कहलाते हैं। जैसे–रात भर, दिन लौं, प्रेम सैं।

यौगिक क्रिया विशेषण तीन प्रकार से बनते हैं– अन्य शब्द भेदों में प्रत्यय या शब्दांश जोड़ने से, शब्दों की द्विरूक्ति से और भिन्न–भिन्न शब्दों के मेल से।

अन्य शब्द भेदों में प्रत्यय या शब्दांश जोड़ने से –

1. संज्ञा से – मन भर, अघानैं, तक, दिन भर, रात लौं।
2. सर्वनाम से – कैसें, जैसें, ऐसें, वैसें, ऊँसैं।
3. विशेषण से – अच्छे सें, इतने सैं, पीलइ, धीरे सैं आदि।
4. धातु की द्विरुक्ति – खात–खात, जात–जात, गात–गात, पैरत–पैरत।
5. प्रत्यय से – इतै लौ, उतै लौ, नेंचे कौं, ऊपर कौं, कबसैं, झट्ट सैं।

शब्दों की द्विरुक्ति से

पल–पल, साप–साप, (साफ–साफ), ठीक–ठीक, बार–बार, आसपास, इकसाथ, साँझ–सबेरे, घरी–घरी, आजकल, एकसाथ।

स्थानीय क्रियाविशेषण –

वे शब्दभेद जो किसी प्रकार के रूपान्तर के बिना ही स्थानीय प्रचलन के कारण क्रिया विशेषण की रीति पर प्रयुक्त होते हैं, स्थानीय क्रिया विशेषण कहलाते हैं। जैसे–वो पथरा जानत, वे हमाओ मूड़ (सिर) कर हैं। जो कौन काम है, बा रोत बैठी है, भगवान से को बड़ो है। बो घबरा कै भग गओ, वा सोत रइ।

प्रयोग के अनुसार क्रिया विशेषण के प्रकार

प्रयोग के अनुसार क्रिया विशेषण तीन प्रकार के होते हैं– साधारण, संयोजक और अनुबद्ध।

अ. साधारण – वे क्रिया विशेषण शब्द जो किसी वाक्य में स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त होते हैं, साधारण क्रिया विशेषण कहलाते हैं। जैसे – तू काँ गओ तो। मैं का करौं। गाड़ी धीरें चल रइ है।

ब. संयोजक क्रियाविशेषण – ऐसे क्रिया विशेषण जिनका संबंध किसी उप वाक्य के साथ रहता है, संयोजक क्रिया विशेषण कहलाते हैं। जैसे–जैसो काम, बैसो नाम। जैसो करम कर हो, वैसो फल मिल है। जैसी करनी, बैसी भरनी। पैले महल हतो, अब खड़ेरा डरौ।

स. अनुबद्ध क्रियाविशेषण – ऐसे क्रियाविशेषण शब्द जो अवधारणा के लिये

किसी भी शब्दभेद के साथ उपयोग में आते हैं, अनुबद्ध क्रियाविशेषण कहलाते हैं। जैसे – बाके आबे भर की देर है। बो काल बी आओ तौ। ओकी सूरत तक नइ देखी।

अर्थ के अनुसार क्रियाविशेषण के प्रकार – अर्थ के अनुसार क्रियाविशेषणों के चार प्रकार होते हैं। जैसे– स्थल वाचक, काल वाचक, परिमाण वाचक और रीति वाचक।

अ. स्थल वाचक – जिस क्रियाविशेषण के स्थान का बोध होता है, उसे स्थान वाचक कहते हैं। इसके दो भेद हैं – क. स्थिति वाचक, ख. दिशा वाचक।

क. स्थिति वाचक – आँगें, पाँछे, नैचैं, बायरे, भीतरें, पास, देर, नजीक (नजदीक), ऐंगर, तरें, पछाऐं।

ख. दिशा वाचक – इतै, उतै, जाबाजू, कितै, दाएँ, बाएँ, ईतरफ, ऊँतरफ, इतइं, उतइं, उताऐं, नाएँ, अंते, माएँ, कुदाइं, उदाइं (उस ओर) आदि।

ब. काल वाचक – जिस क्रियाविशेषण शब्द से समय का बोध हो, उसे काल वाचक कहते हैं। जैसे – आज, कल, परों, आसौं, यानैं, सकारैं, सद अबै, जबै, कबै, तुरत (तुरंत), बार–बार, के बेरे, अंत लौं (अंततई), आज लौं (आज तक)।

स. परिमाण वाचक क्रियाविशेषण – जिस क्रियाविशेषण शब्द से परिमाण अथवा अनिश्चित संख्या का बोध होता है, उसे परिमाण वाचक कहते हैं। जैसे –

1. आधिक्य बोधक	–	भौत, खूब, भारी, निरौ।
2. न्यूनता बोधक	–	कछू, थोरो, जरा, हलको आदि।
3. पर्याप्तता बोधक	–	बरोबर, बस, ठीक, पूरो।
4. तुलना वाचक	–	उतनौ, कितनौ, बढ़कै, जादाँ, कम, तनक।
5. क्रम वाचक	–	धीरे–धीरे, तनक–तनक, थोरो–थोरो, जरा–जरा, भौत–भौत, तिल–तिल।

द. रीति वाचक – ऐसे क्रियाविशेषण शब्द जिसे प्रकार, निषेध निश्चय, अनिश्चय, कारण और अवधारणा का बोध होता है, उन्हें रीति वाचक क्रियाविशेषण कहते हैं। बुन्देली में रीति वाचक क्रिया विशेषणों की प्रकृति के अनुसार इसके सात भेद हैं –

1. प्रकार वाचक	–	आपइ आप, मनसैं, ध्यान सें, चटफट, फटफट, तड़ातड़ फटाफट, चट से, चटपट, ऐसइ, वैसइ, ऐसो, वैसो।

2. निश्चय वाचक – दरअसल, जरुर, सई, बेसक, अलबत्ता, पक्का।
3. अनिश्चय वाचक – स्यात् (शायद), कुजाने, काँसैं, जैसें, ऊसें आदि।
4. स्वीकृति वाचक – बरोबर, सच्चा, ठीक, हौ।
5. कारण वाचक – इंसै (इससे), ऐइसैं (इसी कारण), काये सैं (किस कारण)।
6. निषेध वाचक – नई (नहीं), ना, आँहाँ, मत, जिन आदि।
7. अवधारणा वाचक – तो बी (भी), कऊँ (कहुँ) आदि।

क्रियाविशेषण शब्द यद्यपि अव्यय है, अर्थात् उनके रूप, लिंग, वचन आदि के कारण विकार नहीं होता, परंतु जब ओकारान्त विशेषण शब्दों का प्रयोग क्रिया विशेषण के समान होता है, तब उनके रूप में लिंग, वचन आदि के कारण होता है, जैसे– जैसौ, जैसी, जैसे। उतनौ, उतने, उतनी। कितनौ, कितने, कितनी। जितनौ, जितने, जितनी। इत्तौ, इत्ते, इत्ती।

आगे कुछ ऐसे विशेषणों पर विचार किया जा रहा है, जिनके प्रयोग और अर्थ में कुछ विशेषता है।

बुन्देली के कुछ प्रमुख क्रियाविशेषण

1. तौ – यह निश्चय बतलाने वाला है, और इसका प्रयोग भी शब्द भेद के साथ हो सकता है, जैसे– मैं उतै तौ हों। अकल तौ सबकैं होत। तुम तौ आज चले गये ते। वो छोटो तौ है, पर चतुर है। बे पढ़त तौ हैं। हम खात तौ हैं।

2. ई – यह निश्चय के अर्थ में है और इसका प्रयोग किसी भी शब्दभेद के साथ हो सकता है। हिन्दी में यह 'ही' रूप में आता है, जैसे –

वे संजा तकई आहें	–	वे शाम तक ही आयेंगे।
बो आई चुकौ तौ	–	वह आ ही चुका था।
बा पासई हती	–	वो पास ही थी।

इसका प्रयोग शब्दों की आवृत्ति के बीच में भी होता है, जैसे –

पासइ पास	–	(पास ही पास)
जातई जात	–	(जाते ही जाते)
पढ़तई पढ़त	–	(पढ़ते ही पढ़ते)
करतई करत	–	(करते ही करते)
खातई खात	–	(खाते ही खाते)

इसका प्रयोग सर्वनामों के साथ निश्चयार्थ में होता है, जैसे– बेई, सबई, हमई, तुमई।

कहीं–कहीं 'ही' के संयोग द्वारा पूर्व शब्द के साथ ऐसा रूप होता है, जो बिलकुल बदल जाता है। जैसे– उसही–उसी, तबही–तबै, जबही–जबै, सबही–सबै।

3. कभी – कबहुँ, कभऊँ, उते कभउँ, नै जैयो, झूठ कबहुँ नै बोलिओ।

4. कबकौ – यह बहुत समय के अर्थ में आता है और इसके लिंग, वचन कर्ता के लिंग, वचन के अनुसार बदलते हैं, जैसे– मैं कबकौ रसता देख रऔ हों। बौ कबकौ टेरत है। मौड़ी कबकी टेरत। बे कबके आ गये।

5. कहूँ (कहीं) – यह अनिश्चित स्थान वाचक है, जैसे– डिबिया कहूँ धरी है (कउँ)। गैया कहूँ भग जैहे (कऊँ)। 'कहूँ' के स्थान पर 'कऊँ' का प्रयोग भी उच्चारण ध्वनि भेद के अनुसार किया जाता है– कभी–कभी कहूँ का प्रयोग 'अधिक' और 'कदाचित्' के अर्थ में भी होता है, जैसे– ओसें कहूँ जा अच्छी लगत। गैया सें कहूँ भैंसिया अच्छो दूध देत। तुम कहूँ, मजाक तो नइं कर रये।

पृथक वाक्यों में 'कहूँ' दो या अधिक बार के प्रयोग से विरोध का भाव सूचित होता है। जैसे– कहूँ धूप, कहूँ छाया।

कभी–कभी 'कहूँ' निश्चय के साथ विस्मय प्रकट करता है, जैसे– बैठे से कहूँ पैसा मिलत। पथरा से कहूँ पानी निकरत। रेता से कहूँ तेल निकरत।

6. काँ (कहाँ) – यह अनिश्चित स्थान वाचक है, जैसे– मंदर काँ है। तुम काँ गये ते। श्याम काँ रैत। जब 'काँ' का प्रयोग दो पृथक् वाक्यों में होता है, तब इससे 'भार के' अंतर का बोध होता है। जैसे काँ राजा भोज और काँ गंगुआ तेली। काँ राजा, काँ रंक।

7. काँ तक, काँ लौं – यह किस सीमा तक के अर्थ में आता है। जैसे– बौ काँ तक काम कर है। बा काँ तक सुन है। बौ हमसे काँ तक भगे। काँ लौ कये, ओकी समझ में नहीं आय।

8. जब – जब राजा आबै कौं भय, सब चुप हो गये।

9. इतै–उतै – इन दुहरे क्रियाविशेषणों से विचित्रता का बोध होता है। जैसे– इतै धरम को विचार, उतै धन को लालच। इतै अमीरी को रंग, उतै गरीबी को ढंग। इतै कुआँ, उतै खाई। इतै रंज, उतै खुशी।

10. ऐंसें ऊँसें – इसी प्रकार के अर्थ में 'ऐंसें' का प्रयोग होता है, पर इसका प्रयोग व्यर्थ या अकारण के अर्थ में होता है। जैसे– ऐंसें ही बैठ गये, ऐंसें ही करन लगे, ऊँसें तो उनसों बात लौं करने की फुरुसत नइ रेताइ। ऊँसें वैसे ही या उसी प्रकार के अर्थ में है, पर इसका प्रयोग भी व्यर्थ या अकारण के अर्थ में होता है। जैसे– जिन्दगी ऊँसें चली गई। बे ऊँसें आ गइं तीं।

11. आँगें, पीछें (पाछें), पास, दूर – ये और इनके समानार्थी क्रियाविशेषण शब्द स्थान वाचक और काल वाचक दोनों प्रकार से आते हैं, जैसे– स्थान वाचक – मोरो घर राम सैं आँगे है। कमला को घर हमाय घर के पीछें (पाछें) है। मैं ठाकुर साहब के पास रेत हों। खेत इतै से दूर है। काल वाचक–गोपाल, रामू से आँगे भव तो। बौ ओके पीछे आओ। राम नौमी पासइ है, (पासै)। दिबारी दूर है।

12. कबौ–कबौ (कभऊँ–कभऊँ) – अनिश्चय वाचक क्रियाविशेषण है, इनका प्रयोग स्वीकृति और निषेध, दोनों रूपों में होता है। जैसे– स्वीकृति – में कबौ आ जैहों। तुम कबौ–कबौ इतै निकर आओ करे। निषेध– उतै कबौं नें जाब करें।

13. कमै – इसका प्रयोग 'बहुत कम' के अर्थ में होता है, जैसे– तु इतै कमै आत हो। उतै कमै जाब करे, कमै लोग जुरे ते।

14. नैं, नहीं – 'नैं' का प्रयोग केवल निषेध के अर्थ में होता है। और–नहीं का प्रयोग निषेध की आवश्यकता के अर्थ में होता है। जैसे– में नैं कर हों। में नईं कर सकत।

15. जेंसें–तेंसें – इनका प्रयोग किसी न किसी प्रकार के अर्थ में होता है। जैसे– जेंसें–तेंसे इत्तो काम निपटालो। जेंसें–तेंसे ओखौं पौंचा दो। जेंसें–तेंसें बो काम खतम करौ। जेंसे–तेंसे चले अइयो।

16. भर – यह क्रियाविशेषण संज्ञा शब्दों के साथ प्रयुक्त होता है, तब विशेषण बन जाता है। जैसे – मुट्ठी भर अनाज, सेर भर दूद।

17. तक – इनका प्रयोग 'भी' के अर्थ में होता है। इसका प्रयोग व्यापकता के अर्थ में भी होता है। जैसे – ओको बाप तक आऔ तो (उसका बाप भी आया था)। व्यापकता – सागर से जबलपुर तक ओकौ नाम है।

18. काल परौं – कालवाचक क्रियाविशेषणों का प्रयोग भूत और भविष्य दोनों कालों में होता है। जैसे – बो काल आऔ हतो (भूतकाल)। बौ काल जैहे (भविष्यकाल)। बो परो आऔ तो (भूतकाल)। बौ परौ आहे (भविष्यकाल)।

19. तब–फिर – ये दोनों समानार्थी क्रियाविशेषण हैं, पर कभी–कभी इनका प्रयोग साथ–साथ भी देखा जाता है, जैसे – तब देखो जैहैं कि का करा जाय, तब की तब देखी गई, तब फिर दूसरों काम कर है। तब फिर सोंच है। तब फिर आहै।

संबंध सूचक

ऐसे अविकारी या अव्यय शब्द जो संज्ञा या सर्वनाम शब्दों का संबंध वाक्य के अन्य शब्दों से करते हैं, उन्हें संबंध सूचक कहते हैं। जैसे– पानू के बिना जी धारी जी नईं सकत। बौ शहर तक पौंच गओ तो। बा शादी में रात भर काम करत रई।

उपर्युक्त उदाहरणों में बिना, तक, भर संबंध–सूचक अव्यय हैं। 'बिना' अव्यय सूचक शब्द का संबंध 'जी नइं सकत' क्रिया से, 'तक' अव्यय शब्द का संबंध 'पोंच गऔ तो' क्रिया से, 'भर' अव्यय शब्द का संबंध 'करत रइ' क्रिया से है। व्युत्पत्ति के अनुसार संबंध सूचक अव्यय के दो भेद माने जाते हैं – मूल और यौगिक।

मूल – जो अव्यय शब्द स्वतंत्र रूप से अव्यय सूचक होते हैं, अर्थात् जो किसी अन्य शब्दभेद अथवा शब्दांश से नहीं बनते, उन्हें 'मूल संबंध सूचक' कहते हैं। जैसे – हमाय बिना, ऊकौ काउ काम नैं हो सकत। रमा घाँइं तुमसे, पढ़बौ नैं बनत। हम तुमाये घाँइं नैं हो सकत। गोपाल हरिया घाँइं नैं हो सकत। घाँई – जैसे की तरह।

यौगिक – वे संबंध सूचक शब्द जो दूसरे शब्दभेदों से बनते हैं, यौगिक कहलाते हैं। जब हमाओ मन नईयाँ तब बेर–बेर काये खौ कै रई। जैसे– संज्ञा से – नाम, पलटे, और लेखे, और बदले आदि। विशेषण से – जाग, सरीखै, समान, ऐसौ, बरोबर, सौ जैसो आदि। क्रिया विशेषण – बायरे, भीतरे, ऊपरें, नैचें, पीछे, आगें, बाहर, लौने, मारै। क्रिया से – और जानैं आदि।

प्रयोगानुसार संबंध सूचक अव्यय के दो भेद हो सकते हैं, जैसे – सम्बद्ध और अनुबद्ध।

सम्बद्ध सूचक अव्यय – ये वे हैं जो करण की विभक्तियों के आगे आते हैं। जैसे– खाना बनबे के पैलें आउनै है। बुंदेली में सम्बद्ध सूचक अव्यय संबंधी निम्नांकित बातें उल्लेखनीय हैं –

1. आँगे, पाँछे, तरैं और बिना आदि सम्बद्ध सूचक अव्यय कभी–कभी विभक्ति के बिना भी प्रयुक्त होते हैं। जैसे– धन बिना। पीठ पाँछें। आँखन आँगें। पाँब तरैं आदि।

2. आँगूँ, आँगें, पाँछैं, बाहर, भीतर, ऊपर और नीचैं, नैंचे के पूर्व 'सैं' विभक्ति भी आती है। जैसे– छत सैं नैचैं। तुमसै आँगूँ। तुमसैं पैलैं।

3. मारैं, बिना और सिवाय यद्यपि सम्बद्ध सूचक अव्यय हैं, पर इनका प्रयोग कभी–कभी विभक्ति युक्त संज्ञा या सर्वनाम शब्द के पूर्व किया जाता है। जैसे– मारैं गर्मी के उबले जात, सिबाय मौड़ी के सब आयते। बिना धन के बेपार कैसे होत।

4. 'बिना' और पाँछे भूतकालिक कृदन्त के विकृत रूप के आगे विभक्ति के बिना भी आते हैं। जैसे– पैसों बिना काम नैं चल है। बुरय करम करबे खों तो कर लो, पाँछे पछताउने परत।

5. तरफ और नाँइं, तराँ और बदौलत के पहले 'की' अथवा 'री' विभक्ति आती है। जैसे– दुश्मन की नाँइं दुश्मन घाँइं। प्रेम की बदौलत आदमी जा चाहे सो करबा लय। श्याम की तरफ (तरपे)। राम की ओर।

6. जोग और लाक (लायक) क्रियार्थक संज्ञा के विकृत रूप के आगे बिना विभक्ति के प्रयुक्त होते हैं, जैसे– जो कपड़ा पैरबे जोग है। जा रोटी खाबे लाक है। जो पानी नहाबे जोग है।

7. सम्बद्ध सूचकों के पहले प्रायः 'के' अथवा 'रे' का प्रयोग होता है। इनका प्रयोग पुल्लिंग के समान होता हैं। जैसे – तुमाये पैलैं। कमाबे के लानै। प्यास के मारैं। तुमाये बिना।

ब. अनुबद्ध – संबंध सूचक शब्द उनको कहते हैं, जो संज्ञा शब्दों के विकृत रूपों के साथ आते हैं। जैसे – कुटुम्बी जनों समेत, खेतों तक।

ध्यान देने योग्य

नें, औं, सैं, कौ, की और में भी अनुबद्ध संबंध सूचक के समान ही प्रयुक्त होते हैं, परन्तु संस्कृत के विभक्ति प्रत्ययों के अपभ्रंश होने से हिन्दी के समान बुन्देली में भी ये प्रत्यय ही होते हैं। साथ ही अर्थहीन होने के कारण ये स्वतंत्र शब्द नहीं कहला सकते, क्योंकि स्वतंत्र शब्द सार्थक होते हैं।

बुन्देली में कुछ ऐसे सम्बद्ध सूचक अव्यय हैं, जिनसे स्थान, काल, दिशा, हेतु, साधन विनिमय आदि का अर्थ निकलता है, ये कुल तेरह सम्बद्ध सूचक हैं –

1. काल वाचक	आँगैं, पीछैं, पाँछें, बाद लगभग।
2. स्थान वाचक	नैचें, ऊपर, ढिगाँ, लिगाँ, तरैं, बायरे, भीतरे, सामने, पाँछे, बसर, दूर।

3. दिशा वाचक	ओर, तरफ, पार, आर–पार, आस–पास, सामने, बाजू।
4. साधन वाचक	मारफत, सहारैं जरिये आदि।
5. हेतु वाचक	सबब, लानै, खातर, कारन, मौरें, आदि।
6. विषय वाचक	बिसै, बाबत्, लेखैं, जान, मद्धैं और भरोसे आदि।
7. व्यतिरेक या भिन्नता	बिना, सिवाय, बगैर, अकेलें।
8. विनिमय वाचक	पालटैं, बदलैं, जागाँ, विरध आदि।
9. सादृश्य वाचक	तराँ, नाईं, बिरोबर, जोग, सरीखौ, सौ जैसौ, ऐसौ, घाँई, समान आदि।
10. विरोध वाचक	खिलाप, उलटौ, विरध आदि।
11. सहचर वाचक	संगे, साथ, संगसाथ, बस और अधीन, समेत, संगसंग।
12. संग्रह वाचक	भर, तक, लौ आदि।
13. तुलना वाचक	आँगें, सामने, मुकाबलैं आदि।

संबंध सूचक अव्यय के विषय में विशेष प्रयोग और अर्थ विषयक कुछ विशेषताएँ मिलती हैं, जो इस प्रकार हैं –

1. अ – आगें, आँगूं, अँगारे, अँगारीं – यह संबंध सूचक अव्यय काल–वाचक और स्थान–वाचक दोनों रूपों में प्रयुक्त होता है। जैसे – स्थान–वाचक – मोरे खेत के आँगें ओके घर के पीछें। काल–वाचक – दिबारी के पैलें सफाई होने है। चार दिनों में ब्याब होने है।

ब. आँगें और इसके उक्त रूपों का प्रयोग तुलना में भी किया जाता है। जैसे – बो तो हमारे पीछेईं पर गओ। बो तौ पैसों के पीछें पगलया गओ। ऊ की ताकत के आँगें कोऊ नइं ठेरत।

स. उपस्थिति में – कारे के आँगे दिया नईं जरत, भैंस के आगें बीन बजाव और भैंस डरी पगराय।

2. अ – पीछें, पाँछें, पिछवारें, पिछारें, पिछारी – इस संबंध सूचक का प्रयोग स्थान और काल दोनों के अर्थ में होता है। स्थान–वाचक– राम के घर के पीछै (पिछवाड़ैं) कुंआ है। काल–वाचक– दो घरी पाँछें/पीछें आ जैहो तो कछू अँधेर नैं हो जैहें, आगे–पाँछें कर डार है, जो काम।

ब. पीछें और उसके रूप पाँछें का प्रयोग प्रत्येक के अर्थ में भी किया जाता है, जैसे – घर पीछैं एक आदमी न्यौत लियो।

स. पीछें और उसके उक्त रूपों का प्रयोग विरोध अथवा पक्ष के अर्थ में भी होता है। जैसे– विरोध– बे हमाये पीछें पर गये, कि घर से भगा दो। पक्ष– बे आजादी के पीछें, प्रान निछाबर कर गइं।

3. भीतर – इस संबंध सूचक का प्रयोग स्थान और काल वाचक दोनों प्रकार से होता है, जैसे – स्थान–वाचक – गाँव के भीतर कोई बात नइं कर सकत। कालवाचक – एक घण्टे के भीतर जो करनें है।

4. भर–भर में – इसका प्रयोग भी स्थानवाचक और कालवाचक दोनों रूपों में होता है। जैसे– स्थान वाचक– शहर भरे में ढूड़त रये। काल वाचक– घरी भर चैन नईं मिलत, घण्टा भर के रस्ता देख रये। पल भर, पल भर में का से का हो गओ।

5. तक लौं – अ. इसका प्रयोग भी स्थान और काल दोनों के अर्थ में होता है। जैसे– स्थान–वाचक– बड़े पहार लों ओके खेत हैं। नदिया तक बगीचा बनबाने है। कालवाचक– हम दो महिना तक काम करत रये, आखिरी समय तक बो मौड़ा खौं याद करत रओ। बसकारे ऐषो काम कब लौं चल हैं। लौं तो काम होइ जेहे।

ब. कभी–कभी सामीप्य के अर्थ में इसका प्रयोग होता है, जैसे– उनकी का कानै, उनकी पौंच तो राजा तक है, उन लौ पौंच पावो सरल नईंयाँ। उन लौं का नईंयाँ।

स. इसका प्रयोग कभी–कभी संपूर्ण या अशेष भी होता है। जैसे– चोर सब लूट ले गये, फूटी कौड़ी तक नइं छोड़ी, सबई तो मिट गयो, खाने लौं नईं बचो।

6. ऊपर नैचैं – इनसे स्थान के अतिरिक्त– छुटाई, बड़ाई का भी अर्थ होता है। स्थान–वाचक – घर के ऊपर, घटिया के नैंचैं। छुटाइ–बड़ाइ – उतै सबके ऊपर एक साहब है, और ओके नैंचैं भौत आदमी काम करत।

7. पास – स्थान के अतिरिक्त समीपता और स्वामित्व सूचक भी है। जैसे– खेत के पास नदिया बहत है। बे राजा के पास गये ते। हमाये पास भौत अनाज है।

8. सिबाय – अतिशयता और निषेध दोनों के अर्थ में प्रयुक्त होता है। जैसे– संतान के सिबाय सेठ के पास सब सुख है। रामू के सिबाय जो काम कोई नै कर सके। सिबाय तुमाय जो काँच कोऊँ नईं तोड़ सकत।

9. सरीखौ – सरीखौ, जैसो और सौ, कैसो एक दूसरे के पर्यायवाची समता के अर्थ के द्योतक हैं। इनका प्रयोग करने में लिंग, वचन और विशेष्य के अनुसार ये बदल

जाता है और विभक्ति प्रायः नहीं आती। जैसे – श्यामलाल पागल सरीखे हो गये हैं। तुम सरीखी कुलीन नारी रबों जो शोभा नँ देत। ओकी बहू कैसीं लगत। गोपाल को शरीर तो पहार सो है, जैसो करम करहौं कैसो फल मिल हैं।

10. बिना – यह संबंध सूचक जब कृदन्तीय अव्यय के साथ आता है, तब क्रियाविशेषण हो जाता है। जैसे– बिना कोई बात को झगरा। बिना वजय हम उतै नइँ जा सकत।

समुच्चय बोधक

ऐसे अविकारी शब्द जो किसी शब्द, वाक्यांश अथवा वाक्य का संबंध दूसरे शब्द या वाक्यांश अथवा वाक्य से कराते हैं, उन्हें समुच्चय बोधक कहते हैं। जैसे– और, तौ, काये सैं, ईंसें (क्योंकि) और ईंसें (इसलिये) आदि। दो और दो चार होत हैं। हरिया और गुपाल खेत जोत हैं। फिर मैं खाना खा लैंहों। ईंसें कइ ती कै उतै नैं जइयो। वो मौड़ा ई साले पास नईं हो सकत काये कि ऊनें बिल्कुलई पड़ाई नईं करी। समुच्चय बोधक अव्यय के प्रकार– इनके मुख्य दो भेद हैं – समानाधिकरण और व्याधिकरण।

समानाधिकरण समुच्चय बोधक

ऐसे समुच्चय बोधक अव्यय जो मुख्य वाक्यों को जोड़ते हैं, उन्हें समानाधिकरण समुच्चय बोधक कहते हैं। ये चार प्रकार के होते हैं – संयोजक, विभाजक, विरोध दर्शक और परिणाम दर्शक।

अ. संयोजक – ऐसे समानाधिकरण समुच्चय बोधक शब्द जो दो अथवा दो से अधिक मुख्य वाक्यों का संग्रह करते हैं, उन्हें संयोजक बोधक कहते हैं। बुन्देली में केवल 'और' तथा 'फिर' का ही प्रयोग होता हैं। तथा, अथवा एवं आदि का नहीं। जैसे – गुपाल के इतै चार मानी की खेती और दो मकान हैं। पैलें काम निपटाओ, फिर खाना खाओ। ऊनें फिर ऊधम मचाओं।

ध्यान देने योग्य – समुच्चय बोधक और का प्रयोग –
क. दो क्रियाओं की समकालीन घटना।

जैसे – बौ घर सैं निकरो और ऊनैं गारी दईं।
तनकई देर हो गई, तुमाओ आवौ भव और ऊको जावौ।
हमने ऊखौ कछू कई और बा रोई।

ख. दो विषयों के नित्य संबंध।

चिंता नैं करो, अब तुम हो और हम हैं।
अब तो खुस हो जाओ और बहू को मोंचायना करो।

ग. तिरस्कार अथवा धमकी के अर्थ में होता है।

मोरे खेत में पाँव धरो, तो फिर तुम हौं और मैं हौं।
तुम फिर से ईं गली में दिखाई दय और हमने तुमाई धुनाईं करी।

शब्दों के मध्य और संयोजक का बहुधा लोप हो जाता है और तब वे द्वन्द समास के रूप में मिल जाते हैं। जैसे – तुम खौं अच्छे बुरय की परख आज लौं नैं भई। सुख–सुख दैबे बारौ भगवान है। अब मोहन बूड़ौं हो गओ, ऊके हाँत–पाँव नइ चलत।

ब. विभाजक – ऐसे समुच्चय बोधक शब्द जो किसी एक का ग्रहण या दोनों का त्याग सूचित करते हैं, उसे विभाजक कहते हैं। जैसे–

कै	कै राम, कै श्याम कोउ चलौ जैहैं।
या	आज या काल हम उतै चले जैहैं।
चाए	आओ चाए नैं आओ हमें का करने।
ना	ना बौ काम करन दें, ना खुद करहै।
नइं सोऊ	बदमास नइं, चोर सोऊ है, तुम सोऊ परीं ओंकी बातन में।
नातर, नइं–तर	तनक जल्दी करौ नइं तर (नातर) गाड़ी छूट जैहे।
का	का बारे का बूढ़े सबइ दुःखी हैं।
नैं	नैं नौमन तेल हुइये, नैं राधा नच हैं।
	मैं कोनऊ की सुनें, नैं कोनऊ को आदर करे बस मन को करत।

स. विरोध दर्शक– जिन समुच्चय बोधक शब्दों से द्वितीय कथन से पहले कथन का विरोध प्रकट होता है, वे विरोध दर्शक समानाधिकरण समुच्चय बोधक कहे जाते हैं।

पै – अबलौ हम सबरो काम निपटा लेते, पै तुमाय भरोसे रये आये।
बौ पढ़ने में हुसियार हैं, पै मेनत नईं करत।

हिन्दी में विरोध दर्शक शब्दों में परन्तु, किन्तु, वरन्, लेकिन का प्रयोग होता है, परन्तु बुन्देली में केवल 'पै' का प्रयोग होता है।

द. परिणाम दर्शक

ऐसे समुच्चय बोधक शब्द जिनसे यह सूचित होता है कि आगे के वाक्य का अर्थ पिछले वाक्य के अर्थ का फल है, उसे परिणाम दर्शक कहते हैं। जैसे –

ईसें – हरिया ने खेती के संगे खूब मैनत करी, ईसें फसल अच्छी भइ।
बौ टेशन देर सें पौंचो ईसें गाड़ी निकर गई।

ऐसैं – बौ बीमार हतो ऐसैं जादा चल नइं पाओ।
गुपाल सीदो पर गव ऐसै सब ऊंखों दवाऊत।

सो – नदिया चढ़ गइ, सो हम ओइ पार ठैर गयेते।
घर–घर जाके चंदा माँगो, सो पैसा जादाँ मिलगव,
अब गनेश जी की बड़्डी मूर्ति आ जैहैं।

2. व्याधिकरण समुच्चय बोधक

ऐसे समुच्चय बोधक अव्यय शब्द जिनसे मुख्य वाक्य में एक अथवा एक से अधिक आश्रित वाक्य जोड़ते हैं, उन्हें 'व्याधिकरण समुच्चय बोधक' कहते हैं। इनके चार प्रकार होते हैं– कारण वाचके, उद्देश्य वाचक, संकेत वाचक और स्वरूप वाचक।

अ. कारण वाचक – ऐसे व्याधिकरण समुच्चय बोधक शब्द जिनसे पूर्व वाक्यों के अर्थ एवं कारण उत्तर वाक्य के अर्थ से जाना जाये, उन्हें 'कारणवाचक समुच्चय बोधक' कहते हैं।

बुन्देली 'कैं' 'कायसैं' और कभी–कभी 'कि' का प्रयोग इसी रूप में होता है। जैसे –

कै – हमनैं ओखों उतै जावे ऐसें मना करो तो कै, झगरा नै हो जाये।

काय सैं – मैं उनके इतै नैं जैहों, काय सैं उनसे हमाइ लराइ है। मैं उनके इतें नैं जैहों, कायें सैं तुमने उतै जाबै मना करी है।

कि – बौ इतै ऐसैं आओ है, कि ओको इतै न्यौतो है।

ब. उद्देश्य वाचक – ऐसे व्याधिकरण समुच्चय बोधक शब्द जिसके पीछे आने वाला शब्द दूसरे वाक्य का उद्देश्य बतलाता है, उन्हें उद्देश्य वाचक अव्यय कहते हैं।

बुन्देली में कै, जो और ईसैं मुख्य समुच्चय बोधक शब्द हैं। जैसे –

कै – श्याम कों बजार भेजो तो कै, सामान खरीद ल्या है।

जो – कैसो काम करें जो इतनइँ पैसों में ब्याब हो जाये।

ईसैं – हमने ओके संगे मौड़ा पौंचा दव, ईसैं कि बो रसता नै भूल जाय।

ध्यान देने योग्य

1. 'जो' के स्थान पर 'जी सैं' का भी प्रयोग होता है। जैसे– हमने घर बड़ौ बनबा लओ है, जी सैं सब जनें संगे रे सकें। जो झगरा आजई निपटा दव जी सैं बाद मैं बात नैं बढ़े।

2. जब उद्देश्य वाचक वाक्य के पहले आता है, तब उसके साथ समुच्चय बोधक अव्यय नहीं रहता, परन्तु मुख्य वाक्य 'ईसैं' से आरम्भ होता है। जैसे– तुम सो रये ते, ईसैं तुमें उठाब नैं हतो। तुम काम मैं लगे हते, ईसैं हम बाहर दूर बैठे रये।

स. संकेत वाचक – ऐसे व्याधिकरण वाचक समुच्चय बोधक अव्यय जिनसे पूर्व वाक्य में वर्णित घटना उत्तर वाक्य की घटना का संकेत मिले, उन्हें 'संकेत' वाचक समुच्चय बोधक अव्यय कहते हैं। इनमैं जो, तौ, चाये, पै, तौऊ का प्रयोग एक क्रम में दोनों वाक्यों के पूर्व होता है। जैसे –

जौ–तौ – जौ उनके पास बुद्धि नैं होती, तौ पढ़ते कैसैं।
जो–तो – जो करतूत लाक होतौ, तो कुजानें का करतो।
तौऊ (तोऊ) – जो तुम जोर लगै हौं, तौऊ हम जा बात नै कर हैं।
चाये–पै – चाये कित्तई कै डारियों पै बौ बेसरम काम नैं कर है। तुम चाये कित्तनई जोर लगा लइयो, पै बो काम नइँ बन सकत।

ध्यान देने योग्य

1. 'जो' कभी–कभी 'जब' के अर्थ में आता है। जैसे– जो उनखौं खुद सुध नइयाँ, सो अब सुध कराबै से का फायदो।

2. 'चाय' बहुधा संबंध वाचक सर्वनाम, विशेषण या क्रिया विशेषण के साथ आकर उनकी विशेषता बतलाता है, और प्रयोग के अनुसार बहुधा क्रिया विशेषण हो जाता है,

जैसे– (क) तुम अबै चाय जित्तो ऊधम कर लेओ, पै पड़ाइ में तुमाओ ऊधम नैं चल है। (ख) चाय जित्तै पाँवनैं आ जाँयें, मोय कछू चिंता नइंयाँ। (ग) चाय जित्ती अच्छी सूरत सकल रइ आये, पै मीठी बोली के बिना सब बेकार है।

3. कभी–कभी दुहरे प्रयोग संकेत वाचक समुच्चय बोधक अव्ययों में से किसी एक का लोप हो जाता है। जैसे– कोऊ लाख उपाय करै, पै भाग बिना संपत नईं मिलत। कोऊ तलासी लेतौ, तो चोरी को माल ऊ बनिया के घरै मिल जातो।

द. स्वरूप वाचक – ऐसे व्याधिकरण समुच्चय बोधक अव्यय जिसके द्वारा जुड़े हुए शब्दों या वाक्यों में से पहले शब्द या वाक्य का स्वरूप (स्पष्टीकरण) पिछले वाक्य या शब्द से सूचित होता है, उन्हें 'स्वरूप वाचक' कहते हैं। जैसे– कै, मानो, जैसैं।

1. 'कै' का प्रयोग स्वरूप सूचक समुच्चय बोधक की रीति पर प्रारंभ या प्रस्तावना सूचित करने में होता है। जैसे – पंडतजी महराज बोले कै अब कथा आरम्भ होत है। बात जा है, कै ऊ आदमी भरोसो करबै लाक नइँयाँ।

2. जब आश्रित वाक्य मुख्य वाक्य के पूर्व प्रयुक्त होता है, तब 'कै' का लोप हो जाता है।

ध्वनि समूह एवं विशेषताएँ

विचारों की अभिव्यक्ति का सर्वाधिक सशक्त माध्यम भाषा है, जिसकी परिणति दो रूपों में होती है –

1. बोलकर (ध्वन्यात्मक रूप) 2. लिखकर (अंकित रूप)।

बोलकर – ध्वनियों के संयोग से भाषा का निर्माण होता है, जिसका उपयोग समक्ष्त अथवा प्रत्यक्ष वार्तालाप अथवा विचार विनिमय हेतु किया जाता है। इस स्थिति को भाषा का श्रव्य रूप भी कहा जा सकता है।

लिखकर – भाषा का ध्वन्यात्मक रूप जब किन्हीं चिह्न विशेषों को धारण कर लेता है, तो वह अक्षर और वर्ण कहलाने लगते हैं, जो कि लिपि के आधार हैं। इस प्रकार की भाषायी स्थिति लिखित, अंकित अथवा चिंह्नित कही जा सकती है।

मूल ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए 'अकार' वह स्वर विशेष है जो गले से एक विशेष प्रकार से बोलते समय निकलता है। लिखित भाषा में उसे व्यक्त करने के लिए 'अ' चिह्न कल्पित किया जाता है। यह 'अ' वर्ण अथवा अक्षर कहलाता है। अक्षरों के मिलने से शब्द बनते हैं। जैसे 'राम' शब्द में 'रा' और 'म' का मिलन है।

यथार्थ में शब्द ध्वनियों का वह सबसे छोटा संग्रह है, जिसका एक निश्चित अर्थ

होता है और जिससे कहने वाला, सुनने वाला, लिखने वाला या पढ़ने वाला निश्चित अर्थ या भाव रखता या समझता है।

विभिन्न शब्दों (पदों) के संयोग से वाक्य बनता है। जैसे (मंत्री गओ) में मंत्री और गओ इन दो शब्दों का संयोग है। वाक्य से एक विचार प्रकट होता है। तब तक विचार पूरा नहीं होता, जब तक किसी के विषय में कुछ कहा न जाये। उस शब्द या पद समूह से वाक्य नहीं बनता, जिससे एक पूरा विचार–प्रकट नहीं होता। जैसे– मीठी जामुन, करिया गइया, तुम अपने घर सें। इन तीनों उदाहरणों में एक–एक विचार प्रकट नहीं होता, इससे ये वाक्य नहीं कहलाते।

भाषा में अनेक वाक्य समूहों का योग रहता है, जो अनेक विचारों को कार्य कारण सहित व्यक्त करते हैं। भाषा में स्थिरता और नियंत्रण हेतु व्याकरण रची जाती है। इस प्रकार भाषा नियम विरूद्ध नहीं होती है। व्याकरण में भाषा रचना, शब्द व्युत्पत्ति और उनके शुद्ध प्रयोग का निर्णय होता है, जिनके उचित ज्ञान से हम भाषा के शुद्ध रूप से परिचित होते हैं। मातृ–भाषा के अतिरिक्त अन्य भाषा को सीखने में उस भाषा की व्याकरण से सहायता मिलती है।

व्याकरण में भाषा का विवेचन किया जाता है, जिसमें वाक्यों का समूह होता है। वाक्य शब्द से बनते हैं और शब्द वर्णों से बनाये जाते हैं। इसलिए व्याकरण में सर्वप्रथम वर्ण–विचार, शब्द साधन और वाक्य– विन्यास को महत्त्व दिया जाता है।

वर्ण–विचार

वर्ण–विचार में वर्णों के आकार, उच्चारण और उनके संयोग से शब्द बनाने का विधान होता है। वर्ण शब्द का वह अंश है, जो विभाजित नहीं होता और मूल ध्वनि को व्यक्त करने के लिए वह आवश्यक है।

जैसे – इ, अ, क, म, ब।

'कमल' शब्द में साधारण रूप से तीन ध्वनियाँ हैं – क, म, ल। परन्तु इनके खण्ड हो सकते हैं, इससे ये मूल ध्वनियाँ नहीं हैं। मूल ध्वनियाँ वर्ण या अक्षर कहलाती हैं। वर्णों का समूह वर्णमाला कहलाता है। वर्णमाला में दो प्रकार के वर्ण होते हैं– स्वर और व्यंजन।

स्वर – वे ध्वनियाँ है, जिनको स्वतंत्रता से उच्चरित कर सकते हैं। ये व्यंजनों के उच्चारण में सहायक होती हैं। जैसे– अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ और औ। हिन्दी में 'ऋ' का उच्चारण है, पर बुन्देली के प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों और पत्रों में 'ऋ' के

स्थान पर 'रि' ही लिखा मिलता है। इसी प्रकार 'पालि' और 'प्राकृत' में भी 'ऋ' का लोप हुआ है।

व्यंजन – उन्हें कहते हैं, जिनके उच्चारण में स्वर की सहायता अपेक्षित है जैसे– क, म, ल। खड़ी बोली हिन्दी के समान ही बुन्देली भी देवनागरी वर्णमाला में लिखी जाती है। ध्यान देने की बात यह है कि देवनागरी के 'अनुस्वार' और 'विसर्ग' बुन्देली में नहीं मिलते हैं। बुन्देली में कहीं–कहीं अनुस्वरों का प्रयोग तो होता है, पर विसर्ग का प्रयोग नहीं मिलता। केवल तत्सम शब्दों में विसर्ग या अस्तित्व संधि के अनुसार परिवर्तित रूप में मिलता है। जैसे – निरबल, निरधन, निराधार आदि में 'नि' के विसर्ग का रकार में परिवर्तित रूप पाया जाता है।

देवनागरी वर्णमाला के श, ष, स, क्ष, त्र और ज्ञ वर्णों का प्रयोग बुन्देली में परिनिष्ठित साहित्यिक हिन्दी से भिन्न रूप में होता है। तालव्य और मूर्धन्य श्, ष् का प्रयोग दन्त्य स् के रूप में होता है। जैसे– ऋषि–रिसी, वर्षा–बरसा, शनि–सनि, 'क्ष' विशेषतया 'छ' में 'त्र' तर में 'ज्ञ' ग्याँ में बदल जाता है – छीर (क्षीर), मंतर (मंत्र), ग्याँन (ज्ञान) में है।

बुन्देली में प्रयुक्त संपूर्ण वर्णमाला इस प्रकार है –

स्वर

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ

ा, ि, ी, ु, ू, े, ै, ो, ौ

व्यंजन

1. क, ख, ग, घ, ङ	2. च, छ, ज, झ, ञ
3. ट, ठ, ड, ढ, ण	4. त, थ, द, ध, न
5. प, फ, ब, भ, म	6. य, र, ल, व, स, ह
अनुस्वार – ं	अनुनासिक – ँ

वर्णों के उच्चारण स्थान

वर्णों के उच्चारण स्थान को समझने के लिये संस्कृत व्याकरण को ही आधार

बनाया है। अतः 'मुख के जिस भाग से जिस वर्ण का उच्चारण होता है, उसे उन वर्णों का उच्चारण स्थान कहा जाता है।'

1. गले से बोले जाने वाले – 'अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः'[1]

अ, आ, क, ख, ग, घ, ड़ और ह ये सभी कण्ठ से बोले जाते हैं, इन्हें 'कण्ठ्य' भी कहा जाता है।

2. तालु से बोले जाने वाले – 'इचुयशानां तालु'[2]

इ, ई, च, छ, ज, झ, ञ, ये सभी वर्ण तालू पर जीभ लगने से बोले जाते हैं। इसी से इन्हें 'तालव्य' भी कहा जाता है। बुन्देली में तालव्य 'श' का प्रयोग नहीं होता है।

3. मूर्धा से बोले जाने वाले – 'ऋटुरषाणां मूर्धा'[3]

ट, ठ, ड, ढ, ण और र मूर्धा (तालू के ऊपरी हिस्से) पर जीभ लगने से बोले जाते हैं, इससे इन्हें 'मूर्धन्य' भी कहा जाता है। बुन्देली में मूर्धन्य स्वर ऋ और ष का प्रयोग नहीं होता है।

4. दाँतों पर जीभ के आघात से बोले जाने वाले – 'लृतुलसानां दन्ताः'[4]

त, थ, द, ध, न, ल और स। ऊपर के दाँतों से जीभ लगने से उच्चरित होते हैं। इससे इन्हें 'दन्त्य' भी कहा जाता है।

5. ओष्ठ से बोले जाने वाले – 'उपुपध्मानीयानां ओष्ठौ'[5]

उ, ऊ, प, फ, ब, म और भ दोनों ओठों के संयोग से बोले जाते हैं। इसी कारण इन्हें 'ओष्ठ्य' भी कहा जाता है।

6. नासिका या नाक से बोले जाने वाले – 'ञमङणनानां नासिका च'[6]

ङ्, ण्, न् और म् तथा अनुस्वार मुख और नासिका से बोले जाते हैं। इन्हें 'अनुनासिक' कहते हैं।

7. गला और तालु से बोले जाने वाले – 'एदैतो कंठतालू'[7]

ए, ऐ कण्ठ और तालु से बोले जाते हैं, इससे इन्हें 'कण्ठतालव्य' भी कहा जाता है।

8. गला एवं ओष्ठ से बोले जाने वाले – 'ओदौतो कण्ठोष्ठ्म'[8]

ओ और औ कण्ठ और ओंठों से बोले जाते हैं। इन्हें 'कण्ठोष्ठ्यम्' कहा जाता है।

9. दाँत एवं ओष्ठ से बोले जाने वाले – 'वकारस्यदन्तोष्ठ्यम्'[9]

'व' दन्तोष्ठ्य' है, क्योंकि इसके उच्चारण में दाँतों और ओठों का संयोग होता है। इसका प्रयोग बुन्देली में नहीं है। इसके स्थान पर 'ब' का प्रयोग किया जाता है।

वर्ण उच्चारण के प्रयत्न

वर्णों के उच्चारण के प्रयत्नों को (अभ्यन्तर एवं वाह्य रूप में) वाक् इन्द्रिय की क्रिया को ध्यान में रखकर दो प्रकार का माना गया है। यथा – आभ्यंतर और बाह्य।

(अ) आभ्यंतर प्रयत्न

ध्वनि उत्पन्न होने के पूर्व वागिन्द्रिय की क्रिया को आभ्यंतर प्रयत्न कहते हैं। आभ्यंतर प्रयत्न के अनुसार वर्ण चार प्रकार के होते हैं। 1. विवृत (विस्तृत खुला हुआ)। 2. ईषत् विवृत (किंचित् खुला हुआ) 3. स्पष्ट (संकुचित बंद) और 4. ईषत् स्पृष्ट (किंचित संकुचित)।

1. विवृत – वे वर्ण हैं, जिनके उच्चारण में वाक् इन्द्रिय खुली रहती हैं। विवृत वर्णों का विवृत प्रयत्न होता है, जैसे – अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, औ।

2. ईषत् विवृत – वे वर्ण कहलाते हैं, जिनके उच्चारण में वाक्–इन्द्रिय किंचित खुली रहती है। इन्हें अन्तस्थ भी कहते हैं, जैसे– य, र, ल।

3. स्पृष्ट – वे वर्ण कहलाते हैं, जिन वर्णों के उच्चारण में वाक्इन्द्रिय का द्वार संकुचित रहता है। 'क' वर्ग आदि पाँचों वर्गों के पच्चीस व्यंजन वर्ण स्पृष्ट कहलाते हैं।

4. ईषत् स्पृष्ट –वे वर्ण कहलाते हैं, जिन वर्णों का उच्चारण वाक् इन्द्रिय के कुछ बंद रहने पर ही होता है। इनके उच्चारण में एक प्रकार का घर्षण होने के कारण ये ऊष्म कहलाते हैं। बुन्देली में 'स' और 'ट' ऊष्म वर्ण हैं।

(ब) बाह्य प्रयत्न

ध्वनि उत्पन्न होने की समापन क्रिया को बाह्य प्रयत्न कहते हैं। बाह्य प्रयत्न के आधार पर वर्णों के दो भेद माने गये हैं – घोष और अघोष।

1. घोष – वर्णों के उच्चारण में नाद का प्रयोग होता है। पाँचों वर्गों के तृतीय और चतुर्थ वर्ण अनुनासिक वर्ण तथा अन्तस्थ वर्णों और स्वरों को घोष कहते हैं जैसे – ग, घ, ज, झ, ट, ठ, ड, ढ, द, ध, ब, भ, ङ, ञ, ण, न, म, य, र, ल, व, अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ।

2. अघोष वर्ण – वर्णों के उच्चारण में केवल श्वास का उपयोग होता है। 'क' वर्ग आदि पाँचों वर्गों के पहले और दूसरे वर्ण तथा 'स' और 'ह' अघोष कहलाते हैं। जैसे – क, ख, च, छ, ट, ठ, त, थ, प, फ, स और ह।

बाह्य प्रयत्न के आधार पर वर्णों के दो भेद माने गये हैं – अल्पप्राण और महाप्राण।

जिन वर्णों के उच्चारण में टकार की ध्वनि विशेष रूप से सुनायी पड़ती है, उन्हें 'महाप्राण' कहते हैं। शेष वर्णों को 'अल्पप्राण' कहा जाता है। प्रत्येक वर्ण के दूसरे और चौथे वर्ण को तथा ऊष्म को महाप्राण कहते हैं। प्रत्येक वर्ण के पहले, तीसरे तथा पाँचवें वर्ण तथा अन्तस्थ को अल्पप्राण कहते हैं। जैसे–

महाप्राण	**अल्पप्राण**
ख, घ	क, ग, ङ
छ, झ	च, ज, ञ
ठ, ढ	ट, ड, ण
थ, ध	त, द, न
फ, भ	प, ब, म
स, ह	य, र, ल, व

ध्यान देने की बात है कि संपूर्ण स्वर अल्पप्राण हैं। महाप्राणों में अल्पप्राणों की अपेक्षा प्राणवायु का उपयोग अधिक श्रमपूर्वक करना पड़ता है। महाप्राण वर्णों से ख, झ, ठ, घ, फ के उच्चारण में उनके पूर्ववर्ती वर्ग – वर्ण के साथ हकार की ध्वनि मिली हुई है। जैसे – ख (क+ह), झ (ज+ह), घ (ग+ह), फ (प+ह)।

1. मूर्धन्य – उच्चारण निम्नलिखित स्थानों में होते हैं– (अ) शब्द के आदि में जैसे– डमरु, डोरा। (ब) द्वित्व में जैसे – लट्ठा, गिट्टी। (स) हृस्व स्वर के पश्चात् अनुनासिक व्यंजन के संयोग में जैसे – डंड, डाँट।

2. स्पृष्ट – उच्चारण जिह्वा का अग्र भाग उल्टाकर उसे मूर्धा में लगाने से होता है। द्विस्पृष्ट उच्चारण प्रायः निम्नलिखित स्थानों में होता है– (अ) शब्द के मध्य में या अंत में जैसे– गड़रा, हटबो, भड़क। (ब) दीर्घ स्वर के पश्चात् अनुनासिक व्यंजन के संयोग से दोनों उच्चारण विकल्प से होते हैं, जैसे– मूड़नों, साँठ, गाँठ।

वर्ण भेद

वर्ण दो प्रकार के होते हैं– स्वर और व्यंजन। इनमें से प्रत्येक के मुख्य विभाग निम्नलिखित हैं –

स्वर–भेद –उत्पत्ति के अनुसार स्वरों के दो प्रकार माने जाते हैं– मूल स्वर और संधि स्वर।

1. मूल स्वर – मूल स्वर वे हैं, जिनकी उत्पत्ति अन्य स्वरों के मेल से नहीं होती, जैसे – अ, ई, ऊ

2. संधि स्वर – संधि स्वर वे हैं, जिनकी उत्पत्ति दूसरे स्वरों के मेल से होती है। ये दो प्रकार के है – दीर्घ स्वर और संयुक्त स्वर।

दीर्घ स्वर –वे हैं जिनकी उत्पत्ति उसी वर्ण में उसी वर्ण की ध्वनि के मेल से होती हैं। बुन्देली में ये मूल स्वरों के समान तीन हैं– आ, ई, ऊ।

संयुक्त स्वर – वे हैं, जिनकी उत्पत्ति भिन्न स्वर के मेल से होती है। ये चार हैं– ए (अ+ई), औ (अ–उ), ऐ (अ+ए) और (अ+ऊ।

(अ) 'ए' और 'औ' के 'अई' और 'अउ' लिखित रूप में भी मिलते हैं।

(ब) हृस्व, दीर्घ तथा संयुक्त स्वर पृथक्–पृथक् ध्वनियाँ हैं। जैसे– दिन और दीन। इनके कारा रूप में ही नहीं अपितु अर्थ में भी पर्याप्त अंतर आ जाता है। जैसे– पर (पंख) हृस्व स्वर, पार (दूसरा तट), दीर्घ स्वर और पौर संयुक्त स्वर। इसी प्रकार पेरबो (कष्ट पहुँचाना), पैरबो (तैरना या पहिनना) पौर (घर के सम्मुख का भाग), पोर (एक गाँठ से दूसरी गाँठ तक का गन्ने अथवा बाँस का भाग) संयुक्त स्वर में भी यही बात है। पता और पत्ता एवं गला और गल्ला में संयुक्त स्वर होने से रूप और अर्थ में पर्याप्त अंतर आ जाता है।

(स) बुन्देली में 'ए' और 'ऐ' के बीच में एक मध्य स्वर 'ऐं' की भी उपस्थिति है, जो बेल, बैठ और पैती उच्चारण भेद में स्पष्ट है। इसी प्रकार 'ओ' और 'औ' (अव) की भी ध्वनि है, जो कोलू, मौत जो के उच्चारणभेद में स्पष्ट है।

(द) इसके अतिरिक्त बुन्देली में प्रत्येक स्वर के अनुनासिक रूप प्राप्त होते हैं। अनुनासिक स्वर में ही लीन हुआ रहता है, उसकी अनुस्वार के समान पृथक् सत्ता नहीं

होती, और उसका उच्चारण स्वर के साथ ही संयुक्त स्वर में एक ही काल में हो जाता है। हृस्व स्वर में अनुनासिक हृस्व और दीर्घ स्वर में दीर्घ होगा। यहाँ उदाहरण सहित अनुनासिक स्वर दिये जा रहे हैं –

अँ	अँगोठा	ऊँ	ऊँट, ऊँगत, ऊँने
आँ	आँवरों	एँ	सेंदूर, में, सें, नें
इँ	इँन्ने, इँदयारो	ऐं	खैचँबों, बैचँबों
इँ	इँगुर	आँ	ओगन
उँ	उँगरिया	आँ	माँड़ा

व्यंजन भेद – व्यंजन तीन प्रकार के होते हैं – स्पर्श, ऊष्म और अन्तस्थ।

1. स्पर्श व्यंजन – वे हैं, जो कंठ और तालु आदि स्थान को छूकर बोले जाते हैं। देवनागरी वर्णमाला में 'क' 'स' 'म' तक पाँचों वर्ग के पच्चीस व्यंजन स्पर्श हैं। 'क' वर्ग 'च' वर्ग 'ट' वर्ग 'त' वर्ग और 'प' वर्ग कहलाते हैं। ये वर्ग उच्चारण स्थानों को ध्यान में रखकर कहे गये हैं।

संस्कृत की निम्नलिखित सूक्ति से स्पर्श व्यंजनों का स्वरूप अच्छी तरह स्पष्ट होता है– 'कादयोमावसानः स्पर्शाः'10 (क से प्रारंभ एवं म पर अंत होने वाले) स्पर्श व्यंजन इस प्रकार हैं–

1. क वर्ग – इस वर्ग के व्यंजनों ह एवं विसर्ग का उच्चारण कंठ से होता है।
2. च वर्ग – इस वर्ग के व्यंजनों य और श का उच्चारण तालु से होता है– इचुयशानां तालूः।
3. ट वर्ग – इस वर्ग के व्यंजनों ऋ, र और ष का उच्चारण स्थान मूर्धा है– ऋटुरषाणाम् मूर्धाः।
4. त वर्ग – इन व्यंजनों का उच्चारण दन्त की सहायता से किया जाता है– लृतुलसानां दन्ताः।
5. प वर्ग – इन व्यंजनों का उच्चारण औष्ठा की सहायता से किया जाता है– उपुपध्यामानीयानाम्औष्ठौ।

इस प्रकार विभिन्न वर्गों की तालिका निम्नलिखित क्रम में बनती है –

1. क वर्ग – क्, ख्, ग्, घ्, ङ्
2. च वर्ग – च्, छ्, ज्, झ्, ञ

3. ट वर्ग — ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्
4. त वर्ग — त्, थ्, द्, ध्, न्
5. प वर्ग — प्, फ्, ब्, भ्, म्

महर्षि पाणिनि ने अपने वर्ण विवेचन में स्थान भेद से व्यंजनों का वर्गीकरण न करके प्रयत्न भेद अल्पप्राण और महाप्राण के अनुसार किया है, जैसे —

1. ञ्, म्, ङ्, ण्, न्, य् (अनुनासिक अल्पप्राण)
2. झ्, भ्, घ्, ढ्, ध् (वर्गीय महाप्राण)
3. ज्, ब्, ग्, ड्, द् (वर्गीय अल्पप्राण)
4. ख्, फ्, छ्, ठ्, थ् (वर्गीय महाप्राण)
5. च्, ट्, त्, क्, च् (वर्गीय अल्पप्राण)

इस वर्गीकरण में अनुनासिक अल्पप्राण, चतुर्थ व्यंजनों का महाप्राण, तृतीय व्यंजनों का अल्पप्राण द्वितीय व्यंजनों का महाप्राण और प्रथम व्यंजनों का अल्पप्राण वर्ग लेकर पाँच वर्ग किये गये हैं।

लघुसिद्धांतकौमुदी में इनके सूत्र ये हैं —

'वर्गाणां प्रथम तृतीय पंचमायणश्चाल्पाप्राणाः'
'वर्गाणां द्वितीयचतुथौ शलश्च महाप्राणाः'

उपर्युक्त व्यंजन यथार्थ में प्रयत्न के अनुसार तीन विभागों में आ जाते हैं —

(अ) अल्पप्राण —क्, च्, द्, त्, प्, ग्, ज्, ड्, द्, ब्।
(ब) महाप्राण — ख्, छ्, ठ्, थ्, फ्, घ्, झ्, ढ्, ध, भ्।
(स) अनुनासिक अल्पप्राण — ङ्, ञ्, ण्, न्, म्।

2. ऊष्म व्यंजन — स्पर्श और ऊष्म के बीच वाले य्, र्, ल्, व् वर्ग अन्तस्थ व्यंजन कहलाते हैं। इनका उच्चारण स्वर और व्यंजन का मध्यवर्ती सा होता है, यथार्थ में ये स्वर और व्यंजन के अन्तःस्थित रूप में हैं। इसी से हिन्दी में 'कोय' के स्थान पर 'कोई' प्रचलित है। बुन्देली में य्, र्, ल्, व् में से 'य्' और 'व्' को प्रायः ज् और ब् में परिवर्तित किया जाता है। जैसे— यमुना—जमुना, यम—जम, वस्तु—बस्तु, वर—बर, वट—बट, वायु—बायु।

उक्त तीनों प्रकार के व्यंजन वर्णमाला के अनुसार निम्नलिखित हैं —

1. स्पर्श– क्, ख्, ग्, घ्, ङ् (क वर्ग)
   च्, छ्, ज्, झ्, ञ् (च वर्ग)
   ट्, ठ्, ड्, ढ, ण् (ट वर्ग)
   त्, थ्, द्, ध्, न् (त वर्ग)
   प्, फ, ब्, भ्, म् (प वर्ग)

2. ऊष्म – स्, ह्।
3. अन्तस्थ – य्, र्, ल्।

उच्चारण भेद से वर्णों के दो भेद और हैं – सानुनासिक और निरनुनासिक।

1. सानुनासिक वर्ण– वे हैं जिनके उच्चारण मुख और नासिका से होता है जैसे– न् और म्।

2. निरनुनासिक वर्ण – जिनका उच्चारण केवल मुख से होता है, जैसे– अ, ई, क्, ख्, ग। प्रत्येक वर्ग का पाँचवाँ वर्ण सानुनासिक रहता है, जैसे – ङ्, ञ, ण्, न्, म्।

अन्तस्थ और ऊष्म के साथ सानुनासिक व्यंजन का कार्य अनुस्वार से निकलता है, जैसे– शङ्कर–संकर, सन्देह–संदेह, सम्बन्ध–संबंध।

यद्यपि अनुस्वार को वैयाकरण पृथक ध्वनि मानते हैं, केवल ङ्, ञ्, ण्, न् और म् स्थानापन्न ध्वनि है।

अनुस्वार स्वर से पृथक हैं। 'अंगूर' में 'अ' स्वर की ध्वनि के पीछे के स्वर का उच्चारण होता है। प्रथम कण्ठ से फिर नासिका से। स्वर के अन्तर जाने के कारण यह अनुस्वार कहा जाता है। 'अ' अनुस्वार है। अनुनासिक की पृथक् सत्ता नहीं रहती है। वह स्वर में लीन हुआ रहता है, जैसे– अँगूठी में 'अ' स्वर ही काल में हो जाता है। इसी से यह अनुनासिक कहलाता है। हृस्व स्वर में अनुनासिक के रहने से हृस्व स्वर भी दीर्घ ही माना जाता है, जैसे– कंप में 'क' हृस्व न होकर दीर्घ है। 'क' से संयुक्त अनुस्वार 'अ्' का उच्चार, नासिका में पृथक होता है।

बुन्देली में विसर्ग का प्रयोग नहीं होता। यथा मनः का मन ही रहता है। निःरस–नीरस, निःबल–निर्बल या निरबल रूप में आते हैं, जिसमें विसर्ग रकार में परिवर्तित रूप में रहता है, पर साथ ही 'निबल' जैसे रूप भी प्रचलित हैं, जिसमें विसर्ग का प्रयोग नहीं हैं।

स्वराघात

किसी शब्द के उच्चारण में प्रत्येक अक्षर पर स्वर का जो आघात लगता है, उसे स्वराघात कहते हैं। बुन्देली में कुछ विशेष स्थानों में ही स्वराघात के कारण कुछ अंतर आता है, जिनके नियम निम्नलिखित हैं –

1. अकारान्त शब्दों के अंत में 'अ' का उच्चारण नहीं होता और अंतिम वर्ण हलन्त के समान बोला या पढ़ा जाता है, जैसे– रात, दिन, घन, बाग।

अपवाद : एकारान्तरी शब्द जैसे– 'न' आदि संयुक्त अंत्याक्षर के अंत जैसे– इन्द्र आदि और इ, ई अथवा ऊ के आगे ये 'य' जैसे– सीय, पिय आदि के अन्त्य 'अ' का उच्चारण होता है।

2. अकारान्त रहित तीन अक्षरों के शब्दों के दूसरे अकारान्त वर्ग और चार अक्षरों के शब्दों के तीसरे अकारान्त वर्ग का 'ब' नहीं बोला जाता है और उस वर्ण का उच्चारण हलन्त के समान किया जाता है। जैसे– झगड़ा, कुकरा, मूरखता।

3. चार अक्षरों के अकारान्त शब्द का दूसरा वर्ग आदि अकारान्त हो तो 'अ' का उच्चारण होता है। जैसे – दुरबल, चटपट, नटखट, बेर–बेर। यौगिक शब्दों के मूल अवयवों के अन्त्य 'अ' का नहीं होता, जैसे – देवलोक्, लड़कपन् आदि। शब्द के आदि वर्ण का 'अ' सदा उच्चरित होता है, जैसे– कम, कपड़ा, बकरी, मजा।

4. यदि शब्द के अंत में अपूर्णता से उच्चरित 'अ' आये, तो उसके पूर्ववर्ती अक्षर पर आघात पड़ता है, जैसे– अनबन, पहार, बेधड़क, दिनभर।

5. संयुक्त व्यंजन के पूर्ववर्ती वर्ण पर आघात पड़ता है, जैसे– हल्ला, गल्लो।

6. अनुच्चरित अकारान्त वाले वर्ण के पूर्वाक्षर का स्वर बोलने में तन जाता है, अर्थात् उस पर स्वभाविक उच्चारण की अपेक्षा कुछ अधिक जोर पड़ता है, जैसे– बोलकर, हते, लोक।

7. 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण तत्सम संस्कृत शब्दों में और ठेठ बुन्देली शब्दों में भिन्न प्रकार से पाया जाता है। संस्कृत में 'ऐ' और 'औ' का उच्चारण लिखित रूपानुसार ही है, पर प्रायः 'ए' का उच्चारण 'अय' और 'औ' का उच्चारण अव, के समान होता है, जैसे – कैसो, चौथे।

8. सम्बन्ध कारक की विभाजित प्रत्यय 'की' और क्रिया के सामान्यभूत के स्त्रीलिंग एकवचन के रूप 'की' के उच्चारण में भी अंतर है। विभाजित 'की' के उच्चारण

की अपेक्षा क्रिया के रूप 'की' का उच्चारण विशेष स्वराघात के साथ होता है।

9. बुन्देली में 'अ' संयुक्त वर्ण का उच्चारण ग्यँ के समान होता है।

10. बुन्देली के अकारान्त शब्द, जिनमें व्यंजन के पीछे सकार रहता है, स्वराघात के कारण अकार का लोप होने से व्यंजनांत माने जा सकते है, जैसे– फूल, जगत्, पहार, नाथ, जहाज, खाट, पाट।

ध्वनि विकार

'स्थान और समय के परिवर्तन से शब्द और ध्वनि में भी परिवर्तन आ जाता है, इसे ध्वनि विकार कहते हैं।' इससे ध्वनि का वास्तविक स्वरूप अत्यधिक परिवर्तन हो जाता है। सामान्य बोलचाल की भाषा में प्राचीन संस्कृत रूप को छोड़कर परिवर्तित विकारी रूप ही अधिक प्रचलित रहता है। ध्वनि विकार के मुख्य कारण दो हैं– आभ्यन्तर कारण और बाह्य कारण।

1. आभ्यन्तर कारणों में – (अ) मुख–सुख (ब) अपूर्ण अनुकरण (स) मानसिक अयोग्यता (द) बोल–चाल में शीघ्रता आदि हैं।

(अ) मुख–सुख की प्रवृत्ति

अनेक ध्वनियों का लोप मुख–सुख की प्रवृत्ति के कारण होता है, और उनमें नयी ध्वनियाँ मिल जाती हैं, जैसे – पश्चात्ताप–पछताबा, आर्डर–आडर।

(ब) अपूर्ण अनुकरण

उच्चारण में अपूर्ण अनुकरण से भी वर्ण परिवर्तन हो जाता है। जिस प्रकार के उच्चारण का अभ्यास एक स्थान या व्यक्ति को होता है, वैसा प्रायः दूसरे स्थान या दूसरे व्यक्ति को नहीं होता। भ्रम के स्थान पर भरम और कर्म के स्थान पर करम तथा स्टेशन के स्थान पर टेशन या वैद्य के स्थान पर बैद इसी के परिणाम हैं। गुप्त से गुप्ता, मिश्र से मिसरा आदि इसी से बनते हैं।

(स) मानसिक अयोग्यता

जनसाधारण, भाषा के सहज प्रवाह की ओर प्रवृत्त होता है, और शिक्षा तथा संस्कार के कारण उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा में ध्वनि–विकार हो जाता है। संस्कृत से वर्तमान हिन्दी और उसकी उपभाषा बुन्देली आदि में जो परिवर्तन हुए हैं, वे इसके

परिणाम हैं। प्रान्तीय बोलियों में इसके कारण होने वाली विकृत ध्वनियाँ, कालान्तर में बड़ा भिन्न रूप धारण कर लेती हैं।

द. बोलचाल में शीघ्रता के कारण

बोलचाल में शीघ्रता के कारण भी ध्वनियों में विशेष परिवर्तन हो जाता है, जैसे– मास्टर साहब–मास्साब और पंडितजी के स्थार पर पण्डज्जी आदि।

ध्वनि विकार के प्रकार – आधुनिक भाषा विज्ञान ने इस विषय का वैज्ञानिक विवेचन करते हुए निम्नलिखित सात प्रकार से प्रदर्शित किये हैं –

1. समीकरण या सवर्णीकरण	–	ASSIMILATION
2. विषमीकरण	–	DISSIMILATION
3. प्रागुपजन	–	PRETHESIS
4. स्वरभक्ति	–	ANAPTYXIS
5. स्वरलोप	–	SYNCEPE
6. अक्षरलोप	–	HAPELEGY
7. वर्ण प्रत्यय या स्थान विपर्यय	–	METATHESIS

समीकरण या वर्गीकरण – दो वर्णों के पास आने पर जब एक पहला वर्ण, दूसरे वर्ण से प्रभावित होकर उससे मिलता है या वैसा ही हो जाता है, तब समीकरण माना जाता है। यह दो तरह से होता है –

(अ) पुरोगामी	–	PROGRESSIVE
(ब) पश्चाद्गामी	–	REGRESSIVE

(अ) पुरोगामी सवर्गीकरण – जहाँ परवर्ती वर्ण पूर्ववर्ती के समान हो जाता है, वह पुरोगामी सवर्गीकरण है, जैसे – चक्र का चक्क।

(ब) पश्चाद्गामी – जहाँ पूर्ववर्ती वर्ण परवर्ती के समान हो जाता है, वह पश्चाद्गामी सवर्गीकरण है, जैसे– वल्कल का बक्कल, दुग्ध का दुद्ध, हक्षु का उख्खु (ऊख)।

विषमीकरण – दो वर्णों के पास आने पर उच्चारण की असुविधा होने से, उनमें से एक वर्ण के बदल जाने से, वे परस्पर विषम हो जाते हैं। यह विषमीकरण कहलाता है। यह भी दो प्रकार से होता है, जैसे –

(अ) पुरोगामी विषमीकरण
(ब) पश्चाद्गामी विषमीकरण

प्रागुपजन – संयुक्त व्यंजनों से प्रारंभ होने वाले शब्दों में कभी–कभी उच्चारण सुविधा होने के कारण, आदि में एक स्वर को उपजन या आगम हो जाता है। जैसे– स्तुति–अस्तुति, स्नान–असनान।

स्वरभक्ति या विपकर्ष – संयुक्त व्यंजनों से प्रारंभ होने वाले शब्दों में जब उच्चारण सुविधा के कारण शब्द के बीच में किसी स्वर या स्वर भाग का आगम हो जाता है, तब उसे स्वरभक्ति या विपकर्ष कहलाता है। जैसे– स्नेह–सनेह, प्रसाद–परसाद, पंक्ति–पंगत।

स्वरलोप – जब किसी शब्द में से स्वरलोप कर दिया जाता है, तब वह स्वरलोप कहलाता है, यह स्वरभक्ति का विपरीत है, जैसे – आभ्यंतर–भीतर, प्रांगण–आँगन, इमली–इम्ली।

अक्षरलोप – जब दो समान वर्ण साथ–साथ आते हैं, तब उच्चारण की सुविध ाा के लिये उनमें से एक का लोप हो जाता है। इनमें केवल स्वर अथवा व्यंजन ध्वनियाँ ही नहीं, वरन् पूरे वर्ण का या वर्णों का लोप हो जाता है, जैसे – त्रिशूल–शूल, शहतूत–अतूत, माता–माँ, नाककटा–नक्टा, खरीददार–खरीदार।

वर्ण प्रत्यय या स्थान विपर्यय – उच्चारण की असावधानी से जब शब्द में प्रयुक्त दो वर्णों का अपने स्थानों से परिवर्तन कर दिया जाता है, तब यह वर्ण प्रत्यय या स्थान विपर्यय कहलाता है। जैसे – लखनऊ–नखनऊ, मतलब–मतबल, बताशा–बसाता, बसेता। इस प्रकार के ध्वनि विकार में प्रयत्नलाघव की प्रवृत्ति पायी जाती है और उसमें स्वर या व्यंजन तथा संयुक्त स्वर या व्यंजन लोप, आगम और विपर्यय की क्रिया पायी जाती है।

बुन्देली में स्वर और व्यंजन दोनों वर्ण का लोप होता है, साथ ही शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर भी लोप होता है। यहाँ बुन्देली में ध्वनि विकार संबंधी विशेष नियमों को सोदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है –

स्वर लोप	**व्यंजन लोप**
आदि – अरघट–रहटा	आदि – स्थल–थल
मध्य – फंसबौ–फंस्बौ	मध्य – उपवास–उपास
अंत – घर–घर्	अंत – सत्य–सत्, सच।

इसी प्रकार आगम भी स्वर या व्यंजन दोनों में होता है, साथ ही आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर होता है, जैसे–

स्वरागम	**व्यंजनागम**
स्त्री–इस्तरी	ओष्ठ–होंठ
स्मरण–सुमरन	टालटूल–टालमटोल

विपर्यय की प्रवृत्ति भी पायी जाती है, जैसे– पागल–पगला, वाराणसी–बनारस, लखनऊ–नखलऊ।

बुन्देली के ध्वनि विकार संबंधी नियम इस प्रकार हैं –

1. जिन शब्दों का आदि स्वर 'अ' हो, उसे बुन्देली में प्रायः 'आ' कर देते हैं, जैसे– जप–जाप, अर्क–आक, अक्षर–आखर, पक्ष–पाख। कभी–कभी अन्त्य 'अ' को भी 'आ' कर देते हैं, जैसे– ईंट–ईंटा, पत्थर–पथरा, चक्र–चका और रिक्त–रीता।

2. जिन शब्दों का आदि स्वर 'आ' हो उसे बुन्देली में 'अ' कर देते हैं, जैसे – आश्चर्य–अचरज, आकाश–अकास, आषाढ़–असाढ़, आलाप–अलाप, आधार–अधार, राजधानी–रजधानी, गालकटा–गलकटा, हाथकड़ी–हथकड़ी।

3. अनेक शब्दों में आदि शब्द 'अ' का 'इ' हो जाता है, जैसे – ललाट–लिलार, कपाट–किवार, क्षण–छिन, छमा–छिमा।

4. अनेक तत्सम शब्दों का आदि स्वर 'अ' बहुधा अपने से आगे के वर्ण समेत तथा कभी–कभी अकेला ही 'ए' हो जाता है, जैसे – कदली–केरा, कर्कटा–केंकरा, नकुल–नउला।

5. अनेक तत्सम शब्दों का आदि स्वर हृस्व अथवा दीर्घ आकार अगले वर्ण समेत तथा कभी अकेला ही 'ऐ' हो जाता है, जैसे – पयान्त–पैताना, मल–मैल, कपित्थ–कैथ।

6. अनेक तत्सम शब्दों का आदि स्वर 'अ' अपने से आगे वर्ण समेत 'औ' हो जाता है, जैसे– चतुर्थी–चौथ, चतुर्मुखी–चौमुखी, चतुर्दशी–चौदस।

7. अनेक तत्सम शब्दों का आदि स्वर 'इ' का 'ए' हो जाता है, जैसे– बिल्वपत्र–बेलपात, सिन्दूर–सेंदुर, तिन्टुक–तेंदू।

8. अनेक तत्सम् शब्दों के मध्य की 'इ' का 'अ' हो जाता है, जैसे– धरित्री–धरती, हरिद्रा–हरदी, हरिद्वार–हरद्वार।

9. अनेक तत्सम शब्दों की हृस्व 'इ' को दीर्घ और दीर्घ 'ई' को हृस्व कर देते हैं, जैसे– बिंश–बीस, त्रिंश–तीस, मित्र–मीत, इंधन–ईधन, प्रियतम–प्रीतम, दीपावली–दिवारी।

10. कभी–कभी आदि वर्ण की 'इ' को 'ऊ' कर देते हैं, जैसे– इक्षु–ऊख, बिन्दु–बूंद।

11. अनेक इकारान्त संज्ञा शब्दों के अन्त्य वर्ण 'इ' को 'अ' कर देते हैं, जो अनुच्चरित रहता है, जैसे– मूर्ति–मूरत, हानि–हनि, रीति–रीत, विभूति–विभूत, नीति–नीत, पंक्ति–पाँत।

12. अनेक तत्सम शब्दों के आदि स्वर 'उ' को दीर्घ 'ऊ' कर देते है, जैसे– गुण–गून, कुक्कर–कूकर, उच्च–ऊँच, उष्ट–ऊट।

13. अनेक तत्सम शब्दों के अन्त्य स्वर 'उ' को 'ऊ' कर देते हैं, जैसे– प्रभु–प्रभू, गुरु–गुरू, साधु–साधू, भानु–भानू।

14. अनेक तत्सम शब्दों के आदि स्वर 'उ' का 'औ' हो जाता है, जैसे– शुंठी–सोंठ, कुक्षी–कोख, कुष्ठ–कोढ़, तुन्द–तोंद, पुस्तक–पोथी।

15. अनेक तत्सम शब्दों में आदि के 'ऊ' का हृस्व 'उ' हो जाता है, जैसे कूप–कुआ, पूप–पुआ, धूम–धुआँ, शूकर–सुँगर।

16. फारसी के तत्सम शब्दों के आदि वर्ण 'ए' का 'इ' अथवा 'ई' हो जाता है, जैसे– एला–इलायची, एकत्रिंश–इकतीस।

18. कहीं–कहीं 'ऐ' का 'ए' हो जाता है जैसे – कैवर्त्त–केवट, तैल–तेल।

19. अनेक तत्सम शब्दों के आदि वर्ण 'औ' का 'उ' हो जाता है, जैसे– गोपाल–गुपाल, गोस्वामी–गुसाई, गोविन्द–गुविन्द, कोतवाल–कुतवाल, कोहनी–कुहनी।

20. अनेक तत्सम शब्दों में आदि वर्ण 'औ' का 'ओ' हो जाता है, जैसे– पौत्र–पोता, मौक्तिक–मोती, यौवन–जोवन।

21. अनेक तत्सम शब्दों का आदि और अंत वर्ण की 'ऋ' को 'अ' कर देते हैं, जैसे– कृष्ण–कान्हा, श्रृंखला–साँकल, मृत्तिका–माटी, पितृ–पिता, मातृ–माता।

22. अनेक तत्सम शब्दों का आदि स्वर –'अ' अपने से अगले वर्ण समेत 'ओ' हो जाता है, जैसे– चतुर्मुखी–चौमुखी, चतुष्पदी–चौपाई, चतुष्कोण–चौकोन, चतुर्दशी–चौदस, चतुर्विंश–चौबीस।

23. अनेक तत्सम् शब्दों की आदि 'ऋ' को 'इ' अथवा 'ई' कर देते हैं, जैसे– श्रृंगार–सियार, श्रृंग–सींग, त्रृण–तिन, कृष्णा, किसना, तृष्णा, तिसना, घृष्ट–ढीट।

व्यंजन ध्वनिविकार

1. अनेक शब्दों के ककार को गकार में बदल देते हैं, जैसे – कंकण–कंगना, मकर–मगरा, प्रकट–प्रगट, भक्त–भगत, आकाशद्वीप–अगासदीप (अगासिया)।

2. फारसी से आये हुए अनेक तत्सम शब्दों के 'ज' को 'द' में बदल देते हैं, जैसे– तकाज़ा–तगादौ, कागज़–कागद।

3. अनेक तत्सम शब्दों के 'द' के स्थान में 'ड' हो जाता है, जैसे– दण्ड–डण्ड, दृष्टि–ढीठ, दोल–डोल, दंशन–डसना।

4. अनेक तत्सम शब्दों के 'ट' को 'र' में बदल देते हैं, जैसे– घटी–घरी, जूट–जूरौ, वट–बर, सुघट–सुघर, शारी–सारी।

5. बुन्देली में बहुधा 'ड़' क 'र' हो जाता है। यह प्रवृत्ति बुन्देली की अपनी विशेषता है, जैसे– पहाड़–पहार, कीड़ा–कीरा, पड़ौस–परौस, लड़का–लरका, चुड़िया–चुरिया, थोड़ा–थोरा, नाड़ी–नारी, पड़ना–परबौ, लड़ना–लरबौ, फोड़ना–फोरबौ, गुड़–गुर, जोड़ना–जोरबौ, फड़कना–फरकबौ।

6. कहीं–कहीं 'द' को 'र' और 'छ' को 'ट' में बदल देते हैं, जैसे– त्रयोदश–तेरह, सप्तम–सत्रह, अष्टादश–अठारह।

7. अनेक तत्सम शब्दों के 'प' को 'फ' कर देते हैं, जैसे– परशु–फरसा, पाश–फाँस, प्रपंच–फरफंद।

8. अनेक तत्सम शब्दों के दो स्वरों की बीच का 'म' बुन्देली में सानुस्वार 'व' में बदल जाता है, जैसे– नाम–नाँव, श्यामल–साँवरो, कमल–कँवल, कुमार–कुँवर, पामर–पाँवर, चमर–चँवर, ग्राम–गाँव, आमलक–आँवरी।

9. अनेक तत्सम शब्दों में ही नहीं तद्भव शब्दों में भी लकार को रकार में बदलने की प्रवृत्ति बुन्देली में विशेष रूप से पायी जाती है, जैसे – टलना–टरबौ, हल–हर, बादल–बादर, साँवलो–साँबरौ, डाल–डार, फलना–फरबौ, बाल–बार, काजल–काजर, हल्दी–हरदी, धूल–धूर, जलन–जरन, जाल–जार, खली–खरी, खलिहान–खरियान, निकलना–निकरबौ, ढालना–ढारबौ, ताला–तारौ, पुतली–पुतरी।

10. तत्सम शब्दों में 'य' को 'ज' में बदलने की प्रवृत्ति भी बुन्देली में विशेष रूप से पायी जाती है, जैसे– यश–जस, योग–जोग, यम–जम, यथा–जथा, युग–जुग, यौवन–जोवन, यमुना–जमुना, यादव–जादौ, सूर्य–सूरज, यशोदा–जशोदा।

11. कभी–कभी तत्सम् शब्दों के 'य' को पिछले स्वर समेत 'ऐ' में बदल देते हैं, जैसे– शयन–सैन, प्रलय–परलै, समय–समै, उदय–उदै, नयन–नैन, संशय–संसै, जय–जय, जैं–जै।

12. कभी–कभी तत्सम शब्दों के अन्त्य 'य' का लोप कर देते हैं और यदि उसके पूर्व का वर्ण हलन्त हुआ, तो उसे अकारान्त कर देते हैं, जैसे– नित्य–नित, भाग्य–भाग, सत्य–सत्।

13. तत्सम शब्दों के 'श' को बुन्देली में 'स' कर देते हैं, जैसे– शीतल–सीतल, शौक–सौक, देश–देस, शुभ–सुभ, शोभा–सोभा, किशौर–किसोर, शारदा–सारदा, श्याम–स्याम, शान्त–सान्त।

14. तत्सम शब्दों के 'ष' को बुन्देली में 'स' में बदल दिया जाता है, जैसे– वर्षा–बरसा, भाषा–भासा, दोष–दोस, विष–विस, आशा–आसा, अषाढ़–असाढ़।

15. कभी–कभी 'ष' को 'ख' कर दिया जाता है, जैसे– वर्षा–बरखा, औषधि–औखद, विष–विख।

16. तत्सम शब्दों के 'अव' के स्थान में बुन्देली में प्रायः 'औ' हो जाता है, जैसे– अवगुण–औगुन, अवसर–औसर, भागवत–भागौत, जादव–जादौ, दानव–दानौ, माध ाव–माधौ, भैरव–भैरौं, उपद्रव–उपद्रौ, भवसागर–भौसागर।

17. हकार की लोप की प्रवृत्ति बुन्देली में विशेष रूप से पायी जाती है, फिर यह भी नहीं भूलना चाहिये कि बुन्देली में 'हकार' का सर्वथा बहिष्कार नहीं है और आदि, मध्य तथा अन्त्य में 'ह' का उच्चारण है, जैसे –

आदि	**मध्य**	**अन्त्य**
हम	पहार	दोहा
हाँत	बहार	दही
हाँतीं	लुहार	राह
हरौ	तिहात	लोहौ
हार	सुहात	मोह
हीरा	सुहाग	सलाह

18. तत्सम और तद्भव शब्दों के 'ह' को पूर्व स्वर समेत 'ऐ' में बदल देते हैं, जैसे' दशहरा–दसैरो, दोपहरी–दुपैरी, दुलहिन–दुलैन, कचहरी–कचैरी, इकहरी–इकैरी, फहराबौ–फैराबौ।

19. यदि 'ह' सजातीय स्वरों के मध्य में हो, तो 'ह' का लोप हो जाता है और दो स्वर मिलकर दीर्घ स्वर हो जाते हैं, जैसे – रहना–रहत, कहत् के स्थान पर कत्, कात। रानैहे (रहना है), कातते (कहते थे), राहते (रहते थे), कहाँ–काँ।

20. कतिपय तत्सम शब्दों के प्रायः दो स्वरों के बीच के ख, थ, ध, फ, भ, श, ष, क और द वर्ण बुन्देली में 'ह' में बदल जाते हैं, जैसे– नख–नह, मुख–मुँह, बधिर–बहरा, गुम्फन–गुथना, अभीर–अहीर, केशरी–केहरी, पाषाण–पाहन, क्षोभ–छोह, मास–माह।

21. तत्सम शब्दों के 'क्ष' को प्रायः 'छ' कर देते हैं, जैसे– क्षण–छन, पक्षी–पंछी, क्षमा–छमा, क्षेम–छेम, क्षार–छार।

22. कहीं–कहीं तत्सम शब्दों के 'क्ष' को 'च्छ' से इंगित करते हैं, जैसे– रक्षा–रच्छा, लक्ष्मी–लच्छमी, लक्षण–लच्छन, राक्षस–राच्छस, रक्षक–रच्छक, रक्षा–रच्छा।

23. 'क्ष' कभी 'ख' में बदल जाता है, जैसे– क्षेम–खेम, अक्षर–आखर, कक्ष–काँख, अक्षत–आखत, पक्ष–पाख, क्षेत्र–खेत, इक्षु–ईख, मक्षिका–माखी।

24. 'त्र' के स्थान पर प्रायः 'त' कर दिया जाता है, जैसे– पुत्र–पूत, मित्र–मीत, पत्र–पात, मूत्र–मूत।

25. कभी–कभी 'त्र' के स्थान में 'स्वरागम' से 'तर' हो जाता है, जैसे– जंत्र–जंतर, मंत्र–मंतर, शस्त्र–शास्तर।

26. तत्सम शब्दों के 'ण' के स्थान पर प्रायः 'न' हो जाता है, जैसे– गुण–गुन, मरण–मरन, गणेश–गनेश, गण–गन, रण–रन, प्राण–प्रान, वर्णन–वरनन्, शरण–सरन।

संयुक्ताक्षर ध्वनि–विकार

1. यदि किसी हृस्व से परे संयुक्ताक्षर हो, तो बुन्देली में प्रायः आदि स्वर को दीर्घ कर देते हैं और संयुक्त वर्ण में से एक ही रह जाता है। आदि के पूर्व स्वर को कभी–कभी सानुनासिक कर देते हैं, जैसे– चक्र–चाक, पुत्र–पूत, सप्त–सात, अन्जन–आँजन, अक्ष–आँख, उच्च–ऊँच, उष्ट–ऊँट, पुच्छ–पूँछ।

2. आदि के संयुक्त अक्षर 'स' का प्रायः लोप हो जाता है, जैसे– स्थल–थल, स्नेह–नेह, स्थिर–थिर, स्थापना–थापना, स्कंध–कंध, स्थूल–थूल, स्पर्श–परस, स्तन–थन।

3. कभी–कभी 'स्' के पूर्व 'अ' कर उसे 'स' कर देते हैं, जैसे– स्तुति–अस्तुति, स्नान–अस्नान।

4. जब 'स्' व्यंजन का अगला वर्ण 'व' होता है, तब 'व' के स्थान पर 'उ' हो जाता है, जैसे – स्वप्न–सुपन, स्वर्ग–सुरग, स्वर–सुर, स्वभाव–सुभाव, सवर्ण–सुबरन, स्वतंत्र–सुतंत्र।

5. जब 'व' का संयोग हृस्व अथवा दीर्घ 'य' से होता है, तब 'व्य' और 'व्या' के स्थान में 'वि' अथवा 'वे' हो जाता है, जैसे–व्यापार–बेपार, व्यापारी–बेपारी, व्यथा–विथा, व्यवस्था–विवस्था, व्यंजन–विंजन।

6. अनेक तत्सम और तद्भव शब्दों में बुन्देली में संयुक्त 'ष्' का लोप हो जाता है, जैसे– निष्ठुर–निठुर, काष्ठ–काठ, मुष्ठि–मुठी, पिष्ठि–पिठी, षष्ठी–छटी, छट।

7. तत्सम शब्दों के रेफ को पूर्ण 'र' में बदल देते हैं, जैसे– नर्क–नरक, पर्व–परब, तीर्थ–तीरथ, चूर्ण–चूरन, पूर्ण–पूरन, धर्म–धरम, मर्म–मरम।

8. आदि में दीर्घ स्वर 'अ' के साथ संयुक्त हलन्त 'र' हो तो संयुक्त वर्ण को इकारान्त कर देते हैं, जैसे– प्राण–पिरान, हास–हिरास, ग्रास–गिरास, त्रास–तिरास।

9. म, न और य यदि किसी वर्ण के साथ अधोयुक्त हों तो उनका लोप हो जाता है, जैसे – रश्मि–रास, युग्म–जुग, नग्न–नंगा, योग्य, जोग, भाग्य–भाग।

10. तत्सम शब्दों के 'ब' को 'ज' में बदल लेते हैं, जैसे– वाद्य–बाजा, विद्युत–बिजुरी।

11. तत्सम शब्दों के 'त्स' को 'छ' अथवा 'च्छ' में बदल देते हैं, जैसे– उत्साह–उछाह।

12. तत्सम शब्दों के 'ध्य' तथा 'द्व' को 'झ' में बदल देते हैं, जैसे– बंध्या–बाँझ, मध्य–माँझ, संध्या–साँझ, बेध्य–बेझ, युद्ध–जूझ।

13. कहीं–कहीं 'श्च' के स्थान पर 'छ' हो जाता है, जैसे– पश्चात्–पीछे, वृश्चिक–बीछू, बिच्छू, पश्चात्ताप–पछतावा।

संधि

जब दो निर्दिष्ट वर्ण परस्पर निकट होने के कारण मिल जाते हैं, तब उनके मेल से जो विकार उत्पन्न होता है, उसे संधि कहते हैं। संधि तीन प्रकार की मानी गयी हैं – स्वर संधि, व्यंजन संधि और विसर्ग संधि।

1. स्वर संधि – वैयाकरणों के अनुसार ''दो स्वरों के परस्पर समीप होने से जो विकार उत्पन्न होता है, उसे स्वर संधि कहते हैं' संस्कृत में स्वर संधि पाँच प्रकार की मानी गई हैं– (अ) दीर्घ स्वर संधि (ब) गुण स्वर संधि (स) वृद्धि स्वर संधि (द) यण स्वर संधि (इ) अयादि चतुष्ट्य स्वर संधि।

(अ) दीर्घ स्वर संधि – जब दो सजातीय स्वर हृस्व अथवा दीर्घ, परस्पर निकट होकर मिलते हैं, तो एक दीर्घ स्वर बन जाता है। उदाहरणतः – परम+अर्थ = परमार्थ (बु. में परमारथ), देव+आलय = (बु. में दिबालो), कपि+ईश = कपीश (बु. में कपीस), गिर+ईश = गिरीश (बु. में गिरीस), जानकी+ईश = जानकीश (बु. में जानकीस)।

(ब) गुण स्वर संधि – हृस्व स्वर अथवा दीर्घ अकार से परे हृस्व अथवा दीर्घ अथवा दीर्घ, ई, ऊ, ऋ रहे तो हृस्व अथवा दीर्घ अ+इ = ए, अ+ऊ = औ और अ+ऋ= अर हो जाता है। उदाहरणार्थ – परम+ईश्वर = परमेश्वर (बु. में पनवेसुर), महा+ईश= महेश (बु. में महेस), गण+ईश = गणेश (बु. में गनेस)।

(स) वृद्धि संधि – हृस्व अथवा दीर्घ अकार से परे ए या ऐ हो अ+ए अथवा अ+ऐ मिलकर ऐ और जो या औ हो तो अ+ओ अथवा अ+औ मिलकर औ हो जाता है। उदाहरणार्थ – सदा+एव = सदैव, परम+औषध = परमौषध (बु. में परमोखद)।

(द) यण स्वर संधि – हृस्व अथवा दीर्घ इ, ऊ, ऋ से परे जब कोई विजातीय स्वर रहे, तो इ, उ, ऋ के स्थान में क्रम य, व, र हो जाता है। उदाहरणार्थ – नि+ऊन= न्यून, अनु+अय = अन्वय, सु+आगत = स्वागत।

(इ) अयादि संधि – ए, ऐ, ओ, औ के आगे जब कोई भिन्न स्वर रहे, तब इनके स्थान में क्रमशः अय+आय, आव हो जाते हैं। उदाहरणार्थ – ने+अन = नयन, नैन, पो+अन = पावन, पो+अक = पावक।

व्यंजन संधि

जब व्यंजन वर्ण से परे स्वर या व्यंजन वर्ण रहे, तब दोनों के मिलने से जो विकार होता है, उसे व्यंजन संधि कहते हैं। इसके निम्न लिखित प्रकार हैं–

1. यदि क्, च्, अ्, त् या प् वर्ण से परे अनुनासिक को छोड़कर कोई घोष वर्ण हो तो इनके स्थान पर क्रमशः न्, ज्, ड्, ब् वर्ण हो जाता है। उदाहरणार्थ – दिक्+गज = दिग्गज, दिक्+अंबर = दिगम्बर, जगत्+ईश् = जगदीश।

2. यदि किसी वर्ग के प्रथम वर्ण से परे कोई अनुनासिक वर्ण रहे तो उस प्रथम वर्ण के स्थान में उसी वर्ण का सानुनासिक वर्ण हो जाता है। उदाहरणार्थ – जगत्+नाथ = जगन्नाथ।

3. यदि त् से परे ग्, घ्, द्, ध्, न्, भ्, प, र, व अथवा कोई स्वर वर्ण रहे, तो त् के स्थान में ह् हो जाता है, उदाहरणार्थ– उत्+गम = उद्गम, उत्+अय = उदय, सत्+आचार = सदाचार, सत्+आनुद = सदानंद।

4. यदि त् एवं ट् से परे च्, या, छ् हो तो ट्, व् के स्थान में च् या छ् हो जाता है, उदाहरणार्थ– उत्+चारण = उच्चारण, उत्+छिन्न = उच्छिन्न।

5. यदि त् एवं ट् से परे ज् हो तो ज् एवं ट् के स्थान पर ज् हो जाता है, उदहारणार्थ–उत्+ज्वल = उज्ज्वल, सत्+जन = सज्जन।

6. यदि त् एवं ट् से परे ज् हो तो ज् एवं ट् के स्थान पर ज् हो जाता है, उदाहरणार्थ – उत्+लंघन = उल्लंघन, तत्+लीन = तल्लीन।

7. यदि त् एवं ट् से परे ह हो तो त् एवं ट् के स्थान में द्ध औ ह् के स्थान में घ् हो जाता है, उदाहरणार्थ – उद्+हार = उद्धार, उत्+त = उद्यत।

8. यदि म से परे स्पर्श वर्ण हो तो म् के स्थान में अनुस्वार अथवा उसी वर्ग का अनुनासिक वर्ण हो जाता है, उदाहरणार्थ– सम+कल्प = संकल्प। सम्+तोष = संतोष, सम्+वाद = संवाद, सम्+पूर्ण = संपूर्ण।

9. यदि म से परे अन्तस्थ या ऊष्म वर्ण रहे, तो म् के स्थान पर अनुस्वार हो जाता है। उदाहरणार्थ – सम्+हार = संहार, सम्+योग = संयोग, सम्+वाद = संवाद।

विसर्ग संधि

स्वर अथवा व्यंजन वर्ण के विसर्ग के साथ मिलने से जो विकार उत्पन्न होता है, उसे विसर्ग संधि कहते हैं, उदाहरणार्थ– निः+मल = निर्मल। इस संधि के कुछ आवश्यक तत्त्व हैं, जो निम्नांकित हैं –

1. यदि इकार, उकार पूर्वक विसर्ग से परे क, च, प, या फ रहे तो स्थान में ष् हो जाता है, उदाहरणार्थ– निःकपट = निष्कपट, निः+पाप = निष्पाप, निः+फल = निष्फल, दुः+कर्म = दुष्कर्म।

2. यदि अकार, आकार पूर्वक विसर्ग से परे क वर्ण हो, तो विसर्ग के स्थान में स् हो जाता है, उदाहरणार्थ – नमः+कार = नमस्कार, पुरः:कार = पुरस्कार, भाः+कर = भास्कर।

3. यदि विसर्ग से परे च, छ हो तो विसर्ग को श् और ट्, थ् हो तो 'स्', श् हो जाता है, उदाहरणार्थ– निः+छल = निश्चल, निः+चिन्त = निश्चिन्त, मनः+ताप = मनस्ताप।

4. यदि विसर्ग से परे किसी भी वर्ग के अंतिम तीन वर्ण, अन्तस्थ या ह हो ता विसर्ग के स्थान पर 'ओ' हो जाता है, उदाहरणार्थ– मनः+गत = मनोगत, मनः+योग = मनोयोग, मनः+हर = मनोहर, मनः+नीत = मनोनीत, तेजः+राशि = तेजोराशि।

5. यदि विसर्ग के पूर्व अ, आ को छोड़कर कोई दूसरा स्वर हो तो और विसर्ग से परे किसी भी वर्ग के अंतिम तीन वर्ण, अन्तस्थ या ह अथवा स्वर हो तो विसर्ग के स्थान पर र हो जाता है, उदाहरणार्थ– निः+गुण = निगुर्ण, निः+जल = निर्जल, निः+झर = निझर, निः+भय= निर्भय, निः+विकार =, निर्विकार, निः+आधार = निराधर, निः+उपाय = निरूपाय।

शब्द साधन

किसी भी भाषा के नियम–सम्मत परिमार्जित रूप को ही व्याकरण कहते हैं। व्याकरण की समृद्धि सम्बद्ध भाषा की सु–संपन्नता की द्योतक है। भाषा का संस्कार व्याकरण के माध्यम से ही संभव है। किसी भी भाषा को युग संधियों को पार करने की क्षमता व्याकरण ही प्रदान करती है, अतः स्पष्ट है कि किसी को परमार्जित एवं परिनिष्ठत स्वरूप प्रदान करने में उनके व्याकरण का बहुत महत्त्व है।

मानव के भावों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम भाषा है और शब्द भाषा की प्रमुख इकाई है। शब्दों के माध्यम से मानव अपने विचारों को व्यवस्थित ढंग से संप्रेषित एवं ग्रहण कर सकता हैं। शब्दों के माध्यम से ही मानव चिंतन, लिखित रूप में सुरक्षित एवं संरक्षित किया जा सकता है। इसलिये भारतीय वाङ्मय में शब्द को परम 'ब्रह्म' की संज्ञा प्रदान की गयी है। शब्द को शाश्वत रूप में स्वीकार किया गया है, जब शब्द नियमों के अंतर्गत रूप धारण करते हैं, तो शब्दों का रूप साहित्य में व्याकरण कहलाता है।

शब्दसाधन व्याकरण का एक महत्त्वपूर्ण भाग है, जिसमें शब्दों के भेद, रूपांतर और उनकी व्युत्पत्ति तथा प्रयोग में लाने के नियम बतलाये जाते हैं। यथार्थ में शब्द उसे कहते हैं, जो एक पूर्ण अर्थ को प्रकट करता है, जो ध्वनियों का समूह है। इस ध्वनिसमूह के भी छोटे—छोटे समूह रहते हैं, जो वर्ण ध्वनियों से बनते हैं। शब्दों के दो प्रकार होते हैं

सार्थक शब्द — वे शब्द जिनका कोई अर्थ होता है, उन्हें 'सार्थक शब्द' कहते हैं, जैसे— गैया, बैलवा, बकरिया, कारौ, सुपेद (सफेद), हम, तुम।

निरर्थक शब्द — वे शब्द जिनका कोई अर्थ नहीं निकलता, उन्हें 'निरर्थक शब्द' कहते हैं। इनका प्रयोग केवल अनुकरण आदि को समझाने के लिए किया जाता है। इन्हें ध्वन्यात्मक शब्द भी कहते हैं, जैसे— झन— न, भन—भन, भर—भर, खट—खट, फट—फट।

व्याकरण में सार्थक ध्वनियों (शब्दों) पर ही विचार किया जाता है और एक से अधिक वर्ण से बनी हुई स्वतंत्र सार्थक ध्वनि को शब्द कहते हैं। वैज्ञानिक दृष्टि से शब्द के दो मूल भाग होते हैं— शब्द और वाक्य में होने के समय लगने वाले कुछ संबंध सूचक विभक्तियाँ या प्रत्यय आदि। पहले को 'अर्थतत्त्व' कहते हैं, जो अर्थविशेष का द्योतक होता है। दूसरे को 'संबंधतत्व' कहते हैं, जो अर्थतत्त्व द्वारा व्यक्त विचार का संबंध वाक्य में प्रयुक्त अन्य शब्द से सूचित करता है। अर्थतत्त्व से अभिप्राय भाषा के उन अंशों से है, जो अर्थ अथवा विचार का बोध कराते हैं और संबंधतत्त्व से तात्पर्य उन अंशों से है जो अर्थतत्त्व द्वारा व्यक्त विचारों के परस्पर संबध की सूचना देते है।[11]

संबंधतत्त्व अर्थ का ही अंग बन जाता है और दोनों के संयुक्त रूप को 'पद' कहा जाता है, जैसे— निर्धनता से। इसमें मूल शब्द अर्थात् प्रकृति 'निर्धन' है, इसमें 'ता' प्रत्यय के लगने से 'निर्धनता' बना है और फिर से चरम प्रत्यय लगाया गया है। चरम प्रत्यय के लगने से जो शब्द रूपांतर होता है, वही इसकी यथार्थ विकृति है और इसे 'पद' कहते हैं।

शब्द और पद का अंतर व्याकरणिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है और शब्द—साधन में इन्हीं रूपों अर्थात् शब्दों और पदों के संबंध में विचार किया जाता है।

हिन्दी भाषा की तरह बुन्देली में अर्थतत्त्व का वाक्य अथवा वाक्यांश में स्थान मात्र ही कभी—कभी संबंधतत्त्व का बोध होता है, जैसे— मोहन खाना खाउत है। हमें गाना गाने है।

उपर्युक्त उदाहरण में 'खाना' और 'गाना' की वाक्य में स्थान ही उनके कारक के बोधक हैं।

भाषाविज्ञान के अनुसार पद की व्याख्या करते हुए डॉ. बाबूराम सक्सेना ने जो लक्षण दिये हैं, वे हैं– 'पद' उस ध्वनि या समूह को कहते हैं, जिसका वाक्य में भाषा की परंपरा के अनुसार संबंधतत्त्व का, अर्थतत्त्व का अथवा उन दोनों के अर्थ का बोध कराने के लिये प्रयोग होता है।[12]

निष्कर्ष

इस प्रकार प्रामाणिक बुन्देली संपूर्ण बोली का आधार मानी जाती है। प्रामाणिक बुन्देली का शब्द भण्डार शुद्ध बुन्देली होने के कारण समृद्ध है, क्योंकि इसी के आधार पर अन्य बोलियों का शब्द भण्डार निर्मित होता है। बुन्देली का व्याकरण हिन्दी के व्याकरण की तरह ही है। संज्ञा, सर्वनाम आदि देवनागरी लिपि की तरह व्यावहार किये जाते हैं। ध्वनिसमूह एवं विशेषताओं में बुन्देली की एक विशेषता जो सभी बोलियों के अंतर्गत देखी जाती है, वह हकार लोप की प्रवृत्ति है। प्रामाणिक बुन्देली में यह हकार लोप आधार माना जाता है, निश्चित रूप से प्रामाणिक बुन्देली अन्य मिश्रित बुन्देली बोलियों का आधार है।

संदर्भ

1. लघुसिद्धान्तकौमदी ; पृ. 7.
2. वही ; पृ. 7.
3. वही ; पृ. 7.
4. वही ; पृ. 7.
5. वही ; पृ. 7.
6. वही ; पृ. 7.
7. वही ; पृ. 7.
8. वही ; पृ. 7.
9. वही ; पृ. 7.
10. वही ; पृ. 9.
11. बाबूराम सक्सेना ; सामान्य भाषाविज्ञान ; पृ. 64.
12. वही ; पृ. 76.
13. डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया ; भाषा,भूगोल ; पृ. 4

खटोला बुन्देली

खटोला का क्षेत्र मोटे रूप से छतरपुर, पन्ना और दमोह है। डॉ. ग्रियर्सन द्वारा बतलाये गये स्थान पन्ना जिले के पश्चिमी भाग तथा छतरपुर जिले के पूर्वोत्तर भाग के अतिरिक्त क्षेत्र में आ जाते हैं। उन्होंने दमोह जिले की बोली को भी 'खटोला' कहा है, किन्तु हम इनके इस कथन से सहमत नहीं हो पाते। हम इस जिले के केवल उत्तरी सीमावर्ती भाग को ही 'खटोला–क्षेत्र' के अन्तर्गत रखना उचित समझते हैं। शेष भाग की बुन्देली सागर जिले की बुन्देली से ही अधिक साम्य रखती है। डॉ. ग्रियर्सन ने लिखा है कि यह वह रूप है, जो ओरछा के आसपास बोला जाता है। हम उनके इस कथन से भी सहमत नहीं हैं। हमने 'ओरछा–क्षेत्र' का बुन्देली–रूप उसके वैशिष्ट्य के साथ इसके पूर्व बतलाया है, जो खटोला–रूप से भिन्न है। डॉ. ग्रियर्सन ने भी ओरछा की बुन्देली और 'खटोला' बुन्देली का विवरण पृथक्–पृथक् दिया है। यदि वे दोनों का एक ही रूप मानते हैं, तो उनका पृथक् विश्लेषण आवश्यक नहीं था। हिन्दी के जिन भाषाविदों ने अपने ग्रन्थों में 'खटोला' का उल्लेख किया है, उन्होंने खानापूरी के रूप में डॉ. ग्रियर्सन की मान्यता ही दुहरा दी है, इस संबंध में उनका अपना कोई अध्ययन नहीं है। उन्होंने तथा डॉ. ग्रियर्सन ने भी बुन्देली के इस नामकरण का भी कोई कारण नहीं बतलाया। किसी बृहद् और विस्तृत कार्य करने वालों के लिये कदाचित् यह सम्भव भी नहीं था। डॉ. ग्रियर्सन 'खटोला' को आदर्श बुन्देली का ही एक रूप मानते हैं। हमने भी इसे 'शुद्ध बुन्देली' वाले मध्यवर्ती क्षेत्र के अंतर्गत ही स्थान दिया है।

खटोला के जिन क्षेत्रों की चर्चा की गयी है, उन्हीं जिलों से मिलकर इसकी सीमारेखा निर्धारित होती है। सीमारेखा के संबंध में डॉ. कृष्णलाल हंस ने लिखा है – 'छतरपुर एवं पश्चिमी पन्ना तथा दमोह के उत्तरी सीमावर्ती क्षेत्र में प्रचलित बुन्देली के खटोला कहे जाने वाले रूप में इस क्षेत्र से संलग्न दक्षिण पूर्व टीकमगढ़, पूर्वी सागर जिले के बुन्देली रूप से अधिक भिन्नता नहीं है। ओकारान्त का औकारान्त तथा एकारान्त का ऐकारान्त उच्चारण एवं हकार का सर्वथा लोप ही खटोला की प्रमुख विशेषता है। इसके रूप वैशिष्ट्य के संबंध में मुझे पन्ना दरबार के भूतपूर्व राजकवि श्री कृष्णदास जी (वर्तमान निवास स्थान झरकुआ ग्राम) से एक दोहा प्राप्त हुआ है, जो इस प्रकार है –

रउवा मउवा कात हैं, नाँय माँय अविचार।
ज्यों खटोलवासी तजैं, अच्छर बीच हकार।।

'खटोलावासी' मध्याक्षर से हकार का लोप करके 'रहुआ' को 'रउवा' (रहने वाला), 'महुवा' को 'मउवा', 'कहत' को 'कात' कहते हैं। ये 'नाँय माँय' (यहाँ वहाँ) का भी विचार नहीं करते अर्थात् इन शब्दों का प्रयोग नहीं करते (ये शब्द सागर जिले की बुन्देली में ही अधिक प्रयुक्त होते हैं)'[3]। इस प्रकार इस दोहे से एक बात स्पष्ट होती है कि खटोला में 'हकार' लोप की प्रवृत्ति पायी जाती है और यही इसकी विशेषता भी है, वैसे हकार लोप संपूर्ण बुन्देली में पाया जाता है।

शब्द–सामर्थ्य

खटोला बुन्देली का क्षेत्र ज्यादा विस्तृत नहीं है, इस कारण इसका जो शब्द सामर्थ्य है, वह बहुत कुछ प्रामाणिक अथवा शुद्ध बुन्देली से समृद्ध होता है। इसमें कुछ ऐसे शब्द हैं, जो इसकी अलग पहचान बनाते हैं। जैसे– रउवा (रहने वाला), मउवा (महुवा), कात (कहत), नाँय माँय (यहाँ वहाँ), वेपारी (व्यापारी), मूड़ (सिर), नौने–नौने (अच्छे–अच्छे), सइर (शहर), बोतसी (बहुत सी), खाँ (को), तोरो (तुम्हारा), ज्वाब (जबाब), पयलऊँ (पहले), ईसे (इससे), कोनऊँ (कोई भी), ईखाँ (इससे), जीखाँ (जिसको), पुजी सकत (पूर्ती कर पाना), हतो (था), रूजगारी (व्यापारी), लुगाई (स्त्री), निकय (निकल), सरर (शहर), पोच (पहुँच), तलबा (तलाब), पार (किनारे), पानू (पानी), सबरी (सारी), फुटल्ला (फूटा), घिनसो (गंदा) आदि शब्द खटोला को बुन्देली के अन्य क्षेत्रीय रूपों से अलग पहचान दिलाते हैं।

व्याकरणिक रूपरेखा

खटोला बुन्देली की व्याकरणिक रूपरेखा बुन्देली के शुद्ध अथवा प्रामाणिक रूप की तरह ही है। अंतर केवल स्थानीय शब्दों का है, जिससे खटोला बुन्देली का एक स्वतंत्र रूप निर्धारित होता है। खटोला में संज्ञा, क्रिया, कारक, विभक्तियाँ, स्वर, स्वरों का लोप, व्यंजन, व्यंजनलोप, सुरलहरी आदि व्याकरणिक विशेषताएँ शुद्ध बुन्देली जैसी ही हैं।

ध्वनिसमूह एवं विशेषताएँ

खटोला बुन्देली तीन उपरूप मिलते हैं। उन्हीं रूपों के अनुसार ध्वनिसमूह का निर्धारण होता है। इन रूपों में खटोला बुन्देली के शब्द स्थानीय प्रभाव के कारण बदलते रहते हैं, जिससे इसके शब्द भण्डार में भी वृद्धि होती है।

छतरपुर की खटोला

इस बोली रूप की विशेषताएँ इस प्रकार हैं– हकार का सर्वथा लोप, जिसे खटोला की प्रमुख विशेषता कहा गया है। यथा– ब्याह–ब्याव, बहू–बऊ, शहर–सइर, रुखन–रुकन, गहरी–गैरी (गेरी भी), छाँह–छाँव, भौतसी–बोतसी, कही–कई, काहे–काये, पहले–ही–पैलऊँ, सीख–सीक।

2. ऊपर के दोहे में केवल मध्य 'ह' का लोप कहा गया है, जैसा उपर्युक्त शब्दों– सइर, रुकन, गैरी तथा पैलऊँ शब्दों में हम देखते हैं, किन्तु व्याह, बहू, कही, काहे और सीख शब्दों के अंतिम वर्णों से भी हकार का लोप हो गया है। 'भौत' के प्रथम वर्ण से भी हकार का लोप हो गया है।

3. इस उद्धरण के प्रथम वाक्य की क्रिया 'हते' सुरक्षित है, पर आगे के वाक्यों में हतो तथा हते क्रियारूपों से भी प्रथमाक्षर 'ह' का लोप होकर केवल 'तो' और 'ते' ही रह गये हैं।

4. हमने पूर्वोल्लिखित उद्धरणों के विशेषकर झाँसी जिले के उद्धरण में ओकारान्त का औकारान्त तथा एकारान्त का ऐकारान्त उच्चारण देखा है, जबकि उपर्युक्त उद्धरण में सर्वत्र ओकारान्त और एकारान्त शब्दों का प्रयोग हुआ है। बेपारी, पीकें, वो, खों, निकरो, आओ, भरवे, ऊमें, भरकें, घरे, पैसावारे, ऊसें आदि इसी प्रकार के शब्द हैं।

5. बुन्देली भाषी अधिकांश क्षेत्रों में 'व' 'ब' उच्चरित होता है, जबकि यह वर्ण इन उद्धरणों में अपने मूलरूप में ही विद्यमान है।

6. कर्मकारक का परसर्ग 'को' बुन्देली में खों, खौं, कों, कौं, होता है, किन्तु उपर्युक्त बोलीरूप में कहीं 'खों' और कहीं 'खौं' भी प्रयुक्त है, इससे स्पष्ट है कि खटोला बुन्देली में कर्म–परसर्ग के ये दोनों रूप प्रचलित हैं।

अन्त में मैं यह बता दूँ कि पहले सागर–छतरपुर मार्ग पर स्थित वर्तमान 'गंज मलहरा' ग्राम से लगभग पाँच मील पश्चिम में 'खट्टलगढ़' नामक एक नगर था, जो एक छोटे से ग्राम के रूप में अभी भी वर्तमान में है। विक्रम की तेरहवीं शती से पन्द्रहवीं शती तक यह गोंड राजाओं का एक छोटा राज्य रहा है। महाराज छत्रसाल के शासनकाल तक भी यह –'खटोला परगना' के नाम से जाना जाता रहा है। जिस काल में इस परगने को राज्य कहलाने का गौरव प्राप्त था, उस समय इसके अन्तर्गत बिजावर (वर्तमान छतरपुर जिले की एक तहसील), छतरपुर का मध्य एवं उत्तरी भाग, टीकमगढ़ का दक्षिणी भाग और दक्षिण में बकस्वाहा तथा वर्तमान शाहगढ़ तक का भाग था। पन्ना का दक्षिणी भाग और दमोह का उत्तरी भाग भी इसी राज्य के अन्तर्गत था। इस 'खट्टलगढ़' अथवा 'खटोला' राज्य में प्रचलित बुन्देली का यह रूप क्षेत्र के नाम पर 'खटोला' कहलाता था। अब भी इस क्षेत्र के निवासी बुन्देली का यही रूप बोलते हैं; यद्यपि उनमें से अधिकांश इसके इस नाम से परिचित नहीं हैं।

पश्चिमी पन्ना का खटोला रूप

पश्चिमी पन्ना में प्रचलित बुन्देली का खटोला–रूप छतरपुर जिले के उपर्युक्त क्षेत्र के रूप से भिन्न नहीं है। केवल इतना ही अंतर है कि कर्मकारक का परसर्ग 'खों' जो छतरपुर क्षेत्र में कहीं–कहीं 'खाँ' हो गया है, वह इस सम्पूर्ण क्षेत्र में प्रयुक्त होता है। 'खों' अथवा 'खौं' कहीं भी नहीं बोला जाता। हकार का लोप, ओकारान्त और एकारान्त शब्दों का यथावत् प्रयोग आदि सभी विशेषताएँ, जो छतरपुर के बोलीरूप में हैं, इस भाग के उपर्युक्त उद्धरण में भी वर्तमान है। इस क्षेत्र में भी पूर्वोक्त क्षेत्र की तरह 'हते' क्रियारूपों से भी आद्य 'ह' का लोप हो गया है। उदाहरणार्थ ये पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं– 'परना में एक राजा अमान सिंह राज कते ते। एक बेर बनके करतन ने कई के महाराज, ई साल पानी जादा गिरो है, ऐसों न होय के खजाने को रूपइया–पयसा सींड़ जाय। ईसै ऊखाँ घाम में सूखबे खाँ डार दओ जाय। घाम में डारबे के पैलों रूपइया, सोना, चांदी, सबखाँ तखरिया सें रख के तोल लओ जाय। राजा ने बनकी बात मान लई।'[4]

उत्तरी दमोह का खटोला रूप

दमोह जिले का उत्तरी क्षेत्र पन्ना के खटोला भाषी दक्षिणी भाग से संलग्न है। दमोह जिले की पश्चिमी सीमा शुद्ध अथवा आदर्श बुन्देली भाषी सागर जिले की पूर्वी सीमा से संलग्न है, जिससे इस जिले के मध्य तथा पश्चिमी भाग की बुन्देली तो लगभग सागर जिले के बुन्देली के समान ही है, पर शेष भाग (उत्तरी तथा कुछ पूर्वी भाग) दक्षिण पन्ना की बोली से प्रभावित खटोला भाषी हो गया है।

1. पूर्व खटोला–क्षेत्र में हते, हतो, हतीं का आद्य 'ह' लोप हो गया है, किन्तु वह इस क्षेत्र की बोली में वर्तमान है। इसका कारण मध्य–पूर्वी भाग की बुन्देली का प्रभाव जान पड़ता है।

2. एकारान्त और ओकारान्त शब्दों का प्रयोग छतरपुर–पन्ना क्षेत्र की तरह ही है। इतना ही नहीं, पर इस क्षेत्र की बोली में पूर्वोक्त क्षेत्र के पै और है भी एकारान्त हो गये हैं।

3. हकार के लोप की प्रवृत्ति प्रथम दोनों क्षेत्रों की तरह इस क्षेत्र में भी परिलक्षित है।

4. पन्ना क्षेत्र का 'खाँ' इस क्षेत्र में पुनः 'खों' हो गया है।

5. उपर्युक्त खटोला भाषी दोनों क्षेत्रों से भिन्न इस क्षेत्र के खटोला–रूप में कुछ वर्ण द्वित्व उच्चरित होते हैं, जैसा कि हम 'बड्‌डे' शब्द में देखते हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार बुन्देली के मध्यवर्ती क्षेत्र की बोली के रूप में खटोला बुन्देली उपबोली मानी जाती है। ये तीनों रूप स्थानीय विशेषता के कारण अपना अलग महत्त्व रखते हैं।

संदर्भ

1. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप ; पृ. 40.
2. डॉ. ग्रियर्सन ; लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया, खण्ड 9, भाग 1 ; पृ. 459.
3. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप ; पृ. 451.
4. श्री शिवकुमार तिवारी से प्राप्त कहानी का एक अंश

पंवारी बुन्देली

पंवारी का मूल स्थान धार माना जाता है। बेनगंगा और उसकी सहायक नदियों के आस–पास बसने वाले पंवारों का मूल निवास मालवा तथा मध्य भारत रहा है।

मध्यभारत के धार, उज्जैन तथा देवास के आस–पास पंवार निवास करते थे। इनकी एक शाखा बेनगंगा और उसकी सहायक नदियों बावनधड़ी, बाध, चनई, घिसरी, देव, सोन आदि के किनारे भंडारा, बालाघाट तथा सिवनी जिले में बस गयी। दूसरी शाखा वर्धा नदी के किनारे स्थित वर्धा (आर्वी क्षेत्र) नागपुर (काटोल सावसेर क्षेत्र) छिन्दवाड़ा, बैतूल जिले में बस गयी। पंवारी बोली मुख्यतः महाराष्ट्र राज्य के भंडारा, नागपुर, वर्धा, यवतमाल, अमरावती तथा मध्यप्रदेश के बालाघाट, सिवनी, छिन्दवाड़ा एवं बैतूल जिले के देहातों में बोली जाती है। महाराष्ट्र में बोली जाने वाली पंवारी पर मराठी का प्रभाव दिखायी देता है। बालाघाट जिले में गौड़ी, मुरारी, लोधान्ती, कोष्टी, हलवी, छत्तीसगढ़ी (खल्टाही) आदि उपबोलियाँ बोली जाने के कारण इस जिले की पंवारी पर उनका प्रभाव दिखायी देता है। इस जिले के वारासिवनी, बैहर, बालाघाट तहसीलों और कटंगी, लालबर्रा, लांजी, खैरलांजी उप तहसीलों में पंवारी जाति के लोग पंवारी प्रभावित हिन्दी बोलते हैं। किन्तु ग्रामों में मराठी, मालवी, बुन्देली–बघेली मिश्रित बोलते हैं। सिवनी, छिन्दवाड़ा और बैतूल जिला बुन्देली प्रभावित है, इसलिए इस क्षेत्र में बुन्देली और मराठी मिश्रित पंवारी बोली जाती है।

जहं पंवार तहं धार है, और धार जहां पंवार।
धार बिन पंवार नहीं, नहीं पंवार बिन धार।।

परमार राजाओं के द्वारा बोली जाने वाली बोली पंवारी कहलाती है। पंवार राजाओं के कार्यकाल में ही पंवारी का सम्पर्क पश्चिमी महाराष्ट्र की मराठा जाति से बना रहा। अतः दोनों का परस्पर मिश्रण हुआ, इस कारण दो शाखाएँ बनीं– मराठा पंवार और बेनगंगा के पंवार। पंवारी की उत्पत्ति बघेली से मानी जाती है।

शब्द सामर्थ्य

मराठी – नवरा (पति), बाइको (पत्नि), मोठों (बड़ा), मराट्या (एक प्रकार की गाली), कोई (कुछ), राती (रात को), लाडू (लडडू), तुमि (तुम्हों – तुम सब), मि (मैं), सकार (दूसरे दिन का सबेरा), खाल्या (नीचे), जवर (पास), बर धातु (बैठना)।

मालवी – नॉव, ओकी, भय गई, रह्यो, ओना, अलाल, तीनी, इत, कहन, लग्यो, चल्यो, आयो, गयो, मर्गयो, उत्तर्यो, कसो (कैसो), गयो, मरर्यो, मोरो तोरो, रह गयो।

छत्तीसगढ़ी – भोला, मरस, महिस, देइस, धरिस, आला, बालिस, मारिस, पढ़िस, रइसे, उनला, होसिल।

बघेली – जंगल – माँ, दई (दुर्य), लेइन, गइन, मोर पूंछिन, लगिन, देखिन, आइन, देइन।

बुन्देली – होता, उ (ऊ), नई, करत, कोकी, धड़ी भर, धीर, धर, बनायदे, चलनों भयों, रातभर, टिटरन, खायलेव, घोटतें, ओका, पुरावन लगाउत–लगाउत, मदक, घटबड़, धरखे, लाओ।

मिश्रित शब्द – खान ला (खान बुन्देली का ला मराठी का), मराठी के कर्म कारक की विभक्ति 'ला' अनेक हिन्दी के शब्दों में लगाकर एक शब्द बनाया गया है। यथा– कमाउनला, उताला (उधार से), दहरतीला, खानदानला, उनला।

सकार भई, बस गयो, जबर गयो (मराठी, हिन्दी), स्थानीय रूप – होतिन अता (अतएव), आपरो (अपना), कहक (किस ओर), चघ (चढ़), पालदू (पालूँगा) आदि।

व्याकरणिक रूपरेखा

पंवारी में व्याकरणिक रूपरेखा हिन्दी व्याकरण की तरह ही है। हिन्दी की तरह ही इसमें संज्ञा सर्वनाम के रूप मिलते हैं।

संज्ञा

पंवारी बोली में संज्ञा शब्दों का प्रारंभ स्वर और व्यंजन से होता है। जैसे –

स्वर– इ – किर्न (किरण), विव (सल भरना)। आ–कुन्रा (कुन्ना), नव्रा (पति)। इ – गोन्द्दि (प्याज), सरइ (एक प्रकार का वृक्ष)। क – नातु (नानी), बछारु (भेंस का बच्चा)। ओ – दिवो (मिट्टी का दिया), गरो (गला)।

व्यंजन – क – मस्तक (मस्तक), फराक। ख – राख्, पाङ्ख। ग – बाग, साग। घ – माघ्, बाघ। च – अडिच् (अढ़ाई), कुरुच। ज् – अनाज, साज। झ– साँझ, बाँझ। ट् – खाट्, पाट। ठ – आठ, सोंठ। ड – घुबड़, घुरुड। ढ – रिढ, डेढ। त् – वरात्, मेहनत्। थ – तिरथ्, नथ। द् – सारद (पक्षी विशेष), सिनद्। ध – बाँध, बुध। न् – फागुन, पिन्। प – कुलुप, झोप्। फ – गोफ, कफ। ब – खाम्ब, किताब। भ – लाभ लाद। म – मलम्, घाम। य – गाय, चाय। र् – आखिर, उतार। ल् – उथल, कमल। व – आव्, कासव, जाव, खाव। स – उपास, कास।

संज्ञा के रूप

पंवारी में संज्ञा शब्दों के पाँच रूप मिलते हैं – 1. व्यक्तिवाचक संज्ञा– बेनीराम, सुखलाल, रामपुर। 2. जातिवाचक संज्ञा– हत्ति, घोड़ा, पहाड़ आदि। 3. भाववाचक संज्ञा– खटास, पियास आदि। 4. समुदायवाचक संज्ञा– सेवा मण्डलि, टोलि आदि। 5. द्रव्यवाचक संज्ञा– फल, अनाज, ताम्बा आदि।

लिंगविधान

पंवारी में पुल्लिंग और स्त्रीलिंग दो ही लिंग मिलते हैं। नपुंसकलिंग पंवारी में नहीं हैं। पंवारी में अकारान्त, इकारान्त, ओकारान्त और व्यंजनान्त शब्द पुल्लिंग संज्ञा में होते हैं। जबकि स्त्रीलिंग संज्ञा में इकारान्त, उकारान्त और व्यजनान्त शब्द होते हैं।

फारसी शब्द – पंवारी में फारसी शब्द मिलते हैं। जैसे– गुलाब, किताब, लोटा, कोसिस आदि।

शब्द युग्म – प्रायः प्रथम शब्द पुल्लिंग और द्वितीय शब्द स्त्रीलिंग होता है, जैसे– मोर बाप–माय आदि।

उभयलिंग – पंवारी में अंग्रेजी से कुछ उधार लिये हुए शब्द हैं, जो उभयलिंगी हैं। जैसे– डोकेला (गिरगिट), चिलहरा (गिरहरी) आदि।

वचन विधान – पंवारी में दो ही वचन होते हैं– एकवचन और बहुवचन। पंवारी में बहुवचन शब्दों एवं प्रत्ययों का प्रयोग प्रायः होता ही नहीं हैं। अब बालाघाट, सिवनी, भण्डारा के आस–पास बसने वाले पंवार छत्तीसगढ़ी और मराठी के प्रभाव के कारण कुछ शब्दों का भी प्रयोग करने लगे हैं।

कारक–विधान या विभक्ति

पंवारी बोली में दो वचन और छह कारक हैं– कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, सम्बन्ध और अधिकरण। इन छह कारकों को छह विभक्तियों में बाँट दिया गया है। इन सब विभक्तियों को चिह्न कहते हैं। इन्हें परसर्ग भी कहा जाता है। यथा– मारि टुरिया बगिचा मा से (मेरी लड़की बगीचे में है)।

सर्वनाम

पंवारी में मध्यम पुरुष एकवचन के लिए तू और अन्य पुरुष एकवचन के लिए 'उ' सर्वनाम शब्द प्रयुक्त होते हैं। इसमें किसी के विकारी रूप होते हैं और किसी के नहीं। पदबन्धों में सर्वनाम मुख्य स्थान पर भी आता है। यथा– मि तोरो सङ्ग बाजारु जाहूँ। (मैं तुम्हारे साथ बाजार जाऊँगी)।

इस वाक्य में पदबन्ध 'तोरो संग' के साथ तोरो मुख्य स्थान पर है।

प्रयोग के अनुसार पंवारी बोली में सर्वनाम निम्नानुसार विभक्त किये जा सकते हैं– 1. पुरुषवाचक सर्वनाम, 2. सम्बन्धवाचक सर्वनाम, 3. निजावाचक सर्वनाम, 4. प्रश्नवाचक सर्वनाम। पंवारी बोली में पुरुषवाचक सर्वनाम के तीन रूप मिलते हैं – उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष। पंवारी में सम्बन्ध वाचक के एकवचन पुल्लिंग का रूप 'जो' और बहुवचन में 'जे' तथा स्त्रीलिंग में भी एकवचन में 'जो' और बहुवचन में 'जे' रूप हैं। निजवाचक सर्वनाम के अन्तर्गत वर्धातटीय पंवारी में 'आपालो' शब्द का प्रयोग किया जाता है। पंवारी में प्रश्नवाचक सर्वनाम एकवचन में 'कौन' और बहुवचन में 'काजक' शब्दों का प्रयोग मिलता है।

विशेषण

पंवारी में भी संज्ञा की विशेषता बताने वाले विशेषण शब्द मिलते हैं – मोठि पुस्तक् (मोटी किताब) आदि।

विशेषण के प्रकार –

गुणवाचक विशेषण – (अ) विकारी या रूपान्तरित– ये लिंग वचन के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं – मोरो टुरा कारो से, (मेरा लड़का काला है) अन्य शब्द– निकागो (खाली), जितो (जिताना)। पतलो (पतला), लम्बो (लम्बा), सिद्दो (सीधा)।

(ब) अविकारी या अरूपान्तरित गुण वाचक विशेषण– गरम् (गरम), खराब् (बुरा), गोड़ (मीठा), कुर् (क्रूर), बुदि (खुरदुरा), नविन (नवीन), कन्जुस (कंजूस), उथड़ (उथला)।

संख्यावाचक विशेषण – (अ) पंवारी बोली के संख्यावाची विशेषण शब्द छत्तीसगढ़ी और मराठी संख्यावाची शब्दों के अधिक समीप हैं। पंवारी में भी कई प्रकार के संख्यावाची विशेषण हैं। अशिक्षित और अनपढ़ों के बीच अभी भी बीस तक की संख्या का प्रचलन है। उदाहरण– येक्, दुय, तिन्, चार, पाच्, सय्, सात्, आठ्, नव्, दस्, अकरा, बारा, तेरा, चव्दा, सोला, सत्रा, अट्रा, एकोनिस, बिस् आदि।

(ब) क्रम वाचक संख्या विशेषण – पहिल्या, दुसरो, तिसरो, चउथो, पाँचवो आदि।

(स) अपूर्णांक वाचक या भिन्नतात्मक संख्यावाचक विशेषण – पाव (1/4), आद्दो (1/2), पउन (3/4), सवा (1–1/4), डेढ़ (1–1/2), अडिच् (1 1/2)।

परिमाणवाचक विशेषण – थोर (थोड़ा), बहुत (सब), अर्द – (अध्रो), येत्रो (इतना) आदि।

समूहवाचक – गड़ा (चार का समूह), चोल (चार का समूह), पन्जा (पाँच का समूह), कोरि (बीस का समूह), सवकड़ा (सौ का समूह)।

समानुपाती संख्यावाचक – गुन, तिगुन आदि इसके अलावा अन्य संख्यावाचक विशेषण भी मिलते हैं।

प्रत्यय

पंवारी में कुछ हिन्दी के प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं और कुछ विदेशी। इस बोली में प्रयुक्त प्रत्ययों का स्वरूप इस प्रकार है –

अइ	–	मिठो–अई = मिठाइ।	नंगा+अई = नंगाई।
अत	–	भार+अत = भारत।	खप्+अत = खपत।
अन्	–	कर+अन् = करन।	चल्+अन = चलन।
अन्को	–	आव्+अन्को = आवनको।	बिक्+अनको = बिकनको।
आई	–	मोटा+आई = मोटाई।	अच्छो+आई = अच्छाई
आउ	–	जल्+आउ = जलाउ।	बिक+आउ = बिकाउ।
आत्	–	ले+आत् = ले आत।	ढल+आत् = ढलात।
आर	–	सन+आर = सुनार।	गम्+आर् = गमार।
आलु	–	दया+आलु = दयालु।	कृप+आलु = कृपालु।
आव्	–	पहन्+आव् = पहनाव।	जम्+आव् = जमाव।
आस्	–	मिठो+आस् = मिठास्।	पि+आस् = पिआस।
इआ	–	डब्बा+इया = डिबिया।	खाट्+इया = खटिया।
इन	–	लोहार+इन = लोहारिन।	कलार+इन = कलारिन।
इ1	–	चोर+इ = चारि।	गरिब+इ = गरिबि।
इ2	–	गुलाब+इ = गुलाबि।	धन+इ = धनि।
इ3	–	डोकरा+इ = डोकरि।	टुरा+इ = टुरि।
इलो	–	रस+इलो = रसिलो।	गांठ+इलो = गठिलो।
एरा	–	लुट+एरा = लुटेरा।	बस+एरा = बसेरा।
एल	–	खपरा+एल = खपरेल।	गोल+एल = गुलेल।
एलु	–	घर–एलु = घरेलु।	
एला	–	अक+एला = अकेला।	टुक+एला = टुकेला।
ओता	–	समज्+ओता = समझौता।	
ओना	–	खेल+ओना = खिलोना।	बिछ+ओना = बिछोना।
क	–	झल+एक = झलक।	टप+क = टपक।
के	–	जोड़+के = जोड़के।	रच+के = रचके।
कि	–	गाय्+कि = गायकि।	भस्+कि = भसकि।
खे	–	लगाय+खे = लगायखे।	

कना	–	उद+कना = उदकना।	आपिक+कना = आपिकना।
खना	–	कर्+खन = करखना।	बुलाय+खना = बुलायखना।
कर	–	ढुन्ड+कर = ढुन्डकर।	खर – बुलाय+खर = बुलायखर।
खोर	–	घुस+खोर = खुसखोर।	आदम+खोर = आदमखोर।
गर्	–	जादु+गर = जादुगर।	रफु+गर = रफुगर।
गार	–	रोज+गार = रोजगार।	याद+गार = यादगार।
जोर	–	कम+जोर = कमजोर।	
ड़ा	–	चाम+ड़ा = चमड़ा।	लुग+डा = लुगड़ा (साड़ी)
दान	–	फुल+दान = फुलदान।	कलम+दान = कलमदान।
दार	–	थान्+दार = थानेदार।	समझ+दार = समझदार।
ना	–	बिक+ना = बिकना।	कर+ना = करना।
पन्	–	बच्चा+पन = बचपन।	पागल+पन = पागलपन।
बाज्	–	दगा+बाज = दगाबाज।	नशा+बाज = नशेबाज।
वर्	–	जान्+वर = जानवर।	नाम+वर = नामवर।
वान्	–	धन्+वान = धनवान।	गुन+वान = गुनवान।
वार्	–	माह+वार = माहवार।	हफ्ते+वार = हफ्तेवार।
सरि	–	जाय+सरि = जायसरि।	

उपसर्ग

उपसर्ग का मूल अर्थ है पास खड़ा हुआ या पास लाकर सृजन करने वाला। इसे किसी शब्द या धातु के प्रारंभ में जोड़ते हैं। पंवारी बोली में उपसर्ग प्रायः हिन्दी की भांति ही हैं। प्रमुख उपसर्ग इस प्रकार हैं –

अ – यह हीनता, अभाव या शून्यता का द्योतक है –
अ+धर्म = अधर्म। अ+काल = अकाल।

अन – यह भी अभाव, हीनता या निषेध का द्योतक है –
अन्+मोल = अन्मोल। अन्+पढ़ = अन्पढ़।

अप – यह उपसर्ग 'बुरा' अर्थ का द्योतक है।
अप्+मान् = अप्मान। अप्+सकुन = अप्सकुन्।

अव् – इस उपसर्ग का अर्थ बुरा, हीन या नीच है।
ओ (अव्)+गुन् = ओगुन।

उत् – यह उपट, ऊँचा आदि अर्थ का बोधक है।
उत् + पात् = उत्पात।

उप् – यह उपसर्ग सहायक, गौण, छोटा आदि का बोधक है।
उप्+सरपंच = उपसरपंच। उप+सभापति = उप्सभापति।

कु – यह उपसर्ग बुरा का बोधक है।
कु+लच्छन = कुलच्छन। कु+चाल् = कुचाल्।

दुर – यह बुरा या कठिन में प्रयुक्त होता है।
दुर+जन = दुरजन। दुर+दसा = दुर्दसा।

नि – यह निषेधार्थक उपसर्ग है।
नि+रोग = निरोग। नि+डर = निडर।

प्र – पर्+लय = पर्लय (प्रलय)। पट्+चाट् = पर्चार् (प्रचार)।

परि – चह 'चारों ओर' या पूर्ण में प्रयुक्त होता है।
परि+करमा = परिकरमा (परिक्रमा)

पर – इसका प्रयोग 'दूसरा' के अर्थ में होता है।
पर+देश = परदेश्। पर्+वस = पर्वस।

स – यह 'अच्छा' अर्थ का बोधक है।
स+पुत् = सपुत। स+फल = सफल्।

सु – अच्छा, सफल, ज्यादा आदि।
सु+कर्म = सुकरम। सु+जान = सुजान।

विदेशी उपसर्ग

अल्	–	अल्+बेला = अल्बेला (सुन्दर)।	
दर्	–	दर्+असल = दरअसल।	
कम्	–	कम+जोर = कमजोर।	
बद्	–	बद्+नसिब = बदनसिब्।	बद्+नाम = बद्नाम।
बे	–	बे+कसूर = बेकसूर।	बे+खबर = बेखबर।
ला	–	ला+पता = लापता।	ला+वारिस = लावारिस।
सर	–	सर+पंच = सरपंच।	

समास

पंवारी बोली में अन्य भारतीय भाषाओं और बुन्देली की अन्य बोलियों की तरह सब प्रकार के शब्दों के संयोग से समास बनते हैं। इसके अन्तर्गत आते हैं।

1. तत्सम – बाभ्हन देवता (ब्राम्हण) देवता। गऊ माय (गो–माता)।
2. अर्धतत्सम – रातदिन (रात्रि दिवस)। त्रिफल (त्रिपल)।
3. देशी – खल्बट्टा (खल्बट्टा)। लडुआ पपची (लड्डू और पपड़ी)।
4. विदेशी – ढोर डाक्तर (पशु चिकित्सक)। लाट् साहिब (लाट्–साहब)।

पंवारी बोली में निम्नलिखित सामासिक पद् मिलते हैं –

द्वन्द्व समास

नाक कान (नाक और कान)। डारापाती (डाल और पत्ती)। दार भात् (दाल और भात)। धरम करम (धर्म और कर्म)। खेति वारि (खेती बारी) और राजा पर्जा (राजा और प्रजा) आदि।

तत्पुरुष समास

कान्या हाउस (कांजी हाउस)। गट्सोलि (गले की माला)। गाड्याजो (गाड़ीवान)। गोन्दा को फूल (गेंदा का फूल)। घर् जमाई (दामाद)। जिठानि (जेठ की स्त्री)। और देव घर (देवता का घर)। देवरानि (देवर की पत्नि) आदि। अधरम, अनगोरहा (अनजाने) आदि।

कर्मधारय समास

कठुलिम्ब (कडुवा नीम)। उडन खटोला (उड़न खटोला)। लाल् कमल् (लाल कमल)। पाण्ड्रोगाय् (सफेद गाय) आदि।

द्विगु समास

सात खन्डा (सातखंड वाला महल)। चवरङ्ग (चौरंग)। तिन् फाटा (तिगड्डा)। पन्चामिरित (पंचामृत) आदि।

बहुब्रीहि समास

किरतनकार (कीर्तन करने वाला)। कान्खोदना (कान खोदने वाला)। गोतपुतरु (दत्तक पुत्र)। चिट्टि सर्प (अजगर) आदि।

अव्ययीभाव समास

नित्दिन (प्रतिदिन)। हर–बख्त (हर वक्त)। घर पीछु (प्रत्येक घर से)। गाँव पाछु (प्रत्येक गाँव से) आदि।

क्रियापद

किसी कार्य, घटना या अस्तित्व का बोध कराने वाले शब्द या शब्दसमूह को क्रिया कहा जाता है। प्रत्येक वाक्य में क्रिया अवश्य होती है। कई स्थानों में क्रिया प्रत्यक्ष न होकर परोक्ष होती है और उसका भाव स्पष्ट समझ में आ जाता है।

धातुएँ

क्रिया के मूल रूप को धातु कहते हैं। यह क्रिया का वह अंश है, जो क्रिया से बने सभी शब्दों या रूपों में किसी न किसी रूप में हो। जैसे– हँसना, हँसा, हँसना में हँस धातु है। हार्नले के अनुसार हिन्दी धातुओं की संख्या 582 हैं। पंवारी बोली की धातुओं को निम्न प्रकार विभाजित किया जा सकता है– मूल धातुएँ और योगिक धातुएँ।

1. मूल धातुएँ – पंवारी में मूल धातुओं को इस प्रकार विभाजित किया गया है–

अ. प्राचीन संस्कृत से आयी धातुएँ – उपजेब् = उत्पन्न हुए (संस्कृत–उत्पन), चुन्ते = चुनना (सं.–चुनति), जान्से = जनता है (सं.–जानाति) नाच्से = नाचता है (संस्कृत)।

ब. उपसर्ग से घुलीमिली धातुएँ – उग से = उगता है (प्रा.–उग्गय, सं.–उद्गत) उघड् से = उघड्ता है। (सं.–उद्+घाटयति), उछाल से = उछालता है (सं.–उत्+चल), परोसे = परोसा (सं.–परि+वेशव)।

स. प्राचीन और मध्य कालीन आर्य भाषाओं से पंवारी में आए धातु शब्द – कमावसेति= कमाते हैं। (सं.– कथयामि) कुट् से = कटुता है (प्रा.– कुट्ट) सट्कसेव = खिसक गया। (सं– सरक्ल्+गय्) खा से = खाता है। (सं.–खाद्) घट् से = घटाता है (सं.– घटयति) चट् से = चरता है (सं.– चर) आदि।

द. मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं से पंवारी में आयी धातुएँ – उल्ट दिया = उलटा दिया (प्रा.–उलंड) खेल् से = खेलता है (अप.– खल्ल) चाह् से = चाहता है (अप.–चाह) झुल से = झूलता है (प्रा.– झुल्ल) ।

इ. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं से पंवारी में आये धातुरूप – कोट् से = कंघी करे। खय् से = कीचड़ में धँसे। खेदि से = भगाया। खोद् से = खोदा। चुर से = चुरता है। छेकेंव = रोका आदि।

2. यौगिक धातुएँ

पंवारी में यौगिक धातुएँ भी मिलती हैं। इसके दो रूप हैं– प्रेरणार्थक और नामिक।

अ. प्रेरणार्थक – इसके भी दो प्रकार के शब्द मिलते हैं –
प्रथम प्रेरणार्थक – पोसा, बेला, उघड़ा, चिरा, दुहा।
द्वितीय प्रेरणार्थक – पोसवा, बेलवा, उधड़वा, चिरवा, दुहवा।

ब. नामिक धातुएँ – नामिक शब्द की रचना नाम से हुई है, अर्थात् नाम से बनने के कारण इसे नामिक कहते हैं, यथा – उलट्ना=उलट् (उल्लठ)। गभनाना= गरभ (गर्भ)। सकेल्ना= सकेल। पिसना= पिस(पिसई पिन्ष्टि)।

क्रिया के प्रकार

हिन्दी और बुन्देली की अन्य बोलियों की तरह ही पंवारी में भी क्रिया दो प्रकार की होती है–अकर्मक क्रिया और सकर्मक क्रिया। पंवारी में अकर्मक क्रिया के दो रूप मिलते हैं –

(क) पूर्ण अकर्मक क्रिया –	मोहन जासे (मोहन जाता है)। मानुस जासेसि (मनुष्य जाते हैं)।
(ख) अपूर्ण अकर्मक क्रिया –	उ बड़ो हुसार् से (वह बड़ा चतुर है)। मोरो चाकर बेइमान् से (मेरा नौकर बेईमान है)।

सकर्मक क्रिया – पंवारी में सकर्मक क्रिया के तीन रूप मिलते हैं, जो निम्न प्रकार हैं–

(क) पूर्ण सकर्मक क्रिया –	राम रोटि खा से (राम रोटी खाता है) सोहन आम्बा बेचिस् (सोहन आम बेच रहा है)
(ख) अपूर्ण सकर्मक क्रिया –	रामकलि ने आपरि टुरि ला पछरन् को कपड़ा देइस्। (रामकली ने अपनी लड़की को पहनने के लिए कपड़ा दिया)।
(ग) द्विकर्मक क्रिया –	महेश ला इनाम् दियो गयो। (महेश को इनाम दिया गया)।

क्रियारूपों का विकार

पंवारी बोली में क्रिया के रूपों में विकार वाच्य, प्रयोग अर्थ और काल के कारण होते हैं। इनका विवरण निम्न प्रकार है–

वाच्य – वाच्य तीन प्रकार के होते हैं –

1. **कर्तृवाच्य** – राम गयो (राम जा रहा था)। मि पढ्सु (मैं पढ़ता हूँ)।
2. **कर्मवाच्य** – बिमार् ला दवा दे देइस (बीमार को दवा दे दी।
3. **भाववाच्य** – ओला चल् के नहि होय् (उससे अब चला नहीं जाता)।

प्रयोग – प्रयोग भी तीन प्रकार के होते हैं –

1. **कर्तृरि प्रयोग** – सीता चिठि लिख से (सीता चिट्ठी लिखती है)।
2. **कर्मणि प्रयोग** – टुरा न कुर्ता बनवायो (लड़के ने कुर्ता बनवाया)।
3. **भावे प्रयोग** – टुरा न टुरि को बुलायो (लड़के ने लड़की को बुलाया)।

अर्थ – अर्थ पाँच प्रकार के होते हैं –

1. **निश्चयार्थ** – टुरा ने कुर्ता बनवायो (लड़के ने कुर्ता बनवाया)।
2. **सम्भावनार्थ** – मि कुदु, मि पढु (क्या मैं पढूंगा)।
3. **संदेहार्थ** – गोपाल ने लिखो होये (गोपाल ने लिखा होगा)।
4. **संकेतार्थ** – ओन् अधिक काम करि रहेस लउ सुखि होयेस्। उसे अधिक काम किया होता तो सुखी होता।
5. **आज्ञार्थ** – तु जा, तु बोल, उ गहे।

काल

पंवारी बोली में काल के तीनों रूप मिलते हैं। हिन्दी और बुन्देली की अन्य बोलियों की तरह ही पंवारी में तीन काल होते हैं– वर्तमान काल, भूतकाल और भविष्य काल। इसका निश्चित विवरण निम्न प्रकार है –

वर्तमान काल – वर्तमान काल में एकवचन और बहुवचन। तीनों रूपों, उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष में उपयोग किये जाते हैं। पंवारी बोली में 'जा' और 'बस्' धातु के साथ–साथ वर्तमान काल में अन्य धातुएँ भी प्रयुक्त होती हैं –

उत्तम पुरुष – देखुस (देख) – मि देखुस (मैं देखता हूँ)।
आवसु (आव्) – मि आवसु (मैं आता हूँ)।
जासु (जा) – मि जासु (मैं जाता हूँ)।
देख सजन् – आमि देखसजन् (हम देखते हैं) आदि।

मध्यम पुरुष – खासेस् (खा) – तु खासेस् (तू खाता है)।
उठसेस (उठ) – तु उठसेस् (तू उठता है)।
बोलसेस (बोल) – तु बोलसेस् (तू बोलता है) आदि।

अन्य पुरुष – भुक से (भुक्) – उ भुक्से (वह भूँखता है)।
मार से (मार) – उ मार्से (वह मारता है)।
पड़् से (पड़्) – उ पड़्से (वह गिरता है) आदि।

भूतकाल – पंवारी में भूतकाल के रूपों अकर्मक और सकर्मक धातुओं के रूप स्पष्ट दिखायी देते हैं। इसमें भी दो वचन और तीन पुरुष रूप मिले हैं। प्रमुख धातुएँ 'जा' 'हो' 'बस' 'इस' 'कह' 'बा' आदि मिलती हैं।

भविष्यकाल – पंवारी में भविष्यकाल के रूप, धातु में काल वचन और पुरुष दर्शक प्रत्यय बनाये जाते हैं, ये छह हैं। उदाहरण के रूप में 'कर' धातु देखी जा सकती है–

एकवचन		**बहुवचन**
उत्तम पुरुष	– करु	कर्बिन्
मध्यम पुरुष	– कर्जो	करो
अन्य पुरुष	– करे	करेस् (आदि) इसी तरह अन्य धातुओं को भी समझा जा सकता है।

कृदन्त

पंवारी बोली में निम्नलिखित कृदन्त संयुक्त क्रियापद के घटक बनकर उपयोग में लाये जाते हैं –

निमित्तवाचक

क. 'अन्' प्रत्यय से बनने वाले क्रियापद ' कर्+अन् = करन् (करुँ)।
ख. 'अन्' और 'ला' प्रत्यय से बनने वाले क्रिया पद – बनाव+अन्+ला = बनावल्ला (बनाने के लिए)।

अपूर्ण क्रियाद्योतक

(क) अत् प्रत्यय से बनने वाले क्रियापद – मार्+अत = मारत् (मारते हुए)।
(ख) 'ता' प्रत्यय से बनने वाले क्रियापद – साङ्ग+ता = साङ्गता (बताते)।

क्रिया समाप्तिवाचक

(क) 'के' प्रत्यय से बनने वाले क्रियापद – जोड़+के = जोड़के (जोड़कर)।
(ख) 'खे' प्रत्यय से बनने वाले क्रियापद – बुलाय+खे = बुलाय्खे (बुलाकर)।
(ग) 'कना' प्रत्यय से बनने वाले क्रियापद – उट्+कना = उट्कना (उठकर)।
(घ) 'खना' प्रत्यय से बनने वाले क्रियापद – कट्+खना = कटखना (करके)।
(ङ) 'खन' प्रत्यय से बनने वाले क्रियापद – हेड्+खन = हेड्खन् (खींचकर)।
(च) 'क' प्रत्यय से बनने वाले क्रियापद – ढुन्ड+कर = ढुन्डकर् (खोजकर)।
(छ) 'खर' प्रत्यय से बनने वाले क्रियापद – बुलाय+खर = बुलायखर (बुलाकर)।

भविष्यवाचक

कुछ ऐसे कृदन्त प्रत्यय – आव्+अन्को = आवन्को (आने का)।

पूर्ण क्रियाद्योतक

(क) 'लाक' प्रत्यय – उटे+लाक = उटेलाक् (उठते से ही)।
(ख) 'सरि' प्रत्यय – जाय+सरि = जायसरि (जाते ही से)।
(ग) 'पर' प्रत्यय – आयो+पर् = आयोपर (आने पर)।

धातुसाधित संज्ञा

प्रत्यय 'ना' – बिक्+ना = बिक्ना (बेचना) आदि इसी तरह से।

पंवारी बोली में अव्यय

परसर्ग – विभक्ति और प्रत्ययों के अनुसार ही संज्ञाशब्दों का सम्बन्ध वाक्य के अन्य घटकों से जोड़ने का काम परसर्ग करते है। पंवारी में परसर्ग की पर्याप्त चर्चा मिलती है– मोरो बहिननों गाना कहिस्। (मेरी बहिन ने गाना गाया)।

1. सम्प्रदाय कारक में 'ला' परसर्ग का प्रयोग होता है। कहीं–कहीं 'ला' कर्म द्योतक है– उनला सब्ला जेवन् ला बुलाव (उन सबा को खाने के लिए बुलाव्)।

2. 'को' सम्बन्ध कारकीय परसर्ग द्योतक प्रत्यय है– मि सब्को मङगलक् आयो। (मैं सबके पीछे से आया)।

3. 'म' अधिकरण कारण द्योतक परसर्ग है– उ खेत् मा लक् गयो। (वह खेत में से गया)।

निपात – पंवारी बोली में कतिपय ऐसे अव्यय शब्द हैं जो, वाक्य में किसी शब्द या पद विशेष पर बल देने के लिए उस शब्द या पद के बाद प्रयुक्त होते हैं। ऐसे शब्दों को 'निपात' कहते हैं –

1. च् संज्ञा – छाताच् (छाता ही), भंडाराच् (भंडारा ही)।
विशेषण – कारोच् (काला ही), पाण्डरोच् (सफेद ही)।
क्रियाविशेषण – आगुच् (आगे ही), अलगेच् (अलगाही)।

2. एच संज्ञा – बापेच (बापही), किताबेच (किताब ही)।
सर्वनाम – मारोच् (मेराही), तोरोच (तुम्हारा ही)।
विशेषण – खराबेच (खराबही), दसेच् (दस ही)।
क्रियाविशेषण – निपटेच् (बिलकुल ही)।

3. ओ संज्ञा – किताबों (किताब भी)।
सर्वनाम – कोनो (कोई भी), जोनो (जो भी)।

क्रियाविशेषण

क्रिया की विशेषता बताने वाले अविकारी शब्द क्रियाविशेषण कहलाते हैं। पंवारी बोली में क्रियाविशेषणों का विभाजन तीन प्रकार से किया गया है– रूप के अनुसार, प्रयोग के अनुसार और अर्थ के अनुसार।

1. रूप के अनुसार – पंवारी बोली में तीन प्रकार के क्रिया विशेषण शब्द मिलते हैं – मूल, यौगिक और स्थानीय।

(क) मूल शब्द – जबर, दुदुर, फिर, आगे, पाछू।
(ख) यौगिक शब्द – पाहाट् ले, अच्छो से, कहते, चलत, खात्–खत, कब्।
(ग) स्थानीय – 1. संज्ञा – टुरा को हात् नहानो सेति। (लड़के के हाथ छोटे हैं)।

2. सर्वनाम – मि खाउँ (मैं भी खऊँगा)।

3. विशेषण – परमेश्वरनि कोन बड़ो (परमेश्वर से कौन बड़ा है)।

4. वर्तमान कालिक कृदन्त – हत्ति झुमत आवसे (हाथी झूमता हुआ आ रहा है)।

5. भूतकालिक कृदन्त – वा टुरि घबरानो भाग् गयो।

6. पूर्णकालिक कृदन्त – उ झालड़ा पड्के मार् गयो (वह झाड़ से गिर कर मर गया)।

अव्यय के अन्य प्रकार

1.संबंध सूचक अव्यय, 2. समुच्चय बोधक अव्यय।

पंवारी बोली का वाक्यविन्यास

पंवारी बोली में छोटे और बड़े दोनों प्रकार के वाक्य मिलते हैं। पंवारी में रचना की दृष्टि से चार प्रकार के वाक्य देखे जाते हैं – (क) साधारण वाक्य, (ख) उप वाक्य, (ग) मिश्र वाक्य, (घ) संयुक्त वाक्य।

क. साधारण वाक्य – साधारण वाक्य में एक उद्देश्य और एक विधेय होता है। प्रत्येक वाक्य का प्रमुख अंग उद्देश्य हैं। इसे ही कर्ता भी कहते हैं– उ मानुस अन्धरा से (वह आदमी अंधा है)। साधारण वाक्य के पाँच प्रकार होते हैं– अकर्मकीय, एक कर्मकीय, द्विकर्मकीय, कर्तापूरक और कर्मपूरक।

ख. उपवाक्य – जब दो या दो से अधिक सरल वाक्यों को मिलाकर एक वाक्य बनाया जाता है, तब एक वाक्य में मिलने वाले दूसरे वाक्य को उपवाक्य कहते हैं। पंवारी बोली में उपवाक्य दो प्रकार के होते हैं – आश्रित उपवाक्य और विशेषण उपवाक्य।

आश्रित उपवाक्य – जो प्रधान वाक्य होकर दूसरे वाक्यों के आश्रित होते हैं– वोका आयोवर् मि जाहूँ (उसके आने पर मैं जाऊँगा) 'वोका आयो पर' यह आश्रित वाक्य है। आश्रित उपवाक्य के तीन भेद हैं–

(अ) संज्ञा उपवाक्य, (ब) विशेषण उपवाक्य, (3) क्रिया विशेषण उपवाक्य।

(अ) संज्ञा उपवाक्य – पंवारी में संज्ञा उपवाक्यों का प्रयोग निम्नलिखित स्थितियों में होता है –

उद्देश्य के रूप में – यब् बात् कोइ नइ जानत् कि मेहनत को फल् मिलतेच्। (यह बात कोई नहीं जानता की मेहनत का फल मिलता है)।

कर्म के रूप में – आमि नइ जानत् कि आमारो भाग् मा का लिखित्। (हम नहीं जानते कि हमारे भाग्य में क्या लिखा है)।

पूर्ति के रूप में – मोरो विचार् से कि अब मिजन् सेवा मा जिवन लगा देहुं। (मेरा विचार है कि अब मैं जनसेवा में जीवन लगा दूँगा)।

(ब) विशेषण उपवाक्य – पंवारी में विशेषण उपवाक्यों का प्रयोग इन स्थितियों में होता है –

उद्‌देश्य के साथ – या टुरा जो तुम्हारो घर आवसे त कहिं भाग गयो।
कर्म के साथ – या आपुन, भाइला जो अब नइ रहे मारत् होतो।
पूर्ति के साथ – यव् कोन् सो मानुस् से जन् आपुन्, मायनि जलम्, नहिं लियो।

(स) क्रियाविशेषण उपवाक्य – पंवारी बोली में ये पाँच प्रकार के होते हैं –

कालवाचक – जब् पानि् नहीं बरसे तब् अकाल् पडिस्।
स्थानवाचक – जहां तुम जासे वहां आमारो भाई वडिं रह्से।
रीतिवाचक – जसो तु खासेस पिव्सेस तसो सब खासे पिवसे।
परिमाणवाचक – जसो–जसो समय् परात् जात् तसो–तसो भाव् बढ्से।
कारकवाचक – तु बुरो ना मानो त तुमनि येक् बात कहूँ।

प्रधानवाक्य – जो उपवाक्य में गौण न होकर प्रधान हो उसे प्रधान उपवाक्य कहते हैं। ओन् अब्भ्यास करि रहेस् त पास होये। (उसने अभ्यास किया होगा तो पास होगा)।

(ग) मिश्रित वाक्य – जिस वाक्य में एक वाक्य प्रधान हो और उसके अतिरिक्त एक या एक से अधिक आश्रित उपवाक्य हो तो उसे मिश्रित वाक्य कहते हैं – मि जेन्दावर् देखेव् ओन्दाबर् उ जमिन् पर् पडेव होतो। (मैंने जिस समय देखा, उस समय पर पड़ा था)।

(घ) संयुक्त वाक्य – जिस वाक्य में कोई उपवाक्य प्रधान अथवा आश्रित न हो उसे संयुक्त वाक्य कहते हैं – 'दिवस भर् काम् कर् ना राति सोवे' (दिन भर काम कर और रात भर सोवो)।

अर्थ की दृष्टि से वाक्य के प्रकार

पंवारी बोली में अर्थ की दृष्टि से वाक्यों के आठ प्रकार मिलते हैं–

1. **विधिवाचक** – उ ऐक पुस्तक लिखते (वह एक पुस्तक लिखता है)।
2. **विशेषवाचक** – मेव् खान् जोग्ता न हाय (यह खाने लायक नहीं है)।
3. **आज्ञावाचक** – तोला जानो पाडे (तेरे को जाना पड़ेगा)।
4. **प्रश्नवाचक** – तोरा टुरा कहां संति ? (तेरा लड़का कहाँ हैं ?)।
5. **विस्मयवाचक** – अरे! तोला काय् भय् गयो ? (अरे! तुझे क्या हो गया ?)
6. **सन्देहवाचक** – उ इस्कुल्लक आवत् चे रहो (वह स्कूल से आता ही होगा)।
7. **संकेतवाचक** – यदि देश् मा रामराज् होतात साजरा से। (यदि देश में रामराज हो जाये तो अच्छा है)।

शैली की दृष्टि से वाक्य प्रकार – तीन भेद

1. **शिथिल वाक्य** – या मोरि पुस्तक् हाय (यह मेरी पुस्तक है)।
2. **समीकृत वाक्य** – जसो नागनाथ तसो साँपनाथ (जैस नागनाथ वैसे सांपनाथ)।
3. **आवर्तुक** – जसो–जसो, तसो–तसो।

क्रिया की दृष्टि से वाक्य प्रकार – तीन भेद

1. **कर्तप्रधान वाक्य** – मि आप्लो घर मा सेव् (मैं अपने घर में हूँ)।
2. **कर्मप्रधान वाक्य** – गाय दुद् देसे् (गाय दूध देती है)।
3. **भावप्रधान वाक्य** – ओला फल् खान के आव्दिसे (उसको फल खाने की इच्छा हुई)।

पदबंध

जब एक से अधिक शब्द एक बंध हो तब उसे वाक्य कहते हैं। वाक्य पदों से बनता हैं। हर बोली, भाषा की एक पद बंध व्यवस्था होती है। पंवारी में ये पाँच प्रकार के होते हैं – (क) संज्ञा पदबंध, (ख) सर्वनाम पदबंध, (ग) विशेषण पदबंध, (घ) क्रिया पदबंध, (ङ) क्रिया विशेषण पदबंध।

शब्द (पद) क्रम

पंवारी बोली के उपवाक्यों में सामान्यतः सर्वप्रथम कर्ता तथा उसके पहले उसका विशेषण फिर कर्म और उसके पहले उसका विशेष, उसके बाद पूरक और उसके पहले उसका विशेष तथा अंत में क्रिया और उसके पहले उसका क्रियाविशेषण आता हैं। यदि वैकल्पिक पदबंधों का प्रयोग न हो तो कर्ता+कर्म+क्रिया पर आधारित उपवाक्य संरचना मिलती है। यथा – टुरा आवसे (लड़का आता है) कर्ता + अकर्मक क्रिया

विशेषण अपने विशेष्य (संज्ञा) के ठीक पहले आते हैं। यदि उनका प्रयोग क्रियात्मक पदों के रूप में होता है, तो वे अपने विशेष्य के बाद आते हैं। सर्वनामों के साथ तो यही स्थिति मिलती है– ओको भाइ हुसार है (उसका भाई चतुर है)।

यदि संज्ञाओं के पूर्व विशेषण आ जाते हैं, तो इनका प्रयोग विशेषणों के पहले होता है। यथा – कुत्रा जोर् लगा धावसे (कुत्ता जोर से भागता है)।

क्रियाविशेषण सामान्यतः क्रिया के पहले आते हैं –

तुम बहार् गयात् (तुम लोग बाहर जाओ)।
'न' या 'पर' युक्त संज्ञा के रूप सामान्यतः क्रिया के पहले आते हैं।

यथा – पुस्तक टेबल् परा से (पुस्तक टेबल पर है)।

संबोधन – ओ टुरा! बाहेर जाय् (ओ लड़का बाहर जाओ)।
प्रश्नवाचक – तुम कब उठसेस् (तुम कब उठती हो ?)।

विस्मयादि बोधक अव्यय

ओहो। हुसार टुरि बाट चुकि (ओहो! होशियार लड़की रास्ता भूल गयी)। आग्रहात्मकता– येव् खान् जागत् ना हाय् (यह खाने योग्य नहीं है)।

नकारात्मक शब्द – मि तुला कभिच, नहि देखेव् (मैंने तेरे को कभी नही देखा)।
पंवारी में नहि, मको, नइ, ना, नाहाति (नाह) नकारात्मक शब्द हैं।

बलाघात निपात – पंवारी बोली में छत्तीसगढ़ी के समान ही बल देने के लिए 'च' का प्रयोग किया जाता है। यथा– उ कहिंच् नाहय् (वह कहीं नहीं है)।

अधिशासन – आको टुरिला बुलाव् (उसकी लड़की को बुलाओ)।

लिंग, क्रिया, विशेषण आदि से संबंध

पंवारी बोली में हिन्दी की अन्य बोलियों की तुलना में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अन्तर यह है कि वर्तमानकाल और भविष्यकाल में संज्ञाओं के लिंग के अनुरूप क्रिया के लिंग में परिवर्तन नहीं होता, किन्तु भूतकाल में और संकेतार्थ में होता है– टुरि बगिचा मा आव्सेसि (लड़कियाँ बगीचे में आती हैं।), राम घर् गयो (राम घर गया)।

ध्वनि समूह एवं विशेषताएँ

पंवारी में स्वरों का वर्गीकरण निम्नानुसार है –

1. जिह्वा की दृष्टि से – स्वरों के उच्चारण में जीभ का कौनसा भाग उठता है, इस दृष्टि से पंवारी में बोली में स्वर तीन प्रकार के होते हैं :– उच्च स्वर – इ, उ। मध्य स्वर – ए, अ, ओ। निम्न स्वर– आ। जीभ की स्थिति के आधार पर – अग्र स्वर – इ, ए। केन्द्र स्वर – अ, आ। पश्च स्वर– उ, ओ।

2. मुख खुलने की दृष्टि से – संवृत – इ, ए, अ, आ। विवृत – उ, ओ।

3. मात्रा के आधार पर – ह्रस्व स्वर – इ, ए, अ, आ, उ, ओ। दीर्घ स्वर – ई, ए, अ, आ, ऊ, ओ। स्वर में ध्वनियों के निर्धारण हेतु व्यक्तिरेकी युग्म।

1. इ – बिसन (एक नाम)	ए– बेसन
2. इ – पिन	ए – पेन
3. इ – पिन	आ – पान
4. इ – भिक	ई – भीख
5. उ – भुक	ऊ – भूख
6. ए– बेट (लोहे की पट्टी)	ओ – बोट् (अंगुली)
7. इ – डिरा (पौधों की शाखायें)	ओ – डोरा (आँख)

स्वरों का विशेष विवरण

हृस्व स्वर को उपयोग में लाने की प्रकृति होने के कारण हृस्वता और दीर्घता मुक्तरूप से परिवर्तनशील समझ में आती है। साधारणतः एक अक्षर वाले शब्दों के शिखरस्थ स्वर दीर्घ मालूम पड़ते हैं। इन कारणों से प्रत्येक स्वर के हृस्व और दीर्घ दो उपवर्ण दिखायी देते हैं।

स्वनिम	उपस्वन	विवरण
इ	इ	उच्चय स्वर, संवृत स्वर है, यह स्वर ध्वनि शब्द के आदि मध्य और अन्त्य में आ सकता है। आदि – बिठोवा (विट्ठल भग.) मध्य – बित्ता (हस्तनाप) अन्त्य – चुटि (चोटी)
इ	ई	उच्च स्वर, अग्र स्वर संवृत, दीर्घ स्वर। आदि स्वर – ईट् (ईंट)

ए	ए	मध्य स्वर, अग्र स्वर संवृत स्वर, हृस्व स्वर। यथा – आदि। एड्का (एक जंगली प्राणी) मध्य – मेण्ड्की (भुजदण्ड की स्नायु)
अः	अ	मध्य स्वर केन्द्र स्वर। संवृतस्वर, हृस्व स्वर यथाः आदि – अन्याड् (अनार) मध्य – कपाट (कपाल) अन्त्य – बिव् (सल भरना)
आ	आ	निम्न स्वर, केन्द्र स्वर। संवृत स्वर, हृस्व स्वर। यथा – आदि – आजड्र (अंजुलि) मध्य – दाडि (दाढ़ी) अन्त्य – डोरा (आँख)
उ	उ	उच्च्व स्वर, पश्च स्वर विवृत्त स्वर, हृस्व स्वर। यथा आदि – बुरा (पावडर) अन्त्य – आसु (आश्रु)
	ऊ	उच्च्व स्वर, पश्च स्वर विकृत स्वर, दीर्घ स्वर। यथा – आदि – ऊरव (गन्ना) मध्य – फूंक (फूंकना) अन्त्य – चालू टूरा (बदमाश बच्चा) बोढ़ू (अंगुली)
	(ओ)	मध्य स्वर, पश्च स्वर विवृत स्वर, हृस्व स्वर। यथा – आदि – ओत्रो (उतना) मध्य – डोत्कि (सिर) अन्त्य – गरो (गला)

(औ)	मध्य स्वर, पश्च स्वर विवृत स्वर, दीर्घ स्वर। यथा – पश्च चटऔ। आदि – खौआ (ज्यादा रखने वाला) मध्य – खटौआ (खट्टा)

संयुक्त स्वर

पंवारी में दो स्वरों का संयोग भी मिलता है। इस बोली में संयुक्त स्वर निम्न प्रकार हैं–

स्वर संयोग	**उदाहरण**
इ+उ = इउ	सिउ (सिंह)
ए+इ = एइ	तोड्देइस
अ+इ = अइ	चइत् (चैत्त), बढई (बढ़ई)
अ+उ = अउ	खउट् (खोट), चौउथ्रा (बढ़ई)
आ+इ = आइ	दवाइ (दवाई), जबाई (जवाई)
आ+आ = आआ	दाआजि (दादा)
आ+उ = आउ	चाउ्र (चावल), बिजाउर (भैंसा)
आ+ओ = आओ	भावोजि (जेठ), बाओति बेहट = (कूप बावड़ी)

पंवारी में व्यंजन ध्वनियों का वर्गीकरण

पंवारी में व्यंजनों का विरोध स्पष्ट करने के लिए कुछ व्यंजन ध्वनियाँ निम्न व्यतिरेकी युग्म–मानकों के आधार पर निर्धारित की गयी हैं –

आदि –

प्	पट्टा	(कमर में बांधने का पट्टा)
व्	बोड्	(हजामत करना)
भ्	भार्	(वजन)
त्	तारु	(तालु)
द्	दाद्	(दारू)
भ्	भोड्	(लपेटना)
फ्	फाट्	(फार)

मध्य –

प्	काप्रा	(डरपोक)
व्	काव्रा	(कौआ)
प्	पिर्	(निचोड़ना)
फ्	फिर	(घूमना)
त्	माता	(चेचक)
थ्	माथा	(मस्तक)

अन्त्य –

त्	बात्	(दीपक की बाती)
र्	बार्	(आम की बौंर)
द्	पाद्	(पादना)
ल्	पाल्	(छत)
र्	सिर्	(सिर)
ट्	पोट्	(पेट)
ठ्	पाठ्	(पाठ)

पंवारी व्यंजन ध्वनियाँ

1. स्पर्श व्यंजन – यह भेद उच्चारण प्रयत्न का है। इसे स्फोट ध्वनि भी कहते हैं। स्पर्श के प्रयत्न द्वारा ये ध्वनियाँ उच्चरित होती हैं। इनके उच्चारण में दो ध्वनि उच्चारण अंगों का परस्पर पूर्ण स्पर्श होता है, और इसलिए मुखविवर में श्वास वायु को कहीं न कहीं अवरुद्ध होना पड़ता है। क्षण भर रुक जाने के बाद फिर वापस धक्का देकर निकलती है। स्थान के आधार पर इनके निम्न प्रकार हैं –

1. त्र्योष्ठ्य वर्ग – प्, फ्, ब्, भ।
2. दन्त्य वर्ग – त्, थ्, द्, ध्।
3. मूर्धन्य वर्ग – ट्, ठ्, ड्, ढ्,।
4. कंठ्य स्वर – क्, ख्, ग्, घ्।

त्र्योष्ठ्य वर्ग

स्वनिम	**उपस्वन**	**विवरण**
प्	(प्)	यह अघोष, अल्प प्राण, त्र्योष्ठय ध्वनि हैं। यह शब्द के आदि, मध्य और अन्त्य में आ सकती हैं–

आदि – पात्नि (पापी)
मध्य – कपार् (कपाल)
अन्त्य – लेप् (लेप)

दन्त्य वर्ग

स्वनिम	उपस्वन	विवरण
त्	(त्)	यह अघोष, महाप्राण विरहित दन्त्य स्पर्श ध्वनि है। इसके उच्चारण में जीभ की नोंक ऊपरी मसूड़ों का स्पर्श करती है। यह शब्द की तीनों स्थितियों में आ सकती है– आदि – तार् (तालू) मध्य – बत्ता (बात) अन्त्य – दात (दांत)

मूर्धन्य वर्ग

स्वनिम	उपस्वन	विवरण
ट	(ट)	अघोष अल्पप्राण, मूर्धन्य स्पर्श ध्वनि है। इसके उच्चारण में जीभ का अगला भाग उलटकर कठोर तालु का स्पर्श करता है। यह भी शब्द की तीनों स्थितियों में आ सकती है – आदि – टिल्ङगि (घंटी) मध्य – टिलट्लि (खंडया पक्षी) अन्त्य – चिमट् (थोड़ा सा)

कंठ्य वर्ग

स्वनिम	उपस्वन	विवरण
क्	(क्)	यह ध्वनि महाप्राण विरहित कंठ्य स्पर्श, अघोष स्फोटक है। यह शब्द की सभी स्थितियों में उच्चरित होती है –

आदि – कोहोङ्गा (कोहनी)
मध्य – खोक्ला (खाली)
अन्त्य – नाक् (नाक)

स्पर्श – संघर्षी व्यंजन तालव्य वर्ग – च्, छ्, ज्, झ्।

स्वनिम	उपस्वन	विवरण
च्	(च्)	पंवारी में 'च' उपस्वन दो तरह से प्रयुक्त होता है। प्रथम 'च' उपस्वन तालव्य अघोष अल्पप्राण घर्ष स्फोटक है और द्वितीय 'च' उपस्वन दन्त्य अघोष स्फोटक है – आदि – गम्बार् (गमार) मध्य – हुच्कि (हिचकी) अन्त्य – कुरुच (पैर की ऐड़ी) (अन्य उदाहरण इसी तरह)

नासिक्य व्यंजन – ङ्, ञ्, ण्, न्, म्, न्ह् ।

स्वनिम	उपस्वन	विवरण
ङ्	(ङ्)	यह अल्पप्राण कंठ्य अनुनासिक है। यह ध्वनि केवल शब्द के मध्यम में आती है। मध्य – आङ्गूठा (अंगूठा) लारुङ्गा (लाल) पङ्खा (पंखा) (इसी तरह अन्य)

पार्श्विक व्यंजन – ल्

स्वनिम	उपस्वन	विवरण
ल्	(ल्)	यह अल्पप्राण युक्त, दन्त्य सघोष पार्श्विक व्यंजन है। यह शब्द के आदि, मध्य और अन्त्य में आ सकती है – आदि – लात् (पैर) मध्य – बुल्ला (बुलाना) अन्त्य – गाल् (कपोल)

लुण्ठित व्यंजन – 'र्'

स्वनिम	**उपस्वन**	**विवरण**
र्	(र्)	यह पंवारी में महाप्राण विरहित दन्त्य सघोष ध्वनि है। शब्द की तीनों स्थितियों में यह उच्चरित हो सकती है। आदि – रेस (रिबिन) मध्य – बुरा (सिर के बाल) अन्त्य – ढांबर (टूटा–फूटा भाग)

संघर्षी व्यंजन – स् (श्) ह्

स्वनिम	**उपस्वन**	**विवरण**
स्	(स्)	यह अल्पप्राण दन्त्य अघोष घर्षण ध्वनि है, यह शब्द की तीनों स्थितियों में उपलब्ध है । आदि – सपन् (स्वप्न) मध्य – खिसा (जेब) अन्त्य – मास् (मांस) (अन्य उदाहरण इसी तरह हैं)

अर्धस्वर – य्, व्

स्वनिम	**उपस्वन**	**विवरण**
म्	(म्)	यह अल्पप्राण तालव्य अर्धस्वर व्यंजन ध्वनि है। यह शब्द की तीनों स्थितियों में आ सकती है– आदि – वेरूडड (अरंडी) मध्य – गाय्कि (गायकी) अन्त्य – साय् (घपड़ी) (अन्य उदाहरण इसी तरह)

संयुक्त व्यंजन

पंवारी में शब्द के आदि मध्य, अन्त्य में व्यंजन संयोग दिखायी देता है। व्यंजन संयोग दो–तीन और चार व्यंजनों का पंवारी बोली में मिलता है। व्यंजन संयोग निम्न प्रकार हैं –

द्विव्यंजनात्मक संयोग –

क्+य्	क्याट्लि	(केटली)
ख्+य्	ख्याल्	(ख्याल)
ग्+र्	ग्रन्थ	(पुस्तक)
ज्+म्	ज्या	(जी)
प्+य्	प्याला	(प्याला)
ब्+य्	ब्याज्	(ब्याज)
स्+ल्	स्लोक्	(श्लोक)

मध्यम व्यंजन संयोग –

क्+क्	हुक्का	(हुक्का)
ख्+व्	पख्वा	(पखवाड़ा)
ग्+द्	बोज्दा	(अंधकारमय भाग)
घ्+य्	बाघ्या	(बाघ)
च्+च्	गच्चि	(गच्ची)
ज्+न्	बिज्ना	(वीणा)
ट्+ठ्	मिट्ठू	(तोता)

अन्त्य व्यंजन संयोग –

ङ+ग्	चव्रङ्ग	(पूजा की चौक के)
न्+ज्	गन्ज्	(गंज)
न्+द्	खान्द्	(खाई)
म्+ब्	खाम्व	(खम्भा)

त्रिव्यंजनात्मक संयोग – त्रिव्यंजनात्मक संयोग केवल मध्य स्थान में ही दिखायी देता है –

क्+त्+य्	मुक्त्यार	(हवलदार)
ङ्+ग्+ड्	लङ्ग्डा	(लंगड़ा)
त्+न्+य्	पुतन्या	(भतीजा)
न्+ड्+य्	उन्डयार	(एकखेल)
म्+ब्+ड्	गुम्बदि	(गाँठ)
र्+न्+ज्	करन्जि	(करंजी)
द्+द्+य्	विद्द्या	(विद्या)

चतुर्थ व्यंजनात्मक संयोग –

ङ्+ग्+न्+य्	बोङ्ग्न्या	
ङ्+ग्+र्+य्	गोङ्ग्न्याबाल	(एक प्रकार का साग)
न्+ड्+ग्+य्	लान्ड्ग्या	(तेंदुआ)

अक्षर व्यवस्था

पंवारी बोली में कम से कम एक और अधिक से अधिक चार ध्वनियाँ होती हैं। वितरण के आधार पर इस बोली में अक्षरों के आठ प्रकार होते हैं। ये आठ प्रकार सोदाहरण इस प्रकार हैं –

1. स्वर

अ + ठाय् = अठाय (याद करके)
सि + उ = सिउ (सिंह)
भा + ओजि = भाओजि (जेठ)

2. स्वर और व्यंजन

अक + सा = अकसा (चीला)
च + इत = चइत् (चैत्त)
चा + उर् = चाडर् (चावल)

3. व्यंजन और स्वर

ओत् + रो = ओत्रा (उतरो)
क + जा = कजा (झगड़ा)
उस् + टो = उसटो (झूठा)
पि + रो = पिरो (पीला)

4. व्यंजन–स्वर और व्यंजन

अज् + रन् = अज्रन् (अजीर्ण)
धर् + ति = धरति (धरती)
बा + दर् = बादर् (आकाश)

5. व्यंजन–व्यंजन और स्वर

प्ला + ला = प्याला (प्याला)
लान्ड् + ग्या = आड्न्या (तेंदुआ)

6. स्वर – व्यंजन और व्यंजन

आन्द + रा = आन्द्रा (अंधा)
आङ्ग + ठा = आंगठा (अंगूठा)
आडन् + ग = आङ्ग (शरीर)

7. व्यंजन – व्यंजन, स्वर और व्यंजन

अ + न्याड् = अन्याड् (अनार)
अव् + भ्यास = अव्भ्यास (अभ्यास)

8. व्यंजन – स्वर, व्यंजन और व्यंजन

मोड्ना – न्या = मोङगन्या (पेशाब करना)
बोड्ग – न्या = बोड्गन्या (गाड़ी माखने का)

शब्द

शब्द के संबंध में डॉ. रामेश्वर अग्रवाल ने लिखा– 'धातु, प्रतिपादित ध्वनिग्राम जिस तरह भाषा विश्लेषण के परिणाम हैं, उस तरह शब्द तत्त्व नहीं। वह तो भाषा की एक ऐसी इकाई है, जो बाह्य जगत से अपना सीधा प्रतीकात्मक सम्बंध रखती है। शब्द में व्याकरणिक प्रत्यय लगाकर ही वह प्रयोगाई बनता है, अर्थात् बाह्य जगत् के द्योतक शब्द को भाषा के अन्तःक्षेत्र में प्रवेश करने के लिए कुछ सम्बन्ध नियमों का निर्वाह करना पडता है।'[1] इसी तरह से शब्द के बारे में डॉ. कृष्णलाल हंस ने भी लिखा– 'हिन्दी के तो क्या संस्कृत के भी सभी शब्दों का धातुगत आधार ढूँढ निकालना संभव नहीं जान पड़ता।'[2] इस दृष्टि से शब्दों को दो भागों में बाँटा जा सकता है– धातुज और अधातुज। पंवारी में दोनों प्रकार के शब्द मिलते हैं। पंवारी बोली के शब्द –स्वर और व्यंजन दोनों से आरम्भ होते हैं। विवरण निम्न प्रकार है –

स्वर –

अ – से – अज् (आज), अजरन (अजीर्ण), अबव (आश्चर्यजनक), अय्मावस् (अमावस्या), असपताल (अस्पताल)।

अ – से – आङ्ग (शरीर), आङ्गन (आंगन), आङ्गि (चोली), आठ् (आठ), आनजिर् (अंजीर), आन्जन् (अंजन)।

इ – से – इसेबा (विठोबा), इत्वार (रविवार), इस्कूल् (विद्यालय), इसतुल् (स्टूल), इस्तरि (इस्त्री)।

उ – से – उचो (ऊँचा), उच्छाव् (उत्सव), उत्रा (उत्तरा नक्षत्र), उद्बति (उदबत्ती)।

ए – से – एड़का (जंगली जानवर), ओने (उसको), ओहो (एक उद्गार)।

व्यंजन

क – से – कटिष् (हजामत), कपार (कपाल), कबूदर (कबूतर), कर्जा (कर्ज), कलम् (लेखनी)।

ख – से – खन्दि (खंडी), खाकस (खसखस), खात् (खत), खाति (लोहार), खारक (छोहाड़ा)।

ग – से – गङ्गाऊ (उत्तर दिशा), गज़रा (वेणी), गन्जा (गांजा), गन्द (गंध), गन्पति (गणपति)।

घ – से – घन्टि (घंटी), घाम (पसीना), घुस (घूस), घोड़ि (घोड़ी)।

च – से – चइत (चैत्र मास), चउक (चौक), चद्क् (चाक्), चद्र (चादर)।

छ – से – छटाक् (छटाक), छट्का (चाबूक), छत्ता (छत्री), छप्पर (छप्पर)।

ज – से – जमिन् (जमीन), जरायुज (थोड़ा), जवान् (तरुण), जिब् (जीभ)।

झ – से – झक्मक (चकमक), झग्ड़ा (झगड़ा), झालझुल (संध्या/चमकना) झोरा (थेली)।

ट – से – टकलि (तकली), टाङ्ग (टांग), टाप्रु (जानवर के गले में बंधी घंटी) टुरि (लड़की)।

ठ – से – ठाक्र (लट्ठ), ठेका (ताल), ठोमा (माप)।

ड – से – डबना (डब्बा), डाकत्र (डॉक्टर), डुप्ति (रुमाल)।

ढ – से – ढगेल्दे (ढकेलना), ढेकुल (ढेकुल)।

त – से – तपन् (गर्मी, ऊब), तब्ला (तबला), तमाकु (तंबाकू)।

थ – से – थन् (स्तन), थान् (कपड़े का थान), थुटा (कटा हुआ)।

द – से – दक्सिना (दक्षिणा), दर्जन (दर्जन), दाआजि (बाप)।

ध – से – धनुष (इन्द्रधनुष), धरमसाड़ा (धर्मशाला), धुवा (गर्भपात)।

न – से – नख (नख), नङ्गारा (नगाड़ा), निवेद (नैवेद्य)।

प – से – पग्डि (पगड़ी), पङ्खा (पंखा), पछिना (पसीना)।

फ – से – फललाव् (फैलाव), फर् (फल), फागुन (फाल्गुन)।
ब – से – बइल (बैल), बगिचा (बाग), बान्द (बाँधना)।
भ – से – भगत् (भवत), भाउ (भाऊ), भाजि (भाजी), भुरा (गोरा)।
म – से – मग्धा (मघा नक्षत्र), मड् (मल), मरार् (माली), मातर (मात्रा)।
य – से – येक् (एक), येतरो (इतना), मेर् (वेल), येकादस (एकादशी)।
र – से – रकत् (रक्त), रात् (रात्रि), राम्फर् (रामफल), रोटि (रोटी)।
ल – से – लड्गोरा (लंगोटी), लाख (एक लाख), लोडा (लोढ़ा), लाडु (लड्डू)।
व – से – वक् (उलटी), बनदि (बंडी), वस्तर् (वस्त्र), वोंवा (अजवाइन)।
स – से – सकार् (कल), सड्क (शंख), सन्तरा (संतरा), साक्रि (सांकल)।
ह – से – हकाल (बुलावा), हप्ता (सप्ताह), हात् (हाय), हिड्ग (हींग)।

सुरलहरी

सुरलहरी के संबंध में डॉ. भोलाराम तिवारी का मानना है– 'हिन्दी में चीनी भाषा आदि की भाँति संगीतात्मक स्वराघात बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं हैं, किन्तु वाक्य के स्तर पर उसके द्वारा विशेष भावनाओं को व्यक्त करने में सहायता अवश्य ली जाती है'[3]। पंवारी बोली में भी सुरलहरी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। उदाहरण के रूप में एक वाक्य लिया जा सकता है – 'मि सकारि आहुँ' (मैं सुबह आऊँगी)

सामान्य अर्थ में यह वाक्य कल आने की सूचना देता है, किन्तु सुरलहर के परिवर्तन के कारण यही वाक्य निम्न अर्थ का द्योतक बन जाता है –

1. मि सकारि आहुँ – 'सकरि' शब्द पर बल देने से यह वाक्य निश्चयात्मक द्योतक है।
2. मि सकारि आहुँ – 'आहूँ' पर बल देने से यह वाक्य प्रश्नवाचक है।
3. मि सकारि आहुँ – 'मि' पर अधिक और आहुँ पर कम बल देने से यह वाक्य चिन्तनात्मक है।
4. मि सकारि आहुँ – 'सकारि' पर कुछ अधिक और 'आहुँ' पर किंचित् कम बल देकर बोलने पर यह वाक्य क्रोधसूचक है।
5. मि सकारि आहुँ – 'मि' पर बल देने से यह वाक्य आश्चर्यबोधक है।

पंवारी बोली में शब्दों पर सुरलहरी ने अपना प्रभाव दिखाया है। ये शब्द कई प्रकार के होते हैं। जैसे– आश्चर्यबोधक, घृणासूचक, सम्बोधनसूचक, हर्षोद्गार व्यंजक आदि।

बलाघात –

पंवारी में बलाघात भी देखने को मिलते हैं, बलाघात के कई भेद भी दिखायी देते हैं– ध्वनि बलाघात, अक्षर बलाघात, शब्द बलाघात और वाक्य बलाघात आदि।

प्रतिध्वनि शब्द – अदरक – उदरक, अचार – उचार, चुना – उना।

अनुदित सामाजिक शब्द – पुलि–थाना, कागद्–पत्तर, बजार्–हाट, धन–दौलत, दवा–दारु।

निष्कर्ष

इस प्रकार पंवारी बोली मध्यभारत की एक उपबोली मानी जाती है, इसका क्षेत्र तीन राज्यों को छूता है। इसकी सीमा रेखा इन्हीं राज्यों से मिलकर निर्मित होती है। पंवारी बोली का शब्द भण्डार बुन्देली के साथ–साथ मराठी, मालवी, छत्तीसगढ़ी, बघेली और मिश्रित शब्दों से समृद्ध है।

संदर्भ –

1. डॉ. रामेश्वरप्रसाद अग्रवाल; बुन्देली का भाषाशास्त्रीय अध्ययन; पृ. 159. विश्व वि. हिन्दी प्रकाशन लखनऊः 1963
2. डॉ. कृष्णलाल हंस; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप; पृ. 169.
3. डॉ. भोलानाथ तिवारी; हिन्दी भाषा ; पृ. 490.

लोधान्ती बुंदेली

बुन्देली के पूर्वी क्षेत्र की उपबोली को लोधान्ती कहते हैं। यह बुन्देली हमीरपुर जिले के पश्चिमी उत्तर भाग में बोली जाती है। इस बुन्देली रूप में बुन्देली से हटकर स्थानीय बोलियों का मिश्रण पाया जाता है।

लोधान्ती बुन्देली की सीमारेखा का निर्धारण डॉ. हंस के अनुसार हमीरपुर जिले का पश्चिमोत्तर भाग, राठ तहसील, जालौन जिले के उरई क्षेत्र से होता है।[1] लोधान्ती की व्युत्पत्ति और क्षेत्र के बारे में बहुत कम सामग्री मिलती है।

लोधान्ती बुन्देली की व्युत्पत्ति लोधी राजपूतों द्वारा बोली जाने से मानी गयी है। दूसरी ओर राठौर राजपूतों की अधिक संख्या के बीच बोली जाने के कारण इसको राठौरी भी कहा जाता है। डॉ. हंस ने लिखा है– 'इसके बोलने वालों में लोधी राजपूतों की संख्या अधिक होने से इसे 'लोधान्ती' कहा जाता है। बुन्देली के इस रूप को राठौर राजपूत भी बड़ी संख्या में बोलते हैं, इससे यह 'राठौरी' भी कही जाती है।'[2]

शब्द सामर्थ्य

लोधान्ती बुन्देली का जो रूप बोला जाता है, वह कुछ इस प्रकार है– 'बड़ भइया को ब्याव हो गओ। कछु दिनन के बाद सौदागर ने यो देखबो चाहो कि उनके बेटन में सबसे ज्यादा हुसियार को है ? ऊने अपने चारऊ लरकन कें सौ–सौ रूपइया दे दए और कओ कि बजारें जाकें जो मनें आय सो खरद आव। चारऊ भइया अपने–अपने रूपइया लैकें घर सें चले। उनकें रस्ता में एक तला मिलो। वे उतै रुक गए। चारऊ ने उतै रोटी बनाकें खाईं। फिर बजारें मनचाही चीजें खरीदवे चले गए।'[3] इस प्रकार

लाधान्ती में जो शब्द प्रयोग किये जाते हैं, उनमें प्रमुख रूप से ये हैं – बड़ भइया (बड़ भाई), रूपइया (रूपया), रस्ता (रास्ता), तला (तलाब), चारउ (चारो), बजारे (बाजार), सीसा (दर्पण), गुन (गुण), हतौ (था), थरिया (थाली), टाठी (थाली), उन्नहा (कपड़ा), ऊमें (उसमें), पलक मारतई (आँख झपकते), नकरिया (छड़ी), जुरे (इकट्ठे हुए), पतियारा (जानकारी लेने के लिए), कऔ (कहा) आदि।

व्याकरणिक रूपरेखा

बुन्देली का एक रूप होने के कारण लोधान्ती की व्याकरणिक रूपरेखा प्रामाणिक अथवा शुद्ध बुन्देली की तरह ही है। बुन्देली की तरह इसमें संज्ञा, सर्वनाम, कारक, विभक्तियाँ, क्रियाएँ, अपव्यय, स्वर, व्यंजन, स्वरलोप, सुर, स्वरलहरी आदि पाये जाते हैं, जिसकी विस्तृत चर्चा प्रामाणिक बुन्देली के अंतर्गत की जा चुकी है।

ध्वनिसमूह एवं विशेषताएँ

लोधान्ती में ध्वनि समूह प्रामाणिक बुन्देली की तरह ही है, पर कुछ ऐसी विशेषताएँ है, जो इसको प्रामाणिक बुन्देली से अलग स्थान भी दिलाती हैं। विद्वानों का मत है कि लोधान्ती लगभग शुद्ध बुन्देली की तरह ही है।

हकार लोप की प्रवृत्ति बुन्देली की एक प्रमुख विशेषता है, किन्तु उस उद्धरण में देखबो चाहो, मनचाही, जहाँ चाहें तथा पहुँच गये, शब्दों में हकार का लोप नहीं है। कहीं–कहीं खड़ी बोली का प्रभाव भी दिखायी देता है। बाद, उनके, अपने प्रेम, चले, वे कि, चले गए आदि शब्द इसी प्रकार बहुलता से प्रयुक्त होते हैं।

यद्यपि राठ और उरई क्षेत्र में प्रचलित बुन्देली रूप में कुछ अन्तर अवश्य है, किन्तु अधिक अन्तर न होने के कारण इन दोनों क्षेत्रों में बोली रूप को एक ही बोली के रूप में स्वीकार किया जाता है। इसका एक कारण यह भी है कि ये दोनों रूप राठ और उरई क्षेत्र के रूप हैं, पर वास्तव में इनका सीमा विभाजन कठिन है। राठ और उरई क्षेत्र के मध्य भाग में बुन्देली का वह रूप भी प्रचलित है, जो शुद्ध बुन्देली कहा जाता है। इस शुद्ध बुन्देली के क्षेत्र में दक्षिण से राठ की बोली और उत्तर से उरई की बोली घुसती आयी है। परिणाम स्वरूप बुन्देली के इन तीनों रूपों (मध्य पश्चिमी हमीरपुर, राठ और उरई क्षेत्र की बोली) में बहुत कम अंतर मिलता है। यह देखते हुए राठ क्षेत्र से उरई क्षेत्र तक की (हमीरपुर जिले के पश्चिमी मध्यभाग में स्थित, राठ से जालौन जिले से दक्षिणी भाग में स्थित, उरई तक की) बोली का एक ही रूप मानकर उसे लोधान्ती कहना अनुचित न होगा। लोधान्ती में 'ओ' के स्थान में 'औ' का प्रयोग दिखाई देता है,

जैसा कि हम बड़ो (बड़ा बुरो–बरौ), अपनै (अपने), करौ (करो), गऔ (गओ) आदि शब्दों में देखते हैं।

आकारान्त का ओकारान्त अथवा औकारान्त प्रयोग बुन्देली एवम् कुछ अन्य पश्चिमी हिन्दी की बोलियों की विशेषता है, किन्तु राठ और उरई क्षेत्र की बोली में रिश्ते से संबंधित कुछ ऐसे आकारान्त शब्द भी हैं, जो मूल रूप में ही प्रयुक्त होते हैं– बेटा दद्दा, कक्का, मम्मा आदि इसी प्रकार के शब्द हैं।

बुन्देली के अन्य क्षेत्रीय रूपों की तरह बुन्देली के 'लोधान्ती' रूप में भी अधिकरण कारक का परसर्ग एकारान्त अथवा ऐकारान्त होता है। यथा– घरे अथवा घरै, बजारे अथवा बजारै, छाँवरे अथवा छाँवरै आदि।

सर्वनाम शब्दों में तृतीय पुरुष एकवचन 'वह' के लिए 'बो' अथवा 'बौ' का प्रयोग होता है, जिसका स्त्रीलिंग रूप 'बा' है।

संकेतबोधक विशेषण यह, वह के लिये 'जौ' तथा 'बौ' का प्रयोग होता है।

लोधान्ती–क्षेत्र की दक्षिणी सीमा छतरपुर जिले की उत्तरी सीमा से संलग्न है। इस सीमावर्ती भाग की बोली में छतरपुर के उत्तरी भाग की तरह 'खों' अथवा 'खौं' का प्रयोग भी मिलता है।

निष्कर्ष

लोधान्ती बुन्देली में कहीं–कहीं खड़ी बोली का प्रभाव दिखायी देता है। लोधान्ती में 'ओ' के स्थान पर 'औ' का प्रयोग अधिक हुआ है। आकारान्त का ओकारान्त अथवा औकारान्त भी लोधान्ती की एक विशेषता है। परसर्ग एकारान्त अथवा ऐकारान्त होता हैं। सर्वनाम तृतीय पुरुष एकवचन 'वह' के लिए 'बो' अथवा 'बौ' का प्रयोग होता है, जिसका स्त्रीलिंग रूप 'बा' हो जाता है। 'खों' अथवा 'खौं' के स्थान पर 'खा' का प्रयोग मिलता है।

संदर्भ

1. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप ; पृ. 401.
2. डॉ. गणेशीलाल बुधौलिया ; प्राध्यापक डी.ए.बी. इन्टर कालेज, राठ से प्राप्त कहानी का अंश

बनाफरी बुन्देली

बुन्देलखण्ड के पूर्वी क्षेत्र की बोलियों में बनफरी, बनपरी अथवा बनाफरी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। बुन्देली के संपूर्ण क्षेत्र को कई अन्य उपबोलियों में विभाजित किया जाता है। बनाफरी उनमें से एक है। डॉ. ग्रियर्सन ने लिखा है कि– 'बुन्देलखण्ड एजेन्सी का उत्तरी भाग और पूर्वी भाग मुख्यतः बनाफरी बोली का बताया है। इसके अतिरिक्त उनकी मान्यता के अनुसार छतरपुर जिले का लौंड़ी क्षेत्र, पन्ना राज्य का धर्मपुर परगना, नौगाँव, रेवाई, गौरीहर, बेरीजागीर तथा अजयगढ़ और बाउनी राज्य भी बनाफरी भाषा क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। इसका क्षेत्र हमीरपुर जिले के दक्षिण पूर्वी भाग तथा पूर्व में बघेलखण्ड के नागौद तथा मैहर राज्य के पश्चिमी भाग तक विस्तृत है।'[1]

इसके क्षेत्र के संबंध में चर्चा करते हुए डॉ. कृष्णलाल हंस ने लिखा है– 'वर्तमान हमीरपुर जिले का समस्त दक्षिण–पूर्वी भाग, जिसमें महोबा, मोघा और चरखारी तहसील स्थित है,' वर्तमान छतरपुर जिले की लौंड़ी तहसील तथा वर्तमान पन्ना जिले की अजयगढ़ तहसील एवं उसमें संलग्न इस जिले का पूर्वी भाग बनाफरी बोली का क्षेत्र कहा जा सकता है।'[2] डॉ. ग्रियर्सन ने इस बोली के बोलने वालों की संख्या तीन लाख चालीस हजार चार सौ बतायी है। वर्तमान में इस बोली रूप को बोलने वाले बहुत संख्या में है। बनाफरी के क्षेत्र में मध्यप्रदेश का उत्तरी–पूर्वी भाग तथा कुछ उत्तरप्रदेश का भाग भी इसके अंतर्गत लिया जाता है। बनाफरी भी क्षेत्र के अनुसार दो–तीन बोलियों का मिश्रित रूप है। इस संबंध में डॉ. हंस ने लिखा है – 'बनाफरी के जो रूप प्राप्त हैं, उन्हें दो रूपों में विभाजित किया जा सकता है। एक रूप वह है जिसे बघेली मिश्रित बुन्देली का रूप कहा जा सकता है और दूसरा रूप वह है, जिसे बुन्देली रूप कहना अधिक युक्तिसंगत जान पड़ता है।'[3]

डॉ. हंस ने बघेली के क्षेत्र और सीमाओं को कुछ निश्चित क्षेत्रों में विभक्त किया है। जहाँ बुन्देली का स्थानीय रूप प्रयुक्त किया जाता है। उनके अनुसार बनाफरी के जो क्षेत्र हैं, वे हैं– बुन्देली प्रधान बनाफरी, महोबा चरखारी क्षेत्र की बनाफरी, लौंड़ी क्षेत्र की बनाफरी आदि। इन क्षेत्रों के द्वारा बनाफरी का सीमांकन किया जाता है।

बनाफरी शब्द की व्युत्पत्ति

बुन्देली की बनाफरी उपबोली की जब हम चर्चा करते हैं, तब हमारे सामने एक प्रश्न आता है कि– बनाफरी शब्द की व्युत्पत्ति कहाँ से हुई ? डॉ. हंस ने संक्षेप में केवल एक वाक्य के द्वारा बनाफरी शब्द की व्युत्पत्ति बता दी हैं। उनके अनुसार– 'यह प्रमुख रूप से बनाफरी क्षत्रियों की बोली होने के कारण बनाफरी कहलाती है।'[4] धीरे–धीरे इसका क्षेत्र विस्तृत हो गया है। वर्तमान बनाफरी में अब कई अन्य भाषाओं के शब्द मिल जाने के कारण शुद्ध बनाफरी की धारणा लगभग समाप्त होती जा रही है। बनाफरी में अरबी, फारसी के साथ–साथ विदेशी भाषाओं के अन्य शब्दों का भी व्यवहार होने लगा है। लेकिन फिर भी बनाफरी अपनी स्वतंत्र पहचान बनाए हुए है।

शब्द सामर्थ्य

जब हम किसी भाषा अथवा बोली की चर्चा करते हैं, तब यह जानना आवश्यक हो जाता है कि उस भाषा, बोली, उपबोली की शब्दसामर्थ्य क्या है? शब्दसामर्थ्य से तात्पर्य किसी भी भाषा या बोली के शब्द भण्डार से लगाया जाता है। बनाफरी का भी शब्द भण्डार विस्तृत है, इसमें बहुत से ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाता हैं, जो अन्य क्षेत्रीय शब्दों से अलग हैं और इस तरह के शब्द बनाफरी में बहुत अधिक हैं। शब्द सामर्थ्य की दृष्टि से बनाफरी में जिन शब्दों का प्रयोग किया जाता है, वे इस प्रकार हैं– मनिहार (व्यापारी), वैं (वे), खा–पीकैं (खा पीकर), व्याह (विवाह), करैं (करने), लानैं (लिये), तलासैं (तलाशने), इतै (यहाँ), तला (तालाब), रुखन (वृक्ष), छायी (छाया), ऊ (उस), बिटियाँ (लड़कियाँ), खाँ (को), ओम्हैं (उनमें), ओखी (उसकी), हती (थी), मूड़ (सिर), गघरी (घड़ा), संग (साथ), तोये (तेरा), लाउत (लाती), दऔ (दिया), सांचऊँ (सचमुच), कोऊ (कोई), होहै (होगा), नईं (नहीं), मूँ (मुँह), अगारु (आगे), मनयीमन (मन ही मन), पछाऊँ पछाऊँ (पीछे पीछे), ओने (उसने), लरका (लड़का), है (हो), सहर (शहर), तलबा (तलाब), ठैर (रुक), द्यार (देर), ओहू (उसकी), जौन (जिस), ल्याबती (लाती), रहीस (रईस), कौन्हौं (कोई नहीं), रहिबौ (रहना), स्वाचै (साचनें), डारी (दी), दैवो (देना), लरकन (लड़को), म्वाखाँ (मुझको), हवा (हो), बाखो (उकसा), केखे (किसके), लेख (लायक), भे (हुए), माँ (मैं), उन्नैं (उसने), उनमाँ (उसमें), उई (वह),

भड़वा (जायेंगे), हुईगा (हो गया), ऐखे (इसके), ओथे (उससे), डारिस (डाया), मुंही (मुझे), सयान (जवान), पाछू–पाछू (पीछे–पीछे)।

बहुत से ऐसे शब्द हैं, जो कई बार बुन्देली में भी बोले जाते हैं और बघेली में भीं। जैसे– इसके करैं, करैं के लाने, भरै खा, ओम्हैं, ओखी, तोब, लाउत, हायो, आये, बनाये के लाने, पछाऊँ–पछाऊँ, ओखें, ओन्हें आदि। ये शब्द बघेली बोली में हैं– जरूर, परंतु इन्हें बुन्देली का बघेली रूप ही कहा जाता है। इन्हें बघेली प्रभावित बुन्देली के ही शब्द कहा जाता है। इस संदर्भ में डॉ. हंस ने लिखा है– 'इन्हें बघेली के प्रयोग न कहकर बघेली प्रभावित बुन्देली के ही प्रयोग कहना अधिक युक्ति संगत होगा। दो बोलियों के सीमावर्ती क्षेत्र की बोली का जो रूप उन दोनों बोलियों के परस्पर के प्रभाव से बन जाता है, वही रूप इस बुन्देली प्रधान बनाफरी का है।' इसमें अधिकांश एकारान्त शब्द ऐकारान्त होने के साथ ही अनुनासिक भी हो जाते हैं। जैसे– वैं, कैं, करैं, लानैं, तलासैं, मैं, किनारैं, भरैं, ओम्हैं, सबसैं, नैं, एसैं आदि।

इसी प्रकार महोबा चरखारी खेत्र में जो बुन्देली बोली जाती है। उसमें भी बघेली का मिश्रण देखने में आता है। संज्ञा शब्दों का प्रयोग बुन्देली प्रधान बनाफरी और महोबा चरखारी क्षेत्र की बनाफरी दोनों में समान रूप से होता हैं। सर्वनाम पद भी दोनों बोलियों के एक जैसे हैं। 'ऊ' संकेत वाचक विशेषण का प्रयोग दोनों में होता है। परसर्गों में केवल अधिकरण कारक में ही अंतर हैं। इसी प्रकार लौड़ी क्षेत्र की बनाफरी में वह सर्वनाम केवल 'व' रह जाता है। इसी प्रकार यह का 'ह' भी लोप हो जाता है। बघेली का 'मा' इसमें 'म' रह जाता है। इस क्षेत्र की बोली के संबंध में डॉ. हंस ने ग्रियर्सन का संदर्भ देते हुए लिखा है– 'डॉ. ग्रियर्सन ने वर्तमान पन्ना जिले की अजयगढ़ तहसील तथा उससे संलग्न दक्षिण पूर्वी भाग को भी बनाफरी क्षेत्र में बुन्देली का जो रूप प्रचलित है, उसे बनाफरी नहीं कहा जा सकता। पन्ना जिले की पूर्वी सीमा बघेली भाषी सतना जिले की पश्चिमी सीमा से संलग्न है, जिसके नागौद क्षेत्र को भी डॉ. ग्रियर्सन ने बनाफरी क्षेत्र के अंतर्गत बतलाया है। यह नागौद क्षेत्र भी अब पूर्णतः बनाफरी भाषी नहीं रहा। इस क्षेत्र की बोली बघेली ही है, जिस पर बनाफरी का नाममात्र का प्रभाव अब शेष रह गया है।'[6]

व्याकरणिक रूपरेखा

बनाफरी के संबंध में डॉ. हंस ने लिखा है– 'हम ज्यों–ज्यों पूर्व की ओर बढ़ते जाते हैं, हमें बनाफरी में बघेली का प्रभाव बढ़ता दिखायी देता है। आगे जो वाक्य दिये

हुये है उनके प्रथम उदाहरण हमीरपुर जिले के पश्चिमी सीमावर्ती भाग है, जहाँ से शुद्ध बघेली का क्षेत्र आरंभ होता है। यही कारण है कि उस बोली रूप में बघेली का मिश्रण बहुत कम मिलता है। उसे बघेली प्रभावित बुन्देली ही कहा जा सकता है। द्वितीय उदाहरण हमीरपुर जिले के दक्षिण–पश्चिमी भाग–महोबा चरखारी क्षेत्र के बोली रूप का हैं, जिसमें हमें बघेली का पूर्वपेक्षा अधिक मिश्रण मिलता है।'[7]

बुन्देली की अन्य बोलियों की तरह बनाफरी का भी अपना व्याकरणिक रूप है। बनाफरी बोली का क्षेत्र व्याकरण की दृष्टि से समृद्ध माना जाता है। शब्द एवं पद भी बनाफरी में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। शब्द की दृष्टि से बनाफरी में शब्द का स्वतंत्र रूप से व्यवहार में उपयोग होता है– मौड़ी, मनिहार, बिटियन, गघरी, गघरा, है, कोन हौं, तलबा, ज्वान, सयान आदि। इसी तरह शब्दों से मिलकर बनाफरी में पद निर्माण भी महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

1. एक बनिया के चार लरका रहे।
2. सब बिटियन में मूड़ पे बढ़िया–बढ़िया तला पै पानी भरै खो आयी।
3. थोरी द्यार में ऊ सहुर की कै एक बिटियाँ तला पे पानी भरै खा आयी।

इस प्रकार बनाफरी बोली के व्याकरण में भी अन्य बोली के व्याकरण के रूप मिलते हैं।

संज्ञा

बनाफरी में प्रायः सभी संज्ञा शब्दों का प्रयोग बुन्देली और बघेली में समान रूप से होते हुए दिखाया गया है।

लिंग

बनाफरी में अन्य बुन्देली रूपों की तरह लिंग का प्रयोग किया गया है। इसमें भी पुल्लिंग और स्त्रीलिंग हिन्दी भाषा की तरह ही मिलते हैं। जैसे– लरका, बनिया, बिटियन, मोड़ी आदि।

सर्वनाम

संज्ञा की तरह बनाफरी में भी सर्वनाम का प्रयोग होता है। ये सर्वनाम बुन्देली और बघेली दोनों बोलियों में समान रूप से बोले जाते हैं। कुछ सर्वनाम इस प्रकार हैं– बुन्देली– उनकौ, बौ, तैं, ऊकै, ऊनैं, उनसैं। बघेली– उनमा, ओहू, जौन, तोर, मोर,

कौनहौं, म्वाखां, मोहैं, बाखौं, केखैं, वाखां आदि। बनाफरी में भी सर्वनाम के छः भेद माने गये हैं और उनके भी उपभेद स्वीकार किये गये हैं। सर्वनाम की दृष्टि से बनाफरी में पर्याप्त उपभेद भी मिलते हैं।

विशेषण

संज्ञा शब्दों की विशेषता बतलाने वाले विशेषण बनाफरी में भी मिलते हैं। ये विशेषताएँ गुण, दशा अथवा परिमाण का बोध कराती है। बनाफरी में भी ये विशेषण सात प्रकार के होते हैं। क्रमशः गुणबोधक, परिमाणबोधक, संख्याबोधक, निश्चयात्मक बोधक, अनिश्चयात्मक बाधक, क्रियामूलक बोधक, सर्वनामबोधक। उदाहरण– 1. एक मनिहार के चार बेटा हते। 2. मनिहार उनको व्याह करें के लाने बहू तलासे खां चलो। 3. तैं फूटो गघरा काम मा काहे ल्यावती हा। 4. मोर व्याह कौनहौ रहीस के संगे या गरीब के संगे होहे। 5. अपनी बिटिया के लाने नीक लरका की तलास माँ हता। 6. बिटिया का ज्वाब सुन के मनै मन बहुतै खुस भा।

क्रिया

बनाफरी में जो क्रिया पद पाये जाते हैं या मिलते हैं, वे बुन्देली की अपेक्षा बघेली के अधिक हैं। बनाफरी में क्रिया के आठ रूप दिखायी देते हैं– अकर्मक, सकर्मक, द्विकर्मक, प्रेरणार्थक, अपूर्ण, सहाय, संयुक्त और क्रियात्मक क्रिया। कुछ उदाहरण निम्न प्रकार हैं– बुन्देली – हतो, निकरो, आबो, आई, हती, घरें, तें, हते, बोलीं, चलीं गईं, आबो, बुलाबो, पूंछो, बोलो। बघेली– रहै, भे (हुए), टिकगा, जाँय लागी, ल्यावती, दीन, हुई, बताय सकत, सीख सकत, सीख जाओ, हुईगा, स्वाचैं लाग, कह डारिस, हुईगा, मिलगैं, हवा, बताबा, कर देओ, कही बे। पूर्वकालिक क्रिया रूप बुन्देली और बघेली दोनों के हैं। बुन्देली– भरकैं, सनकैं। बघेली– खाय पी कैं, बनाये कैं, आये कैं। क्रियार्थक संज्ञा शब्द बनाफरी में अधिकांशतः बघेली के लिये गये हैं। जैसे– करै के, ढूढ़े का, भरैं का तथा बनाबै का।

अव्यय

बनाफरी में हिन्दी की तरह ही अव्यय मिलते हैं। बनाफरी में छह प्रकार के अव्यय की चर्चा की गई है। बनाफरी में अव्यय बुन्देली और बघेली दोनों में समान प्रमाण से प्रयुक्त हुए हैं। ये छह प्रकार के अव्यय निम्न हैं– क्रियाविशेषण, समुच्चयबोधक, विस्मायादिबोधक, सकरात्मक तथा नकारात्मक, परसरर्गीय शब्दावली और निपात।

उदाहरण– बुन्देली– पै, फिर, आगे, और, तुरतैं, औ। बघेली– लैक, ह्वाँ, भरे, एथे, मनैमन, एखे। बुन्देली अव्यय पै तथा औ का प्रयोग बघेली में भी होता है।

काल

बनाफरी में हिन्दी की तरह क्रिया के तीन काल रूप मिलते हैं– वर्तमानकाल (रुखन की छ्याह म ठहर गा), भूतकाल (व्याह करैं का दुलिहिन ढूढ़े का खातिर निकरौ) और भविष्यकाल।

ध्वनिसमूह एवं विशेषताएँ

बनाफरी बुन्देली का पूर्वी रूप होने के कारण इसकी ध्वनियाँ उस क्षेत्र के आस–पास की स्थानीय भाषा से प्रभावित है। बनाफरी ध्वन्यात्मक दृष्टि से सामान्य बुन्देली बोली से भिन्न है, क्योंकि इसमें बुन्देली के साथ–साथ बुन्देली से हटकर बघेली के शब्दों का मिश्रण पाया जाता है। बघेली का मिश्रण होने के कारण बनाफरी में ध्वनिगत विशेषताओं के अंतर्गत बुन्देली और बघेली दोनों के अलग–अलग रूप मिश्रित होते दिखायी देते हैं। बनाफरी में स्वर, व्यंजन, शब्द, प्रत्यय, बलाघात, सुर तथा सुरलहरी के स्वरूप को भी पर्याप्त अंतर के साथ देखा जाता है। ध्वनिसमूह एवं विशेषताओं की दृष्टि से बनाफरी को डॉ. कृष्णलाल हंस ने तीन विशेषताओं के अंतर्गत विशेष रूप से विभाजित किया है– ध्वन्यात्मक विशेषताएँ, रूपात्मक विशेषताएँ और कालविषयक विशेषताएँ।

ध्वन्यात्मक विशेषताएँ

ध्वन्यात्मक दृष्टि से बनाफरी बुन्देली में बुन्देली के शब्दों के साथ–साथ बघेली के शब्दों का अधिक मिश्रण दिखायी देता है। मवईजार क्षेत्र की बनाफरी में इसका ध्वन्यात्मक रूप कुछ इस प्रकार है– मेरा–म्वार, तेरा–त्वार, सोचन–स्वाचन, बेटा–व्याटा, केर–क्यार, घोरा–घ्वार आदि।

एकारान्त और ओकारान्त शब्द भी प्रायः ऐकारान्त और औकारान्त उच्चरित होते हैं। जैसे– सें–सैं, कें–कैं, जो–जौ, बो–बौ आदि।

व्यंजनों में 'न' के स्थान पर 'ल' उच्चरित होता है। जैसे– जनम–जलम, निंबू–लिंबू, नीम–लीम आदि। इसके विपरीत ल के स्थान पर न का प्रयोग भी प्रचलित है। जैसे– लकड़ी–नकरी, नकरिया, लाने–नाने आदि।

बुन्देली की तरह ही 'ल' के स्थान पर 'र' उच्चारण सामान्य रूप से मिलता है। जैसे– कालो (काला)–कारो, तलवार–तरवार, दीवाल–दीवार आदि।

'व' के स्थान पर 'म' का प्रयोग भी कई शब्दों में हुआ है। जैसे– दीवान–दीमान, जवान–जमान, लवंग–लमंग, दवाखाना–दमाखाना, कुंवर–कुंमर आदि।

इस बुन्देली की सामान्य प्रवृत्ति, हकार लोप की विशेषता दिखायी देती है। जैसे– शहर–सहर, हाथ–हात, थे–ते, तुम्हारे–तुमरे, बरफ–बरप आदि। बुन्देली की यह प्रवृत्ति बघेली के मिश्रण की अधिकता के कारण कम होती दिखायी देती है।

'ण' के स्थान पर 'न', 'ड़' के स्थान पर 'र', 'ढ़' के स्थान पर 'ड' का उच्चारण भी सामान्य बुन्देली की तरह ही मिलता है। जैसे – कारण–कारन, लड़का–लरका, ढूंढ़बो–ढूंडबो आदि।

बघेली का प्रभाव होते हुए भी बुन्देली की अनुनासिकता की प्रवृत्ति सर्वत्र दिखाई देती है। जैसे – वै, करैं, लाने, भरें आदि।

रूपात्मक विशेषताएँ

बनाफरी में अधिकांश स्त्रीलिंग संज्ञाएँ एकारान्त होती हैं, जो खड़ी बोली की तरह ही बहुवचन में भी अपरिवर्तित रहती हैं। वे सानुनासिक हो जाती हैं। जैसे– खबरें, गुहारें आदि।

ईकारान्त स्त्रीलिंग संज्ञा के बहुवचन रूप में याँ प्रत्यय लगा दिया जाता है। जैसे– मौंड़ी–मौंड़ियाँ, नकरी–नकरियाँ आदि।

अकारान्त पुल्लिंग संज्ञाएँ ओकारान्त उच्चरित होती हैं, जो बहुवचन रूप में एकारान्त हो जाती हैं। जैसे– घोरो–घोरे, गघरो–गघरे आदि।

कुछ अकारांत पुल्लिंग संज्ञाएँ अपने मूल रूप में ही व्यवहृत होती हैं। इनका बहुवचन रूप अकारान्त करने 'न' प्रत्यय लगा बनाया जाता है। जैसे– लरका–लरकन, पलका–पलकन आदि।

बनाफरी में कर्ता कारक के अतिरिक्त कारकों के दोनों वचनों में कुछ संज्ञा शब्द एकारान्त अथवा अकारान्त होते हैं। जैसे – छहरे–मा, सहर–मा, मूड़ पै, ब्याव कै, तलास माँ, ढूंढ़े खाँ।

कारकों के परसर्ग बुन्देली और बघेली दोनों के प्रयुक्त होते हैं, जो इस प्रकार हैं–

कर्ता	–	नें, नैं, ने।
कर्म	–	का, काँ, कों, कौं, के, खे, खाँ, खों।
करण	–	से, सें, खें, तें, सों, सौं, सन।
सम्प्रदान	–	लाने, खातिर, काजे।
अपादान	–	करण कारक की तरह।
सम्बन्ध	–	कों, खों, काँ, का, केर, क्यार, केरो, क्यारो (रौ)। ये परसर्ग पुल्लिंग रूप में बघेली की प्रवृत्ति के अनुसार केर, क्यार, क्यारो होते हैं, पर स्त्रीलिंग में केरी, क्यारी, के, की हो जाते हैं।
अधिकरण	–	में, मौं, माँ, माहाँ, पै। कहीं–कहीं में, मा, माँ, माहाँ, पै।

कहीं–कहीं में, मा, माँ के स्थान में 'म' तथा 'पै' के स्थान पर 'प' का ही प्रयोग होता है, जैसा कि लौंड़ी क्षेत्र की बनाफरी में दिखाई देता है।

पुरुषवाचक सर्वनाम शब्दों के सामान्य रूपों में कोई उल्लेखनीय रूपान्तर नहीं दिखायी देता। इनके तिर्यक् रूप निश्चित ही बनाफरी का वैशिष्ट्य व्यक्त करते हैं। ये तिर्यक् रूप इस प्रकार हैं –

प्रथम पुरुष – मोह, मोय, म्वाह, मो, मोहीं, माये, मोरो (रौ), म्वार, म्वारौ, हम, हम–हूँ, हमें, हमैं, हम्हैं, हमार, हमारो, हमाओ, हमाव, हमरौ।

द्वितीय पुरुष – तू, तें, तैं, तु–ई, तो–हूँ, तोऊँ, ता–ही, तो–ही, तोह, त्वाह, तोर, तोरौ, त्वार, त्वारौ, तुमें, तुमार, तुम्हार, तुम्हारो, तुमारो, तुमरो, तोय, तोवाय, तुमओ, तुमाओ आदि।

तृतीय पुरुष – ऊ अथवा वा–वा–हूँ, वा–हे, वाहीं उएँ, ओ–ऊ, बा–ऊ, उन, उनकें, उन–हुन, बे, बिन, बन।

सम्बन्ध सूचक सर्वनाम 'जो' (खड़ी बोली) बनाफरी में जे अथवा ज्या (स्त्रीलिंग जा), तिर्यक्, रूप में जेह, जे, ज्या होते हैं। 'सो' का रूप बघेली की तरह तो अथवा तौन होता है, जो पूर्ववर्ती जौन के साथ प्रयुक्त होता है।

बनाफरी बुन्देली का बघेली–मिश्रित रूप है, इसलिये हमें इसमें इन दोनों बोलियों के क्रियारूप मिल जाते हैं, जो कृदन्तीय और संयुक्त काल के प्रायः सभी रूपों में दिखायी देते हैं। बनाफरी में बिना सहायक क्रिया के तथा सहायक क्रियाओं अथवा प्रत्ययों के योग से बनायी गयी; दोनों प्रकार की क्रियाएँ रहती हैं। प्रत्यय लगाकर बनायी गयी क्रियाएँ प्रायः बघेली से ही आयी जान पड़ती हैं।

क्रिया का यह रूप खड़ी बोली (साहित्यिक हिन्दी) में प्रयुक्त नहीं होता। इसे बुन्देली के बनाफरी रूप की एक उल्लेखनीय विशेषता ही कहा जाना चाहिए। 'नहीं है' के लिये बनाफरी में (बुन्देली के कुछ अन्य रूपों में भी) 'नहिंया' शब्द का प्रयोग होता है। क्रिया के सामान्य रूप की तरह इस क्रिया के रूप में भी पुरुष और वचन के अनुसार रूप–परिवर्तन होता है। यह भूत–कालीन क्रिया है। बघेली भाषी, कुछ क्षेत्रों में भी इस भूतकालीन क्रिया का प्रयोग इसी रूप में होता है।

इसमें बुन्देली के अन्य रूपों की तरह भविष्य कालवाची हौं, हौ, हे, है, हैं, हाँ प्रत्ययों का प्रयोग होता है।

कालविषयक विशेषताएँ

बनाफरी बोली में काल संबंधी कुछ ऐसी विशेषताएँ पायी जाती हैं, जो बुन्देली के इस रूप में ही दिखायी देती हैं, जो इसके अन्य रूपों में प्रायः नहीं मिलती, जैसे– बनाफरी की वर्तमानकालीन कुछ क्रियाएँ बिना पूर्वोल्लिखित काल प्रत्ययों के भी व्यवहृत होती हैं। 'मारना' क्रिया का सामान्य वर्तमान कालीन रूप पुल्लिंग दोनों वचनों में 'मारनो' और स्त्रीलिंग दोनों वचनों में 'मारतां' होता है। करत, आत, जात, खात आदि क्रिया के रूप भी इसी प्रकार के होते हैं।

अपूर्ण भूतकालीन क्रिया में हतो (बुन्देली–रूप) अथवा रहें (बघेली–रूप) का प्रयोग होता है– मारत हतो, मारत रहें।

सन्दिग्ध भूतकाल के दो रूप होते हैं – एकवचन– मारतो (पुल्लिंग), मारती (स्त्रीलिंग)। बहुवचन मारते (पुल्लिंग), मारतीं (स्त्रीलिंग)।

बनाफरी की सामान्य भूतकालीन क्रिया के खड़ी बोली और पूर्वी हिन्दी की तरह दो रूप होते हैं। इन दोनों रूपों में सकर्मक क्रिया होने पर काल–रचना कर्मवाच्य में होती है। इस स्थिति में क्रिया के लिंग–वचन कर्म के लिंग–वचन की तरह होते हैं अन्यथा क्रिया का लिंग पुरुष के अनुसार होता है। यथा–

पुल्लिंग — मैंने मारोंय (किसी पुल्लिंग को मारा)।
स्त्रीलिंग — मैंने मार्‌यू (किसी स्त्रीलिंग को मारा)।

तृतीय पुरुष एक वचन में मारिस, मारिस और मारुस का भी प्रयोग मिलता है।

अकर्मक क्रिया में तृतीय पुरुष एक वचन का प्रयोग नहीं होता, केवल सामान्य भूत–रूप का ही प्रयोग होता है। यथा–

पुरुष एकवचन — कर या करो।
पुरुष बहुवचन — कर या किए (करे भी)।
स्त्रीलिंग एकवचन — कर या की (करी भी)।
बहुवचन स्त्रीलिंग — कर या की (कर भी)।

पूर्व भूतकाल में 'हौं' प्रत्यय का प्रयोग होता है, जो वास्तव में बुन्देली का भविष्यकाल द्योतक प्रत्यय है। यथा —'मैं मारहों' का अर्थ बुन्देली के अन्य रूपों में 'मैं मारुँगा' होता है, किन्तु बनाफरी में इसका अर्थ होगा– 'मैंने मारा'। 'मारहो' के स्थान में 'मारो हों' का भी प्रयोग होता है।

कुछ स्थानों में 'हों' के स्थान में 'हतोय' तथा 'हतोंय' प्रत्यय का भी प्रयोग देखा जाता है।

पूर्वकालिक क्रिया और क्रियार्थक संज्ञा

बनाफरी के पूर्वकालिक क्रिया और क्रियार्थक संज्ञा–रूप सामान्य बुन्देली की तरह ही होते हैं।

अनियमित क्रियाएँ

बनाफरी में कुछ ऐसे क्रिया–रूप भी प्रयुक्त मिलते हैं, जिन्हें बुन्देली में प्रयुक्त किसी–किसी निश्चित क्रिया–रूप के अन्तर्गत नहीं रखा जा सकता है। इस प्रकार की कुछ क्रियाएँ नीचे दी जा रहीं हैं —

आउब, औब, अवाब, एबो, जैब — देब, लेब, खाब।
आओ, गा, गे, दबओ, दौ दबो, दीन्ह, दीन्हों, दीन्हीं।

यहाँ यह स्मरणीय है कि सामान्य भूतकाल का कोई भी रूप तृतीय पुरुष में प्रयुक्त हो सकता है। दूसरे, 'आउब' का भविष्यकालीन रूप 'एहौं' होता है, किन्तु

कहीं–कहीं 'ऐबे' का भी प्रयोग होता है। इसी प्रकार 'जैहों' का रूप 'जैब' भी होता है। इन अनियमित क्रिया–रूपों पर बघेली का प्रभाव स्पष्ट है।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते हैं कि बनाफरी का क्षेत्र और सीमाएँ विस्तृत हैं। इसकी शब्द सामर्थ्य बुन्देली की अन्य क्षेत्रीय बोलियों की तरह ही पर्याप्त है। व्याकरणिक रूपरेखा के अंतर्गत बनाफरी का व्याकरण भी बुन्देली के अन्य बोलियों के व्याकरण से भिन्न है। ध्वनि समूह और विशेषताओं के अंतर्गत ध्वन्यात्मक विशेषताएँ, रूपात्मक विशेषताएँ और काल विषयक विशेषताएँ बनाफरी को बुन्देली बोली में एक महत्त्वपूर्ण स्थान दिलाती हैं। निश्चित रूप से बनाफरी एक समृद्ध उपबोली है।

संदर्भ

1. डॉ. ग्रियर्सन ; लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया, खण्ड 9, भाग 1 ; पृ. 147.
2. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप ; पृ. 404.
3. वही ; पृ. 404.
4. वही ; पृ. 403.
5. वही ; पृ. 405.
6. वही ; पृ. 10.
7. वही ; पृ. 407.

कुन्द्री बुन्देली

बुन्देली के पूर्वी बोलीरूप को कुन्द्री माना जाता है। यह बुन्देली के पूर्वी रूप का एक उपरूप है। इसका क्षेत्र हमीरपुर जिले और बांदा जिले के बीच बहने वाली केन नदी का तटवर्ती क्षेत्र है। कुन्द्री केन नदी के आस–पास एक पट्टी में बोली जाती है।

इस संदर्भ में डॉ. हंस ने लिखा है– 'हमीरपुर जिले की उत्तर–पूर्वी सीमा पर केन नदी प्रवाहित होती है, जो हमीरपुर और बांदा जिले की सीमा का निर्धारण करती है। इस नदी के दोनों ओर की तटवर्ती सकरी पट्टी में जो बोली, बोली जाती है, वही कुन्द्री कहलाती है। इसका यह नाम पड़ने का कोई विशिष्ट कारण नहीं जान पड़ता। संभव है कि केन नदी के तटवर्ती संकीर्ण (कुन्द) भाग में बोली जाने के कारण ही यह 'कुन्द्री' अथवा 'कुन्दरी' कहलाती है।'[1]

डॉ. हंस ने लिखा है– 'हमीरपुर की कुन्द्री बुन्देली पर आधारित है और उसमें बघेली मिश्रित है, पर बांदा की कुन्द्री बघेली पर आधारित है और उसमें बुन्देली मिश्रित है। दूसरे शब्दों में, हमीरपुर की कुन्द्री बघेली मिश्रित बुन्देली रूप है, पर बांदा की कुन्द्री बुन्देली मिश्रित बघेली है।'[2] कुन्द्री हमीरपुर और बांदा जिले से मिलकर इसकी सीमाओं को बनाती हैं।

शब्द सामर्थ्य

कुन्द्री बोली बुन्देली का एक ऐसा रूप है जो बुन्देली और बघेली दोनों बोलियों के शब्दों के मिश्रण से निर्मित होता है। इस दृष्टि से कुन्द्री बोली का शब्द सामर्थ्य बुन्देली और बघेली के शब्दों से मिलकर समृद्ध बनता है। हालांकि कुन्द्री एक छोटे से क्षेत्र में बोली जाती है, लेकिन फिर भी इसमें स्थानीय शब्दों का प्रभाव इतना अधिक है कि यह बुन्देली का अलग रूप बन गई है। इस संदर्भ में डॉ. हंस ने लिखा है– 'इसमें कोई संदेह नहीं कि नदी अथवा पर्वत बीच में आकर भाषा अथवा बोली का रूप परिवर्तन कर देते हैं, किन्तु केन के समान एक छोटी नदी बोली के रूप में इतना परिवर्तन कर सकती है कि एक ही बोली दो विभिन्न परिवारों (पश्चिमी हिन्दी और पूर्वी हिन्दी) की बोलियों का अंग बन जाती है। आश्चर्यजनक है यदि हम बघेली के मिश्रण की न्यूनता और अधिकता को ही बोली के रूप विभाजन का आधार मान लें, तो हमें हमीरपुर जिले के महोबा क्षेत्र में प्रचलित बनाफरी और उसी जिले के मबईजार क्षेत्र में प्रचलित बनाफरी को दो भिन्न परिवारों की बोली मानना पड़ेगा, क्योंकि उपर्युक्त प्रथम क्षेत्र की बनाफरी की अपेक्षा द्वितीय क्षेत्र की बनाफरी में बघेली मिश्रण की अधिकता है। हम पूर्व विवेचित बनाफरी की तरह कुन्द्री के भी दो क्षेत्रीय रूप तो मान सकते हैं, किन्तु उसे दो परिवारों के बोली के रूप में विभाजित कर देना हमें युक्तिसंगत नहीं जान पड़ता।'[3]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कुन्द्री में बुन्देली और बघेली दोनों ही बोलियों के शब्दों से इसके शब्द–सामर्थ्य की समृद्धि होती है। बांदा जिले में जो कुन्द्री का रूप बोला जाता है, उसमें शब्द इस प्रकार हैं – बनियाँ (व्यापारी), लरिका (लड़का), रहांयें (रहे), उई (वे), करन (करने), जोग (योग), भे (वे), तबहिन (तभी), बाह (उनका), ब्याह (विवाह), करैंका (करने के लिए), बहू (वधू), ख्वाजें (ढूढंने), निकरा (निकला), वोह (वह), मा (में), आओ (आया), हवाँ (वहाँ), तलैया (तलाब), चुनू देर माँ (थोड़ी देर में), भरैंका (भरने को), वाहके (उसकी), रहाये (रही), जौन (जो), बा (उस), ते (से), घरन (घर), जान (जाने), मुड़े (सिर), नीक–नीक (अच्छे–अच्छे), कहायें (कहने), तोर (तेरा), ह्वा (हो), दीन्हेस (दिया), सहीमा (सच में), मोर (मेरा), हुई (होगा), महके (इस कारण), हौ (हूँ), भा (हुआ), स्वाचन (सोचने), लाभ (लगा), दीनेक (दिया), सुनाये (सुना), नीक (अच्छा), बर (वर), हामी (हाँ)। कुन्द्री को दूसरे रूप में जो हमीरपुर जिले के आस–पास बोली जाती है, शब्दों का जो रूप मिलता है, वे शब्द निम्न प्रकार हैं – बोह (उनका), बिचार (विचार), कीन्हेस (किया), ठैर (रुक गया), तनकई (थोड़ी), भौत (बहुत), वाह (उस), हती (थी), लरकियाँ (लड़कियाँ), घैला (घड़ा), साँत (सात), काहे (क्यों), हे (है), साँचेउँ (सही में), जेसैं (जिससे) आदि शब्दों के द्वारा कुन्द्री का शब्दभण्डार समृद्ध पाया जाता है।

व्याकरणिक रूपरेखा

इसमें स्वर और व्यंजन हिन्दी की तरह ही उपयोग होते हैं। संज्ञा, सर्वनाम, कारक, अव्यय, क्रियापद आदि बुन्देली के साथ–साथ बघेली के उच्चारण से युक्त पाये जाते हैं। इस प्रकार इसकी व्याकरणिक रूपरेखा बहुत कुछ प्रामाणिक बुन्देली की तरह ही है, लेकिन उसमें स्थानीय शब्दों के कारण उच्चारण का अंतर आ गया है।

ध्वनिसमूह एवं विशेषताएँ

कुन्द्री बोली चूँकि बुन्देली का पूर्वी रूप है, इस कारण इसको ध्वनिसमूहों में दो बोलियों की शब्द ध्वनियाँ मिलती हैं। एक बुन्देली और दूसरी बघेली। ये ध्वनि समूहगत विशेषताएँ ही कुन्द्री को बुन्देली के अन्य रूपों से अलग करती है। कुन्द्री बोली का रूप बुन्देली से अलग नहीं है। इसमें अधिकांश संज्ञारूप बुन्देली के ही मिलते हैं, पर कहीं–कहीं बघेली का प्रभाव दिखायी देता है।

सर्वनाम रूप बुन्देली की अपेक्षा बघेली के ही अधिक हैं –

बुन्देली – सबै, वा, तैं, में।
बघेली – उई, बाह का, वोह, उनमाँ, वाहके, तोर, मोर।
संकेतवाचक विशेषण – वा, बा, उइँ में प्रथम दोनों शब्द बुन्देली के हैं, जिनका बुन्देली भाषी बघेली क्षेत्र में भी प्रयोग होता है, उइँ बघेली का रूप है, शेष विशेषण रूप बुन्देली के ही हैं।

क्रियापदों में केवल आओ, जान लगीं, हुइहै, सीख लेत हऊँ, निकर गई तथा सुन के शब्द बुन्देली के हैं, शेष सभी रूप बघेली के हैं। अव्यय बुन्देली और बघेली दोनों के प्रयुक्त हैं।

कुन्द्री के दूसरे रूप के अंतर्गत हमीरपुर जिले की कुन्द्री आती है, इसकी ध्वनिगत विशेषताएँ इस प्रकार है– कुन्द्री बुन्देली और बघेली का एक मिश्रण है। दोनों के सर्वनाम और क्रियारूप ही प्रयुक्त नहीं हैं, पर कारकों के परसर्ग भी दोनों के हैं।

गठन बुन्देली का है और वाक्यरचना भी बुन्देली की ही है, किन्तु वह अनेक स्थानों में बघेली से प्रभावित दिखायी देता है। प्रायः सभी पूर्णकालिक क्रियाएँ बघेली की प्रयुक्त हैं। 'दीन' क्रिया अवधी की है। इस प्रकार कुन्द्री के इस रूप में बुन्देली, बघेली और अवधी का प्रभाव दिखायी देता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कुन्द्री बुन्देली का पूर्वी रूप है। इसकी शब्द सामर्थ्य बुन्देली, बघेली और अवधी से मिलकर समृद्ध है। व्याकरणिक रूपरेखा प्रामाणिक बुन्देली की तरह ही है, परंतु इसमें बघेली का मिश्रण पाया जाता है और क्रियापद कुछ अवधी से लिये गये हैं। इस प्रकार कुन्द्री का मूल बुन्देली है और यह बुन्देली का पूर्वी रूप है, लेकिन अपने साथ यह बघेली और अवधी के शब्दों का और ध्वनिसमूहों का मिश्रण लिये हुए है।

संदर्भ

1. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप ; पृ. 414.
2. वही ; पृ. 414.
3. वही ; पृ. 415.

निभट्टा बुन्देली

निभट्टा बुन्देली की एक उपबोली है, जो यमुना के दक्षिणी भागों में जालौन के आस–पास बोली जाती है। वैसे तो यह तिरहारी का विस्तार मानी जाती है और इसके बोलने वालों की संख्या भी बहुत कम है, परंतु यह बुन्देली और बघेली का ऐसा मिश्रित रूप है, जो केवल इसी भू–भाग में व्यवहृत होता है।

डॉ. कृष्णलाल हंस ने इस संदर्भ में लिखा है– 'जालौन जिले के पश्चिमोत्तर सीमावर्ती भाग में बुन्देली का जो रूप प्रचलित है, वह निभट्टा कहलाता है। यह वास्तव में तिरहारी का ही एक भिन्न रूप है।'[1] इस प्रकार निभट्टा तिरहारी का एक भिन्न रूप होने के कारण एक छोटे से क्षेत्र की उपबोली है।

सीमाओं के संबंध में चर्चा करते हुए डॉ. कृष्णलाल के अनुसार है– 'उत्तर में इसकी सीमा कन्नौजी भाषा भाग से संलग्न है, जिससे इस पर कन्नौजी का भी किंचित प्रभाव दिखाई देता है। इस प्रकार इस बोली का रूप बुन्देली, बघेली और कन्नौजी के मिश्रण से बड़ा अनोखा बन गया है।'[2]

निभट्टा में बुन्देली, बघेली और कन्नौजी बोली के शब्दों का मिश्रण होने से इसका शब्द सामर्थ्य समृद्ध माना जाता है। शब्द सामर्थ्य को समझने के लिए हम

कहानी के कुछ अंश को देख सकते हैं— 'एक सौदागिर के चार लरिका हते। सौदागिर कों एक लरकिया पसंद आ गई। वा ने लरकन से कहिस के बाकों ब्याव तुमसन माँ से केके संग कद्दऊँ? छोट लरका कहिस बाको ब्याव बड्डे भइया से कद्देओ। ब्याव होगौ।' इस प्रकार इस अंश में तीनों बोलियों के शब्दों का समावेश हो गया है। इसमें आये शब्दों को हम अलग—अलग बोली के अनुसार देख सकते हैं। बुन्देली— एक, सौदागिर, चार हते, लरकिया, पसंद, वाने, लरकन, से बाको, ब्याव, संग, लरका, भइया, से होगौ आदि। बघेली— लरिका, सौदागिर का, कहिस, तुमसमन माँ से, केके, कहिस आदि। कन्नौजी— कद्दऊँ, बड्डे, कद्देओ आदि। इस प्रकार हम देखते हैं कि निभट्टा बोली का शब्द सामर्थ्य तीन बोलियों से मिलकर समृद्ध हुआ है।

व्याकरणिक रूपरेखा

निभट्टा का मूल स्वरूप बुन्देली का होने के कारण इसकी व्याकरणिक रूपरेखा प्रामाणिक बुन्देली की तरह ही है। केवल अन्य भाषाओं के शब्द आने से क्रियापद और अव्यय बदल जाते हैं। निभट्टा बोली में स्वर, व्यंजन, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, कारक आदि प्रामाणिक बुन्देली की तरह ही मिलते हैं। व्याकरणिक रूपरेखा में तीन बोलियों के समावेश के कारण और स्थानीय शब्दों के ध्वनिसमूह के कारण कुछ अंतर अवश्य आ जाता है, जो इसे एक स्वतंत्र उपबोली का स्थान दिलाती है।

ध्वनिसमूह एवं विशेषताएँ

निभट्टा में बुन्देली के साथ—साथ बघेली और कन्नौजी का मिश्रण होने के कारण इसके ध्वनिसमूह तीनों बोलियों के शब्दों से मिलकर बनते हैं। डॉ. हंस ने निभट्टा की ध्वनि समूहगत की विशेषताओं की चर्चा करते हुए लिखा है— 'निभट्टा भी तिरहारी की तरह बुन्देली और बघेली का एक मिश्रित रूप ही है। दोनों में अन्तर यह है कि जहाँ तिरहारी बघेली—प्रधान है, वहाँ निभट्टा बुन्देली—प्रधान है। यह देखते हुए इसे बुन्देली—प्रधान बघेली का ही एक रूप कहा जा सकता है। उत्तर में इसकी सीमा कन्नौजी भाषी भाग से संलग्न है, जिससे इस पर कन्नौजी का भी किंचित प्रभाव दिखायी देता है। इस प्रकार इस बोली का रूप बुन्देली, बघेली और कन्नौजी के मिश्रण से बड़ा विचित्र बन गया है।'[3]

निष्कर्ष

निभट्टा बुन्देली बोली का वह रूप है जो जालौन जिला के पश्चिमोत्तर भाग में बोला जाता है। इसका क्षेत्र और सीमाएँ एक जिले के छोटे से हिस्से तक ही सीमित

हैं। लेकिन फिर भी इसमें बुन्देली, बघेली और कन्नौजी के शब्दों का मिश्रण होने के कारण इसका शब्दसामर्थ्य समृद्ध है और इसकी व्याकरणिक रूपरेखा बुन्देली की व्याकरणिक रूपरेखा की तरह होते हुए भी कुछ हटकर है। तीन बोलियों के शब्दों का समावेश होने के कारण इसके ध्वनिसमूहों में परिवर्तन आ गया है।

संदर्भ

1. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप ; पृ. 417.
2. वही ; पृ. 417.
3. वही ; पृ. 417.

भदावरी-तंवरगढ़ी बुन्देली

बुन्देलखण्ड के उत्तरी क्षेत्र में भदावरी का प्रयोग विशेष रूप से होता है। भदावरी के क्षेत्र को लेकर विद्वानों में अलग–अलग मत हैं। कुछ विद्वान भदावरी का केन्द्र भिण्ड जिले को मानते हैं तो कुछ ग्वालियर को। प्रमुख रूप से भदावरी के अंतर्गत 'मुरैना (श्योपुर तहसील छोड़कर) भिण्ड और ग्वालियर जिला उत्तरी क्षेत्र के अंतर्गत है। इसके अतिरिक्त उत्तरप्रदेश के आगरा, मैनपुरी और इटावा जिले तथा मध्यप्रदेश के उत्तरी जिलों से लगे हुए कुछ दक्षिणी भाग भी इसी क्षेत्र के अंतर्गत माने जाते है। इस क्षेत्र में शुद्ध अथवा आदर्श बुन्देली से भिन्न इसके तीन रूप प्रचलित हैं – (अ) ब्रज मिश्रित रूप, (ब) कन्नौजी मिश्रित रूप तथा (स) खड़ी बोली प्रभावित प्रधान रूप। ये तीनों रूप भदावरी अथवा तोमरगढ़ी कहे जाते हैं'।[1] इस प्रकार हम देखते हैं कि बुन्देली का भदावरी रूप मध्यप्रदेश का उत्तरी क्षेत्र तथा उत्तर प्रदेश का पश्चिमी क्षेत्र और राजस्थान का कुछ पूर्वी क्षेत्र इसके अंतर्गत आते हैं।

भदावरी की सीमा अंकित करना विवादास्पद है। अलग–अलग विद्वानों ने उसकी अलग–अलग सीमा रेखा निर्धारित की है। डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया ने भदावरी बोली का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन करते हुए भदावरी को भिण्ड जिले में केन्द्रित किया है। डॉ. कृष्णलाल हंस ने इस बात को स्पष्ट करते हुए लिखा है– 'किन्हीं भी दो भाषाओं अथवा बोलियों के बीच भी कोई भौगोलिक सीमा रेखा नहीं खीचीं जा सकती। हम जहाँ एक भाषा अथवा बोली का क्षेत्र समाप्त मानते हैं, वहाँ भी वह भाषा अथवा बोली पूर्णतः समाप्त

नहीं होती, वह उसके आगे भी न जाने कितने मील तक दूसरी भाषा अथवा बोली में घुसी चली जाती है। फिर भी हमें अध्ययन की दृष्टि से उनका क्षेत्र तो निश्चित करना ही पड़ता है।'[2]

डॉ. ग्रियर्सन ने भदावरी को एक निश्चित सीमा के बाहर फैली हुई भाषा के रूप में स्वीकार किया है। वे लिखते हैं– 'इस बोली का क्षेत्र भदावरी क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है। यह चम्बल से आरंभ होकर गुना तक फैली है। इसके पश्चिम में ब्रजभाषा तथा हरौति (राजस्थान की एक उपबोली) का क्षेत्र तथा पूर्व में पंवारी बुन्देली का क्षेत्र है। दक्षिण में यह मालवी में विलीन हो जाती है। आगरा जिले में यह चम्बल के तटवर्ती आगरा के दक्षिणी भाग में बोली जाती है। इटावा जिले की यमुना और चम्बल के मध य में स्थित भाग में भी भदावरी ही बोली जाती है। इस प्रकार यह एक विस्तृत क्षेत्र की बोली है।'[3] इसी तरह से भदावरी के क्षेत्र की सीमा के बारे में आगरा गजेटियर में लिखा है– 'अधिकांश जनसमूह ब्रज बोलता है और पूर्वी प्रदेश की बोली प्रायः अंतर्वेदी ही है, इसे इस क्षेत्र के ग्रामीण 'गांववारी' कहते हैं। यह बुन्देली का एक उपरूप है, जो पश्चिमी हिन्दी की एक शाखा है। यह बोली (अम्बाह तहसील की) पूर्व नाम भदावर के आधार पर भदावरी कहलाती है।

भदावरी शब्द की व्युत्पत्ति

भदावरी शब्द की अलग–अलग विद्वानों ने अलग–अलग व्युत्पत्ति मानी है। मूल रूप से अधिकांश विद्वान इस मत से सहमत हो जाते हैं कि भदावर राजपूत सोलहवीं शती के पूर्व ही इस क्षेत्र में आकर बस गये थे। कुछ इतिहासकार इनका इस क्षेत्र में प्रवेश बारहवीं शती में बतलाते हैं। राज्याधिकारी होने पर इन भदावर राजपूतों को वर्षों एक ओर दिल्ली–आगरा के मुस्लिम शासकों से और दूसरी ओर ग्वालियर के तोमर नरेशों से संघर्ष–रत रहना पड़ा। 'नौगवाँ' इनके राज्य का मुख्य केन्द्र तथा राजधानी रहा। अब यह बाह तहसील का एक सामान्य ग्राम है। 'आगरा गजेटियर' के अनुसार, भदावर राजपूतों का राज्य आगरा के दक्षिणी भाग (वर्तमान बाह तहसील) से ग्वालियर राज्य के मध्य तक (वर्तमान मुरैना जिला इसी भाग में है) था। भदावर राजपूतों की बोली होने के कारण ही बुन्देली का यह ब्रज–मिश्रित रूप 'भदावरी' कहलाता है। वर्तमान ग्वालियर जिले के उत्तर–पश्चिमी भाग में भी बुन्देली का यही रूप प्रचलित है। ग्वालियर अनेक वर्षों तक तोमर राजपूतों का गढ़ रहा है। इन तोमर राजपूतों की भी यही बोली होने के कारण इसे 'तंमरगढ़ी' अथवा 'तोवरगढ़ी' भी कहा जाता है।'[4]

शब्द सामर्थ्य

शब्द सामर्थ्य से तात्पर्य भाषा या बोली के भण्डार से लगाया जाता है। डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया ने लिखा है– 'शब्द सामर्थ्य से तात्पर्य यह है कि किसी भाषा में कितना समृद्ध शब्द भण्डार है। शब्दों की विविधता और अनेकानेक सूक्ष्म भावों तथा विविध वस्तुओं के द्योतक शब्दों की उपस्थिति ही उस भाषा का शब्द सामर्थ्य है।'[5] तात्पर्य यह कि शब्द ही भाषा या बोली के प्राण होते हैं और किसी भी भाषा का शब्द भण्डार जितना व्यापक होता है, भाषा का क्षेत्र भी उतना ही विस्तृत होता जाता है। भदावरी भले ही बुन्देली की एक उपबोली है, परंतु भदावरी का अपना अलग एक विस्तृत शब्द भण्डार है। उसका शब्द सामर्थ्य मूल बुन्देली का होते हुए भी बुन्देली से हटकर है। भदावरी में जिन शब्दों का प्रयोग सामान्यजन करता है, उसकी विस्तृत चर्चा आगे की जा रही है।

सामाजिक शब्द

अन्य बोली की तरह ही भदावरी में भी सामाजिक स्तर पर क्षेत्रीय शब्दों का प्रयोग किया जाता है। बोली का शब्द सामर्थ्य व्यक्त करने के लिए समाज की विभिन्न स्थितियों का अध्ययन आवश्यक है। 'आर्थिक स्थिति, शिक्षा, रहन–सहन का स्तर, जाति एवं वर्ग–भेद, प्राकृतिक सुख–सुविधा एवं सामाजिक प्रतिष्ठा आदि के अनुसार बोली में व्यवहृत शब्द भण्डार अपना पृथक् अस्तित्व स्थिर करता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज की विभिन्न स्थितियाँ, मानवीय भावों, विचारों एवं उद्‌गारों की अभिव्यक्ति में अंतःप्रेरणा के फल स्वरूप बाह्य परिवर्तन उपस्थित किये बिना नहीं रहती। स्थितिजन्य आन्तरिक उद्‌भावना सामाजिक स्तर के अनुकूल पृथक्–पृथक् शब्द रूपों का स्वरूप निर्धारित करती है। आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न एवं सुशिक्षित जन–समुदाय की बोली का स्वरूप निश्चित रूप से निर्धन एवं अशिक्षित वर्ग की बोली से भिन्न होता है।'[6]

सामाजिक स्तर पर भदावरी में जिन शब्दों का बार–बार प्रयोग किया जाता है, वे इस प्रकार हैं– शिक्षित वर्ग में चम्बल, सिंध, चिट्‌ठी, देहाती, कार, मोटर तथा वकालत शब्द अशिक्षितों में क्रमशः चामिल, सेंध, चिठिया, देहायती, कहरिया, मोठर और बकीलात बोले जाते हैं। चाय बनाने के लिए कई प्रकार से बोला जाता है। 'चाय रंध रही' (निम्न जातियों में), 'चाय पक रई' (मुसलमानों में), कारतूस – कासतूर, महावर – माहौर, परिश्रम – पैसरम। स्त्री, पुरुष लिंग के अनुसार बोली में भी अंतर पाया जाता है। जैसे– 'हम जाय रईं', 'हम बैठी हैं'– इसी तरह पुरुषों में 'हम खाय रये', 'हम जाय रये', 'हम बैठे हैं', शब्द मिलते हैं।

गालियाँ या अपशब्द

अन्य क्षेत्रीय बोलियों की तरह भदावरी में भी अपशब्द और गालियाँ दी जाती हैं। सामाजिक स्थिति की तरह दुर्वचन का भी प्रयोग किया जाता है। डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया ने लिखा है– 'सामान्यतः ग्रामीण क्षेत्रों में गुप्तांगों को लक्ष्य बनाकर गालियों का प्रयोग होता है। कहीं–कहीं भावावेश में लोग पुरुषों तथा स्त्रियों की गालियों के लिये पशुओं के नाम का प्रयोग करते है। जैसे ढोर, कुतिया आदि प्रयुक्त करते हैं। बोली में सामान्यतः दुर्वचनों तथा गालियों का प्रयोग बहुत होता है। ये प्रयोग जानबूझकर किसी के प्रति किये जाते हैं – क्रोध के अवसर पर और कभी–कभी स्नेह प्रदर्शन के लिए भी।'[7] इस तरह के अपशब्द भदावरी में अधिक मात्रा में मिलते हैं। उदाहरण के रूप में हम कुछ शब्दों को देख सकते हैं– ससुरे, साले। भेन्चो = बहिन को लांछित करते हुए। छिनरा = पुरुष की चरित्रहीनता का द्योतक। नकटा = सामाजिक अपमान होने का अर्थ। लपका = लुक्का। पींधा = प्रकृति विरुद्ध व्यभिचार की व्यंजना। बिघनी = निंदार्थक शब्द। बरेला = ईर्ष्यालु। टंटुगा लगो = घृणा एवं तिरस्कार के अर्थ में। ठसाउनी को = माँ को लाँछित गाली। ठठई बंधो = मृत्यु अथवा सर्वनाश का द्योतक। पगरो उते = पवरै उते, मरो उते, भार में जाओ आदि शब्द के रूप में। खसमखाई = विधवा के लिये, अन्य शब्द मांस खानि, रांड़, रंडो। दमाशिन = चारित्रिक दुर्बलता का प्रतीक, अन्य शब्द बझालिन, कुल्टा, कर्कशा। छोत = बदमासिन का समानार्थी। हड़जरु = ईर्ष्यालु प्रवृत्ति की स्त्री, हड़जरा पुरुषों के लिये। लुगया = पत्नि में अत्यधिक आसक्ति रखने वाला पुरुष। गुलमा = वर्ण संकर। छोलन = सर्व दुर्गुण संपन्न स्त्री अथवा पुरुष। खसमियासी = पति के वियोग में अत्यधिक व्याकुलता का प्रदर्शन करने वाली स्त्री अथवा पति की सामने प्रशंसा अथवा बड़प्पन की चर्चा करने वाली स्त्री के लिये।

संबोधन

भदावरी में स्त्री–पुरुष, बढ़े–बूढ़ों, बच्चों को संबोधन करने के लिए अनेक देशीय शब्दों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण– ए = स्त्रियाँ अपने पति के लिए उच्चारण करती हैं। एइ = दूर बैठे व्यक्ति को चिल्लाकर पुकारना। ऐजू = प्रौढ़ एवं वृद्ध व्यक्तियों के लिए। भइयाहोरे = सम वयस्क युवतियाँ प्रेम प्रदर्शन में प्रयोग करती हैं। काये को= अपनेपन का भाव व्यक्त करने के लिए। गुंइया = समवयस्क युवतियों में परस्पर व्यवहार होता है, सहेली की तरह। बैन = प्रौढ़ स्त्रियाँ समवयस्क स्त्री के लिए। ओरें= निम्न जाति वालों का। लम्बर = उच्च जातीय व्यक्ति के लिए। ललासेरी = चुनौती के भाव में प्रयुक्त।

आशीर्वादात्मक शब्द — खुशी रओ = कम आयु वालों को आशीर्वाद के रूप में। इत्तो बढ़ो हो जाये = बच्चों को बड़े होने के लिये। ऐबाती रओ = सौभाग्यवती रहने का भाव।

सौगंध — काल्सदेव का कौल = कसम, पुरुषों के लिये। देवताओं से संबंधित= मातन को कौल, बजरंग कसम, महावदिन को कौल, देविन को कौल, बाला जी को कौल। अवतारों से संबंधित = रामधई, ईश्वर कसम। अपने आपसे संबंधित = अपनी सौं, अपनी कसम, अपऔं कौल। अन्य से संबंधित = भइज्जई सों, महतारी को कौल, दद्ई सों, मोड़ा को कौल। पवित्र नदी संबंधित = गंगा सों। समूह से संबंधित = सिग्गरई, घर भर को कौल। हबाई सौगंध = छत्तुर छाया में ठाँढ़े, सागर पै बैठे, पराई मड़इया में बैठे, भगवान जाने, मंदिर तर हात पसारें।

व्यवसाय के अनुसार

व्यवसाय और जीवन से संबंधित अनेक शब्द भदावरी के ग्रामीण रूप में मिलते हैं। ये शब्द अलग–अलग व्यवसाय में कई प्रकार के बोले जाते हैं। व्यवसाय के अनुसार शब्द दिये जा रहे हैं।

किसान की शब्दावली – सामान्यतः खेती करने वालों को किसान कहा जाता है और उनके कार्य को किसानी का नाम दिया जाता है। कृषि कार्य में प्रयुक्त होने वाले शब्द इस प्रकार हैं – खेत = जुताई करके बीज बोकर फसल पैदा करने का स्थान। धत्ती = खेत या खेतों का समूह। टपरिया = खेत का छोटा आकार। टूंका = टपरिया से भी छोटे खेत। पार = खेत के चारों ओर की बंधिया। पट्ठा = खेत की जुती हुई मिट्टी के नीचे की ठोस भूमि। कूँड़ = हल्की नोक से खेत में होने वाली रेखाएँ। पुलिया= कूँड़ का भीतरी भाग। सेल = खेत में सिंचाई करते समय जल के वेग को रोकने के लिये बनायी गयी मोटी लाइनें। हरइया = खेत के अस्थायी टुकड़े। जोत = हल चलाने योग्य नमीयुक्त भूमि। हरू = हल। हरीस = हल का मुख्य भाग। अकुरिया = फारु के नीचे का भाग। परेथो = जहाँ मुठिया लगती है। फारु = अकुरिया के निचली सतह का लोहे का पतला नुकीला टुकड़ा।

इसके अलावा कृषि में काम आने वाले अन्य औजारों को कई नामों से पुकारा जाता है। जैसे– काँठी, गढ़ील, सोत, हरेनी, जुआँ, पंचारी, सैल, जोत, नारो, पधइया, मुठिया, पनेठिया, औगी, बखरु, लोड़, मिझौना, डाँड़ी, दतुआ, फाँस, करोरा, चीप, जिरिया, खोलिया, परोह, पाँस, छुरिया, कीला, नारी, कसनियाँ, पाड़, भीतना, पाठ,

चिरइयां, तरमाँची, वर्‌ह, किरियाँ, मिलाई, रहँट, घरियाँ, तीर, चकला, सूप या पनारौ, चकलिया, तवा, पटली, लाठ, कुत्ता, खरैना, लाँक, पूरा, गल्ली, पैर, तड़कवो, पासु डारवो, खरैरो देबो, दांय, टटिया, तांगरो या पंचागरों, देई, टिप्पणी, सिली, रास, पटा, भुस, सरायती या सौहनी गाँठ, नोनी और करपिया।

बैलगाड़ी से संबंधित शब्दावली – धुरा, हरेना, चिरइयां, पटली, अटान, कटरा, भौरा, परगज, चकील, चका, नगफोरू, ढूँठियाँ, नाय, नग, पुठी, गुजीलें, चोटियाँ, धवा, आँउन, पट्‌टे, अन्दा, खुटरी, बल्दिया, झँझारी, उँटरा, पखियाँ, सिपाये, नक्की, जुही, जोगो, सलीता, सगोठा, खड़ेरुआ और कसन आदि।

नाई से संबंधित शब्दावली – कतन्नी = कैंची। छुरा = उस्तरा। नहन्नी = नाखून काटने का औजार। सिली = छुरा की धार लगाने का पत्थर। बद्‌धी = सिली पर रगड़ने के उपरांत छुरा फेरा जाता है। कंगा = कंघी। पेटी = टीन की छोटी बक्सिया। बिलिया = छोटी कटोरी। कलम = कनपटी पर आये बालों को काटना। खौर = माथे पर कुछ चौड़ाई किनारे के बाल काटना। गिरदा = सिर के अग्र भाग के बाल छुरा से साफ करना। मूँछ = मूँछ के बाल मिलाना। तरवार काट = नुकीली मूँछ। मक्खी काट = मक्खी के आकार के मूँछ के बाल काटना। डोरा = पती मूँछे। सफाचट = मूँछे हटाना। कटिंग = सिर के पीछे के बाल काटना। मोटी = मोटे आकार के बाल काटना। बन्द = छोटे बालों को बड़े बालों से ढकने वाली कटिंग। मशीन = बाल काटने की छोटी मशीन। जीरा = बालों को अधिक छोटा करने वाली मशीन। मोटी = बालों को मोटा रखने वाली मशीन। बार छटबौ = बालों की कटिंग। बार बनबौ = मुंड एवं दाढ़ी आदि कटिंग। हजामत = दाढ़ी मूँछ के बाल काटने की क्रिया।

बढ़ई की शब्दावली– लकड़ी का कार्य करने वाले को कारीगर या बढ़ई कहा जाता है। बढ़ई के कार्य में आने वाले औजारों एवं अन्य शब्दों का प्रयोग निम्न प्रकार होता है। उदाहरण – पिड़ी, खदेल, सूत, ठिया, गुड़िया, सिकंजा, खसरा, गुनिया, सिली, फुटा, आरा, दुहत्ती, हतारी, रोंधी, बाल बैंरिगदार रोंधी, बर्मा, निहानो, निहानी, कड़न्ना, पटाती, रून्दा, पुलन्दा, झिरी का रून्दा, गोल्वी, लोहे का रून्दा, तिकौरा कठरेता, भाउन, रूखानी, परगई, बड़ा निहानौ, झूमरा, घन, सुम्मी, बिरी, छैनी, पिलास, जम्बूर, संशी, बसूला, बसुलिया, पाताम, किवार, चौखट और कीली आदि।

लुहार की शब्दावली – लोहे का कार्य करने वाले को लुहार कहा जाता है। यह लोहे से कृषि एवं अन्य क्षेत्र के हथियार को बनाता है। लुहार के कार्य में प्रयुक्त होने वाले औजार निम्न प्रकार हैं– दुकान, भटिया, जाली, पंखा, पहिया, निहाई, घन,

हतौरा, संसी, छेनी, सुम्मी, बिरी, रेती, टान्नी, कोला, कुंडी, धवा, गड्डा, गड़सा, पस्सा, हँसिया, खुपरिया, फाँस कुरोरा, फौंरा, कुदरा, टाँकी और अमकटा आदि।

मिट्टी के बर्तन बनाने वालों की शब्दावली – मिट्टी के बर्तन बनाने वाले को कुम्हार कहा जाता है। कुम्हार पत्थर के चाक पर मिट्टी को बर्तनों का आकार देता हैं। उसके कार्य की शब्दावली इस प्रकार है – माटी, लीद, चका, कीला, पाट, चकरेटी, पिढ़ी, थपा, चकोंड़ी, कूंडे, धांगरो, खेह, छेन, डहार, नाद, मथनयाँ, मोना, पसन्नियाँ, चुकारिया, कल्सिया, दिया, पारौ, गगरी, घिल्ली, नदौरा, बोरका, गोलक, घोड़ा, चकिया, हाँती, बदक, अंगूरा, हँड़िया, चरूआ, करवा, गमला, ढोलक, मठोला और दिवलिया आदि।

धोबी की शब्दावली– किसान = जिनके कपड़े धोबी धोता है। सौदाई = कपड़ों के लिए मसाले में डुबा के रखना। हौदी, रीठा, साबुन, सोडा, रेओ, भटिया, लोहा (प्रेस या इस्तिरी), पथरा, सोटा, घाटु, लादी, सोअर, सूतक या बार गुतो, कलेऊ या धुबाई, गधा और साल आदि।

भरबूँजा (भाड़ भूजने वाला) की शब्दावली– कूँड़े, आँखें, झीक, मुहरा, ढकना, धूरा, छजना, कच्छुला, गड्डा, खपरा, झोंक, कूरो, घना, सतुआ और फूला आदि।

चुरेला (चूड़ी बेचने वाला) की शब्दावली – चूड़ी बेचने का धंधा करने वाले को चुरेला, चुरेले, चुरेलो और शीसगर आदि नाम से जाना जाता है। इसके कार्य में प्रयुक्त होने वाली शब्दावली इस प्रकार है– ओड़ी, छबुलिया, कटोरी, सोनाबाई, धूप, छाँय, प्लेन, रंगीली, काँटो, कड़ा, कलुआ, कचेरा, फलेट, झिलमिल, हिल्ल, सुरक्का, ओली, असीस, मुर्री, उठूला, आखत, नेग और लौटती की चूड़ी आदि।

सुनार की शब्दावली – संस्कृत के शब्द स्वर्णकार से मराठी सोणार बना है, इसी सोणार का विकृत रूप सुनार हो गया है। भदावरी बोली में सुनार को पोद्दार शब्द भी व्यवहृत किया जाता है। सुनार मूलतः वह व्यवसायी जो सोने, चाँदी का व्यवसाय प्रमुखता से करता है। सुनार के व्यवसाय में प्रयुक्त होने वाले शब्द इस प्रकार हैं– सौनों (सोना), चाँदी, सूबरी, पक्की, थक्का, सोना, तामों (तांबा), जस्ता, सीसो, पीतर, निहाई, हतौरा, जम्मू, कतन्री, पिलास, सड़सी, बंकनार, फूंकनी, जती, प्रेस, डाई सुम्मियाँ, बिरी, चिमिटिया, ठप्पा, वर्मा, कड़न्ना, छैनी, बट्ट, कलम, तार खेंचत की मशीन, पालिस मशीन, संसा, धन्ना, सादा पटरी, रेजा, स्टोप, कसौटी, टोंटा, बुरूश, तेजाब, सोरा, गंधक, नमर, कलई, पंखा, भट्टी, घरिया, अँगीठी, काँटौं, कल्दार, सिल्लिया, स्यांइद, साई, उतन्ना, लरूआ और खलूटा आदि।

फिराई से संबंधित शब्दावली — कच्चे घरों में खपरैल से छावन की जाती है। मौसम या अन्य अन्य कारणों से खपरे वर्ष भर में अव्यवस्थित हो जाते हैं। वर्षा के पूर्व उन खपरों को फिर से व्यवस्थित किया जाता हैं, इस कार्य को फिराई कहते हैं। बहुत से लोग फिराई का कार्य करके अपना जीवन/यापन करते हैं। भदावरी क्षेत्र की बुन्देली में फिराई से संबंधित शब्दावली निम्न प्रकार है— खपरा, पहेला, औंधेला, घरिया, पही, पलरू, मगरो, चार, खरौ, सेओ, भन्न, खाड़ू, तोआ, टाँटरो, चिल्ला, खुस्सेला, बता, किन्न, गुँदिया, गार, रक्सा, पसार, गोंदी, पसन्नियाँ, ढुइंयाँ, पचकरी आदि।

गायन एवं वादक से संबंधित शब्दावली— भदावरी क्षेत्र के ग्रामीण अंचल में गाये जाने वाले लोकगीतों तथा शहर के लोगों में होने वाले शास्त्रीय संगीत में कुछ वाद्य यंत्रों का प्रयोग किया जाता है। जैसे— ढोलक, तबला, मजीरा, झींका, हरमुनिया, डंडताल, खंजरी, नगड़िया, नगाड़ौ, खड़ताल, सारंगी आदि।

खेलों से संबंधित शब्दावली— भदावरी क्षेत्र में खेलों से संबंधित दो प्रकार की शब्दावली पायी जाती है— लड़कों के खेल से संबंधित और लड़कियों के खेल से संबंधित। लड़कों के खेल से संबंधित शब्दावली— गिल्ली डंडा, हुलक डंडा, कबड्डी, चक चूँ या चूँ घोड़ा, चम्मज रेज, ठिप्पुर चोर, आची—पाची, ठड्ड बैठा, खो—खो, कोड़ा मार, पिलिया, गधामार, गधइया मार, मूड़ थप्पड़ी, ताल तलैया, चंगा, तौरी, अंटी, टिन फिस्सी, ढेंड़ी मार या गतई मार, पिलुलवा, डुडुवा, मियाँमार, चुक चुक चलनी, मुची मुचा, काठ कठउवा, भौर गड्ड, भंगी राजा, टेसू।

लड़कियों से संबंधित खेल शब्दावली — पचकुट्टा, सत्ता, तरैया, गौरे, महबुलिया, झिंझिया, हपक्कूँ, कुच कुच बातीं, झूला, हिडोंरा, पुतरियाँ। अन्य शब्द— थुई, रेडी, दइया, पदौ, आसु, गच्च, पटम पटा, बेइमन्टा, खिसमन्टा, झुट्टल, सच्चल, मरबौ, जीबौ, पकबौ, कच्चे गुईयाँ आदि।

पढ़ाई से संबंधित शब्दावली— पट्टी, करोंच, पोतना, बुद्दका, हरी, घोंटा या घुट्टा, किलम, ओलम, मान्त्रा, कक्का किक्की, किट किन्ना।

बच्चों की मनोभावात्मक शब्दावली— कुट्टी = मित्रता भंग करने का प्रतीक। छूट = मित्रता त्यागने का उपक्रम। सलाई = परस्पर सलाह। कुदका या कुद्दक = उपेक्षा मिश्रित तिरस्कार व्यक्त करने के लिए अंगूठा को कड़ा एवं टेढ़ा करके दिखाना। सिंगट्टा = अंगूठे को सींग की तरह चुनौती के भाव में टेढ़ा करके दिखाना। तिली—ली—ली = चिढ़ाने के लिए जीव्हा की नोक से उंगली का स्पर्श करके दिखाना।

इस प्रकार शब्द सामर्थ्य के वर्गीकरण के आधार पर भदावरी बोली के सामाजिक स्थिति व्यवसाय एवं वय के अनुसार शब्दों को संकलित किया गया है। यहाँ पर जो शब्द दिये गये हैं, वे प्रत्येक क्षेत्र के शब्दों का बहुत ही संक्षिप्त रूप है। यथार्थ में हम देखें तो भदावरी का शब्द सामर्थ्य काफी विस्तृत है। एक भाव को व्यक्त करने के लिए कई शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

व्याकरणिक रूपरेखा

इस संदर्भ में डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया ने लिखा है– 'मुरैना जिले में बुन्देली का तंवरघारी रूप, इटावा में कन्नौजी, जालौन में लोधांती रूप, दतिया में बुन्देली का पंवारी रूप और ग्वालियर की डबरा तथा गिर्द तहसीलों में क्रमशः पंचमहली, जटवारी और भदावरी का व्यवहार होता है। भिण्ड जिले की सीमाओं पर निम्नलिखित बोली रूप व्यवहृत होते हैं।

उत्तर – तंवरघारी, सिकरवारी एवं कन्नौजी।
दक्षिण – पंवारी, पंचमहली, जटवारी एवं भदावरी।
पूर्व – लोधान्ती एवं कन्नौजी।
पश्चिम – तंवरघारी एवं जटवारी।'[8]

अन्य भाषाओं एवं बोलियों की तरह बुन्देली की भदावरी बोली की भी अपनी व्याकरणिक रूपरेखा है। अक्षरों के बाद शब्द पद की सबसे छोटी इकाई मानी जाती है, जो स्वतंत्र रूप से व्यवहार में उपयोग किये जाते हैं। शब्द के रूप हम देख सकते हैं– मोड़ा, भैसिया, बरखवारो, पनहयाई, दौरबौ, खायबौ, खौ आदि। इसी तरह शब्द से मिलकर भदावरी में भी पद का निर्माण होता है। पद की व्याख्या करते हुए डॉ. सौनकिया ने लिखा है– 'शब्द का व्याकरणिक रूप पद कहलाता है। पद के अंतर्गत विभक्तियुक्त शब्द आते हैं और ऐसे विभक्तियुक्त शब्द वाक्य को सार्थकता प्रदान करते हैं।' विभक्तियाँ संज्ञाओं, सर्वनामों, विशेषणों, धातुओं तथा क्रियाओं के अन्त में व्यवहृत होती हैं। विभक्तियों से संयुक्त शब्द पद कहे जाते हैं और ऐसे पद वाक्य में व्याकरणिक संबंध स्थापित करते हैं। जैसे – भैसिया ने खुर खुँद कद्दओ, बैंगा नें गुड़याय दओ बाय, भैंसिया चन्न गई और बैंगा टुराय गओ।'[9]

भदावरी के व्याकरण को समझने के लिए व्याकरण के मूल तत्त्वों को समझना भी आवश्यक है। यहाँ पर भदावरी का व्याकरण, व्याकरण के मूल तत्त्वों की कसौटी कर कसकर देखा गया है।

संज्ञा

हिन्दी की तरह भदावरी में भी संज्ञाएँ तीन प्रकार की होती हैं– जातिवाचक, व्यक्तिवाचक, और भाववाचक।

जातिवाचक संज्ञा – प्राणियों, पदार्थों और स्थानों का बोध कराने वाली संज्ञाएँ जातिवाचक संज्ञा कहलाती हैं। जैसे– चौंपे (चौपाया), चिरईयाँ (चिड़िया), नाजु (अनाज)।

व्यक्तिवाचक संज्ञा – व्यक्ति विशेष, वस्तु विशेष अथवा स्थान विशेष के रूप में प्रयुक्त होने वाली संज्ञाएँ व्यक्तिवाचक संज्ञा कही जाती हैं। जैसे– भैसिया (भैंस), सुआ (तोता), गोऊँ (गेहूँ)।

भाववाचक संज्ञा – किसी भी गुण दशा अथवा भाव का बोध कराने वाली संज्ञाएँ भाववाचक संज्ञाएँ कहलाती हैं। जैसे– चतुराई (चतुरता), चंपटना (चालाकी युक्त निपुणता) तथा मोड़पन (बचपन)।

लिंग

हिन्दी शब्दानुशासन में लिंग को जाति का रूप माना है। भदावरी में भी हिन्दी की तरह ही दो लिंगों की चर्चा की गई है– पुल्लिंग और स्त्रीलिंग। पुल्लिंग के अंतर्गत पुरुष लिंग से संबंधित शब्दों का प्रयोग किया जाता है। जैसे– मौड़ा, ऊँट, साँड़, पड़ा आदि। स्त्रीलिंग जैसे– मोड़ी (लड़की), ऊँटनी (मादा ऊँट), गइया (गाय), पड़िया (भैंस शिशु)।

सर्वनाम

जो शब्द संज्ञा के बदले में बोले जाते हैं, उन्हें सर्वनाम कहा जाता है। ये पद दो शब्दों के योग से बना हैं, जिसका अर्थ सबके नाम के रूप में प्रयुक्त होता हैं। व्यवहार के अनुसार हिन्दी की तरह ही भदावरी में भी सर्वनाम के छह भेद किये गये हैं – पुरुषवाचक, निश्चयवाचक, अनिश्चयवाचक, प्रश्नवाचक, संबंधवाचक और निजवाचक।

पुरुष वाचक – भदावरी में पुरुष वाचक सर्वनाम के तीन रूप मिलते हैं। उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष तथा अन्य पुरुष। इन तीनों रूपों में एक वचन एवं बहुवचन पाये जाते हैं। जैसे –

उत्तम पुरुष – एकवचन – 1. मैं तो आज नाई जात।
2. मेरौ का कसूर बनि गऔ।
बहुवचन – 1. हम तो आज नई जात।
2. हमऔ का कसूर बनि गऔ।

मध्यम पुरुष – एकवचन – 1. तेंनें पेले काये कों कही ती।
2. तुम तो बड़े आदमी हो महाराज।
बहुवचन – 1. तुम सब नें पेले काये कों कही ती।
2. तुम सिंगरे बड़े आदमी हो महाराज।

अन्य पुरुष – एकवचन – 1. बानें झोरा छुड़ाय लऔ।
2. जानें अबे रोटिअऊ नाईं खाई।
बहुवचन – 1. बिन्नें झोरा छुड़ाय लऔ।
2. जिन्नें अबे रोटिअऊ नाईं खाई।

निश्चयवाचक – किसी भी कथन की निश्चितता व्यक्त करने के लिए निश्चयवाचक सर्वनामों का व्यवहार किया जाता है। इसके दो भेद हैं– निकटवर्ती और दूरवर्ती।

निकटवर्ती – 1. जा गइया बड़ी मरखू है।
2. जा मोड़ा बड़ो ऊधमी है।

दूरवर्ती – 1. बा गइया बड़ी मरखू है।
2. बा मोड़ा बड़ो ऊधमी है।

अनिश्चयवाचक – जिन वाक्यों से अनिश्चयात्मक कथन का बोध होता है। उन्हें अनिश्चयवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे– द्वारें कोऊ टेर्रऔ, तिहाई जेब में कछू है।

प्रश्नवाचक – भदावरी में कई प्रश्नवाचक सर्वनाम का प्रयोग किया जाता है। को–को, का–का तथा कां– कां रूप में इसका प्रयोग मिलता है। जैसे – भां और को हतौ? कटुरिया में का घरो?, तुम कां गये ते ?

संबंधवाचक – जिन सर्वनामों से संबंध व्यक्त करने का व्यवहार किया जाता है। उन्हें संबंधवाचक सर्वनाम कहते हैं। भदावरी में जिन, तिन, जौन, तौन आदि सर्वनाम मिलते हैं। जैसे– जो चल रऔ होय सो चलै। जिनकों जाने होय तिनको जान देओ।

निजवाचक – स्वयं को संबोधित करने वाले सर्वनाम को निज वाचक सर्वनाम कहते हैं। भदावरी में इस प्रकार के सर्वनाम निम्न रूप में मिलते हैं– अपुन कों को पूछत। अपुन तो चुप हें भैया। अपुन तो कानून पे हांत धरें आदि।

विशेषण

विशेषण वे शब्द हैं जो संज्ञा शब्दों की विशेषता बतलाते हैं। ये विशेषताएँ गुण, दशा, संख्या अथवा परिणाम का बोध कराती हैं। भदावरी में भी अन्य भाषाओं की तरह ही विशेषण सात प्रकार के होते हैं। क्रमशः विवरण निम्न प्रकार है –

गुणबोधक – वे शब्द जो संज्ञा शब्दों के गुणों अवस्थाओं एवं स्थितियों का बोध ा कराते हैं। गुण बोधक विशेषण कहलाते हैं– (अ) मीठो आम अच्छो लगत (ब) लाल धोती सूख रई।

परिमाणबोधक – संज्ञा शब्दों का परिमाण बोध कराने वाले विशेषण परिमाण बोधक विशेषण कहे जाते हैं – (अ) तनक पानी डाद्दियो। (ब) कित्तौ दूद दे रई भैंसिया।

संख्याबोधक – संज्ञा की संख्या का बोध कराने वाले विशेषण संख्या बोधक विशेषण कहे जाते हैं। (अ) चार पुरीं करबअ डरी कतरबे कों। (ब) तीसरौ रोज है उनें गयें।

निश्चयात्मकबोधक – निश्चितता का बोध कराने वाले विशेषण निश्चयात्मक विशेषण कहलाते हैं। (अ) सबके सब चले गये। (ब) अटकी पै सेर भरो चून नाई देत कोऊ।

अनिश्चयात्मकबोधक – जिन विशेषणों से निश्चितता का बोध न हो सके, उन्हें अनिश्चयात्मक विशेषण कहते हैं– (अ) सैकन्न आदमी फिर रऔ शक्कर के लाने। (ब) तेंथोरी बात काऊ की मान जाओ करे।

क्रियामूलकबोधक – जो विशेषण रूप मूल क्रिया रूप में कुछ न कुछ परिवर्तन करने से बन जाते हैं, उन्हें क्रियामूलक विशेषण कहा जाता है। (अ) चल्त बैरा के आर नाई लगाई जात। (ब) रोउत मोंड़ा कोऊ नाई खिलाउत।

सार्वनामिकबोधक – सर्वनामों से संरचित विशेषण सार्वनामिक विशेषण कहलाते हैं। जैसे– (अ) जैसो तेंनें करो तैसौ फल मिलौं। (ब) वौ नौकर नाई पट्टो जो आवे की कै गऔ तो।

क्रिया

जिन शब्द से किसी का काम करना या होना समझा जाये, उसे क्रिया कहते हैं। क्रियाओं के दो रूप होते हैं। भदावरी में भी ये रूप देखे जा सकते हैं – अकर्मक और सकर्मक।

अकर्मक – जिन क्रियापदों के कार्य, व्यापार एवं फल का प्रभाव कर्ता पर पड़ता है, वे क्रियाएँ अकर्मक कहीं जाती हैं। अकर्मक क्रियापदों में कर्म स्पष्ट नहीं होते। (अ) गइया चर रई। (ब) मोड़ा सोय रओ।

सकर्मक – जिन क्रियापदों के कार्य, व्यापार का फल कर्ता पर न पड़कर कर्म पर पड़ता है, उन क्रिया पदों को सकर्मक कहा जाता है। ऐसे वाक्यों में कर्म का होना अनिवार्य है। (अ) चाकर साचौ कर्‌रऔ। (ब) काछी कछवाई गोड़ रऔ।

अकर्मक और सकर्मक क्रियाओं के अतिरिक्त भदावरी में कुछ अन्य क्रियापद भी पाये जाते हैं, वे निम्न प्रकार हैं –

द्विकर्मक – इन क्रियाओं के साथ दो कर्म होते हैं। जैसे– (अ) बा गाय कों चारौ डाद्‌देओ। (ब) खाट पर गद्‌दा बिछाय देओ।

प्रेरणार्थक – जो क्रिया रूप मूल धातु में प्रत्यय लगाकर बनाये जाते हैं, वे प्रेरणार्थक क्रिया कहे जाते हैं। जैसे– (अ) पटैल ने गरीब गमार कों चोरी में झूठो फसबादऔ। (ब) उननें बाके मोड़ा की पकड़ करबा दई।

अपूर्ण – जिन क्रिया रूपों से कार्य के पूर्ण न होने अथवा जारी रहने का बोध ा होता है। वे अपूर्ण क्रियाएँ कहीं जाती हैं। जैसे– (अ) रात–दिन बाग बागियन को खटका बनौ रहत। (ब) चाय जब पाउनें आ जात।

सहायक – मुख्य क्रिया के सहायक रूप में आकर उसके अर्थ को पूर्णता प्रदान करने वाली क्रिया सहायक क्रिया कहलाती हैं। जैसे– (अ) बौ घुड़िया पै बैठ गओ।

संयुक्त क्रिया – जब एक वाक्य में एक से अधिक क्रियापद एक साथ आते हैं, तब उन्हें संयुक्त क्रिया कहा जाता है। जैसे – (अ) बिट्‌टो दिन भर हँसत खेतल रई।

क्रियात्मक क्रिया – ऐसे क्रिया रूप प्रमुख रूप से क्रिया में न प्रत्यय जोड़कर अन्त्य 'आ' को 'ए' में परिवर्तित करके बनाये जाते हैं। जैसे– वे या बौ होता है। उदाहरण– (अ) सिरपंच कौ मोड़ा डाकधरी पढ़वे भोपालै गऔ। बा तो बस खाबौ, पीबौ करत रहत।

अव्यय

हिन्दी और बुन्देली व्याकरण में आये अव्यय की तरह भदावरी में भी अव्यय मिलते हैं। अव्यय की चर्चा करते हुए डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया ने लिखा है– 'जिन शब्द–रूपों में लिंग, वचन, पुरुष, कारक इत्यादि के कारण कोई विकार उत्पन्न नहीं होता, उन्हें अव्यय कहा जाता है। अव्यय शब्द अ + व्यय के संयोग से बना है। 'अ' का अर्थ 'नहीं' है और व्यय का अर्थ 'खर्च होना' है। इस तरह अव्यय का सरलार्थ न बदलने वाला शब्द रूप है। अव्यय प्रत्येक दशा में अपने रूप में यथावत रहते हैं, उनमें परिवर्तन नहीं होता।'[10] भदावरी में छह प्रकार के अव्यय मिलते हैं। जैसे– क्रियाविशेषण (यहाँ, वहाँ, जल्दी)। समुच्चय बोधक (उर, और)। विस्मयादिबोधक (हर्ष, शोक तथा आश्चर्य)। सकारात्मक तथा नकारात्मक (हऔ, हां हां, नाईं, नई)। परसर्गीय शब्दावली (बाके संगै, पीठ पिछाऊं)। निपात (ही, भी, भर, तक)।

काल

भदावरी में हिन्दी की तरह क्रिया के तीन काल रूप मिलते हैं– वर्तमानकाल (बछिया दूध चौंख रई)। भूतकाल (बिट्टो ने देखो तो)। भविष्यकाल (बो काल बजारे जेहे)।

ध्वनिसमूह एवं विशेषताएँ

भदावरी बोली बुन्देली का उत्तरी रूप होने के कारण इसके ध्वनिसमूहों में उस क्षेत्र के आसपास की स्थानीय भाषा या बोली का प्रभाव देखा जाता है। भदावरी एक ओर ब्रज से साम्य रखती है तो दूसरी ओर कन्नौजी से, इसलिए इसमें जिन ध्वनियों का प्रचलन है। वह बुन्देली, ब्रज तथा कन्नौजी का मिश्रित रूप है। इसकी चर्चा करते हुए डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया ने लिखा है– 'भदावरी घार की समीकरण की प्रवृत्ति जटवारे के कसमार, गुत्तौर, देवरा, श्यामपुरा, पलिया, धमसा और जनौरा ग्राम में उपलब्ध ा हो जाती है। इसी तरह भदावर घार के कठवां, रवियापुरा, धनौली, परार्वन और मदरपुरा आदि गाँव में जटवारे की उकार बहुला उच्चारण प्रियता और बाल्टी, लान्टेन, कन्सा संज्ञा शब्द रूप सहजता से उपलब्ध हैं। रजपूत घार के चौरासी गाँव पश्चिमी सीमा पर जटवारे की उच्चारण विशेषताएँ लिये हुए हैं, तो दक्षिण पूर्व में कछवाये घार की उच्चारण विशिष्टता सहज ही देखी जा सकती हैं। रजपूत चौरासी का कैरौली, किटी, जारेट तथा गुरयायची और जटवारे का घमूरी, भड़ेरा, महुअरी, देहगाँव, खेरिया चाँदन, बाला क्षेत्र, संक्रमण का क्षेत्र है। रजपूत घार को भदावर घार से अलग करने वाले गाँव में भी बोली की ध्वनि के धरातल पर यही स्थिति है।'[11]

बुन्देली का उत्तरी रूप भदावरी क्षेत्र में बोली जाने वाली बोली की ध्वनिगत विशेषताओं को समझने के लिए ध्वनिग्रामिक संगठन का आधार लेना आवश्यक है और इसके लिए ध्वनियों के स्वर, व्यंजन, शब्द, प्रत्यय, बलाघात, सुर तथा समूहगत विशेषताओं को समझने के लिए आगे ऊपर बताये अनुसार संक्षेप में विवरण किया गया है।

स्वर

हिन्दी की अन्य बोलियों की तरह बुन्देली की भदावरी बोली में भी मूल दस स्वर व्यवहार में उपयोग किये जाते हैं। ये स्वर अक्षर भदावरी क्षेत्र में युग्म उच्चारणों द्वारा बोले जाते हैं। जैसे – टक–टका, बिस–बीस, चुक–चूक, सेर–सैर, कोल–कौल।

स्वरों की स्थिति

भदावरी में स्वरों की स्थिति निम्न प्रकार है –

'अ' – अटक (गरज), झरप (परदा), भड़भड़ (सोरगुल)।
'आ' – आसरो (भरोसा), दबारो (दबाव), अड़ा (अंडा)।
'इ' – इकसरो (इकहरा), नटिया (छोटे कद का बैल), ढुरि (प्रसन्न)।
'ई' – ईसुर (ईश्वर), परीत (प्रेत), जुराई (ज्वर)।
'उ' – उसारौ (छप्पर), नउवा (नाई), बुढ़ऊ (वृद्ध)।
'ऊ' – ऊजरौ (स्वच्छ), गमूकौ (मुक्का), बनाऊ (बनावटी)।
'ए' – बेला (कटोरा), नसेटा (उलझन), सिगरे (सब)।
'ऐ' – ऐसान (ऐहसान), नसैनी (सीढ़ी), करै।
'ओ' – गोड़े (पैर), अनोह (चतुराई), विट्टो (लड़की)।
'औ' – कौल (सौगंध), गठौरा (गट्ठा), पारौ (घड़े का ढक्कन)।

अनुनासिक

अनुनासिकता बुन्देली उच्चारण की प्रमुख विशेषता मानी जाती है। इस कारण भदावरी में भी यह अनुनासिकता अधिक मात्रा में देखी जाती है। भदावरी में जिन अनुनासिक स्वरों का प्रयोग किया जाता है, वे इस प्रकार है। उदाहरण– 'अं'– अंगोटबौ (अपना लेना), उरझंटा (उलझन)। 'आं'– आंक (अंक), गुलांट (पलटना)। 'इं'– इंगुरिया (अंगुली), जिंदा (जीवित)। 'ईं'– ईंगुर (सिन्दूर), महींदार (नौकर), चुरीं (चुड़ियाँ)। 'एं'– एंगर (पास), गरेंट (गले तक), साजें (सम्मिलित)। 'ऐं'– ऐंकार

(शत्रुता), पनेठिया (बैलों को हांकने की लकड़ी), मरूकें (मुश्किल से)। 'ओं'— ओंग (नींद), बगलोंयँ (बगल से), झन्नों (यहाँ तक)। 'औं'— चौंतरा (चबूतरा), तड़कौंदा (नवीन उम्र का), मौं (मुँह)।

संयुक्त स्वर

बुन्देली के भदावरी रूप में जिस प्रकार के संयुक्त स्वर मिलते हैं, वे निम्न प्रकार हैं— अ+ओ = औरा (असिंचि गेहूँ), अ+उ = कौवा, अ+ओ = रहनौ।

स्वरसंयोग

भदावरी में दो अथवा दो से अधिक स्वरों का मिलना स्वीकार किया गया है। इस तरह के संयोग से जिन स्वरों का मिलना होता है, उनमें से प्रत्येक का अपना स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त हो जाता है और एक संयुक्त स्वर बन जाता है। जैसे— अ+ए = ऐ। अ+अ = अकरास (अड़चन), अ+आ = अवार (देर), अ+ई = भइया (भाई), अ+ई = नाई (नवीन), उ+आ = उघारौ (वस्त्रहीन), अ+इ+आ = अइया (दादी), उ+अ+इ+आ= चिरइया (चिड़िया)।

भदावरी बोली में शुद्ध हिन्दी के कई स्वर लोप होते हैं। बुन्देली बोली की स्वर लोप भी एक विशेषता मानी जाती है। स्वर निम्न प्रकार से लोप होते हैं— इलायची = लायची, पुलिस = पुलस, ध्वनि = धुन।

स्वर विपर्यय

ध्वनि परिवर्तन की एक दिशा विशेष को स्वर विपर्यय कहा जाता है। विपर्यय का शाब्दिक अर्थ उलट जाता है। भदावरी में स्वर विपर्यय के कई उदाहरण देखने को मिलते हैं। जैसे – अ के स्थान पर इ = टमाटर – टिमाटर, अ के स्थान पर ई = आग – आगी, अ के स्थान पर उ = सफेद – सपेत, ए के स्थान पर ओ = गेहूँ – गोंहूँ।

स्वर परिवर्तन

भदावरी बोली में ऐसे बहुत से शब्द उपलब्ध हैं, जिनके स्वर परिवर्तन से शब्द का अर्थ ही बदल जाता है। जैसे— अ से आ = गम (धैर्य), गाम (गाँव)। इ से ई = बिस (जहर), बीस (एक संख्या)। उ से ऊ = बुरौ (बुरा), बूरौ (शकर)। ओ से औ = मोर (एक पक्षी), मौर (दूल्हे का मुकुट)।

स्वरागम

भदावरी बोली में ऐसे बहुत से शब्द प्रचलित हैं, जिनमें हमें स्वर का आगम स्पष्ट दिखायी देता है। जैसे – स्नान – अस्नान, स्त्री–इस्त्री, प्रकट– पिरकट, प्यास – पियास, द्वार–दुआर, ब्याह–बियाव।

व्यंजन

बुन्देली में प्रयुक्त होने वाले व्यंजन हिन्दी के मूल व्यंजन ही हैं। ये व्यंजन भदावरी में भी होते हैं। भदावरी में अट्ठाइस व्यंजनों का प्रयोग किया जाता है। उच्चारण की दृष्टि से व्यंजनों का विभाजन इस प्रकार किया गया है– स्पर्श– क् ख् ग् घ् ट् ठ् ड् ढ् त् थ् द् ध् प् फ् ब् भ्। स्पर्श संघर्षी– च् छ् ज् झ्। संघर्षी या ऊष्म– स् ह्। पार्श्विक – ल्। लुंठित– र्। अनुनासिक – न् म्। अर्द्ध स्वर – य् व्। भदावरी बोली में व्यवहृत व्यंजनों में कुछ ध्वनियाँ अल्पप्राण और कुछ महाप्राण हैं। इस स्तर पर वर्गीकरण इस प्रकार होता है –

अ – अल्पप्राण – क् ग् च् ज् ट् ड् त् द् प् ब्।
आ – महाप्राण – ख् च् छ् झ् ठ् ढ् थ् ध् फ् भ्।

भदावरी बोली में व्यंजन ध्वनियों का घोष और अघोष आधार पर भी वर्गीकरण किया गया है।

अ – घोष – ग् घ् ज् झ् ड् ढ् द् ध् ब् भ्।
आ – अघोष – क् ख् च् छ् ट् ठ् त् थ् प् फ्।

नासिक्य व्यंजन ध्वनियाँ

हिन्दी में ङ, ञ, ण, न, म व्यंजनों को नासिक्य कहा गया है, लेकिन बुन्देली और बुन्देली की भदावरी बोली में इन ध्वनियों का लोप हो गया है। सामान्य रूप से नासिक्य व्यंजन ध्वनियों के अंतर्गत भदावरी में म और न वर्ण का उच्चारण किया जाता है। ये नासिक्य ध्वनियाँ स्वरों और व्यंजनों के साथ सामान रूप से उपलब्ध हो जाती है। इस प्रकार का शब्द भण्डार पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। व्यंजनों के साथ नासिक्यता के उदाहरण पर्याप्त रूप में मिलते हैं। जैसे– 'क'– कंगूरा (किले के शिखर)। 'ख'– खुंड (बाल रहित खोपड़ी)। 'ग– गूंथन (उलझा हुआ सूत)। 'घ' –घूंस (रिश्वत)। 'च'– चंट (चालाक)। 'छ'– छूंचा (फल रहित चने का पौधा)। 'ज'– जंट, जिद (हठ)। 'झ'– झंगा (ढीला वस्त्र)। 'ट'– टंट (मोटी चादर)। 'ठ'– ठंठनपाल (निर्धनता का सूचक)। 'ड'–

डंड (दंड) । 'ढ' ढांक (वाद्य विशेष)। 'त'– तंत (शक्ति)। 'थ'– थूथरौ (मुँह)। 'द' – दंदफंद। 'ध'– धांगड़ा (मिश्रित)। 'न'– नोंन (नमक)। 'प'– पंडोखर (स्थान नाम)। 'फ'– फांट (बटवारा)। 'ब'– बांट (पशुओं का दाना)। 'भ'– भुंटिया (ज्वार की बाली)। 'म'– मंतुर (मंत्र)। 'र'– रांपी (चमडा काटने का औजार)। 'ल'– लंगुरिया (देवी गीत)। 'व'– विंघ (विघ्न)। 'स'– सेंटा (लफंगा)। 'ह'– हंडा (गैस की लालटेन)।

व्यंजन गुच्छ

भदावरी में जब दो या दो से अधिक व्यंजन एक साथ आते हैं और उनके बीच कोई स्वर, ध्वनि ग्राम तथा खंडेतर ध्वनिग्राम नहीं आते, तब इसे व्यंजन गुच्छ कहते हैं। ऐसी शब्द रचनाएँ आदि, मध्य, अंत्य कोटियों में मिलती हैं। जैसे– ग्याभन (गर्भधारण करना), गक्कड़ (मोटी रोटी), झट्ट (शीघ्रता)।

व्यंजन विपर्यय

जब एक व्यंजन के स्थान पर दूसरे व्यंजन का प्रयोग होता है, तब व्यंजन विपर्यय की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। भदावरी में कुछ व्यंजन विपर्यय इस प्रकार हैं– क–ग – प्रकट–प्रगट। क–ख – शंका–संखा। ख–क – बुखार–भुकार। ख–छ – मक्खी–मंछी। च–ज – कमीच–कमीज। ट–ठ – मोटर–मोठर। थ–त – हाथ–हांत। ड़–र – लड़ाई–लराई। ध–द – दूध–दूद। द–ध – नदी–नधी। ण–न – प्राण–प्रान। द–त – खाद–खात। फ–प – सफेद–सुपेत। ब–क – मुसीबत–मुसीकत। त–ध – तागा–धागा। भ–म – खंभा–खंमा। य–ज – यमुना–जमुना। ल–र – काली–कारी। न–ल – नरम–लरम। ल–न – वाल्टी–वानती।

व्यंजन आगम

जिन शब्दों की रचना में व्यंजन ध्वनियाँ आकर सम्मिलित हो जाती हैं। ऐसे शब्दों को व्यंजन आगम की सीमा के अंतर्गत रखा जाता है। भदावरी बोली में ऐसे उदाहरण पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। जैसे– अटा – अटारी। अँधेरा – अंधियारों। उजेला – उजियारो। किबार – किरबार। पिछाड़ी – पिछवारें। जमानत – जमानगत। जोशी – जोयसी। सूदौ – सूदरौ।

व्यंजन लोप

भदावरी बोली में व्यंजन लोप की प्रवृत्ति देखने को मिलती है। जैसे – ह – गेंहूँ–गोंऊँ। य – बायदा–बादा। व – ध्वजा–धजा।

शब्द

शब्दों की रचना स्वर तथा व्यंजन ध्वनियों के संयोग से होती है। भदावरी में भी शब्द रचना पायी जाती है। कुछ शब्द इस प्रकार हैं – अंगारुं, आदौ, इकठौरे, ईंसुर, उलात, ऊधम, एलक, ऐहसान, ओरौ, औलट, ककरा, खरी, गकरिया, घरघूला, चमचा, छपरा, जरबड्डा, झन्ना, टटेरा, ठोसरो, डुकरा, ढांक, तनक, थान, दद्दा, धन्न, ननियावरौ, पट्टी, फस्सा, बाखर, भबूत, मसकां, रट्टो, तीसड़, समदी, हिल्लौ आदि।

शब्द निर्माण

भदावरी में शब्द निर्माण धातु में उपसर्ग तथा प्रत्यय जोड़कर किया जाता है– 1. उपसर्गों के योग से बने शब्द – अब – औगुन, कु – कुकरम, दुर – दुरदशा, अ– अमोल, भर – भरपेट, कु – कुजात, अध – अधपकौ, एन – एनबखत, कम कीमत, बद– बदचलन। 2. पर प्रत्ययों के योग से बने शब्द– आई – पिटाई, औ – कुचरौ, आऊ – बिकाऊ, बारौ – उपरबारौ, अंत – लड़ंत, आक – सड़ाक, आकौ – सनाकौ, इया – किबरिया, ईलो – भड़कीलौ।

सुर

भदावरी बोली में एक ही शब्द के सुर के कारण विभिन्न भाव व्यक्त करने की क्षमता है। जिस तरह हिन्दी की अन्य बोलियों में भाषा भी व्यक्ति के धरातल पर सुर का विशेष महत्त्व है। उसी तरह भदावरी में भी उच्चारण के धरातल पर सुर प्रभावकारी भूमिका अदा करते हैं। उच्चारण की विविधता के कारण 'हओ' शब्द कई अर्थों का बोधक हो जाता है। जैसे–

हओ – दोनों अक्षरों पर अधिक बल–निषेध सूचक।
हओ – दूसरे अक्षर पर अधिक बल–चुनौती सूचक।
हओ – प्रथम अक्षर पर अधिक बल–उपेक्षा सूचक।
हओ – दोनों अक्षर पर सामान्य बल–स्वीकृति बोधक।
हओ – अंतिम अक्षर पर प्रथम की अपेक्षा अधिक बल–आश्यर्च बोधक।

सुरलहरी

सुर लहर संबंध शब्द की सीमा लाँघकर वाक्य की सीमा में पहुँच जाता है। एक ही वाक्य सुर लहर के प्रभाव से अनेक अर्थों का बोध कराने में समर्थ होता है। भदावरी बोली में सुर लहर के कारण जब एक ही वाक्य कई तरह से उच्चारित होकर अनेक अर्थ देता है, तब उसका महत्त्व ध्वनि के धरातल पर अपने आप बढ़ जाता है। जैसे –

1. बौ धद्दऔ लट्ठ बानें–निश्चय–वाचक।
2. बौ धद्दऔ लट्ठ बानें–आश्चर्य–बोधक।
3. बौ धद्दऔ लट्ठ बानें–क्रोध–सूचक।
4. बौ धद्दऔ लट्ठ बानें–प्रश्न–सूचक।
5. बौ धद्दऔ लट्ठ बानें–चिन्तन–सूचक।

निष्कर्ष

इस प्रकार भदावरी बुन्देली के उत्तरी भाग की एक उप–बोली के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसमें यहाँ की स्थानीय अन्य बोलियों का प्रभाव दिखायी देता है। समग्र रूप में जब हम भदावरी के ध्वनि समूहों की चर्चा करते हैं, तब इसमें जो अन्तर दिखायी देता है, वह इस प्रकार है– औकारान्त की प्रवृत्ति सर्वत्र पायी जाती है। अन्त्य ध्वनियाँ ओ तथा औ वर्ण के मध्य की हैं। इस ध्वनि के लिए पृथक मात्रा निर्धारित न होने की दशा में औ की मात्रा को स्वीकार किया गया है। कन्नौजी भाषी सीमावर्तीय क्षेत्र के गाँव में पौर–पौरी, मत–मति शब्दरूप मिलते हैं। जटबारे में घर–घरु, हर–हरु जैसे उकार बहुला प्रवृत्ति पायी जाती है। जटबारे में बाल्टी–बान्टी रूप व्यवहार में पाये जाते हैं। ब्रज मिश्रित भदावरी के व्यवहार क्षेत्र जटबारे में भविष्यकाल की क्रियाएँ चलंगौ, खागौ आदि रूप मिलते हैं और कन्नौजी मिश्रित भदावरी वाले घार क्षेत्र में इनका रूप चलिहौं, खायहौं आदि मिलता है। नकारात्मक नहीं शब्द जटबारे में नानें, नायनें घार में नां, कन्नौजी में नाहीं तथा कौरव बहुल गाँव में नईं रूप पाया जाता है। भदावरी में कई भागों में हकार विलुप्तीकरण की प्रवृत्ति भी पायी जाती है। जैसे– पहलौ–पैलौ, महताई–मताई। इस प्रकार भदावरी भाषा व्याकरणिक दृष्टिकोण से बुन्देली बोली में अपना अलग स्थान रखती है। इसका क्षेत्र, सीमाएँ, शब्द–सामर्थ्य, व्याकरणिक रूपरेखा तथा विशेषताएँ इसका स्वतंत्र रूप निर्धारण करने में सक्षम हैं।

संदर्भ

1. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप ; पृ. 347–248.
2. वही;
3. लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इंडिया, खण्ड 1, भाग 1 ; पृ. 531.
4. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप ; पृ. 348.
5. डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया ; भदावरी बोली का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन ; पृ. 42.
6. वही ; पृ. 43.
7. वही ; पृ. 43–44.
8. वही ; पृ. 93.
9. वही ; पृ. 94.
10. वही ; पृ. 113–114.
11. वही ; पृ. 122.

बुन्देली के विविध रूपों में अंतर और समानता

बुन्देली एक विस्तृत भू–भाग की बोली है। इसे भाषा का दर्जा भले ही न मिला हो, परंतु अपनी समृद्धि के कारण बुन्देली बोली होते हुए भी एक भाषा का महत्त्व रखती है। बुन्देली बोली को विस्तार से समझने के लिए इसके विविध स्वरूपों की चर्चा विस्तार से अलग–अलग अध्यायों के रूप में की गयी है। जब हम इस संपूर्ण भू–खण्ड का गहन अध्ययन करते हैं, तब अलग–अलग क्षेत्रों में बोली जाने वाली बुन्देली अपनी क्षेत्रीय विशेषताओं के कारण एक अलग रूप ग्रहण कर लेती है।

बुन्देली के विविध स्वरूपों के व्याकरण में अंतर और समानता है। यह अंतर और समानता क्षेत्र, उस बोली की सीमाएँ, शब्द सामर्थ्य, व्याकरणिक रूपरेखा और ध्वनिसमूह एवं विशेषताओं को स्पष्ट करने का यहाँ प्रयास किया गया है। बुन्देली के विविध रूपों की समानता और अन्तर को इन्ही पाँच बिन्दुओं के अंतर्गत रखते हुए और इसी आधार पर उन उपरूपों की स्वतंत्र सत्ता को स्पष्ट करने का उपक्रम किया गया है।

संपूर्ण बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बोली जाने वाली बोली को बुन्देली का नाम दिया जाता है, लेकिन शुद्ध बुन्देली है जो अपने स्वतंत्र रूप में बुन्देलखण्ड अंचल के बीचों–बीच बोली जाती है, जिसमें किसी अन्य भाषा अथवा बोली के शब्दों का समावेश बहुत कम मिलता है। इस शुद्ध बोली को ही बुन्देली अथवा प्रामाणिक बुन्देली की संज्ञा दी गयी है। प्रामाणिक बुन्देली ही बुन्देली का आधार स्तंभ मानी जाती है। इस खण्ड के अंतर्गत

हमने भी प्रामाणिक बुन्देली को आधार मानकर बुन्देली के अन्य क्षेत्रीय स्वरूपों के व्याकरण में अंतर और समानता का तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया है।

अन्य क्षेत्रीय बोली के बीच अंतर और समानता की संक्षिप्त चर्चा आगे की जा रही है।

प्रामाणिक बुन्देली और खटोला बुन्देली

'खटोला बुन्देली' प्रामाणिक बुन्देली का वह रूप है, जो बुन्देलखण्ड के उत्तर पूर्व में बोला जाता है। खटोला बुन्देली छतरपुर के पूर्वी, पन्ना के पश्चिमी और दमोह के उत्तरी भाग में विशेष रूप से बोली जाती है। इस संदर्भ में डॉ. कृष्णलाल हंस ने लिखा है– 'इसका पश्चिमी भाग छतरपुर जिले की पूर्वी सीमा से संलग्न है। छतरपुर जिले का पूर्वोत्तर भी हमने पूर्वी क्षेत्र में ही सम्मिलित किया है, जिसका कारण इस भाग की बोली के रूप की पन्ना जिले के उत्तरी और पूर्वी भाग के बोली रूप की समानता है। हमने इस भाग के बुन्देली रूप को बुन्देली और बघेली का मिश्रण कहा है। पन्ना के इस अवशिष्ट पश्चिमी भाग और छतरपुर जिले के कुछ भाग तथा दमोह जिले के उत्तरी सीमावर्ती भाग के बुन्देली रूप में लगभग समानता है।'[1] इससे स्पष्ट होता है कि खटोला बुन्देलखण्ड के उत्तरी भाग में बोली जाने वाली बोली है।

प्रामाणिक बुन्देली खटोला बुन्देली का आधार स्तंभ है। खटोला बुन्देली के क्षेत्र के संबंध में डॉ. ग्रियर्सन ने लिखा है– 'इस क्षेत्र में बिजावर और पन्ना राज्य तथा रामपुर परगना, चरखारी राज्य का महाराज नगर, खास छतरपुर और छतरपुर राज्य के (अब छतरपुर जिले के) देवरा तथा राजनगर (खजुराहो क्षेत्र), परगना तथा लुगासी, गरौली, अलीपुर, बीहट तथा बिलहरी जागीर आते हैं।'[2]

व्याकरण में अंतर

खटोला बुन्देली का व्याकरण तो लगभग प्रामाणिक बुन्देली की ही तरह है। लेकिन क्षेत्रीयता के कारण इसके ध्वनि समूहों में बहुत अंतर पाया जाता है। खटोला बुन्देली के अधिकांश शब्द बुन्देली के जरूर हैं, परंतु यह बघेली की सीमारेखा के नजदीक होने के कारण इसमें बघेली के शब्दों का पर्याप्त प्रयोग होता है। खटोला वासी जो बोली बोलते हैं, उसके मध्याक्षर में हकार का लोप मिलता है। इस संदर्भ में डॉ. हंस ने लिख है –

रउवा मउवा कात हैं, नाँय माँय अविचार।
ज्यों खटोल वासी तजें, अच्छर बीच हकार।।

'खटोला वासी– मध्याक्षर से हकार का लोप करके 'रहुआ' को 'रउवा' (रहने वाला), 'महुवा' को 'मउवा', 'कहत' को 'कात' कहते हैं। ये 'नाँय माँ' (यहाँ वहाँ) का विचार भी नहीं करते, अर्थात् इन शब्दों का प्रयोग नहीं करते। (ये शब्द सागर जिले की बुन्देली में ही प्रयुक्त होते हैं)।'[3]

इस प्रकार खटोला बुन्देली अपने क्षेत्रीय शब्दों के प्रयोग के कारण प्रामाणिक बुन्देली से अलग स्थान बनाती है। व्याकरण की दृष्टि से खटोला में विशेष अंतर नहीं पाया जाता, लेकिन ध्वनि समूहों की दृष्टि से इसके तीन रूप मिलते हैं – छतरपुर की खटोला, पश्चिमी पन्ना की खटोला और उत्तरी दमोह का खटोला रूप। इससे स्पष्ट होता है कि खटोला प्रामाणिक बुन्देली से बहुत कुछ अंतर रखती है।

खटोला बुन्देली में जो शब्द मिलते हैं। वे स्थानीय प्रभाव को लिए हुए हैं और प्रामाणिक बुन्देली से मेल न खाते हुए भी प्रामाणिक बुन्देली को विस्तृत और समृद्ध बनाते हैं।

व्याकरण में समानताएँ

प्रामाणिक बुन्देली से खटोला बुन्देली भले ही हटकर अपना एक अलग स्थान बनाती हो परंतु उसका आधार प्रामाणिक बुन्देली ही है। प्रामाणिक बुन्देली के शब्दों का और व्याकरण का प्रयोग प्रधान रूप में खटोला में होता है। यह बुन्देली की विशेषता ही कही जा सकती है कि वह अन्य बोलियों के शब्दों को अपने में आत्मसात् कर लेती है। शब्द समूह और ध्वनिगत विशेषताएँ अलग होते हुए भी यह नहीं कहा जा सकता कि खटोला बुन्देली नहीं है। यह उसके क्षेत्रीयता का प्रभाव है कि उसके शब्द भण्डार और ध्वनिसमूहों में अंतर आ गया है, लेकिन उसके मूल में प्रामाणिक बुन्देली ही है। उसका व्याकरण, उसका शब्द सामर्थ्य, उसके ध्वनि समूह सब मिलकर प्रामाणिक बुन्देली अथवा शुद्ध बुन्देली को विस्तार देते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्रामाणिक बुन्देली ही खटोला बुन्देली के केन्द्र में है।

प्रामाणिक बुन्देली और पंवारी बुन्देली

पंवारी बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली का वह रूप है, जो बुन्देलखण्ड के दक्षिण में बोला जाता है। मध्यभारत के नगर धार, उज्जैन तथा देवास के आस–पास पंवार निवास करते थे। इनकी एक शाखा बेंनगंगा और उसकी सहायक नदियों, बाबनधड़ी, बाध, चनई, घिसरी, देव, सोन आदि के किनारे भंडारा, बालाघाट तथा सिवनी इन जिलों में बस गई। दूसरी शाखा वर्धा नदी के किनारे स्थित वर्धा (आर्वी क्षेत्र) नागपुर (काटोल

सावसेर क्षेत्र) छिन्दवाड़ा, बैतूल जिलों में बस गई। पंवारी बोली मुख्यतः महाराष्ट्र राज्य के भंडारा, नागपुर, वर्धा, यवतमाल, अमरावती तथा मध्यप्रदेश के बालाघाट, सिवनी, छिन्दवाड़ा एवं बैतूल जिले के देहातों में बोली जाती है। महाराष्ट्र में बोली जाने वाली पंवारी पर मराठी का प्रभाव दिखाई देता है। बालाघाट जिले में गौंड़ी, मुरारी, लोधान्ती, कोष्टी, हल्वी, छत्तीसगढ़ी (खल्टाही) आदि उप बोलियाँ बोली जाने के कारण इस जिले की पंवारी पर उनका प्रभाव दिखाई देता है। इस जिले के वारासिवनी, बैहर, बालाघाट तहसीलों और कटंगी, लालबर्रा, लांजी, खैजरलांजी उप तहसीलों के नगरों में पंवार जाति के लोग पंवारी प्रभावित हिन्दी बोलते हैं। किन्तु ग्रामों में मराठी, मालवी, बुन्देली, बघेली मिश्रित बोलते हैं। सिवनी, छिन्दवाड़ा और बैतूल जिला बुन्देली प्रभावित है, इसलिए इस क्षेत्र में बुन्देली और मराठी मिश्रित पंवारी बोली जाती है।

इस प्रकार पंवारी बुन्देली पर बुन्देली के साथ–साथ मराठी और मालवी के शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है, लेकिन इसके साथ ही इसका आधार प्रामाणिक बुन्देली ही मानी जाती है। पंवारी बुन्देली शब्द सामर्थ्य, व्याकरणिक विशेषता और ध्वनि समूह के अंतर के कारण प्रामाणिक बुन्देली से बहुत हटकर दिखाई देती है।

पंवारी बुन्देली का शब्द सामर्थ्य कई बोलियों के शब्दों से मिलकर समृद्ध होता है, इस कारण इसकी व्याकरणिक विशेषताएँ भी उसी के अनुरूप अपना रूप निर्धारित करती हैं और इसी कारण इसकी ध्वन्यात्मकता बहुत कुछ प्रामाणिक बुन्देली से अलग हैं।

व्याकरण में अंतर

पंवारी बुन्देली और प्रामाणिक बुन्देली के बीच के अंतर को समझने के लिए दोनों बोलियों के व्याकरण, शब्द सामर्थ्य और ध्वनिगत विशेषताओं को समझना आवश्यक है। पंवारी बोली में जिन अन्य बोलियों के शब्दों का प्रयोग किया जाता है। और जिसके कारण पंवारी बुन्देली की एक उपबोली बन गई है। वे निम्न प्रकार हैं– मराठी– नवरा (पति), बाइको (पत्नि), मोठों (बड़ा), मराट्या (एक प्रकार की गाली), कोई (कुछ), राती (रात को), लाडू (लडडू), तुमि (तुम्हों– तुम सब), मि (मैं), सकार (दूसरे दिन का सबेरा), खाल्या (नीचे), जवर (पास), बस धातु (बैठना)।

मालवी – नॉव, ओकी, भय रई, रह्यो, ओना, अलाल, तीनी, इत, कहन, लग्यो, चल्यो, आयो, गयो, मर्गयो, उत्तर्यो, कसो (कैसो), गयो, मरर्यो, मोरो तोरो, रह गयो।

छत्तीसगढ़ी – भोला, मरस, कहिस, देइस, धरिस, आला, बोलिस, मारिस, पढ़िस, रइसे, उनला, होसिल।

बघेली– जंगल – माँ, दई (दुय्), लेइन, गइन, मोर, पूंछिन, लगिन, देखिन, आइन, देइन।

बुन्देली – होता, उ (ऊ), नई, करत, कोकी, धड़ी भर, धीर धर, बनायदे, चलनों भयों, रातभर, टिटरन, खायलेव, घोटतें, ओका, खंजीर (पागल), सोंड, पुरावन लगावत–लगावत, मदक, थटबड़, धरखे, आओ।

मिश्रित शब्द – खान ला (खान बुन्देली का ला मराठी का), मराठी के कर्म कारक की विभक्ति 'ला' अनेक हिन्दी के शब्दों में लगाकर एक शब्द बनाया गया है। यथा– कमाउनला, उताला (उधार से), दहरतीला, खानदानला, उनला। सकार भई, बस गयो, जबर गयो (मराठी, हिन्दी), स्थानीय रूप– होतिन अता (अतएव), आपरो (अपना), कहक (ओर), चघ (चढ़), पालदू (पालूँगा) आदि।

इस प्रकार पंवारी में प्रामाणिक बुन्देली के शब्दों का तो प्रयोग होता ही है, क्योंकि प्रामाणिक बुन्देली इसका आधार है। साथ ही अन्य बोली जैसे– मराठी, मालवी, छत्तीसगढ़ी, बघेली और अन्य मिश्रित शब्दों का भी प्रयोग होता है।

पंवारी बोली व्याकरणिक दृष्टि से भी प्रामाणिक बुन्देली से कई दृष्टियों से भिन्न दिखाई देती है। इसके स्वर और व्यंजन तो प्रामाणिक की तरह ही हैं, लेकिन जब वे शब्द का रूप लेते हैं, तब उनका रूप बदल जाता है। व्याकरणिक दृष्टि से भी पंवारी में प्रामाणिक बुन्देली से पर्याप्त भेद पाया जाता है।

इसी प्रकार ध्वन्यात्मक दृष्टि से भी पंवारी प्रामाणिक से बहुत हटकर है, क्योंकि जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि इसमें कई बोलियों अथवा भाषाओं के शब्दों का समावेश हो गया है। पंवारी में धातुज और अधातुज दोनों प्रकार के शब्द मिलते हैं। स्वर और व्यंजन की दृष्टि से यदि हम पंवारी को देखें तो उसके शब्द प्रामाणिक से अलग दिखाई देते हैं।

व्याकरण में समानताएँ

पंवारी बुन्देली और प्रामाणिक बुन्देली के शब्द समूह, व्याकरण और ध्वनिगत विशेषताओं में अंतर होते हुए भी इन्हीं दृष्टि से समानता भी सामने आती है। पंवारी बुन्देली बुन्देलखण्ड के दक्षिणी क्षेत्र की सीमा निर्धारण करती है। पंवारी में अन्य बोलियों

के शब्द मिल जाने से बुन्देली का शब्द भण्डार समृद्ध होता है। व्याकरण की दृष्टि से इसमें बुन्देली की तरह ही संज्ञा और सर्वनाम मिलते हैं। लिंग विधान भी प्रामाणिक बुन्देली की तरह ही है। क्षेत्रीयता और स्थानीयता के कारण इसके ध्वनि समूहों में अवश्य अंतर दिखाई देता है। लेकिन ऐसा नहीं कहा जा सकता कि बुन्देली का पंवारी में कोई महत्व ही नहीं है। प्रामाणिक बुन्देली और पंवारी बुन्देली के व्याकरण की समानता के लिए पंवारी के व्याकरण को विस्तृत रूप से देखा जा सकता है, जिसकी चर्चा पंवारी बुन्देली शीर्षक अध्याय में विस्तार से की गई है। निश्चित ही पंवारी प्रामाणिक बुन्देली का दक्षिणी रूप है, जो बुन्देली की दक्षिण—पश्चिमी सीमा का निर्धारण करती है।

प्रामाणिक बुन्देली और लोधान्ती बुन्देली

लोधान्ती बोली बुन्देली का वह रूप है, जो बुन्देलखण्ड के हमीरपुर और जालौन जिलों में बोली जाती है। लोधान्ती का क्षेत्र विशेषतौर से हमीरपुर जिले का पश्चिमोत्तर भाग है। लोधान्ती के क्षेत्र के बारे में डॉ. कृष्णलाल हंस ने लिखा है— 'लोधान्ती हमीरपुर जिले के पश्चिमोत्तर भाग, राठ तहसील तथा जालोन जिले के उरई क्षेत्र में प्रचलित बुन्देली रूप है।'[4] इस प्रकार हम देखते हैं कि लोधान्ती का केन्द्र हमीरपुर और जालौन जिला ही है। इसीलिए इस बुन्देली रूप में बुन्देली से हटकर स्थानीय बोलियों का मिश्रण पाया जाता है।

लोधान्ती की उत्पत्ति लोधी राजपूतों द्वारा बोली जाने वालों से मानी जाती है। दूसरी ओर राठौर राजपूतों की अधिक संख्या के बीच बोली जाने के कारण इसे राठौरी भी कहा जाता है। डॉ. कृष्णलाल हंस ने लिखा है— 'इसके बोलने वालों में लोधी राजपूतों की संख्या अधिक होने से इसे लोधान्ती कहा जाता है। बुन्देली के इस रूप को राठौर राजपूत भी बड़ी संख्या में बोलते हैं, इससे यह राठौरी भी कही जाती है।'[5]

इस प्रकार लोधान्ती प्रामाणिक बुन्देली का उत्तरी पश्चिमी रूप माना जाता है, इसमें स्थानीय शब्दों और ध्वनि समूहों के मिश्रण से प्रामाणिक बुन्देली से हटकर रूप दिखाई देता है।

व्याकरण में अंतर

लोधान्ती प्रामाणिक बुन्देली का उत्तरी रूप भले ही है, परंतु इसमें भी स्थानीय शब्दों और ध्वनि समूहों का प्रयोग होने से बहुत अंतर दिखाई देता है। इसका शब्द सामर्थ्य बुन्देली का होते हुए भी अन्य बोलियों के शब्दों से समृद्ध है। उदाहरण के रूप

में हम देख सकते हैं– 'बड़ भइया को ब्याव हो गओ। कछु दिनन के बाद सौदागर ने यो देखबो चाहो कि उनके बेटन में सबसे ज्यादा हुसियार को है ? ऊने अपने चारऊ लरकन कें सौ–सौ रूपइया दे दए और कओ कि बजारें जाकें जो मनें आय सो खरीद लाव। चारऊ भइया अपने–अपने रूपइया लैकें घर सें चले। उनकें रस्ता में एक तला मिलो। वे उतै रुक गए। चारऊ जनों ने उतै रोटी बनाकें खाईं। फिर बजारे मनचाही चीजें खरीदने चले गए।'[6] इस प्रकार लोधान्ती में जो शब्द प्रयोग किये जाते हैं, उनमें प्रमुख रूप से ये हैं'– बड़ भइया (बड़े भाई), रूपइया (रूपया), रस्ता (रास्ता), तला (तलाब), चारउ (चारो), बजारे (बाजार), सीसा (दर्पण), गुन (गुण), हतौ (था), थरिया (थाली), टाठी (थली), उन्नहा (कपड़ा), ऊमें (उसमें), पलक मारतईं (आँख झपकते), नकरिया (छड़ी), जुरे (इकट्‌ठे हुए), पतियारा (जानकारी लेने के लिए), कऔ (कहा) आदि।'

इस प्रकार हम देखते हैं कि लोधान्ती में जिन शब्दों का प्रयोग होता है। वे केवल बुन्देली के ही नहीं हैं, बल्कि उसमें बघेली और अन्य भाषाओं के शब्द भी मिले हैं। व्याकरणिक रूपरेखा बुन्देली की तरह ही है, लेकिन ध्वनि समूहों में अंतर आ गया है। हकार लोप की प्रवृत्ति इसमें पाई जाती है। लोधान्ती में कहीं–कहीं खड़ी बोली का प्रभाव दिखाई देता है। जैसे– बाद, उनके, अपने, प्रेम, चले, वे, कि आदि शब्द।

राठ और उरई क्षेत्र में प्रचलित बुन्देली रूप में कुछ अन्तर अवश्य है, किन्तु अधिक अन्तर न होने के कारण इन दोनों क्षेत्रों कें बोली रूप को एक ही बोली के रूप में स्वीकार किया जाता है। इस प्रकार एक कारण यह भी है कि यह दोनों क्रमशः राठ और उरई क्षेत्र के रूप हैं, पर वास्तव में इनका सीमा विभाजन संभव नहीं हैं। राठ और उरई क्षेत्र के मध्यभाग में बुन्देली का वह रूप भी प्रचलित है, जो शुद्ध बुन्देली कहा जाता है। इस शुद्ध बुन्देली के क्षेत्र में दक्षिण से राठ की बोली और उत्तर से उरई की बोली का प्रभाव है। परिणाम स्वरूप बुन्देली के इन तीनों रूपों (मध्य पश्चिमी हमीरपुर, राठ और उरई क्षेत्र की बोली) में बहुत कम अंतर मिलता है। यह देखते हुए राठ क्षेत्र से उरई क्षेत्र तक की (हमीरपुर जिले के पश्चिमी मध्यभाग में स्थित राठ से जालौन जिले के दक्षिणी भाग में स्थित उरई तक की) बोली का एक ही रूप मानकर उसे लोधान्ती कहना अनुचित न होगा।

व्याकरण में अंतर

लोधान्ती को शुद्ध बुन्देली का एक रूप ही कहा जाता है। शब्द सामर्थ्य में जो अन्य बोलियों के शब्द मिलते हैं, उससे बुन्देली का शब्द भण्डार ही समृद्ध होता है।

लोधान्ती के मूल में प्रामाणिक बुन्देली ही है। राठ और उरई क्षेत्र के मध्य भाग में बुन्देली का जो रूप प्रचलित है, वह शुद्ध बुन्देली कहा जाता है। यह अलग बात है कि उसके आस–पास के क्षेत्रों में अन्य बोलियों के शब्दों का समावेश हो गया है। लेकिन इसके बाद भी लोधान्ती प्रामाणिक बुन्देली का ही एक रूप है, जो कई दृष्टियों से शुद्ध बुन्देली के समीप ठहरता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि लोधान्ती का शब्द सामर्थ्य, व्याकरणिक रूपरेखा और ध्वनि एवं समूहगत विशेषताएँ प्रामाणिक बुन्देली के एक अलग रूप को निर्धारित करती है।

प्रामाणिक बुन्देली और बनाफरी बुन्देली

बनाफरी बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली के पूर्वी क्षेत्र की बोली मानी जाती है। इसको बनफरी, बनपरी अथवा बनाफरी के नाम से भी जाना जाता है। यह बुन्देलखण्ड के पूर्वी क्षेत्र की बोली है। इसके स्थान और क्षेत्र के संबंध में डॉ. ग्रियर्सन ने लिखे है– 'बुन्देलखण्ड एजेन्सी का उत्तरी भाग और पूर्वी भाग मुख्यतः बनाफरी भाषा बतलाया है। इसके अतिरिक्त उनकी मान्यता के अनुसार चरखारी राज्य का चंदल परगना, छतरपुर जिले का लौंड़ी क्षेत्र, पन्ना राज्य का धर्मपुर परगना, नौगाँव, रेवाई, गौरीहार, बेरीजागीर तथा अजयगढ़ और बाउनी राज्य भी बनाफरी भाषा क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। इसका क्षेत्र हमीरपुर जिले के दक्षिण पूर्वी भाग तथा पूर्व में बघेलखण्ड के नागौद तथा मैहर राज्य के पश्चिमी भाग तक विस्तृत है।'[7]

बनाफरी बुन्देली में क्षेत्रीय और स्थानीय शब्दों का प्रयोग बहुतायत से मिलता है। मूल रूप से इसके बोलने वाले बनाफर जाति के लोगों की संख्या तीन लाख पचास हजार मानी गई है। इस संबंध में डॉ. कृष्णलाल हंस ने लिखा है– 'वर्तमान हमीरपुर जिले का समस्त दक्षिण–पूर्वी भाग, जिसमें महोबा, मोघा और पन्ना जिले की अजयगढ़ तहसील एवं उसमें संलग्न इस जिले का पूर्वी भाग बनाफरी बोली का क्षेत्र कहा जा सकता है। डॉ. ग्रियर्सन ने इस बोली के बोलने वालों की संख्या तीन लाख चालीस हजार चार सौ बतलाई है। वर्तमान जनवृद्धि के अनुसार यह संख्या कम से कम तीन लाख पचास हजार अवश्य में मानी जा सकती है।'[8]

बनाफरी बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली का पूर्वी रूप होने के कारण इसमें बुन्देली के साथ–साथ बघेली और अन्य बोलियों के शब्द बहुतायत से मिलते हैं। जब हम इसके व्याकरण की तुलना प्रामाणिक बुन्देली से करते हैं, तब व्याकरण के साथ–साथ इसके शब्द भण्डार और ध्वनिगत विशेषताओं को भी ध्यान रखा जाता है।

व्याकरण में अन्तर

बनाफरी बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली का पूर्वी रूप भले ही हो, परंतु इसका शब्द भण्डार अन्य भाषाओं के शब्दों से समृद्ध है। इस कारण इसकी ध्वनिगत विशेषताएँ भी उसी से निर्मित होती हैं। व्याकरण में बहुत कम अंतर पाया जाता है, परंतु ध्वनि में पर्याप्त अंतर है। बनाफरी के वे शब्द जो इसे प्रामाणिक बुन्देली से अलग करते हैं, वे कुछ इस प्रकार हैं– मनिहार (व्यापारी), वैं (वे), खा–पीकैं (खा पीकर), व्याह (विवाह), करैं (करने), लानैं (लिये), तलासैं (तलाशने), इतै (यहाँ), तला (तालाब), रुखन (वृक्ष), छायरी (छाया), ऊ (उस), बिटियाँ (लड़कियाँ), खाँ (को), ओम्हैं (उनमें), ओखी (उसकी), हती (थी), मूड़ (सिर), गघरी (घड़ा), संग (साथ), तोये (तेरा), लाउत (लाती), दओ (दिया), सांचऊँ (सचमुच), कोऊ (कोई), होहै (होगा), नई (नहीं), मों (मुँह), अगारु (आगे), मनयीमन (मन ही मन), पछाऊँ पछाऊँ (पीछे–पीछे), ओने (उसने), लरका (लड़का), है (हो), सहर (शहर), तलबा (तलाब), गाभी (घनी), ठैर (रुक), द्यार (देर), ओहू (उसकी), जौन (जिस), ल्याउती (लाती), रहीस (रईस), कौन्हौं (कोई नहीं), रहिबौ (रहना), स्वाचै (सोचनें), डारी (दी), दैवो (देना), लरकन (लड़कों), म्वाखाँ (मुझको), हवा (हो), बाखो (उसका), केखे (किसके), द्या (दो), लेख (लायक), भे (हुए), माँ (मैं), उन्नैं (उसने), उनमाँ (उसमें), उई (वह), भड़वा (वर्तन, घड़ा), ज्वाब (जवाब), दीन (दिया), ऐथे (ऐसे), मारसब (रहना), जाँव (जायगें), हुईगा (हो गया), ऐखे (इसके), ओथे (उससे), डारिस (डाला), मुंही (मुझे), सयान (जवान), पाछू–पाछू (पीछे पीछे)।

इस प्रकार बनाफरी में क्षेत्रीयता का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है, जो इसे प्रामाणिक बुन्देली से अलग करता है। बनाफरी के जो क्षेत्रीय रूप है, उसमें बुन्देली प्रधान बनाफरी, महोबा चरखारी क्षेत्र की बनाफरी, लौड़ी क्षेत्र (छतरपुर) की बनाफरी प्रमुख रूप से देखने में मिलती है। बहुत से ऐसे शब्द हैं, जो कई बार बुन्देली में भी बोले जाते हैं और बघेली में भी। जैसे– इसके करैं, करैं के लाने, भरै खा, औम्हैं, ओखी, तोब, लाउत, हायो, आये, बनाये के लाने, पछाऊँ–पछाऊँ, ओखें, ओन्हें आदि। ये शब्द बघेली बोली में हैं जरूर, परंतु इन्हें बुन्देली का बघेली रूप ही कहा जाता है। इन्हें बघेली प्रभावित बुन्देली के ही शब्द कहा जाता है। इस संदर्भ में डॉ. हंस ने लिखा है– 'इन्हें बघेली के प्रयोग न कहकर बघेली प्रभावित बुन्देली के ही प्रयोग कहना अधिक युक्तिसंगत होगा। दो बोलियों के सीमावर्ती क्षेत्र की बोली का जो रूप उन दोनों बोलियों के परस्परता से बन जाता है, वही रूप इस बुन्देली प्रधान बनाफरी का है।'[9]

व्याकरण की दृष्टि से बनाफरी प्रामाणिक बुन्देली से जैसे–जैसे अलग होती

जाती है। उसका एक अलग ही रूप बनता जाता है, जो इसे बुन्देली से अलग करता है। बनाफरी बोली मध्यप्रदेश के उत्तर–पूर्व में बोली जाती है। इसके क्षेत्र के अंतर्गत चरखारी राज्य का चंदल परगना, छतरपुर जिले का लौड़ी क्षेत्र, पन्ना राज्य का धरमपुर परगना, नौगाँव, रेवाई, गौरीहार, बेरीजागीर, अजयगढ़ और बावनी राज्य भी इसके अंतर्गत आते हैं। हमीरपुर जिले के दक्षिण–पूर्वी भाग तथा पूर्व में बघेलखण्ड के नागौद तथा मैहर राज्य के पश्चिमी क्षेत्र बनाफरी अंतर्गत माने गये हैं। बनाफरी के संबंध में डॉ. हंस ने लिखा है– 'हम ज्यों–ज्यो पूर्व की ओर बढ़ते जाते हैं, हमें बनाफरी में बघेली का प्रभाव बढ़ता दिखाई देता है। प्रथम उदाहरण हमीरपुर जिले के पश्चिमी सीमावर्ती भाग है, जहाँ से शुद्ध बघेली का क्षेत्र आरंभ होता है। यही कारण है कि उस बोली रूप में बघेली मिश्रण बहुत कम मिलता है। उसे बघेली प्रभावित बुन्देली ही कहा जा सकता है। द्वितीय उदाहरण हमीरपुर जिले के दक्षिण–पश्चिमी भाग–महोबा चरखारी क्षेत्र के बोली रूप का हैं, जिसमें हमें बघेली का मिश्रण अधिक मिलता है।'[10]

शुद्ध बुन्देली और बनाफरी बुन्देली के व्याकरण में तो विशेष अंतर नहीं है। परंतु ध्वनि में अंतर अवश्य दिखाई देता है, इसका कारण स्थानीय शब्दों का मिल जाना है। बनाफरी ध्वन्यात्मक दृष्टि से सामान्य बुन्देली से हटकर बोली मानी गयी है, क्योंकि इसमें बन्देली के शब्दों के साथ–साथ बघेली के शब्दों का अधिक मिश्रण दिखायी देता है। मवईजार क्षेत्र की बनाफरी में इसका ध्वनात्मक रूप कुछ इस प्रकार है – मेरा–म्वार, तेरो–त्वार, सोचन–स्वाचन, बेटा–व्याटा, केर–क्यार, घोरा–घ्वार आदि।

बनाफरी में एकारान्त और ओकारान्त शब्द भी प्रायः ऐकारान्त और औकारान्त उच्चारित होते हैं। जैसे– सें–सैं, कें–कैं, जो–जौ, बो–बौ आदि। व्यंजनों में 'न' के स्थान पर 'ल' उच्चारित होता है। जैसे – जनम–जलम, निंबू–लिंबू, नीम–लीम आदि। इसके विपरीत ल के स्थान पर न का प्रयोग भी प्रचलित है। जैसे– लकड़ी–नकरी, नकरिया–लाने–नाने आदि।

बनाफरी में बुन्देली की तरह ही 'ल' के स्थान पर 'र' उच्चारण सामान्य रूप में मिलता है। जैसे – कालो (काला)–कारो, तलवार–तरवार, दीवाल–दीवार आदि। बनाफरी में 'व' के स्थान पर 'म' का प्रयोग भी कई शब्दों में हुआ है। जैसे– दीवान–दीमान, जवान–जमान, लवंग–लमंग, दवाखाना–दमाखाना, कुंवर–कुंमर आदि।

बनाफरी में बुन्देली की सामान्य प्रवृत्ति हकार लोप की विशेषता दिखाई देती है। जैसे – शहर–सहर, हाथ–हात, थे–ते, तुम्हारे–तुमरे, बरफ–बरप आदि। बुन्देली की

यह प्रवृत्ति बघेली के मिश्रण की अधिकता के कारण कम होती दिखाई देती है। बनाफरी में 'ण' के स्थान पर 'न', 'ड़' के स्थान पर 'र', 'ढ' के स्थान पर 'ड' का उच्चारण भी सामान्य बुन्देली की तरह ही मिलता है। जैसे – कारण–कारन, लड़का–लरका, ढूंढ़बो–ढूंडबो आदि।

बनाफरी में बघेली का प्रभाव होते हुए भी बुन्देली की अनुनासिकता की प्रवृत्ति सर्वत्र दिखाई देती है। जैसे– वै, करैं, लाने, भरें आदि।

व्याकरण में समानताएँ

बनाफरी बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली का उत्तरी रूप है। इसमें भले ही अन्य बोलियों अथवा भाषाओं के शब्दों का समावेश हो गया हो, लेकिन इसके मूल में प्रामाणिक बुन्देली ही है। शब्द सामर्थ्य अन्य बोलियों के शब्दों को समृद्ध करता है। लेकिन मूल शब्द बुन्देली के ही हैं। व्याकरणिक रूपरेखा थोड़े बहुत अंतर के साथ शुद्ध बुन्देली की ही है। हकार लोप की प्रवृत्ति इसमें भी पाई जाती है, जो बुन्देली की एक प्रमुख विशेषता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि बुन्देली के एक रूप में बनाफरी अपना स्थान रखती है। शुद्ध बुन्देली अथवा प्रामाणिक बुन्देली से कई दृष्टियों से इसमें एकरूपता पाई जाती है। प्रामाणिक बुन्देली को बनाफरी बुन्देली एक विस्तार देती है, एक समृद्धि देती है। निश्चित रूप से बनाफरी प्रामाणिक बुन्देली का पूर्वी रूप है।

प्रामाणिक बुन्देली और कुन्द्री बुन्देली

कुन्द्री बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली का वह रूप है, जो बुन्देलखण्ड के उत्तरी–पूर्वी भाग में बोला जाता है। कुन्द्री बुन्देली, बुन्देली का उत्तरीपूर्वी रूप है। इस कारण इसका क्षेत्र हमीरपुर जिले की उत्तरी–पूर्वी सीमा जो केन नदी के पास है और बांदा जिले की सीमा से निर्धारित होता है। इस संदर्भ में डॉ. हंस ने लिखा है– 'हमीरपुर जिले की उत्तर–पूर्वी सीमा पर केन नदी प्रवाहित होती है, जो हमीरपुर और बांदा जिले की सीमा का निर्धारण करती हैं। इस नदी के दोनों ओर की तटवर्ती सकरी पट्टी में जो बोली, बोली जाती है, वही कुन्द्री कहलाती है। इसका यह नाम पड़ने का कोई विशिष्ट कारण नहीं जान पड़ता। संभव है कि केन नदी के तटवर्ती संकीर्ण (कुन्द) भाग में बोली जाने के कारण ही यह 'कुन्द्री' अथवा 'कुन्दरी' कहलाती है।'[11] इस प्रकार कुन्द्री का क्षेत्र हमीरपुर और बांदा जिले के बीच बहने वाली केन नदी का तटवर्ती क्षेत्र है, जो एक पट्टी के रूप में संक्षिप्त रूप से विस्तृत है।

कुन्द्री बुन्देली प्रामाणिक अथवा शुद्ध बुन्देली की उत्तरी—पूर्वी सीमा रेखा का निर्धारण करती है। इसमें बुन्देली के साथ—साथ बघेली के शब्दों का भी प्रयोग बहुतायत से हुआ है। कुन्द्री बुन्देली के स्वरूप का निर्धारण शब्द सामर्थ्य, व्याकरणिक रूपरेखा और ध्वनि समूहगत विशेषताओं के आधार पर होता है। कुन्द्री बुन्देली पर बघेली के शब्दों के प्रभाव की चर्चा करते हुए डॉ. कृष्णलाल हंस ने लिखा है— 'हमीरपुर की कुन्द्री बुन्देली पर आधारित है और उसमें बघेली मिश्रित है, पर बांदा की कुन्द्री बघेली पर आधारित है और उसमें बुन्देली मिश्रित है। दूसरे शब्दों में, हमीरपुर की कुन्द्री बघेली मिश्रित बुन्देली रूप है, पर बांदा की कुन्द्री बुन्देली मिश्रित बघेली है।'[12] कुन्द्री बुन्देली का एक रूप अवश्य है, परंतु इसमें बघेली के शब्दों का मिश्रण हो जाने के कारण यह प्रामाणिक बुन्देली से एक अलग ही स्थान रखती है।

व्याकरण में अंतर

कुन्द्री और प्रामाणिक बुन्देली में सबसे पहला अंतर तो शब्द सामर्थ्य का है। कुन्द्री बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली के शब्दों पर तो आधारित है ही, साथ ही इसका शब्द भण्डार बघेली के शब्दों से समृद्ध है। इस संदर्भ में डॉ. हंस ने लिखा है— 'इसमें कोई संदेह नहीं कि नदी अथवा पर्वत बीच में आकर भाषा अथवा बोली का इतना रूप परिवर्तन कर सकती है कि एक ही बोली दो विभिन्न परिवारों (पश्चिमी हिन्दी और पूर्वी हिन्दी) की बोलियों का अंग बन जाती है, यदि हम बघेली के मिश्रण की न्यूनता और अधिकता को ही बोली के रूप विभाजन का आधार मान लें, तो हमें हमीरपुर जिले के महोबा क्षेत्र में प्रचलित बनाफरी और उसी जिले के मवईजार क्षेत्र में प्रचलित बनाफरी को दो भिन्न परिवारों की बोली मानना पड़ेगा, क्योंकि उपर्युक्त प्रथम क्षेत्र की बनाफरी की अपेक्षा द्वितीय क्षेत्र की बनाफरी में बघेली मिश्रण की अधिकता है। हम पूर्व विवेचित बनाफरी की तरह कुन्द्री के भी दो क्षेत्रीय रूप तो मान सकते हैं, किन्तु उसे दो परिवारों के बोली के रूप में विभाजित कर देना हमें युक्तिसंगत नहीं जान पड़ता।'[13]

कुन्द्री बुन्देली में जिन शब्दों का प्रयोग बहुत होता है। वे शब्द इस प्रकार हैं— बनियाँ (व्यापारी), लरिका (लड़का), रहांयें (रहे), उई (वे), करन (करने), जोग (योग), भे (वे), तबहिन (तभी), बाह (उनका), ब्याह (विवाह), कारेंका (करने के लिए), बहू (वधू), ख्वाजें (ढूंढने), निकरा (निकला), वोह (वह), मा (में), आओ (आया), ह्वाँ (वहाँ), तलैया (तलाब), चुनू देर माँ (थोड़ी देर में), भरेंका (भरने को), वाहके (उसकी), रहाये (रही), जौन (जो), बा (उस), ते (से), घरन (घर), जान (जाने), मुड़े (सिर), नीक—नीक (अच्छे—अच्छे), कहायें (कहने), तोर (तेरा), ह्मा (हो), दीन्हेस (दिया), सहीमा (सच में),

मोर (मेरा), हुई (होगा), महके (इस कारण), हौ (हूँ), भा (हुआ), स्वाचन (सोचने), लाग (लगा), दीनेक (दिया), सुनाये (सुना), नीक (अच्छा), बर (वर), हामी (हाँ)। कुन्द्री के दूसरे रूप में जो हमीरपुर जिले के आस–पास बोली जाती है, शब्दों का जो रूप मिलता है, वे शब्द निम्न प्रकार हैं– बोह (उनका), बिचार (विचार), कीन्हेस (किया), ठैर (रुक गया), तनकई (थोड़ी), भौत (बहुत), वाह (उस), हती (थी), लरकियाँ (लड़कियाँ), घैला (घड़ा), साँत (सात), काहे (क्यों), हे (है), साँचेउँ (सही में), जेसैं (जिससे) आदि शब्दों के द्वारा कुन्द्री का शब्द भण्डार समृद्ध पाया जाता है।

कुन्द्री बुन्देली की व्याकरणिक रूपरेखा प्रामाणिक बुन्देली की तरह ही है। केवल ध्वनि समूहगत विशेषताएँ अलग हो गई हैं, जिसका कारण इसमें बघेली के शब्दों का और स्थानीय शब्दों का अधिक प्रयोग होना है। कुन्द्री बोली का रूप बुन्देली से अलग नहीं है। इसमें अधिकांश संज्ञा रूप बुन्देली के ही मिलते हैं, पर कहीं–कहीं बघेली का प्रभाव दिखाई देता है।

सर्वनाम रूप बुन्देली की अपेक्षा बघेली के ही अधिक हैं –

बुन्देली – सबै, वा, तैं, में।
बघेली – उई, बाह का, वोह, उनमाँ, वाहके, तोर, मोर।

संकेत वाचक विशेषण – वा, बा, उइँ में प्रथम दोनों शब्द बुन्देली के हैं, जिनका बुन्देली भाषी बघेली क्षेत्र में भी प्रयोग होता है, उइँ बघेली का रूप है, शेष विशेषण रूप बुन्देली के ही हैं।

क्रियापदों में केवल आओ, जान लगीं, हुइहै, सीख लेत हऊँ, निकर गई तथा सुन के शब्द बुन्देली के हैं, शेष सभी रूप बघेली के हैं। अव्यय बुन्देली और बघेली दोनों के प्रयुक्त हैं।

व्याकरण में समानताएँ

कुन्द्री बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली का उत्तरी पूर्वी रूप है। इस दृष्टि से यह बुन्देली के करीब है। इसमें बघेली के शब्दों का प्रयोग भले ही बहुत हुआ हो, परंतु इसके मूल शब्द बुन्देली के ही हैं। बघेली के शब्दों का प्रयोग अधिक होने के कारण इसका एक अलग स्वतंत्र रूप बन गया है। बहुत से शब्द बुन्देली के ही हैं। व्याकरणिक रूपरेखा थोड़े बहुत अंतर के साथ प्रामाणिक बुन्देली की ही हैं। कुन्द्री की ध्वनि समूहगत

विशेषता बघेली के शब्दों को लिये हुए बुन्देली की ही है। कुन्द्री बोली का रूप बुन्देली से अलग नहीं है। इसमें अधिकांश संज्ञा रूप बुन्देली के ही मिलते हैं। सर्वनाम रूप बुन्देली और बघेली दोनों के मिलते हैं। क्रियापदों में गठन बुन्देली का है और वाक्य रचना भी बुन्देली की ही है। दोनों क्रिया अवधि से ली गई है। इस प्रकार कुन्द्री बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली के क्षेत्र शब्द भण्डार को समृद्ध करती है।

प्रामाणिक बुन्देली और निभट्टा बुन्देली

निभट्टा बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली का वह रूप है, जो जालौन जिले के पश्चिमोत्तर भाग में बोला जाता है। इसे तिरहारी का एक रूप माना जाता है। तिरहारी में बुन्देली के साथ–साथ बघेली का मिश्रण भी पाया जाता है। तिरहारी यमुना के तटवर्ती पाँच जिलों के दक्षिणी भाग में बोली जाती है। ये जिले हैं– जालौन, हमीरपुर, बांदा, फतेहपुर और कानपुर। निभट्टा जालौन जिले के पश्चिम उत्तर भाग में बोली जाती है। इस कारण इसका क्षेत्र जालौन जिला के पश्चिमोत्तर भाग में ही सीमित माना गया है। डॉ. कृष्णलाल हंस ने इस संदर्भ में लिखा है– 'जालौन जिले के पश्चिमोत्तर सीमावर्ती भाग में बुन्देली का जो रूप प्रचलित है, वह निभट्टा कहलाता है। यह वास्तव में तिरहारी का ही एक भिन्न रूप है।'[14]

निभट्टा बुन्देली में स्थानीय शब्दों का मिश्रण बहुत अधिक मात्रा में मिलता है। इसमें बुन्देली के साथ–साथ बघेली और कन्नौजी के शब्दों का विचित्र संगम दिखाई देता है। निभट्टा बुन्देली तिरहारी के अंतर्गत आती है और तिरहारी एक विस्तृत भू–भाग में बोली जाती है। बहुत कुछ निभट्टा तिरहारी का रूप लिये हुए है। सीमाओं के संबंध में चर्चा करते हुए डॉ. कृष्णलाल हंस ने लिखा है– 'उत्तर में इसकी सीमा कन्नौजी भाषा भाग से संलग्न है, जिससे इस पर कन्नौजी का भी किंचित प्रभाव दिखाई देता है। इस प्रकार इस बोली का रूप बुन्देली, बघेली और कन्नौजी के मिश्रण से बड़ा विचित्र बन गया है।'[15] निभट्टा बुन्देली, प्रामाणिक बुन्देली का एक रूप होते हुए भी इसके शब्द सामर्थ्य, व्याकरणिक रूपरेखा तथा ध्वनि समूहगत विशेषताओं में पर्याप्त अंतर और समानता मिलती है, जो इस प्रकार है।

व्याकरण में अंतर

निभट्टा बुन्देली भले ही प्रामाणिक बुन्देली का एक रूप है, परंतु इसमें बघेली और कन्नौजी बोलियों के शब्द मिल जाने से इसके शब्द भण्डार में बहुत अंतर मिलता है। निभट्टा बोली भले ही एक छोटे से क्षेत्र में बोली जाती हो, परंतु इसमें बुन्देली,

बघेली और कन्नौजी बोली के शब्दों का मिश्रण होने से इसका शब्द सामर्थ्य समृद्ध माना जाता है। अपने शब्द सामर्थ्य के कारण ही निभट्टा को एक बोली रूप में स्वीकार किया गया है। निभट्टा बोली के शब्द सामर्थ्य को समझने के लिए हम कहानी के कुछ अंश को देख सकते हैं– 'एक सौदागिरि के चार लरिका हते। सौदागिर को एक लरकिया पसंद आ गई। वाने लरकन से कहिस के बाकों ब्याव तुमसन माँ से केके संग कद्दऊँ? छोट लरका कहिस बाको ब्याव बड्डे भइया से कद्देओ। ब्याव होगौ।' इस प्रकार इस अंश में तीनों बोलियों के शब्दों का समावेश हो गया है। इसमें आये शब्दों को हम अलग–अलग बोली के अनुसार देख सकते हैं। बुन्देली– एक, सौदागिर के चार लरका हते, लरकिया, पसंद, वाने, लरकन, से बाको, ब्याव, संग, भइया, से होगौ आदि। बघेली– लरिका, सौदागिर का, कहिस, तुम तुमसने माँ से, केके, कहिस आदि। कन्नौजी– कद्दऊँ, बड्डे, कद्देओ आदि। इस प्रकार हम देखते हैं कि निभट्टा बोली का शब्द सामर्थ्य तीन बोलियों से मिलकर समृद्ध बनता है।

निभट्टा बुन्देली की व्याकरणिक रूपरेखा प्रामाणिक बुन्देली की तरह ही है। अन्य बोलियों के शब्द आ जाने के कारण इसके व्याकरण में ज्यादा अंतर तो नहीं आया है, परंतु ध्वनि समूह में पर्याप्त अंतर दिखाई देता है। निभट्टा बुन्देली में ध्वनि के रूप में उच्चारणगत अंतर दिखाई देता है। निभट्टा में बुन्देली के साथ–साथ बघेली और कन्नौजी का मिश्रण होने के कारण इसके ध्वनि समूह तीनों बोलियों के शब्दों से मिलकर बनते हैं। डॉ. हंस ने निभट्टा की ध्वनि समूहगत विशेषताओं की चर्चा करते हुए लिखा है – 'निभट्टा भी तिरहारी की तरह बुन्देली और बघेली का एक मिश्रित रूप ही है। दोनों में अन्तर यह है कि जहाँ तिरहारी बघेली–प्रधान है, वहाँ निभट्टा बुन्देली–प्रधान है। यह देखते हुए इसे बुन्देली–प्रधान बघेली का ही एक रूप कहा जा सकता है। उत्तर में इसकी सीमा कन्नौजी भाषी भाग से संलग्न है, जिससे इस पर कन्नौजी का भी किंचित प्रभाव दिखाई देता है। इस प्रकार इस बोली का रूप बुन्देली, बघेली और कन्नौजी के मिश्रण से बड़ा विचित्र बन गया है।'[16] इस प्रकार निभट्टा बुन्देली बोली में बुन्देली, बघेली और कन्नौजी के शब्दों का मिश्रण होने के कारण इसके ध्वनि समूह में अंतर आ गया है और यही अंतर इसे एक स्वतंत्र बोली का स्थान दिलाता है। यही इसकी सबसे बड़ी विशेषता है।

व्याकरण में समानताएँ

निभट्टा बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली का पश्चिमोत्तर रूप है, जो इसे बुन्देली से जोड़ता है। तीन बोलियों का मिश्रण होते हुए भी निभट्टा बुन्देली के करीब ही ठहरती

है। यह बुन्देलखण्ड और बुन्देली बोली की सीमारेखा का निर्धारण करती है। शब्द समूह में बुन्देली के साथ–साथ बघेली और कन्नौजी के शब्दों का मिश्रण होते हुए भी निभट्टा बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। व्याकरणिक रूपरेखा प्रामाणिक बुन्देली की तरह ही है। ध्वनि समूह बघेली और कन्नौजी के होते हुए बुन्देली के उच्चारण से निर्मित होते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि निभट्टा बुन्देली, बुन्देली की पश्चिमोत्तर सीमारेखा का निर्धारण करती है।

प्रामाणिक बुन्देली और भदावरी (तंवरगढ़ी) बुन्देली

भदावरी बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली का वह रूप है, जो मध्यप्रदेश के साथ–साथ उत्तर प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र के कुछ क्षेत्रों तक फैला है। प्रमुख रूप से भदावरी के अंतर्गत 'मुरैना (श्योपुर तहसील छोड़कर) भिण्ड और ग्वालियर जिला उत्तरी क्षेत्र के अंतर्गत है। इसके अतिरिक्त उत्तरप्रदेश के आगरा, मैनपुरी और इटावा जिलों के मध यप्रदेश के इन उत्तरी जिलों से लगे हुए कुछ दक्षिणी भाग भी इसी क्षेत्र के अंतर्गत माने जाते हैं। इस क्षेत्र में शुद्ध बुन्देली से भिन्न इसके तीन रूप प्रचलित हैं– (अ) ब्रज मिश्रित रूप, (ब) कन्नौजी मिश्रित रूप तथा (स) खड़ी बोली प्रभावित प्रधान रूप। ये तीनों रूप भदावरी अथवा तोमरगढ़ी कहे जाते हैं।'[17] इस प्रकार हम देखते हैं कि बुन्देली का भदावरी रूप मध्यप्रदेश का उत्तरी क्षेत्र तथा उत्तर प्रदेश का पश्चिमी क्षेत्र तथा राजस्थान का कुछ पूर्वी क्षेत्र इसके अंतर्गत आता है।

भदावरी प्रामाणिक बुन्देली का उत्तरी पश्चिमी रूप है। इसकी सीमारेखा चार राज्यों से मिलकर निर्धारित होती है। इस दृष्टि से भदावरी समृद्ध उपबोली मानी जाती है। भदावरी एक ऐसी बोली है जो मूल रूप से बुन्देली होते हुए भी अपने अंदर अन्य बोलियों के शब्द भण्डार को समृद्ध किये हुए है। इसमें बुन्देली के साथ–साथ राजस्थानी और स्थानीय शब्दों का बहुतायत से प्रयोग होता है। भदावरी एक समृद्ध बोली है।

व्याकरण में अंतर

भदावरी बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली से सबसे पहले तो शब्द सामर्थ्य की दृष्टि से अलग दिखाई देती है। भदावरी बुन्देली में जितने प्रामाणिक बुन्देली के शब्दों का प्रयोग किया जाता है, उतने ही राजस्थानी एवं अन्य बोलियों के शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है। शब्द सामर्थ्य समृद्ध केवल बुन्देली के शब्दों के बल पर ही नहीं है, बल्कि अन्य बोलियों के शब्दों से मिलकर समृद्ध हुआ है। व्याकरणिक रूपरेखा के अंतर्गत इसमें

व्याकरण तो प्रामाणिक बुन्देली की ही है। परंतु इसके संदर्भ में डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया ने लिखा है– 'मुरैना जिले में बुन्देली का तंवरघारी रूप, इटावा में कन्नौजी, जालौन में लोधांती रूप, दतिया में बुन्देली का पंवारी रूप और ग्वालियर की डबरा तथा गिर्द तहसीलों में क्रमशः पंचमहली, जटवारी और भदावरी का व्यवहार होता है। इस प्रकार भिण्ड जिले की सीमाओं पर निम्नलिखित बोली रूप व्यवहृत होते हैं।

उत्तर – तंवरघारी, सिकरवारी एवं कन्नौजी।
दक्षिण – पंवारी, पंचमहली, जटवारी एवं भदावरी।
पूर्व – लोधान्ती एवं कन्नौजी।
पश्चिम – तंवरघारी एवं जटवारी।'[18]

इस प्रकार भदावरी का व्याकरण कुछ थोड़े बहुत अंतर के साथ बुन्देली का ही है। इसमें संज्ञा, सर्वनाम, लिंग, वचन, क्रिया, विशेषण आदि शुद्ध बुन्देली के हैं। लेकिन अन्य भाषाओं अथवा बोलियों के शब्दों का समावेश हो जाने के कारण इसके ध्वनि समूहों में अंतर दिखाई देता है। भदावरी बोली बुन्देली का उत्तरी रूप होने के कारण इसके ध्वनि समूहों में उस क्षेत्र के आसपास की स्थानीय भाषा या बोली का प्रभाव देखा जाता है। भदावरी एक ओर ब्रज से साम्य रखती है तो दूसरी ओर कन्नौजी से, इसलिए इसमें जिन ध्वनियों का प्रचलन है, वह बुन्देली, ब्रज तथा कन्नौजी का मिश्रित रूप है। इसकी चर्चा करते हुए डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया ने लिखा है– 'भदावरी की समीकरण की प्रवृत्ति जटवारे के कसमार, गुत्तौर, देवरा, श्यामपुरा, पलिया, धमसा और जनौरा ग्राम में उपलब्ध हो जाती है। इसी तरह भदावर घार के कठवां, रवियापुरा, धनौली, परार्वन और मदरपुरा आदि गाँव में जटवारे की उकार बहुला उच्चारण प्रियता और बाल्टी, लान्टेन, कन्सा संज्ञा शब्द रूप सहजता से उपलब्ध हैं। रजपूत घार के 84 गाँव पश्चिमी सीमा पर जटवारे की उच्चारण विशेषताएँ लिये हुए हैं, तो दक्षिण पूर्व में कछवाये घार की उच्चारण विशिष्टता सहज ही देखी जा सकती हैं। रजपूती का कैरौली, किटी, जारेट तथा गुरयायची और जटवारे का घमूरी, भड़ेरा, महुअरी, देहगाँ, खेरिया चाँदन, बाला क्षेत्र, संक्रमण का क्षेत्र है। रजपूत घार का भदावर घार से अलग करने वाले गाँव में भी बोली की ध्वनि के धरातल पर यही स्थिति है।'[19]

भदावरी में मूल 10 स्वर व्यवहार में उपयोग किये जाते हैं जैसे– टक–टका, बिस–बीस, चुक–चूक, सेर–सैर, कोल–कौल। स्वरों की स्थिति अनुनासिकता संयुक्त स्वर, स्वर संयोग, स्वर लोप, स्वर विपर्यय, स्वर परिवर्तन, स्वरागम, व्यंजन नासिक, व्यंजन ध्वनियाँ, व्यंजन गुच्छ, व्यंजन विपर्यय, व्यंजन आगम, व्यंजन लोप, शब्द निर्माण, सुर, सुर लहरी आदि में प्रामाणिक बुन्देली की तुलना से पर्याप्त अंतर मिलता है।

व्याकरण में समानताएँ

भदावरी बुन्देली में प्रामाणिक बुन्देली की तरह ही बुन्देली के शब्द मिलते हैं। इस दृष्टि से भदावरी बुन्देली प्रामाणिक बुन्देली के समान ही है। मूल बात यह है कि प्रामाणिक बुन्देली अन्य बुन्देली रूपों का केन्द्र है, इसलिए बहुत सी समानताएँ सभी में एक जैसी मिलती हैं। व्याकरणिक दृष्टि से भी भदावरी का व्याकरण बुन्देली की तरह ही है। उसमें बहुत कम अंतर दिखाई देता है। भदावरी चूँकि एक ऐसे क्षेत्र की बोली है, जहाँ क्षेत्रीय भाषाएँ एक दूसरे से अलग दिखाई देती हैं। इस कारण उसके ध्वनि में अंतर अवश्य दिखाई देता है, लेकिन वह ध्वनि बुन्देली का पुट लिये हुए मिलती है।

बुन्देली और भदावरी बोली में स्वरों की संख्या दस है, जो एक समानता है। स्वरों की स्थिति भी दोनों बोलियों में एक सी है। अनुनासिकता बुन्देली उच्चारण की एक प्रमुख विशेषता मानी जाती है और यह बुन्देली के सभी रूपों में मिलती है। संयुक्त स्वर, स्वर संयोग, स्वर लोप, बुन्देली और भदावरी दोनों में शुद्ध हिन्दी की तरह ही मिलते हैं। व्यंजन भी भदावरी और प्रामाणिक दोनों बोलियों में एक से हैं। नासिक्य व्यंजन ध्वनियाँ बुन्देली और भदावरी दोनों बोलियों में लुप्त हो गई हैं। इनके स्थान पर 'म' और 'न' का ही उच्चारण होता है। इस प्रकार भदावरी बुन्देली के उत्तरी भाग की एक उप–बोली के रूप में मान्यता प्राप्त है। भदावरी में बुन्देली, कन्नौजी का मिश्रित रूप बोला जाता है। इसलिए इसके ध्वनि समूहों में बुन्देली के साथ–साथ ब्रज और कन्नौजी की ध्वनियाँ भी मिलती हैं। चूंकि भदावरी का क्षेत्र मुरैना और ग्वालियर के आस–पास का है और इसमें उत्तरप्रदेश तथा राजस्थान की कुछ सीमाएँ प्रवेश कर गयीं हैं। इसलिए इसमें यहाँ की स्थानीय अन्य बोलियों का प्रभाव दिखाई देता है। समग्र रूप में जब हम भदावरी के ध्वनि समूहों की चर्चा करते हैं, तब इसमें जो अन्तर दिखाई देता है। वह इस प्रकार है – औकारान्त की प्रवृत्ति सर्वत्र पायी जाती है। अन्त्य ध्वनियाँ ओ तथा औ वर्ण के मध्य की हैं। इस ध्वनि के लिए पृथक मात्रा निर्धारित न होने की दिशा में औ की मात्रा को स्वीकार किया गया है। कन्नौजी भाषी सीमावर्ती क्षेत्र के गाँव में पौर–पौरी, मत–मति शब्द रूप मिलते हैं। जटवारे में घर–घरु, हर–हरु जैसे उकार बहुला प्रवृत्ति पायी जाती है। जटवारे में बाल्टी–बान्टी रूप व्यवहार में पाये जाते हैं। ब्रज मिश्रित भदावरी के व्यवहार क्षेत्र जटवारे में भविष्यकाल की क्रियाएँ चलंगौ, खांगौ आदि रूप मिलते हैं और कन्नौजी मिश्रित भदावरी वाले क्षेत्र में इनका रूप चलिहौं, खयहौं आदि मिलता है। नकारात्मक नहीं शब्द जटवारे में नानें, नायनें, घार में नां, कन्नौजी में नाहीं तथा कौरव बहुल गाँव में नइं रूप पाया जाता है। भदावरी में कई भागों में हकार विलुप्तिकरण की प्रवृत्ति भी पायी जाती है। जैसे– पहलौ–पैलौ, महताई–मताई।

इस प्रकार भदावरी भाषा व्याकरणिक दृष्टिकोण से बुन्देली बोली में अपना अलग स्थान रखती है।

इस खण्ड में हमने प्रामाणिक बुन्देली को आधार मानकर अन्य क्षेत्रीय बोलियों को जिनमें खटोला, पंवारी, लोधान्ती, बनाफरी, कुन्द्री, निभट्टा और भदावरी को लेकर एक तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया है। प्रामाणिक बुन्देली ही शुद्ध बुन्देली है। इसलिए वह समस्त बुन्देली का आधार स्तंभ है। इस खण्ड में प्रामाणिक बुन्देली के साथ अन्य क्षेत्रीय बोलियों के शब्द भण्डार, व्याकरणिक रूपरेखा और ध्वनि समूहगत विशेषताओं को अंतर और समानता का बिन्दु बनाया है। अतः यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि बुन्देली एक समृद्ध और विस्तृत बोली है।

संदर्भ

1. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप ; पृ. 40.
2. डॉ. ग्रियर्सन ; लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया, खण्ड 9, भाग 1 ; पृ. 459.
3. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप, पृ. 451.
4. वही ; पृ. 401.
5. वही ; पृ. 401.
6. डॉ. गणेशीलाल जी बुधौलिया ; प्रध्यापक डी.ए.बी. इन्टर कालेज राठ से प्राप्त कहानी का अंश.
7. डॉ. ग्रियर्सन ; लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया, खण्ड 9, भाग 1 ; पृ. 147.
8. डॉ. कृष्णलाल हंस ; बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप ; पृ. 404.
9. वही ; पृ. 405.
10. वही ; पृ. 407.
11. वही ; पृ. 414.
12. वही ; पृ. 414.
13. वही ; पृ. 415.
14. वही ; पृ. 417.
15. वही ; पृ. 417.
16. वही ; पृ. 417.
17. वही ; पृ. 347–248.
18. डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया ; भदावरी बोली का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन ; पृ. 93.
19. वही ; पृ. 122.

परिशिष्ट

बुन्देली के विविध रूपों के सर्वेक्षण के लिये मैंने सूचक विधि का प्रयोग किया है इस विधि के एक संक्षिप्त सूचक कहानी का बुंदेली के विभिन्न अंचलों में प्रयोग की जाने वाली बुन्देली में इसका अनुवाद कराकर क्षेत्रगत् स्थानीय विशेषताओं को ज्ञात करने का प्रयास किया है।

लोक में अपनी बात को कहानियों, कहावतों के माध्यम से भी अभिव्यक्त किया जाता है। यह अभिव्यक्ति नितान्त मौलिक और स्वाभाविक होती है इसलिये उपरोक्त सूचक कहानी के अनुवाद के साथ–साथ इन सभी सूचकों से उनके द्वारा प्रयुक्त की जा रही एक–एक कहानी को भी अपने सर्वेक्षण का विषय बनाया है। निश्चय ही इन कहानियों से प्राप्त निष्कर्ष नितान्त मौलिक एवं संदेह से परे है।

मुख्य सूचक – हिन्दी

मालिक मैं अपढ़ा आदमी हूँ, पर हाँ, जो कुछ भी मैंने पुराने लोगों से सुना है, उसे मैं कहता हूँ। पितामह कहते थे कि गढ़पहरा गढ़ के राजा ऊदनशाह बहुत अच्छे थे। ये बुन्देलखण्ड है यहाँ पहले कोई रजवाड़ा नहीं था। राजा ऊदनशाह बड़े धर्मात्मा थे, परमेश्वर को पहचानते थे। अब तो राजाओं ने धर्म को धोकर पी लिया है। राजा ऊदनशाह के राज्य में कोई दुःखी न था, प्रजा की बहू–बेटी को राजा माँ–बेटी की तरह मानते थे। झूठ बोलने वाले की वे जीभ खिचवा लेते थे। वृद्ध, बालक, ऊँच नीच सभी से वे प्रेम से मिलते थे, उनके पुण्य प्रताप से प्रजा सुखी थी। एक बार वे अपने किले की दीवार पर खड़े थे, चारों तरफ देख रहे थे कि इतने में मोती ताल में स्नान कर रही एक स्त्री पर संयोग से राजा की नजर पड़ गयी नजर के पड़ते ही उनको वह अच्छी सी लगी। बोले– राजा राम इन आँखों को क्या ऐसा देखना चाहिए? दो सुइयाँ लाओ और कहा जाता है कि उन्होंने अपनी दोनों आँख सुइयों से फोड़ ली थी। सच और झूठ तो देखने वाले जानते हैं पर सुनी बात कहता हूँ कि इधर उन्होंने जैसे ही सुइयाँ मंगाकर अपनी आँखें फोड़ी, भगवान ने खुश होकर उन पर सोने की वर्षा की। ऐसे मनुष्यों को धन्य है, जो इतने चरित्रवान हैं। राजा की आँखें जैसी की तैसी हो गयीं।

उन्होंने फिर पुण्य धर्म किया और प्रजा को बहुत सुखी बनाया। विधि की गति को कुछ नहीं कह सकते। राजा के इन गुणों की प्रशंसा दिल्ली के बादशाह तक पहुँची कि ऊदनशाह के यहाँ सोने की वर्षा हुई। बादशाह अपनी फौज सहित ऊदनशाह के यहाँ पहुँचा, परन्तु ऊदनशाह के सैनिकों ने किले के भीतर ही लड़ने की तैयारी पूरी कर ली। जगह–जगह पर गुर्ज पर तोपें लगा दीं। बड़े–बड़े गोलंदाज बैठा दिये, फिर ऐसी लड़ाई हुई कि जिस मैदान पर शत्रु की फौजें थीं, गोला ऐसे गिर रहे थे कि सिपाहियों के लत्ता उड़ जाते थे।

बड़े लोग कहते हैं कि ऊदनशाह जीत गये, पर घर के भेदी ने उन्हें हरवा दिया होता। ऊदनशाह को जैसे ही यह रहस्य पता चला, वह बहुत ही क्रुद्ध हुआ, उस भेदी को बंदी बनाया। उस भेदी मंत्री से जब बार–बार पूछा जा रहा था कि दुश्मन कहाँ होगा? वह कहता था कि वह किले पर चढ़ रहा होगा, कभी कहता किले पर चढ़ेगा और कभी कहता कि किले पर चढ़ चुका होगा। भेदी की ऐसी बातें सुनकर राजा खूब हँसा, क्योंकि उसने अपने दीवान को भेजकर पास के राजा की सेना बुला ली थी और दोनों तरफ से घेरकर बादशाह को बंदी बना लिया था। कहते हैं कि जिस पर ईश्वर की कृपा होती है, उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

दक्षिणी क्षेत्र (सूचक क्रमांक– 1)

मालक मैं बिना पढ़ो आदमी का बोल सकत। पुराने आदमी जो कहत ते वो कह रहो हूँ। हमार बाप दादे कहतते कि गढ़पहरा गढ़ के राजा के ऊदनशाह बहुत अच्छे हते। इहे बुन्देलखण्ड कहत हैं यहाँ पहले कोइ रजवाड़ा वगैरा नइं हतो। राजा ऊदनशाह बहुत पुणयात्मा हते, भगवान से पहचानते हते। अब तो राजा महाराजाओं ने धरम खों दव है। राजा ऊदनशाह के राज में कोइ दुःखी नहीं रहत तो, प्रजा की बहू बिटियन खें राजा अपनन की तरहे मानतते, जो झूठ बोलो तो ऊकी जीभ खें खिचवा लेतते, बुड्ढा, जवान, लरकों सबन से हेलमेल से मिल हिते, उनके पुन्न आसिरवाद सें प्रजा सुखी रहतती। एक बखत वे अपने किले की दीवाल पे ठाड़ेते घेर फेर देखतते कि इतनइं में मोतीताल में खोररई एक औरत पै धोका सें राजा की निघा पड़ गइ। निघा पड़तइ से राजा खों झटका सो लगो। राजा बोले राम–राम इन आँखन खे ऐसो नई देखने तो, ऐसो कहो जात है कि राजा ने दो सुइयन से अपनी दोइ आँखें छेदीं वैसेइ भगवान ने खुश होके सुननो बरसानों शुरु कर दओ, ऐसे आदमिन खें धन्न भाग है जो इतने भागवान हैं। राजा की आँखें बैसइ की बैसेइ हो गईं। उनने फिर खूब धरम करम करे और प्रजा को खूब सुख दये। विधाता की लेखनी–होनहारी खें कछू नइं कह सकत

राजा के इन अच्छे कामन की खबर दिल्ली तक पोंची कि ऊदनशाह राजा के इते सुन्नो बरसो। दिल्ली को बादशाह अपनी फौज फांटा सहित ऊउन के इते पौंचो। पर ऊदनशाह के फोजफाटा ने किले के अंदरइ लड़न की तैयारी कर लइ। जघे–जघे ठाँव–ठाँव (गुर्जन पें) तोप लगा दईं और बड़े–बड़े गोला चलान वारे खें बिठा दिये। फिर ऐसी लड़ाइ भई कि गोलों से फौज धुरधान उड़ गइ।

सियान कहत हिते कि ऊदनशाह जीत गये, घर को भेदयान हरवा देतो, जैसइ ऊदनशाह को पता चलो वो बड़ो गुस्सा भओ, उनने भेदी खों कैद कर लओ। ऊ भेदिया से बार–बार पूछतते कि दुश्मन किते किते हैं वो कहता किले पे चढ़ रहो होहे, कबऊँ कहततो किले पे चढ़ हे और कबहूँ कहत तो कि वो किले पे चढ़ चुको होहे। भेदिया की झूठी मूटी बातें सुनके राजा खूबइ हँसों। काहे कि ऊने मंत्री खें भेज कें फौज बुला लइ आर बादशा खों कैद कर लओ। कहत हैं जेपे भगवान खुश हें ऊ को कोऊ कछू नइं विगाढ़ सकत।

कहानी

एक मियाँ एक बीबी थे, वो का काम करत ते एक माल गुजार घर हवलदारी करत थे इतते के बाद का भव, बीबी ने कही कि उनकी एक छोकरी भई। तो वा बीबी का कहत है कि में मर जाऊँ तो मेरी बच्ची खों बहुत तकलीफ होहे फिर इतते के बाद में बीबी हिती तो मर गई तो बच्ची, मियाँ दोई हते वो बच्ची खों खान पियन खों धर देवें और हवलदारी करन जाये पुरा बस्ती में एक मुसलमाननी रातती तो वा बच्ची सें कहतती कि बेटा तू अपने बब्बा सें कहियो कि दूसरी बीबी ले आये तो बब्बा कहत कि बेटा तू जब तक सींका पै कीं रोटी निकार कें नई खाबे, तब तक तेरे लानें दूसरी अम्मा नईं लाऊँ। फेर जब वो काम पे चलो गयो तो वा मुसलमाननी आई ऊने पूंछी तो ऊँ लरकी ने कही कि बब्बा कहत तो कि जब तक हाथ से सींकें पै की रोटी नई निकारन लगूं, तब तक दूसरी अम्मा नईं लाऊँ इतते में मुसलमाननी ने कही कि बेटा डलिया ओंधा ले और सीके की रोटी खा ले तो ऊँ छोकरी ने बा डलिया ओधा के सीके की रोटी खा लई जब ओको बाप आब तो बा कान लगी हमाय लाने दूसरी अम्मा ले आओ। अब वे दूसरी बीबी ले आये। कुछ दिन बाद बा बीबी के एक छोकरी पैदा भई। इतते के बाद बा छोकरी हुसियार भइ जब हुसियार भइ बा छोकरी तो ऊके घर एक सुरइ गैया हती तो मौसी दाई कहत कि तू सुरइ गैया खे चरान जा अब इतने के बाद में बा जावे चरान खें जावे तो वा मौसी दाइ झूठे काटे टूंका बाँध देवे और चरान भेज देवे जब वा गइया खों चरान जावे तो रमना में सूखे काटे टुकड़ा छोड़ के खाय तो बा गइयन

ने देखी कि जा मो खों चरान आत है और रोत काय है फिर इतते के बाद में गइया बोलत है बा छोकरी से कि बेटा तू रोऊत काये है ? बा कहत है कि मेरी मोसी दाइ कि एक छोरी और है ओके जूठे काटे टुकड़ा मेहे रख देत है मेरे पै खंबत नइयां ऐसे रोऊत हूँ फिर इतने के बाद बा गैया कहत है बेटा तू जे रुखे टुकड़ा मोखो खबा दे और मोरो दूध तू पीले तो रोज दूध पीते पीते जा छोकरी मस्त हो गई। इतने के बाद में मौसी मताई कहत हैं कि बाहर की आव हवा सूखे टुकड़ा कितते फायदे मंद है कि जा छोकरी मुटा गई और मेरी जा झोकरी अच्छो खाके भी दूबरी है फिर इतते में मौसी दाइ कहत है कि ओ बाई अब तू मत जाये अब छोटी बाई जाहे। वो अब छोटी बाइ सूखे टुकड़ा बाद कें गइया चरान और बड़ी बाई को माल खवान लगी तो मौसी दाइ ने कही कि छोकरी तो फिर मस्त हो रई है और मोरी छोकरी की कऊना सी नाकल निकल रइ है। तो वा फिर बोली कि नईं बाई तू ही जा चरान तो मौखी दाई कहत है कि अपनी बिटिया सें कि बेटा तू लुकी–लुकी जइयो और देखियो की जा का करत है तो वा गई तो ऊने देखी कि ऊने सूखे टुकड़ा गइया को खिला कें दूध पीलव तो तुरतइ घर लौटी और आतेई मां सें बोली मां मां अपन जोन रोटी खात है वा गइया को देके थन से खूब दूध पियत है तो कहत है कि रॉंड दूध पीकें मुटा रई है एक काम करें कि गइयई नें रेहे तो दूध कहां से पीये। तो बाने चुंदयाती रख लई और टूटी सी टपरिया में सो गई। इत्ते में मियाँ आये ड्यूटी से तो बीबी बुलाय रई ती तो मियाँ कहत हैं कि बीबी का बात कहूँ एक जलील आओ हितो तो ओने कह दव कि तुमारे इते जो सुरइ गैया हे उसका गोश काट कें खाये तबई तेरो पेट ठीक होवे फिर इत्ते के बाद मियाँ कहत हैं कि कौन बड़ी बात काल गैया देहे तो तू काल लवा लइयो गोश तो वा बीबी अच्छी हो गइ तो गैया बाँध दइ छोकरी ने ऊँ छोकरी को जा बात पता चली तो ऊ छोकरी ने भुनसारे गैया छोड़ के चरान चली गइ तो वा गइया कहत है कि बेटा का बात है बेटा तू बड़े भुनसारे ले आई चरान खें तो बा बोली कि मौसी दाई तेरो गोश खान चाहत है ऐसें ले आई भुनसारे सें। काल मारहे तो कैसो करुं में, तो वा बोली कि बेटा तेरे पास चार पैया है तो कुमार केघर से एक मड़की ले अइयो और गुपचाप कटन के बाद मेरे हड़गा (हड्डी) मड़की में रख दईयो और जहां मेरो गोबर डलत है वहीं गाड़ दइयो ओने वैसेई करो कुछ दिन के बाद एक नगर भोज भओ वो इतने के बाद सब खान गये और वा छोरी को घर ताकन को बिठाल गये तो बा आँखें मूंदे रुलाई सी आई तो ओने कही कि मेरी गैया ने कही कि मेरी गैया मां ने कही थी कि हड्डी की मड़की गुबार में गाड़ दईयो उसने मटकी उखारी तो वा में इन्द्रासन को घोड़ा निकलो दूसरे हाथ डारो तो गहनो गुरुआ पूरो श्रृंगार निकरो पहरे पहरे ऊने विदा के पहर ओड़ कें जब सामदी भई और घोड़े के तरप ज्योंकि देखी घोड़ा ने लफारा दे तो वा चट वा पे

बैठ गई जैसे ही बैठी वैसेही नगर भोज के तरफ सन्ना गव। ह्आं तो तमाम आदमी जुड़ो तो सबने कही कि कोई बाई आ रहइ है तो राजा को खबर दई तो ऊखों अत्पर उठाकें लै गई जब भीतर गई तो वा बोली कि बाई बहिनी जल्दी खिवा दो और घोड़ा में बिठा दो जैसे ही बाई बहिने बिठालन के लाई तो सुनन की एक चप्पल हुईं गिर गई तो वा चप्पल ऊकी मताई नें उठाई और अपनी मोड़ी खें पेचान लव। पै वा मोड़ी मताई की बात न सुनकें घुरवा पे बैठकें हवा हो गई। कुछ दिना बाद वा मोड़ी सोने की पालकी में बैठकें आइ। ऊखों देखतई सें ऊकी सौतेली माँ ने गरे से लगा लव और अपने करे पै बहुत पछताई। फिर वा मोड़ी अपने संग में अपनी सौतेली मां, बेन, भाइंयों और पिता कों भी ले गई और ई तरह सें ऊने बदी को बदलो नेकी से चुकाओ।

सूचक क्रमांक – 1
पं. देवशंकर शुक्ला, कपुरधा, जिला– छिन्दवाड़ा, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 2

मालिक मैं अपढ़ आदमी का कर सकत हों। पर जो कछू मैंने बूढ़े आदमियों से सुनीं है बा तुमसे केत हों। दाद जू केत ते कै गढ़पहरा को राजा ऊदनशाह भौत अच्छो हतो। जो बंदेलखण्ड है जहाँ पैलें कऊँ को राजवाड़ा नईं हतो। राजा ऊदनशाह बड़ो धर्मात्मा हतो। वो परमेश्वर कों पैचानत तो। अब तो राजन् ने धरम कों धोके पी लव। राजा ऊदनशाह के राज में कोइ दुखी नईं हतो परजा की बहु बेटी कों राजा अपनी माँ बेटी की तरह मानत तो। झूठ बोलवे वारे की वे जीभ निकरवा लेत ते। बूढ़े–बालक, ऊँच–नीच सबन सें प्रेम से मिलत तो। बाके पुन्न परताप से परजा सुखी हती। एक बेर वो अपने किले की दीवार पै खड़ो थो। चारई तरफ देखो थो कै इत्ते में मोतीताल में सपरई बैय्यर पै संयोग से राजा की निगा पड़ गई। तो बाके गोली सी लग गई। वो बोलो राम राम इन आँखन से का ऐसो देखनें चाहिए। दो सूजें मंगा कें अपनी दोइ आंखें फोर लई। सच और झूठ तो दैखवे वारे जानत हैं। पर सुनी सुनी बात केत हों कै इते उनने जैसई आंखें फोंरी भगवान ने खुश होकें उनपै सोने की बरसा कर दई। ऐसे आदमीन खों धन्न हैं जो इत्ते धरम करकें परजा कों बहुत सुखी बनाई। भगवान की गति कों कोई नईं के सकत। राजा के इन गुनन की प्रसंसा दिल्ली के बादशाह तक पौंची। कै ऊदनशाह के जहां सोने की बरसात भई है। बादशाय अपनी फोज सेत ऊदनशाह के जहाँ पोचों परन्तु ऊदनशाह के सिपाइयन नें किले भीरतईं लड़वें की

तैय्यारी पूरी कर लई। जगां जगां पै गुर्ज पै तोंपे लगा दईं बड़े–बड़े गोलंदाज बैठार दये। फिर ऐसी लड़ाइ भइ कै जा मैदान पै दुश्मन की फोजैं हतीं, गोला ऐसे गिर रयेते कै सिपाइयंन के लत्ता उड़ जातते।

बड़े आदमी केतते कै ऊदनशाय जीत गव, पै घर के भेदी ने उने हरवा दव होतो। ऊदनशाह कों जैसई इस बात को पतो चलो वो भौत गुस्सा भव। वाने भेदी को बन्दी बनाव। बा भेदी मंत्री से जब बेर–बेर पूछी जा रईती कै दुश्मन किते होयगो, वो केत तो कै किले पै चढ़ रहा होयगो। कबऊँ केत तो कै किले पै चढ़ेगो और कबऊँ केततो कै किले पै चढ़ गव होयगो। भेदी की ऐसी बाते सुनकें राजा खूब हंसो। कायकों के बाने अपनी दीवान कों भेंज कें पास के राजा की सेना बुला लई हती और दोऊ तरफ से घेरकें बादशाय कों बन्दी बना लव हतो। केत हैं कि जापै ईश्वर कृपा होत है बाको कोइ कछु नईं विगाड़ सके।

कहानी

एक डुकरिया हती, बाको एक मोड़ा हतो, बाको मोड़ा सौ ऊँट चरात तो, डुकरिया रोटी देवे जात ती, सो वो ऊँ मैं न जाय, सो डुकरिया बोली तू ऊँटन में न जायगो तो नाहर से खवा दऊँगी। सो बो डर के मारें ऊँटन में जाय। एक दिना दौ पैलवान हते। सो दोनों आपस में कै रये के अपन लड़ैं। पै अपनी लड़ाई कौन देखेगो। डुकरिया रोटी लेके कड़ी। पैलवान वा सें बोले की डुकरिया तू ठेर हमरी लड़ाई देख। डुकरिया बोली बेटा मोय टेम नईंयां, तो एक काम करो के एक जा हाथ पै आ जाव और एक जा हाथ पै। दोई जने लड़ते चलियों मैं देखत चलोंगी। वा डुकरिया के लड़का ने देखे कै आज तो डुकरिया लाहर ल्याई खबानें कों। अब मोड़ा ने सोची ऊँटन ये इकट्ठे कर लये और पंचा में सौईयेन बाँध लये और मूड़ पै लैकें भग गव। ऊपर एक चील मंडरा रइ ती। चील ऊपर ऊपर ऊँट ले गइ, मोड़ा रीतो रे गव राजा की मोड़ी महन पै सो रईती, चील ने ऊँट छोड़े तो वे राजा की मोड़ी की आँख में गिरे तो एक गमारन नें बाकी आँख की किरकिटी के सौइ ऊँट निकारे, आंगन भर गय, रानी की आँख से अंसुआ गिरे तो वे सौई ऊँट बह गय।

सूचक क्रमांक – 2
सरदार सिंह, पगारा, जिला – गुना, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 3

मालिक मैं अपढ़ आदमी का कह कसे हूँ। पर हाँ जो कछू मैंने पुराने लोगों से सुनीं है बा कह सकूँ हूँ। हमारे आजे कहत थे कि गढ़पहरा के राजा ऊदनशाह बहुत अच्छे आदमी थे। ये बुंदेलखण्ड है यहाँ पहले कोई रजवाड़ा नहीं था। राजा ऊदनशाह बड़ो धर्मात्मा थे। परमेश्वर हे पैहचानते थे। अब तो राजाओं ने धर्म है धोके पी लव है। राजा ऊदनशाह के राज में कोइ दुखी ना था। प्रजा की बऊ बैटी को राजा माँ बेटी की तरह मानत थे। झूठ बोलवे वारे की वे जीभी खिचवा लेत थे। बूढ़े, बच्चा, ऊँच नीच सभी से वे प्रेम से मिलते थे। उनके पुण्य प्रताप से प्रजा सुखी थी। एक बार वे अपने किले की दीवाल पे खड़े थे। चारों तरफ देख रये थे। इतने में मोतीताल में सपरत स्त्री पर संयोग से राजा की निघा पड़ गइ। निघा के पड़ते ही उन्हे गोली सी लगी। बोलो राम राम इन आँखों हे का दिखनों चाहिए। दो सूजी बुलवा के उनने अपनी दोइ आँख फोड़ लई। सच और झूठ तो देखवेई वारे कह सकत हैं। दोई आँखें फोड़ते ही भगवान ने सोने की बरषा करी। ऐसे मनुष्य धन्न हैं जो ऐसे चरित्रवान है। राजा की आँख जैसी की तैसी हो गई। उनने फिर पुन्न धरम किया प्रजा का बहुत सुखी बनाव। विधि की गति हेतु कछु नइं कह सक हैं राजा के इन गुणों की प्रसंसा दिल्ली के बादशाय तक पहुंची कि ऊदनशाह के झाँ सोने की बरसात भई। बादशाह अपनी फौज सहित ऊदनशाह के झाँ पहुंचा परन्तु ऊदनशाय के सैनिकों ने किले के भीतर लड़ने की पूरी तैयारी कर लई जगे लगे गुर्ज पै तोप लगा दई। बड़े–बड़े गोलंदाज बैठार दये फिर ऐसी लड़ाई भई जिस मैदान पर दुश्मन की फौज थी गोला ऐसे गिर रये ते कि सिपाइयों की जिंदी उड़ जात थी।

बड़े लागे कहत ते कि ऊदनशाय जीत गय पर घर के भेदी ने उन्हें हरवा दिया होता। ऊदनशाय हे जैसे जा बात को पतो चलो बहुत गुस्सा भव। वाने भेदी हे बन्दी बना लव। बा भेदी मंत्री से बार बारे पूंछी जा रही थी के दुश्मन कहाँ है बाने कइ कि दुश्मन किले पर चढ़ रव होहे, कभी कहत थो के किले पर चढ़ेगो ओर कभी कत थो के किले पर चढ़ गव हो हे। भेदी की ऐसी बात सुनकें राजा खूब हंसो कायसे के बाने अपने दीवान है भेज कै पास के राजा की सेना बुला लइ हती दोइ तरफ से घेर के बादशाय है बन्दी बना लव। कैहें जीपे इश्वर की कृपा होबे हैं बाको कोइ कछू नइ बिगाड़ सके।

कहानी

एक किसान थो। बाके चार मौड़ा थे। किसान बड़ो मेहनती थे वो अपनो समय बेकार नहीं जान देत थो। चारो मोड़ा अलग–अलग विचार के हते। किसान बहुत फिकर करत थो के मेरे बाद मैंने जो बड़ी मेहनत करी है बा बेकार जा है इसलिए बाने एक विचार करो। और चारइ मोड़ा है एक एक सेर धान दे दइ। और अपनो काम करतो रहो। चार महीना बाद बाने बड़े मोड़ा हे बुलाव और पूंछी बेटा वा धान को का करो बाने कइ मैंने तो बाहे फेंक दइ, दूसरे मोड़ा हे बुलाव और पूंछी बाने कही मैंने चावल बनाके खा लव, तीसरे की बारी आइ बाने कहीं मैंने मेरे पड़ोसी हे बोबे दे दइ। अखरी में चौथे मौड़ा की बारी आइ बाने कही पिताजी तुम मेहनत करते मैंने भी देख देख के खेत हे खोदो और बइ में धान बो दइ। किसान बड़ो खुसी भओ और तीनों मोड़ा है संग लैके खेत में गव और अच्छी फसल दिखाइ तीनों मोड़ा हैं शरम लगी आर उनने कइ के दद्दा हम भी ऐंसइ मेहनेत करके तुम्हें दिखा हैं। किसान बोला मोड़ा हो समय और मेहनत बेकार नहीं जाय। जा तुम खुद आंख से देख रय हो परिश्रम से लक्ष्मी आवे।

सूचक क्रमांक – 3
श्री नारायण पालीवार, पुआँखेड़ा फार्म, होशंगाबाद, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 4

मालिक मैं अपढ़ आदमी का कह सकूँ। पर हाँ जो कछु पुराने लोगों से सुनो है बाय मैं बता रब हूँ। दद्दा केत कि गढ़पहरा के राजा ऊदनशाह बहुत अच्छे अच्छे हते। जो बुंदेलखण्ड है झाँ पे कोइ रजवाड़ा नइं हतो। राजा ऊदनशाह के राज में कोइ दुखी नइं हतो। प्रजा की बऊ बिटियन खों राजा अपनी माँ बिटिया जैसी मानत थो। झूठी बोलवे वारे की वे जीभ खिंचवा लेत ते। बूढ़े, बच्चा, ऊँच नीच सभी सें प्रेम सें मिलत हते। उनके पुन्न प्रताप सें प्रजा सुखी हती। एक बखत वे अपने किले की भीठ पै ठाड़े हते। और सब कुदऊ देखत ते। इतते में मोतीताल में सपर रइ एक लुगाइ पै संयोग सें राजा की निगा पड़ गइ। निगा के पड़तइ सें उनखों गोली सी लगी। बोले राम राम का जे आँखन ये ऐसो देखनें चाहिए ? दो सूजी मंगाके दो आँखें फोर लइं। झूठी सच्ची तो भगवान जाने सुनी सुनी कैरय। आँखन के फूटतेइं भगवान ने खुश होके उनपें सोने की बरसा कर दइ। ऐसे आदमी धन्न जो इतने अच्छे हैं। वा राजा की आँखें जैसे हतीं ऊंसी हो गईं। उनने फिर बिलात पुन्न धरम करो और प्रजा खों बहुत सुखी बनाव। विधि की गति को कछु नइं के सकत। राजा के इन गुनन की प्रसंसा दिल्ली के बादशाय तक

पोंची। कै ऊदनशाह के इते सोने की बरसा भइ। बादशाह अपनी फौज समेत ऊदनशाय के इते पोंचो परन्तु ऊदनशाय के सिपइयन ने किले भीतरइं लड़वे की पूरी तैयारी कर लइ हती। बड़े–बड़े गोलंदाज बैठार दय हते फिर ऐसी लड़ाइ भइ की जांन मैदान पै दुश्मन की फौज हतीं ऊपे गोला ऐसे गिर रये हते कि सिपाइयंन के लत्ता उड़ जात ते।

बड़े लोगे केवो है कि ऊदनशाय जीत गय पर घर के भेदी न उन्हें हरवा दव होते। राजा ये जैसइ जो पतो चलो तो वे बहुत गुस्सा भव। उनने भेदी खों बन्दी बना लव। जब भेदी मंत्री से बार बार पूंछो जा रव थो कि दुश्मन कां हुइये, वो केत हतो किले पे चढ़ रव हुइये, कबऊँ केततो कै किले पर चढ़ेगो, और कबऊँ केततो किले पे चढ़ गव हुइये। भेदी की ऐसी बात सुनकें राजा खूब हँसे। कायसे के उनने अपने दीवान खों पोंचा कैं पास के राजा की सेना बुलबा लइ हती। दोऊ तरफ से घेर के बादशाय खौं बन्दी बना लव तौ। केत है कि जेपे इश्वर की कृपा होत है बाको कोइ कछू ना बिगाड़ सके।

सूचक क्रमांक – 5

मालक में अनपढ़ आदमी हों, का कर सकत हों, जो कछू मैंने पुरखन सें सुना है बाये मैं कत हों। पुराने जने केत ते की गढ़पहरा गढ़ के राजा ऊदनशाय बड़े अच्छे हते। जो बुन्देलखण्ड है हिंना पहलें कोनऊँ राजा नइ हतो। राजा ऊदनशाय बड़े धरम कर्ता हते वे परमेश्वर खों पहचानत ते। आजकल तो राजन ने धरम खों धोके पी लव है। राजा ऊदनशाय के राज में कोऊ दुखी न हते। राजा प्रजा की बहु बिटिया खों राजा मताइ बिटिया मानत ते। झूट बोलैयन की वे जीव खिंचवा लेत ते। बूढ़े मोड़ा, ऊँचे, नीचन सबइ सें वे प्रेम से मिलत ते। उनके पुन्न प्रतापन सें प्रजा सुख भोगत ती। एक समय वे किले की भीत पै ठाड़े ते। सब तनें चिते रय तें इते कइ में मोती तला में नारइ एक जनीं पै संयोग सें राजा की नजर परी। नजर परतन ही उनकें गोली सी लग गइ। बोले राम राम इन आँखन कों का ऐसों देखनो चइये। दो सूजें लियाव और एसि केत हैं कै उनने आपइं दोइ आँखें सूजन से फोर डारीं हतीं। झूठी साँची तो देखबे वारे जानें मैं तो सुनी सुनायी बात केत हों कै इते उनने सूजों मँगायके अपइं आँखें फोर, भगवान ने खुशी होके बिन पै सोनों बरषाव। ऐसे मनुष्यन खों धन्न हैं जो इत्ते ऊँचे चाल चलन के हते। राजा की आँखें जैंसी की तैंसी हो गइं। उनने फिर पुन्न धरम करो और प्रजा खों बड़ों सुखी बनाव। विधाता की गत कछू कहीं नइं जात। राजा के इन गुनन की प्रसंशा दिल्ली के बादशा लौ पोंची वे ऊदनशाय के हिनां सोंनों बरषो। बदशा अपइ फौज सुन्दा ऊदनशाय के हिनां पोंचो। ऊदनशाय के सिपाइंयन ने किले के भीतरे बड़े

गोलंदाज बिठार दय फिर ऐसी लड़ाइ भइ है जोंन मैदान में बेरी की फौजें हतीं। गोला ऐसें गिर रय ते कै सिपाइंयन के लत्ता उड़ जात ते।

बड़े लोग कऊत हैं के ऊदनशाय जीत गव पर घरइ के भेदया नैं वाये हरवा दव होतो। ऊदनशाय खों जैसइं जा भेद को पतो चलो वो गुस्सा भव। वाने भेदिया कों पकरवा लव। बा भेदिया मंत्री से जब बेर–बेर जा रइ हती के दुश्मन काँ हुइये वो कत तो कै वो किले पै चढ़ रव हुइये, कबऊँ केत तो किलै पे चढ़ेगो और कबऊँ कत तो कै किलै पे चढ़ चुको हुइये। भेदिया की ऐसी बातें सुनकें राजा खूब हँसो। बाँने अपयं दीवान कों भेजकें पड़ोस के राजा की सेना बुला लइती और दोऊ तरफ सें घेर कें बादशा कों पकरवा लव हतो। केत हैं कै जोंन पै इसुर की किरपा होत है बाको कोइ कछू नइं बिगाड़ सकत।

कहानी

भइया अथाइ पै बैठ जा ओ मैं तुम सबखों एक किसा सुनाऊत हों। बैठकें सुनों। एक शिकारी तीर कमान लैकें डाँग में गव। सब दिना फिरत रव बाने चिरैयंनइ मारवे की सोच लइ। वो शिकारी रुख के नेचें तीर कमान तांन कें ठाडो हो गओ। चिरैंया वाये देखतन उड़बे कोंइ भइ कै ऊपर चिरैंयन खों एक बाज उड़त दिखानों। चिरैंयन सोची उड़त हैं तो बाज खाऊत है और बैठे रेयें तो जो शिकारी मारें डारत है। वे मनइं मन भगवान खों सुमरन लगीं। इतेक में एक बामी में सें सांप निकवे ऊनें शिकारी खों डस लेना, भड़भड़ा कें बीन तिरछो होकें बाज कें लाकें लगो। इते शिकरी मर गव उते बाज मर गओ भगवान की लीला से वे दोऊ चिरैयां बच गइं। जइ से जो बात कइ हे – मारन हार से बड़ो हे जग में पालनहार

सूचन क्रमांक – 5
घनश्याम दास योगी, करैरा, जोगीपुरा, करैरा, जिला – शिवपुरी, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 6

मालिक मैं बिना पढ़ो लिखो आदमीं का कर सकत। अकेले हाँ जो कछू मैंने पुराने लोगँन सें सुनो हैं सो ऊए मैं कहत हों। बब्बा कहत ते कि गढ़पहरा गढ़ के राजा ऊदनशाय खूब अच्छे हते। जो बुन्देलखण्ड आय इतै पहलाँ कोनऊँ रजवाड़ो न हतो। राजा ऊदनशाय बड़े धर्मात्मा हते, परमेश्वर खाँ पहचानत हते। अब तो राजन ने धरम खें धोकें पी लव है। राज ऊदनशाय के राज में कौनऊँ दुखिया न हतो। परजा की बहु

बिटियन खाँ राजा माताइ बिटियाँ सो मानत ते। झूठी बोलन बालन की जीब खिंचवा लेत ते। बूढ़े, वारे, ऊँच नीच सबइ सें प्रेम से मिलत ते उनके पुन्न प्रताप में परजा सुखी हती। एक बेर बे अपने किले की भितिया पै ठाडे हते। चाँरऊ तरफ देखत ते कि इत्ते में मोतीताल में सपरत एक लुगाइ के उपर राजा की नजर पर गइ। नजर के परतन उनें गोली सी लगी। बोले राम–राम इ आँखन खाँ ऐसो न देखो चाहिए। दो सुजी ल्याव और कहत हैं कि उननें अपनी दोइ आँखें सुइंयन से फोर लइं तो। सच्चो और झूठो तो देखबेइ बारे जानत हैं हम तो सुनाइ बात कहत हैं कि जैसइ उनने सूजी मँगा कें आँखें फोरीं भगवान नें खुशी होकें उनके ऊपर सोनें की बरसा कर दइ ऐसे आदमीं धन्न हैं जोंन इतते चरित्रवान हैं। राजा की आँखें जैसी हतीं बैसइ हो गइं। उननें फिर कें पुन्न धरम करो और अपनी परजा खाँ खूब सुखी बनाव। विधाता की मती खाँ कोऊ कछू नइं के सकत। राज के इ गुनन की प्रसंसा दिल्ली के बादसा लौ पहुंची कै ऊदनशाय के इते सोंने की बरसा भइ। बादसा अपनी फौज फाटा लैकें ऊदनशाय के इते पहुँचो अकेलें ऊदनशाय के सिपाइंयन नें किले के भीतरइं भीतर लड़ाइ की पूरी तैयारी कर लइं जहगन जँहगन गुरजन के ऊपर तोपें लगा लइं बड़े–बड़े तोपची बैठा दय फिर लराइ भइ कै जोंन मैदान में दुश्मन कीं फौजें हतीं उते गोला ऐसें गिर रय हते कै सिपाइंयन के लत्ता से उड़त ते।

बड़े लोगन को कहबो है के ऊदनशाय जीत गये अकेलें घर के भेदिया ने हरवा हव होतो। ऊदनशाय खाँ जैसइ इ रहस्य को पतो चलो वे बहुत गुस्साँ भये उननें भेदी खाँ बन्दी बना लव। ऊ भेदी मंत्री सें जब बेर–बेर पूछो जा रव तो कै दुश्मन कहाँ हू हे ऊ कहत तो कै किले के ऊपर चढ़ रव हूहे कभऊँ कहत तो किले पै चढ़ है और कभऊँ कहन लगत तो कै किले पै चढ़ गव हूहें। भेदी की ऐसी बातें सुनकें राजा खूब हँसो, काय से उनने अपनी दीवान खाँ भेजके नेंगर की सैना बुलवाकें बन्दी बना लव हतो। जीपै भगवान की किरपा होत है, ऊको कोऊ कछू नइं बिगाड़ सकत।

कहानी

एक मन्दिर हतो ऊ में भगवान और पुजारी रहत ते भगवान जी रहस लीला करन जात ते ऊतइ नदिया के किनारें एक गडरिया अपनी गैयाँ चराऊत तो। भगवान जी ने ऊ गडरिया सें कही हमें ऊ पार निकार दो ऊनें कही चलो तुम हमाय कंधा पै बैठ जाव, भगवान जी ऊके कंधा पै बैठ के पार हो गय। भगवान जी नें कही अब तुम लौट जाव ऊनें कही हम तुमाय संगे चलबी फिर वे दोइ जनें चले आय। भगवान जी कहन लगे तुम इतइ द्वारे में बैठ जाव कोऊखें आन न दइओ। भगवान शंकर जी डूंठा बैल पै आय

ऊने कही जो भूत सो क्वा चलो आउत। हमाय भगवान जी डरा जैहें सो ऊनें उन्हें डंडा लेकें भगा दव फिर भगवान जी आय और ऊनें कँधा पै बैठारो और चलो आव। भगवान सें वो बोलो के भूत आय ते सो हम नें उनें डंडा लेकें भगा दव हतो भगवान जी कहन लगे वे शंकर जी आय तुमने उनखाँ काय भगा दव। वे भूत से लगत तें सो हमने सोची कै हमाय छोटो से भगवान डरा जेहैं।

सूचक क्रमांक – 6
श्री रामखिलावन सोनी, मंडला – तहसील पन्ना, जिला पन्ना, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 7

मालक मैं अनपढ़ आदमी हों जो बुजरगन द्वारा सुनो ऊये कइत हैं बाबा कात हते के गढ़पैरा के राजा भोत अच्छे हतेय। जो बुन्देलखंड हियाँ पेले कोनऊँ राज नइं हतो। राजा ऊदनशाय भोत बड़ धरमात्मा हते, और परमेश्वर खो पैचानत ते। अब तो राजन ने धरम खों छोड़ दव। ऊदनशाय के राज में कोऊ दुख में न हतो। प्रजा की बऊ बिटिया का अपनी बिटिया भाँत मानत ते। लवरी बतात तो ऊकी जीब खिचवा लेत ते। बूढ़े वारे सबइ सें प्रेम सें मिलत ते। उनके पुन्न परताप सें प्रजा सुखी रात ती। एक दइंया अपने किले की भींट पै ठाडे ते। चारऊ कोद हेत ते। इतेक में मोती तलवा में सपररइ एक लुगाइ पै उनकी नजर परी। देखत नइं उनें गोली सी लगी। राजा ने कव कि इ आँखन सें ऐसा न देखो चाइये। राजा ने अपनी दोइ आँखें सुजी सें फोर डारीं। जैसइ राजा ने आँखें फोरी उसइ भगवान नें उनपे सोंनों बरषाव। धन्न हैं ऐसे मनुस जो चरित्वान है। राजा की आँखें ज्यों की त्यों हो गइं। फिर राजा ने खूब पुन्न करो और प्रजा खों सुखी बनाव। ब्रह्मा की गति कठिन है। राजा के इन गुनन की बड़वारी दिल्ली के बास्सा लो पोंची के ऊदनशाय की फौज पैलां सें लरै के लाने तैय्यार हती। गुरजन के ऊपर तोपें धरा लइं। बड़े–बड़े गोलन्दाज बैठारे। फिर ऐसी लड़ाइ भइ। जौंन जगा पै दुश्मन फौजें हतीं उते ऐसे गोला गिरे कै सिपाइयंन के लत्ता उड़ गय।

सयाने कात कै ऊदनशाय की जी भइ। ऊदनशाय खों जैसइ पता चलों कै घर के भेदी ने उने हरवा दव होता, वे भोत क्रोध में भय। उनने पूंछी के बेरी कहाँ हुए ऊनें कव के बैरी किले पै चढ़त हुइए, कबहूं कत के किले पै चढ़ बव हुए। भेदी की बातें सुनकें राजा खूब हँसे। उनगे दीवान खों भेंज कें ऐंगर के राजा की सेना बुला लइ ती दोइ कीद से घेर के बास्सा खों बंदी बना लव हतो। कात आय कै जीको भगवान की कृपा होत है सो ऊको कोऊ कछु नइं कर सकत।

कहानी

एक जनें गय ते परदेशे। उननें मलक मोरें कमाइं मूसर में कोल कें भर लइं। घरे निगे गैल में एक कें ढ़ोरें परै। रात कें सो गय। ऊ घर की लुगाइ ने देखो के मूसर गरव है सो अपनी घर गइ और बल्दे से उनको ले गइ। जब वे जगे तब देखो के हमारे मूसर चोरी चलो गव। सोच करकें घरे चले आय। फिर बढ़इ सें मूसल बरवाय और गाड़ी में धरकें ओइ के दोरैं में पोंचेय, और चिल्लाने बाइ एक पुरानों दे जाव और दो नय ले जाव। लालच में वा लुगाइ वो मसूर दे गइ और दो नय ले गइ। गांव के और दोरे सो वे बोले के हमें काऊ से कुंन मूसर बलंदावनें।

सूचक क्रमांक – 7
केसरी प्रसाद चौबे, बेडरी, जिला – छतरपुर, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 8

मालक हम अपड़ा आदमी की जान सकत हें पर हाँ जो कछु हमने पुराने आदमियों से सुनो हे उसे में कहत हों। हमरे आजे कहत हते के गढ़पहरा किले के राजा ऊदनशाय बहुत अच्छे हते। जो बुन्देलखण्ड हें इते पेले कोनऊ सो रजवाड़ो नहीं होतो। राजा ऊदनशाय बड़े धर्मात्मा हते भगवान कों मानत हते अब उन राजों ने धरम खों धोके धरदओ है। राजा ऊदनशाय के राज में कोनऊ भी दुखी ने हतो। परजा की बहु बिटों खो राजा मताइ बिटिया जैसो मानत हते झूठ बोलबे बारों की वे जीभ खिचवा लेत ते। बूढ़े, बारों, ऊँच नीच जात के सब से प्रेम से मिलत हेते। उनके पुन्न के उदय सें परजा भोत सुखी हती। एक बेर बे अपने किले की दिवार पे ढाड़े हते चारइ ओर देख रअ हते के इत्ते में मोतीलाल में सपररइ एक लुगाइ पें जोग से राजा की नजर पर गइ। नजर के परतऊँ उनखों गोली से लग गइ वे बोले राम–राम इन आँखों खों का ऐसे देख चज्जये। दो सूजी ले आओ और कइ जात हे के उनने अपनी दोइ आँखें सूजी से फोर लइ हतीं। साची झूठी तो देखबे वारे जानत हुइयें मनों सुनी–सुनी बात के रअे हें के जैसइ उनने सूजी मंगा के खुद की आँखें फोरी भगवान ने खुसी होके उनपे सोने की बरसा करी ऐसे आदमी खो धन्न हें जो अच्छे चालचलन के हते। राजा की आँखें जैसी हते ऊसइ हो गइ फिर उनने पुन्न धरम करो और परजा खों भोत सुख दओ। बिधाता की गत खों कछु नइ जान सकत। राजा के इन गुनों की खबर दिल्ली के बाच्छा के लिंगा पोंहची कै ऊदनशाय के इत्ते सोने की बरसा भइ है बाच्छा अपनीं सेना खों ले कें ऊदनशाय के इत्ते पहुंचे मनो ऊदनशाय की सेना नें किले की भीतरइं लड़वे की

सबरी तैयारी कर लइ हती। सब जगा गुरजो पें तोपें लगा दइं हतीं और पेलें नम्बर के गोलंदाज बैठा दये फिर ऐसी घमासान लड़ाइ भइ के दुश्मनों के लत्ता उड़ गये।

सयाने लोग कहत है के ऊदनशाय जीत गये मनो घरइ के भेदी ने उनखों हरबा दओ होतो। ऊदनशाय खों जैसइ जो रेस को पता चला बो भोतइ गुस्सा अओ उननें भेदी खों बांद दओ। अब ओ भेदी मंत्री से बरे–बेर पूछो गओ क दुश्मन किते हुइए बो कहत हतो के किले पे चढ़ रओ हुइए कबऊँ केत तो किले पे चढ़हे और कबहु केत तो के किले पे चढ़ गओ हुइए। भेदी की बातों से राजा खूबइ हँसे कायसें उननें अपनी दीवान खों पोंचा कें लिंगा के राजा की सैना बुलवा लइ और दोइ कितऊ सें घेर के बाच्छा खों बन्दी बनवा लव हता। कहत हें के जेपेइ भगवान की कृपा होत हें ओको कोऊ कछु नइं कर सकत है।

कहानी

एक राजा हते उनकी एक मौड़ी हती बा भौतइ सुंदर हती। एक दिना बा मौड़ी अपने संगी साथिनों के संगे जंगल घूमबे खों निकरी। उतै घूमत–घूमत भौत समै बीत गओ। जब बा जंगल में घुड़बा पै बैठकें घूमत जा रह ती, तबइ एक लरका आओ और केन लगो के राजकुमारी जी जा सारी मैंने अपने हाँतों से बनाइ है, तुम ले लो राजकुमारी ने खुसी से बा सारी ले लइ और केन लगी के हम तुमाय हाँत से बनाइ भइ और साड़ियों खों और कपरा देखों चाहत तो लरका ओ राजकुमारी खौं अपने घरें लुआ ले गओ। राजकुमारी ओको काम देखके भौतइ खुसी भइ और केन लगी के ऐसो लगत है के सब छोड़कें तुमाय इते रये आयें और जा बिंद्या सीख लयें, कपरा बुनबौ सीख लयें तो बौ लरका सोचन लगो के जा राजकुमारी तो मों खों पसंद करत है। अब राजकुमारी की सबारी आँगें चली तब ओखों एक लरका मिलौ ओके कंदे पै एक सुपेद कबूतर बैठौ तों बौर लरका ओ कबूतर सें बातें कर रव तो तो राजकुमारी खों बड़ी अचरज लगो बा केन लगी तुम सब पछि्छयों से ऐसइ बात कर सकत हो तो ओनें कइ कि हव हम कर सकत। तो राजकुमारी ओसें केन लगी के ऐसों लगत है सब छोड़छाड़ के तुमाय पास रैन लगे और तुमसे जा बिद्या सीखें तो बौ लरका बी सोचन लगो के जा राजकुमारी मोखों चाहन लगी और बो तो ओकी सुंदरता पै पैलइ से रीझौ तो। अब राजकुमारी की सबारी आँगें बड़ी तो राजकुमारी को जुर चढ़ आओ। ओकें संगे बारे ओखों एक बैद के पास लुआ गये और बैद ने ओकी ऐसी दबाइ करी के बा बिलकुल ठीक–ठीक हो गइ, राजकुमारी जा बात देखकें दंग रै गइ के ओ बैद के इतै एक सें एक कठिन रोग बारे ठीक हो जात। बा ओ बैद से भी भौतइ खुस भइ और केन लगी

के हमें अगर समे मिलो तो हम तुमाये संगे रै के रोगियों की सेवा करहैं। तो बौ बैद लरका बी सोचन लगो के जा राजकुमारी मोखों चाहन लगी बौ बी ओखों पसंद करन लगी। अब राजकुमारी ठीक–ठाक होकें आँगें चली तो एक मुसीबत में बिद गइ बा पेड़ों की लताओं में बिद कै लटक गइ और उतै एक सरप बैठो हतो ओके संगी साथी सब हेरान हो गये के अब बे राजकुमारी की जान बचा लइ। राजकुमारी बचाओ–बचाओ चिल्ला रइ ती। ओकी आवाज सुनकै एक भौतइ बीर लरका जो भौतइ सुंदर हतो उते आओ और ओनें राजकुमारी की जान बचा लइ। राजकुमारी ओसें भौत खुस भइ और केन लगी के में ऐसे बीर आदमी के संगे रैबो पसंद करहों जौन ने मोरी जान बचाइ। जब राजकुमारी अपनें घरें लौटी तो ओके पिता भौतइ खुस भये और केन लगे के तुम ब्याब जोग हो गइ हो हम तुमाओ ब्याव भौतइ बड़े राजा के लरका के संगे कर हैं, तो बा राजकुमारी कैन लगी के पिताजी तुम मोरो ब्याव कोइ राजा के संगे नें करियो में तो ऐसे आदमी के संगे ब्याव करहों जो चतुर, बलसाली, सुंदर होये। तो राजा ने पूरे राज में जो डिंडौरा पिटबा दव के राजकुमारी को स्वंबर रचो जानें है, जौन लरका ये ल्याक के होय बे येमें भाग लेबे दरबार में आये। जा बात उन चारै लरकों ने बी सुनी तौ बे बी उतै आये अब बे चारै जनै जा विचारत ते के राजकुमारी हमइ खों चुने। पर राजकुमारी ने ओ लरका खौं अपनो बर चुनौ जौन ओकी जान बचाइ ती। सबनें कइ के तुमने ओइ खों काय चुनौ जबकि बे चारै जनै एक से बढ़कें एक हत तो राजकुमारी केन लगी के जौर लरका बीर और सुंदर तो हैइ, संगे इ चतुर और बुद्धिमान सोइ है ऐसें इ हमाओ बर बनबे लाक है। उनकी सादी धूम–धाम से भई और ओ राजकुमारी नें अपने चतुर–बीर बलसाली पति के संगे भौतइ अच्छें सें राज चलाओ। ओ राजकुमारी ने पैसों को राजपाट को मोह नें करके अपनी बुद्धि सें चतुर और बीर पति चुनों। सो जो के जोग हतो सो ओकी जिंदगी सुदर गई।

सूचक क्रमांक – 8
श्री कस्तूर चंद जैन, करहद, जिला – सागर, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 9

मालिक मैं तो बूढ़ आदमी हों मैं का कर सकत हों। अकेलें हॉं जो कूछ मैंने पुरखन से सुनो है बा मैं कत हों। पुरखा कऊत ते कै गढ़पहरा गढ को राजा ऊदनशाय भोतऊ अच्छो हतो। जो बुन्देलखण्ड है इते कौंनऊ रजबाडो नहीं हतो। राजा ऊदनशाय बड़ोइ धरमात्मा हतो। वो परमेश्वर कों खूबऊ मानत तो। अब तो राजन ने धरम खों

धोंके पी लव है। राजा ऊदनशाय के राज में कोनऊँ दुखिया न हतो। परजा की बऊ बिटिया खों राजा अपनी मताइ बिटिया की तरह मानत तो। झूठ बोलवे बारे की वे जीब खिचवा लेत ते। बूढ़े, बारे ऊँच नींचे, सबइं से बडेऊ प्रेम से मिलत ते। उनइं के पुन्न सें प्रजा सुखी हती। एक बेर वे अपने किले की भीत पै ठाडे ते। चोतरपा देख रय ते। के इततइं में मोती ताल में सपररइ एक लुगाइ पै राजा की निगा संजोग से परी। निगा परतनइं राजा के तुपक सी लगी। बोले राम राम इन आँखन को का जोइ देखने तो ल्याव दो सूजा और लोगन को केबो है के उनने अपनी दोऊ आँखें सूजन से फोर लइं ती। झूठ ओर सच तो देखबे बारे के सकत हैं पर सुनी सुनाइ बात तो जो है कै इते उननें जैसइं सूजों खों मंगा के अपनी आँखें फोरी भगवान नें खुशी होकें उनपे सोनों बरसा दओ ऐसे लोगन को धन्न है जो इतेक चरित्र बारे हैं। राजा की आँखें जैसी हतीं बैसइ हो गइं। उनने फिर से पुन्न धरम करो और प्रजा खों बड़ो सुखी बनाव। बिधाता की गति खो कोऊ नइं जानत। राजा के इन गुनन की प्रसंसा दिल्ली के बादशा तक नो पोंची के ऊदनशाय के इते सोनें की बरसा भइ। बादशा अपइं फोज लेकें ऊदनशाय के इते पैंचों पै ऊदनशाय के सिपाइयन ने किले भीतरइ लरबै की पूरी तैयारी कर लइ ती। जाँगन तांगन गुरजन पै तोपें धर दइं बड़े बड़े गोलंदाज बैठार दये। फिर ऐसी लराइ लरी कै जी मैंदान पै बेरी की फोजें हती उते गोला ऐसे गिर रय ते कै सिपाइंयन के धुर्रे उड़ गये।

बड़े लोग कत हैं के ऊदनशाय जीत गय ते अकेलें धर के भेदिया ने उनें हरवा दव होतो। पै ऊदनशाय को जैसेइं जो भेद को पतो चला वे भौतइ गुस्सा भये। उननें भेदी को पकरवा लव। बा भेदिया मंत्री सें बेर बेर पूछी जा रहइ ती के दुश्मन किते हुइये तो वौ कऊत तो कै किले पै चढ़ रव हुए कबऊ कत हतो के किले पै चढ़ हैं और कबऊँ कत तो के किले पै चढ़ गव हुए। भेदिया कीं जे बातें सुनकें राजा खूबइं हंसो काय के बाने अपयं दीवान कों पौंचा के ढिंगा के राजा की फौज बुलवा लइ ती और दोऊ तरफ से घेर कें बादशा कों बन्दी बना लव तो। कत हैं कै जौंन पे इश्वुर की कृपा होत है बाकों काऊ नइं बिगार सकत।

कहानी

एक बूढ़ौ लिढ़इया हतो। बौ जंगल में जारऔ तौ। बाय एक कागद कौ टूंका मिलौ। बानें बा टूंका कागद को उठा लऔ। तब बो लिढ़इया लिढ़इयन सें बौलों कै मैं पट्टीदार हों मेरे पास पट्टौ हैं सबरे लिढ़इयन नैं बा बूढ़े लिढ़इयां की पूंछ में एक डंडा बांद्दओ और बाए अपनौ मुख्यिा माने लऔ।

हुंआं, बीचां, नदी के तीर में ककरी खरबूजा लगे ते। उनकी सौंदी–सौंदी सुगंद सें बूढ़े लिढ़इया की लार टपकन लगी। बानें सबरे लिढ़इयन कों बिरवारी में घसकैं ककरीं खरबूजा खाबे की कैदइ। फिर बोऊ खाबे घुस गऔं। रखवारे नैं तीन पलैंत कुत्ता हुलकार दऐ। सबरे लिढ़इया तौ बिरवारी ऊलकैं भग्गऐ अकेलें बौं बूढ़ौं लिढ़इया न भग पाऔ, काऐ कै बाकी पूंच में बंदौ डंडा बिरबारी में बिद गऔ। तब कुत्ता बाए चीथ्न लगे। बूढ़े लिढ़इया नैं सब लिढ़इया चिल्ला कैं बोले कै बोइ पट्टौ लिखा दो, वे कुत्ता तो मान जैं हैं। तापैं बूढ़े लिढ़इया नैं कइ कै हियां तो बात कुपढ़न में बिधी। कौ कऔ, अखरी में कुत्तन नैं बा बूढ़े लिढ़इया कौं चीथ–चीथ कैं माड्डारौ।

सूचक क्र – 9
डॉ. श्याम बिहारी श्रीवास्तव, सेंवढ़ा, जिला – दतिया, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 10

महाराज मैं अपढ़ आदमी का कै सकत। जो कछुक मैंने बूढ़े पुराने लोगन से सुनी बेइ कत। अजा कबू करे, गढ़पहरा के राजा ऊदनशा भोतइ नोनें हते। बे धरम करम में विश्वास करत ते इसुर खों चीनत ते। अबके राजन् की को कनें। उनें को पाऊत। प्रजा खों बऊ बिटिया की नाइं मानत ते। कालों कँय।

एक बेर का भव। मोतीतला में एक जनीं सपरत दे दिखानीं सो उनने सूजें बुलाकें अपनी दोइ आंखें फो डारीं। राजा के ऐसे चरित्र खों देख कें भगवान नें उनपै सोने की बरसा कर दइ। ऊदनशा पै सोनें की बरसा देख कें दिल्ली के बादसा पे चढ़ाइ कर दइ। ऊदनशा के गोलंदाजन ने दुश्मन की फौजन के शरीरन की धजीं धजीं उड़ा दयीं।

केबे बारे जा कत हैं कि भेदी नें आ जो सब कछू करों तो सो ऊदनशा ने ऊखों पकर कें बदुआ बना लव। फिर उसें पूछीं के दुश्मन किते हुइये सो ऊने कइ के चढ़ रव हुइये, तनक में फिर बोलो चढ़वे वाओ हुइये, कब चढ़इ न गव होय। भेदी की बातें सुनकें राजा खूब खिलखिलानें, काय के उनने अपने दीवान खों भेंज कें करके के राजा की सेना बुला लइ और दोइ तरफाँ से घेर घार के बादशा खों बंधुआ बना लव। कइ जात हैं जीपै कृपा राम की होइ ऊको का करहै कोइ।

कहानी

ऐंसें–ऐंसें एक डीला औ पत्ता हतो इन दोइ जनन में भोत दोस्ती हती, जब आँदी आऊतती तो डीला पत्ता पै बैठ जात तो पत्ता उड़ नइ पाऊत तो और जब पानीं वरसत

तो तो डीला पै पत्ता हो जात तो जीसें पानी घल नइ पाऊत तो। दोइयन मैं हो गइ लराइ उननें कइ मैं बड़ो और उनने कइ मैं बड़ो। दोइयंन में तनाँ तनीं चली। एक दिना आँदी आइ आइ सो पत्ता पड़ गव और पानी आव सो डीला गल गव। केबे को मतलब जो आय के मेल में तो सुख है और फूट में दुख है।

सूचक क्रमांक – 10
श्रीमती कला वर्मा (बिन्दु), निवाड़ी, जिला– टीकमगढ़, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 11

मालक में अपढ़ा आदमी का कर सकत हों। पर हाँ जो कुछ पुराने लोगन से सुनों ऊखों में कत हों। बब्बा कत ते कै गढ़पहरा गढ़ राजा ऊदनशाह भौत अच्छे ते। जो बुन्देलखण्ड है इते पेले कोनऊं रजवाड़ो नइ तो। राजा ऊदनशाह भोत धरमात्मा हते। वे परमेश्वर खों पेचानत हते। अब तो राजा ने धरम खौं धोकें पी लव। राजा ऊदनशाह के राज में कोइ दुखी नइं तो। परजा की बउ बिटियन खों राजा अपनी मताइ बिटियाँ की नाइं मानत ते। झूल बोलवे वारन की वे जीब खिंचवा लेत ते। बूढ़े, मोड़ी, मौड़, ऊँचों, नेचों सबन सें वे प्रेम सें मिलत ते। उनके पुन्न परताप सें प्रजा सुखी ती। एक बेर वे अपने किले की भीट पें ठाड़े ते। चारऊँ ओर देख रय ते के इतने में ताल में सपरत एक लुगाइ पै उनकी निगा संजोक सें पर गइ। निंगा के परत उनें गोली सी लगी। बोले राम–राम इन आंखन सें सें ऐसो नइं देखने तो। दो सूजें लियाव, और ऐसी कइ जात कै उननें अपनी दोऊ आंखें फोर लइं। सांची–झूठी तो देखवे बारे जानें मैं तो सुनी सुनी बात या कत हों के जैसेइ उननें सूजन सें अपनी आँखें फोरी भगवान ने खुस होकें उनके ऊपर सोनें की बरसा करी। ऐसे आदमन खों धन्न हैं जो इतने अच्छे चालचलन के हैं। राजा की आंख जइं की तइं हो गइं। उननें फिर पुन्न धरम करे ओर परजा खों सुखी बनाव। विधाता की गति मत खों कछु नइं कै पाऊत। राजा के इन गुनन की प्रसंसा दिल्ली के बादशा तक पोंची के ऊदनशाय के इते पोंचो। पै ऊदनशाय के सिपाइयन नें किले भीतरइ लबरे की तैयारी कर लइ हती। जगां जगां पे गुर्ज पै तोपें लगवा दइं। बड़े–बड़े गोलंदाज बैठा दय। फिर ऐसी लराइ भइ के जौंन मैदान पै बैरी की फौंजें तीं, गोला ऐसे गिर रय ते के सिपान के लत्ता उड़ जात ते।

बड़े लोगन को कैबो है के ऊदनशाय जीत गय, पै घर के भेदिया ने उनें हरवा दव होतो। ऊदनशाय खों जैसइ या भेद को पतो चलो वे भोतइ गुस्सा भय, उननें भेदिया खों बँदवा दव। बा भेदिया सें मंत्री से बेर–बेर पूछो गव कै बैरी काँ हुइये ? बो कत तो

के किलै पै चढ़ रव हुइये, कबऊँ कत तो किलै पै चढ़े और कबऊँ कत तो के किले पै चढ़ गव हुइये। भेदिया की ऐंसी बातें सुनकें राजा खूब हँसों। काय के ऊने अपने दीवान खों भेजकें बगल के राजा की फौज बुलबा लइ ती और दोनऊँ ओर सें घर कें बादशा खों बंदबा लव तो। जा कइ जात के भगवान जीपे दया करत ऊको कोऊ कछू नइं बिगार पाऊत।

कहानी

एक बेर एक ऊँट खों चरती बेरां गरय में एक डँगरा अड़ गव। ऊको मालक एक चतुर आदमी के लिंगा जाकें बोलो मारे ऊँट खों गरे में एक खता हो गव कछु ओखद कर दो। ऊ चतुर आदमी ने अटोकें पता मिला लव कै इ ऊँट के गरे में कोनऊँ फल अड़ गव। ऊँनेक बिदी सें एक पथरा गरय के इ बजाऊँ और दूसरो ऊपर सें धरकें इशारे सें बदा दव, जीसें गरय में अड़ों डंगरा फुट गव और ऊँट अच्छो हो गव। एक मूरख आदमी ने देख कें सोच लइ कै हम भी ऐसइ औखद करें। एक बेरी की बात के एक आदमी के गरय में सांसऊँ को खता हो गव मूरख आदमी नें जेसइ ऊँट की नांइ पथरा से गरौ दबाव सौ बिचारे आदमी की जान कड़ गइ। एइ सें कइ जात के हर काम खों सोच समझ कें करबो अच्छो होत।

सूचक क्रमांक – 11
श्री रूपनारायण मिर्चवारा, जिला – ललितपुर, उत्तरप्रदेश

सूचक क्रमांक – 12

मालिक मैं अनपढ़ आदमी हों का कर सकत हों। पर हाँ जो कछू पुराने आदमियन सें सुनौ हें ऊए मैं केत हों। बब्बा कत ते कै गढ़पैरा गढ़ के राजा ऊदनशाय मुत्तक अच्छे हते। जो बुंदेलखण्ड है इते पैलें कोनऊँ रजवाड़ो नइ हतो। राजा ऊदनशाय बड़े धरमात्मा हते। परमेश्वर कों पेंचानत ते। अब तौ राजन नें धरम कों धोकें पी लव है। राजा ऊदनशाय के राज में कोनऊँ दुखी नइ हतो। परजा की बऊ बिटिया कों अपनी मताइ बिटिया मानत ते। झूठ बोलबे वारन् की बे जबान खिचवा लेत ते। बूड़े, बारे, ऊँच नींच सबइं सें प्रेम सें मिलत ते। उनके पुन्न परताप सें परजा सुखी हती। एकबेर बे अपने किले की भीत पे ठांड़े हते। चारऊँ तरप चितैरय ते। इतेक में मोती तला में सपरत एक औरत पै संजोग सें राजा की नजर पौंची। नजर परत नइ उनकों गोली सी लगी। बोले राम राम इन आँखन कों का ऐसों देखो चइये। दो सुइएं मँगा कें अपनी दोऊ आंखें फोंर लइं। साँची–झूँटी तो देखबे बारे जानें पर सुनीं सुनाइ कै रय के जेसइ

उननें आँखें फोंरी भगवान ने उनके ऊपर सुन्ने की बरसा करी। ऐसे आदमियन कों धन्न हैं जो इतेक चरित्रवान हैं। राजा की आँखें जैसी की तैसीं हो गइं फिर उननें मुलक पुन्न धरम करो और परजा कों सुखी बनाव। विधाता की गति कों कछू नइं कै सकत हैं। राजा के इन गुनन की परसंशा दिल्ली के बादशा नों पोंची। कै ऊदनशाय के इते सुन्ने की बरसा भइ। बादसा अपनी फौज संग्गे ऊदनशाय के इते पोंचे। अकेले ऊदनशाय के सैनकन नें किले के भीतरइ लरबै की तैय्यारी कर लइ। जँगा जँगा मुत्तक बड़ी बड़ी तोपें लगा दइं। बड़े–बड़े गोलंदाज बिठा दय फिर ऐसी लराइ भइ कै जौंन मैदान पै दुश्मन की फौजें हतीं, गोला ऐसे गिर रय ते कै सिपाइयन के चिथड़ा उड़ जात ते।

बड़े लोग कत हैं के ऊदनशाय जीत गय अकेले घर के आदमियँन ने उनें हरबा दव होतो। ऊदनशाय कों जैसइ जो रहस्य कौ पतौ चलो वे भोत गुस्साँ भय। ऊँनें भेदी खों बंदी बनाव। ऊ भेदी मंत्री सें जब बेर–बेर पूछो जा रव तो कै दुश्मन कितै हुइये तो कत तो कै किपे पै चढ़ रव हुइए, कभऊँ कत तो के किले पै चढ़ चुकौ हुइए, कभऊँ कत तो किले पै चढ़है और कभऊँ कत तो कै किले पै चढ़ चुको हुइए। भेदी मंत्री की ऐसी बातें सुनकें राजा खूबइ हँसौ काय के ऊनें अपने दीवान खों पोंचा कें ऐंगर के राजा की सेना बुला लइ हती और दोइ तरफ सें घेर कें बादशाय खों बंदी बना लव तो। कत हैं कै जौंन पै भगवान की किरपा होत है ऊको कोऊ कछू नइं बिगार सकत।

कहानी

भोत पुरानी बात है के एक गाँव में एक भौत गरीब आदमी रहत तो। वो दूसरन की मजूरी कर–कर कें अपने परिवार का पालन करत तो। एक दिनां बो मुखिया के इते हर हाँकन गवो और जब ऊनें खेत में जोतबो शुरू कर दयो तो जोतत उए खेत में एक सोने की मुहर मिली। मुहन ऊनें दुका लइ। जीसें काऊखों इको पतो न चले, और जब बो खेत से हर ढील के घरें आओ सो अपनी लुगाइ सें बोलो के आज हमें मुखिया को खेत जोतत में मुहर मिली। सो ऊकी लुगाइ बोली कै अब अच्छो रखो इसें अपनी गरीबी दूर हो जैहे और काऊ की मंजूरी न कन्नै परै, और अपन को परिवार खूब अच्छी तरा सें रै। ....

सूचक क्र : 12
ओमप्रकाश, वर्तमान रेल्वे कालोनी, मऊरानीपुर, झांसी, उत्तरप्रदेश

सूचक क्र – 13

मालक हम अनपढ़ आदमी का कह सकत। पर जो कछु हमेन पराने आदमियन सें सुनों है बाये हम कहत हैं। बाबा कहत ते के गढ़पहरा के राजा ऊदनशाय भोत अच्छे हते। जा बुन्देलखण्ड है इते पैल कोनऊँ रजवाड़ा नइं हतो। राजा ऊदनशाय बड़े धरमात्मा हते इश्वर को पेंचानतते। अब तो राजन् ने धरम को धोय कें पी लव। राजा ऊदनशाय के राज में कोऊ दुखी नइं हतो। जनता की बहु बेटियन कों राजा अपनी माँ बिटिया की तरह मानते हते। झूठ बोलवे बालन की जीभ खिंचवाय लेत हेते। बूढ़े बच्चन ऊँच–नीच सबसे अच्छी तरा से मिलत हैं। उनके धर्म पुन्न सें जनता सुखी हती। एक बेर वे अपनी किले की दिवाल पै ठाड़े हते। चारऊ तरफ देख रय ते। के इतने में मोतीताल में सपरत एक जनी पै संजोग से राजा की निगाह पर गइ। निगाह के परतइ खन उनकें गोली सी लगी। बोले राम–राम जे आँखन कों ऐसो नइं देखें चइंये तो। उनने दो सुइ मंगाय कें अपनी आँखें फोर लइं। झूठी सांची तो देखवे वारे जानत हम तो सुनी सुनाइ कै रय के जैसइं उनने अपनी आँखें फोर लइं। झूठी सांची तो देखवे वारे जानत हम तो सुनी सुनाइ कै रय के जैसइं उनने अपनी आँखें फोरी तो भगवान ने खुश होयके उन पै सोने की बरसा करी। ऐसे आदमियन कों धन्न है जो इतने अच्छे हैं। राजा की आँखें जैसी की तैसी होय गइं उनने फिर धरम पुन्न करो और प्रजा कों भोत सुनी बनाव। विधना की गत कों को जानें राजा के इन गुणन की प्रसंसा दिल्ली के बादशाय लौं पोंच गइ के ऊदनशाय कें इते सोने की बरसा भइ। बादशाय अपनी फोज लेकें ऊदनशाय कें पौंचे। अकेले ऊदनशाय से सैनकन ने किला के भीतरइ भीतर लड़वे की पूरी तैयारी कर लइ जगा–जगा पै गुर्ज पै तोंपे लगवा दइं। बड़े–बड़े गोलंदाज बैठाय दय। फिर ऐसी लड़ाइ भइ के जौंन जगा पै दुश्मन की फौजें हतीं गोला ऐसे गिरत ते के सिपाइयन के लत्ता उड़ जातते।

बड़े आदमी कहत कै ऊदनशाय जीत गय अकेलें घर क भिदियंन ने उन्हें हरवाय दय होते। ऊदनशाय कों जैसइ जा पता चलो वे भोत गुस्सां भय। उनने भिदिया मंत्री कों पकड़ाय लय। लब बा भिदिया सें बेर–बेर पूछी जा रव हतो के दुश्मन कहाँ है तो वो कहत तो कैं किला पै चढ़ रव होय कबहुं कहत तो किला पै चढ़ है। और कबहुं कहत तो के किला पै चढ़ गव होय। भिदिया की ऐसी बातें सुनकें राजा खूब हँसे काय सें उनने अपने दीवान कों भेंज के पास के राजा की सेना बुलाय लइ हती। और दोऊ तरफ सें घेर के बादशा को बन्दी बनवाय लव हतो। कात हैं के जापे भगवान की कृपा होत है, बाको कोऊ कछू नइं कर सकत।

कहानी

एक काछी माते हते। वे कछवारी में परवा सें पेड़न में पानी दे रय ते। तो उते से एक ठाकुर निकरै। वे काछी मातें से बोले काय माते कुँआ में से पानी को भर देते है। काछी माते बोले बाप तुमाय। तो ठाकुर बोले हमाय बाप कुआ में से पानी भरत हैं तो उनें ठंड नइं रइ। काछी बोले बड़े बार के पीरा हो तो उड़ा दो पली। ठाकुर ने पल्ली ल्या कें कुआ में डार दइ। जब फसल तैयार हो गइ तो ठाकुर आय और काछी से बोले काछी माते फसल आधी आधी करा। काछी माते बोले कि तुमने मेहनत करीं? बाय में जो आधी–आधी करें। ठाकुर बोले हमाय बाप कुँआ में से परवा भरतते। काछी माते बोले हमन करें पंचायत लगा लो पंचन ने ठाकुर के पक्ष में फैसला दे दव। दूसरी साल जब ठाकुर साब काछी माते के खेत से निकरे तो काछी माते ने डरा के दूर से कै दइ के ऊतइ ऊतइ। ठाकुर साब उतइ से लौट गए। जब फसल दुबारा तैय्यार भइ तो ठाकुर फिर बटवारे के लाने आ गए। फिर पंचायत लगी। काछी बोले के हम तो जावे के लाने कइती के ऊसइं ऊसइं। ठाकुर बोले हमने समझी के परइ साल घांइ। तब फिर से फसल आधी–आधी बटी और काछी ने ठाकुर सें बातइ करवो छोड़ दव।

सूचक क्रमांक – 13
सुरेन्द्र सिंह सेंगर, छिरिया, रेंढर, जालौन, उ.प्र.

सूचक क्रमांक – 14

मालक में अपढ़ा आदमीं का कर सकत हो, पै हाँ जो कछू भी मैंने बूढ़े लोगन सें सुनों हतो ऊखें कहत हों। बब्बा कहत ते की गढ़पहरा गढ़ के महाराज ऊदनशाय बहोत बढ़िया हते। यो (जो) बुन्देलखण्ड आय इते पेहला कोऊ रजवाड़ा न हतो। राजा ऊदनशाय बहात धरमात्मा हेते, भगवान खें जानत हते। अब तो राजन नें धरम खें धोकें पी लव है। महाराज ऊदनशाय के राज में कोऊ दुखी न हतो। परजा की बहू बेटी को राजा माँ बहिन की तरह मानत ते। जो कोऊ झूठो बोलत हतो उनकी वे जीभ निकरवा लेत ते, बूढ़ो लरका, छोटो बड़ो, सबइ सें वे बड़े प्रेम सें मिलत ते। उनके पुन्न परताप सें परजा बहोत सुखी हती। एक दइंयाँ वे अपने किलो की भिटिया पै ठाड़े हते और चारऊ ओर कें देखत हते की इत्तें में मोती तला पें सपरत भयी एक लुगाइ पै संजोग सें राजा की नजर पर गयी। ऊखें देखतनइं उनखाँ गोली से लगीं। बोले इन हे राम आँखन खें का ऐसऊ देखने हतो। दो सुइं ल्याव और बतात हैं कि उननें अपनी दोऊ आँखी सुइंयन से फोर लइं हतीं। झूठी ओर साँचों जिनने देखो है बेइ जानत हैं पर महू तो सुनीं सुनी बातन खों कहत हों कि जैसइ उननें सुइं मँगा कें अपनी आँखी फोरी

भगवान नें खुशी होंके उनपे सोनों की बरसा करी। कि ऐसे आदमी खें धन्न है जो इत्ते चरितवान् चाल–चलन के अच्छे हैं। राजा की आँखीं जैसीं हतीं ऊसइ हो गइ। उनने फिर ओरऊ पुन्न धरम करो ओर परजा को भोतइ सुखी बनाव। भगवान की गति को जानें राजा के इ गुनन की बड़ाइ दिल्ली के राजा लौं पोंची कि ऊदनशाय के इते सोंने की बरसा भइ है। बादशा अपनी फौज फाटे समेत ऊदनशाय के इते पोंचो, अकेलें ऊदनशाय के सिपाहँन नें किले के भीतरइ लड़ें की पूरी तैयारी कर लइ हती जहगाँ जहगाँ पै गुरजन पे तापें धरवा दइं बड़े–बड़े तोपची बिठवा दय फिर ऐसी लड़ाइ भइ की जौंन तरफ खें बैरी की फोजें हतीं गोला ऐसे गिरत हते के सिपाहन के लत्तेऊ उड जात ते।

बूढ़े आदमी बताऊत हैं कि ऊदनशाय जीत गय हते पै घर को भेधिंया ने हरवा हव हातो। अकेंले ऊदनशाय खें जैसइ जो पता लगो तो ऊ वहोत नाराज भव। ऊनें भेदी खें बन्दी बनाव। ऊ भेदी मंत्री सें जब कइ दइयाँ पूछो जात की बैरी कहाँ होहे। ऊ कहत तो की ऊ किले पै चढ़त होहे, कभऊँ कहत तो कि किले पै चढ़ है और कभऊँ कहत तो कि किले पै चढ़ गव होहे। बातें सुनके राजा खूब हँसो काय की ऊनें अपनी दीवान खें पहुँचा खें नींगर के राजा की सेना बुला लइ हती और दोऊ कोद सें घेर कें दिल्ली के राजा खें बंदी बना लव हतो। एइ सें कहत हैं की जेपे भगवान सूदो है ऊको कोऊ कछू नहीं बिगार सकत है।

सूचक क्रमांक – 14
श्री सूरज सिंह यादव, अकठोंहा, हमीरपुर, उ.प्र.

सूचक क्रमांक – 15

मालक में अपढ़ा का के सकत हों। पै हाँ जो कछू मैंने पुराने लोगन से सुनों है सो आइये कत हों। पर बब्बा हरें कतते कै गढ़पैरा के राजा ऊदनशाय भोतइ नोनें हते। जो बुन्देलखंड है, इते पैलां कोंनंऊ रजबाड़ो नइं हतो। राजा जू ऊदनशाय भोतइ धर्मात्मा हते परमेसुर खीं पैंचानत तै। अब तो राजन ने धरम खों धोकें पी लव हैं राज ऊदनशाय के राज में कोऊ दुखी न हतो। परजा की बऊयें बिटियन खों राजा अपनी मताइ बिटिया जैसो मानत ते। लाबी कैवे बारन की वे जीब तनबा लेत ते। बूढ़ो, बारो, ऊँच नीच सबइ सें बड़े प्रेम से मिलत ते। उनइं के पुन्न परताप से परजा सुख में हती। एकबेर बे अपने किल की भींट पै ठांड़े हते। चऊ तरफा देखत ते कि एतेक में मोंती तला में सपरत एक जनी पै संजोग से निगा परी। निगा के परतन उनें तो गोली सी लगी। बोले राम–राम इन आँखन खों का ऐसऊ आ देखबों बदो तो। दो ठऊआ सूजा मंगा कें उनने अपनी दोइ आँखें फोर लइं हती सांची झूठी तो देखबे बारे जानत हुइयें पै मै

तो सुनी सुनी आ केरब। इतॉय उनने जैंसइ सूजा मंगा कें आंखें फोरी भगवान नें परसन्न होकें उन पैं सोंने की बरषा करी। सांसऊँ ऐसे मानुष धन्न है जो इतने शुद्ध कोंठा के हैं। राजा की आँखें बेसइ कीबेसइ हो गइ। उनने फिर से पुन्न धरम करो आर परजा खों भोत सुखी बनाब। विध की लीला खों का के सकत। राजा के इन गुनन की परशंसा दिल्ली के बाशसा लो पौंची के इते सोनों बरसो सो बाशसा अपने फोज पाटे सेत ऊदनशाय के इते पोंचो पै ऊदनशाय के सिपाइयंन ने किले के भीतरइं लड़बे की पूरी तइयारी कर लइं जंगा–जंगा गुरजन पै तोपें लगा दइं बड़े–बड़े गोलदाज बैठा दय। फिर ऐसो जुद्द भये की जी मैदान पै दुश्मन के सिपाइ हते ऊते ऐसे गोला गिर कै सिपाइंयन क लत्ता उड़ जात ते। बड़े बूढ़न को केबो हे के ऊदनशाय की विजय भइ पै घर के भेदी ने उनें हरबा दव होते। ऊदनशाय खों जैसइ इ रहसकी भनक परी वे भोतइ गुस्सा भय। उननें ऊ भेदी खों कैद कर लव। ऊ भेदी सें मंत्री से जब बेर बेर पूंछबे के दुश्मन किते हुइये, तो वे केवे कै किले पै चड़त हुइये, कबऊ कैवे के चढ़े, तो कबऊ कैवे के किले पै चढ़ चुको हुइये। ऐसी बातें सुनके राजा भोत हंसे काय के उनने अपने परोस के राजा की सैना पेलइं बुला के और घेर कें बाशसा खों बंदबा लब तो। केत हें के जी पे इसुर की किरपा होत हें सो ऊको कोऊ कछू नइं विगाड़ सकत।

कहानी

एक राजा ते, उनके लरका एक तों उनने सेची मैनें कोइ तीरत नइं की सारती बोले केलरका सियाना हो गओ। राजपाट लरका खों सौंप दे। आप तीरतों कों चले जाव। राजा चले गय। जो खेती के हरायते मनाय जात हैं। बगीचा में कोहल बोली। राजा को लरका बोलो के जो कौन जानवर हैं बोले के कोहल है जा एके बोले सें का होत हैं एके बोले सें बड़ा सुभ्भ होत हैं जेको जो कछु पुन्न करने होय तो सुभ्भ होत हैं राजा के लरका ने खजानें से पइसा निकार कें गरीबों खों दव। पिताजी उनके तीतों से आय। उते के गरीब बड़े आजाद हो कय। जब राजा आय तो उनने खजांची से हिसाबलव। तुम्हारे लरका ने जिनो से पइसा निकार कें गरीबों खों बाँट दव। राजा नें 12 साल के लानें लरका खों देश से निकार दव। जब लरका चलौ, कोइ कपरा नइं, कोइ घोरा नइं, पैदल निकार दव। कोहला बोलो ए कोहल तें पाप की भागी हैं तें उदना कऊँ नें बोलती तो राजा को लरका घर सें नें निकारो जातो। कोहल ने कोहला से कही के हमाव पाप दूस कैसें हुइये। कोहला बोलो 12 साल तें संग दे जब तुमारें पाप दूर हुइये। कोहल इस्वर की नाँव लेंके बोली इसुर हमें मानुस जोनी दे। कोहल ने इतनी केतों बा सतरा साल की लरकनी हो गइ। ऊ लरका के लिंगा पोंची। भइया कहाँ जा

रये हो ? हमाय बाप नें घर सें निकार हमें घर सें बायरे कर दव। लरकनी बोली भइया संगे लुआय चलो। हम तुमें नइं तुआय जा रये संग्गें। तुमाय बारे आ जैहें तो हमें परेसानी हुइये। बाइ बोली के हम तुमें बारा साल संग देहें। जब दोइ चले एक बावरी के लिंगा एक पेड़ो हतो ओके छाँयरे में दोइ बैठ गय। कुँआँ में साँप मैंदरे कों लीलवे के लाने टइत रि तो। ऐने जब देखों तो इनने अपने जाँग को माँस निकार कें बाबरी में डार दव। सरफ ओके खून खों सूसन लगो इतनें में मेंदरे नें भग लव। जब अपनी मताइ कं पौचो के आज हमाये प्रान बच गये। अरे बेटा तुत तो पाप के भागी हो गये बो लरका बारा साल के लानें देस से निकारो गओ है। जब बौ गैल निगहै तो ओके गोड़े दुख हैं। मैदरो बोलो कैं मतारी हमार पाप कैसें दूर हुइये। बारा साल संग दे, तुमाओ पाप हल हो जैहें। लोटपोट कें मैदरों बरउगा बन गव। जब राजा के लरका के लिंगा पोंचो। तुम काँ जा रय हो भइया। हम भइया देस की चिंता खौं जा रये हैं। मैदरों बोलो हमें लुआय चलों भइया हम बारा साल संग देहें। सरप अपनी माता के पोंचों। आज तो माता में भैत आनंद में हैं। काय बेटा। मंदरों खों टर्र रय ते, एक गैलरे ने अपनो माँस उखार कें डार दव बावरी में अरे बेटा बड़े पाप के भागी हो गय तुम। ऊ लरका बारा साल के लानें ऊ खों देस निकारो हैं, माता हमारो पाप कैसें हल हुइये। जाव बेटा बारा साल संग दे। शबर सें नाव लेकें सरफ मान्स हो गव। लरका के पास पोंचों और वे चारऊँ मिलकै आँगें चले। उन चारइयन नें ऊ लरका की बारा साले भौत सहायता करी और उये अंत में राजपाट दुआ कें वे तीनइं जनें अपनी अपनी जोनी में चले गये।

सूचक क्रमांक – 15
श्री प्रयागदास दुबे, डुमर, जिला –दमोह, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 16

मालिक में अपढ़ा हों का कर सकत हों। जो कछु पुराने लोगों से सुनी है बइ हम कत हैं। बब्बा केत ते कै गढ़पैरा के राजा ऊदनशाय भोत अच्छे हते। जो बुंदेलखण्ड है इते कोऊ रजवाड़ो नइं हतो राजा ऊदनशाय बड़े धर्मात्मा हते। परमेश्वर खों पेचानत तें। अब तो राजन नें धरम खो धोकें पी लव हैं। राजा ऊदनशाय के राज में कोऊ दुखी न हतो। प्रजा की बऊ बिटियन खों राजा अपनी बऊ विटिया मानत ते। झूठी बोलबे बारे की बे जीभ खीचबा लेत ते। बूढ़े बच्चा ऊँच नीच सबइ से प्रेम सें मिलत ते। उनके पुन्न प्रताप से प्रजा सुखी रत ती। एक बेरां वे अपने किले की भंट पै ठाड़े हते। चारऊ तरफ देख रयते इतने में मोतीताल में सपरइ एक औरत पे राजा की नजर परी। नजर के परतइं ऊखों गाली से लगी बोले राम राम इन आंखों को ऐसो नइं देखने हतो। दो

सूजें मंगबा कें अपनी दोइ आंखें फोर लइं। जैसे कें उनने आंखें फोरीं भगवान नेखुश होकें उनपे सोनी की बरसा कर दइ। ऐसे मानुस धन्य हैं जो इतने चरितबान हैं। उनकी आंखें जैसी की तैसइ हो गइं। उनने फिर पुन्न धरम करो। प्रजा खों उनने भोत सुखी बनाब। विधाता की गती खों कछू नइं कै सकें। राजा के इन गुनन की प्रशंसा दिल्ली के बादशाय नो पांची। ऊदनशाय के इते सोंने की बरसा भइ बादशाय अपनी फौजे लेकें ऊदनशाय के इते पोंचों। ऊदनशाय के सैनिकों ने भीतरइं लड़वे की तैयारी कर लइ हती। जगां जगां गुरज पें तोपें लगा दइं तीं। बड़े–बड़े गोलंदाज बैठा दय ते फिर ऐसी लड़ाइ भइ कि जे मैदान पै शत्रु की फौज हती के उते ऐसे गोली गिरे के सिपाइयों के लत्ता उड़ गये।

बड़े लोगों को केबो है कै ऊदनशाय जीत गव पर घर को भेदी उनें हरवा देतो। ऊदनशाय खों जैसेकी इ बात को पतो चलो वे भोत गुस्सा भय उननें भेदी खों बन्दी बनाया। ऊ भेदी सें बार–बार जब पूंछ रय ते कै दुश्मन किते हुइये तो वो केत तो के लि पै चढ़ रव हुइये। कभी केत तो के किले पै चढ़ेगा। कभी केत तों के किले पै चढ़ चुकों हुइये। भेदी की ऐसी बातें सुनकं राजा भोत हँसो। राजा ने अपनी दीवान खों भेज कें पास के राजा की सेना बुला लइ ती। दोनों तरफ से घेर के वादशा खों बन्दी बना लव तो। जि पें इश्वर की कृपा होत है ऊको कोइ कछू विगाड़ नइं सकत।

कहानी

चार भइया हते तो वे बिगर बाप मताइ के हते। तीन की शादी हो गइं तीं एक की शादी नइं भइ हती। बे अपने मेनत मजूरी करत ते। कुछ दिन मेनत मजूरी करत करत हो गय। एक दिनां उनको बड़ो भइया बोलों हम तो न्यारे हो रय। तो मझलो भइया बोलो के हम भी हो रय। मुहल्ला बस्ती के बोले कारे तुम न्यारे हो रय तो इ हल्के खों रोटी को देय। कइ एक काम करों कि जो एकएक दिनों तीनइ भइयों के खेय। एक दिनां गव सजली भोजाइ के, भाभी मोय कलेबा दे दो। भाभी बोली क तननक जो आंगन लीपबे रव है, फिर दे रइ। बो केन लगों के तूं तो जल्दी से जल्दी दें मोकों। सजली भौजाइ बोली की कौन तुमें बेला की कली आ रइ हे से बड़े घोड़ा पै चढ़े आ गय ऊनें गड़इ धरकें बो उते से आ गव। और बो बायरें चल दव फिर ऊने एक महात्मा की धूनी टारी। महात्मा ने पूंछी के तू कछु भी मांग ले तब ऊने बेली की कली मांगी बाये बेला की कली सात समुंदर पार मिली और बो खुशी खुशी घरे आव।

सूचक क्रमांक – 16
श्री धीरा, बंदरावठो, तहसील – कुरवाइ, विदिशा, म.प्र.

सूचक क्रमांक — 17

मालिक मैं अनपढ़ आदमी हों, का कर सकत हैं। बूढ़े पुराने लोगन से सुनी है बाये कहत हैं। बाबा कहातै के गढ़पहरा के राजा बहोत अच्छे आदमी थे। जी तो बुंदेलखंड है इयाँ पैले कोऊ रजवाड़ो हतो नइयों। ऊदनशाय बड़े धर्मात्मा थे। वे परमेश्वर को भोत मानतै। आजकल केराजन ने धर्म धोय के पी लव। राजा ऊदनशाय के राज में कोऊ दुखी नइं रहतो। प्रजा की बऊ विटियनें कों राजा अपनी मां बेटी की नाइं मानतै। झूठ बोलबे वारन् की लीभ खिचवाय लेतै। बूढ़ा बच्चा ऊँच नीच सिबतें प्रेम सें मिलतै। उनकें पुन्न प्रताप तें प्रजा सुखी रहाती। एक बेर किले की दीवाल पै खड़े देख रयते के इतनें में मोतीताल पै एक जनीं नहाय रइ पे निगा परी। निगा परतइ गोली सी लगी। और बोले राम राम इन आँखन कों ऐसो देखो चइये यें। और बोले दो सुइं ल्याव और सुइ मंगाय के दोऊ आँखें फोर लइं। साची झूठी तो देखबे बारे जानतैं पर सुनी सुनाइ कहत हैं। जैसइ बिननें सुइ से आँखें फौरी के खुश हैव कें भगवान ने सोंने की बरसा कर दइ। धन्न है ऐसे आदमियों कों के बे इतने चरित्रवान है और राजा की आंखें जैसी की तैसी ह्वै गइं। फिर बिननें धरम पुन्न करो और जनता को सुखी बनाव। इश्बर की गति को जान सकत है। राजा के इन गुनों की प्रशंसा दिल्ली के बादशाह तक पोंच गइ। के ऊदनशाय के इते चढ़इ कर दइ। लेकिन ऊदनशाय की फौज नें किले भीतरइ लड़बे की पूरी तैयारी कर लइ। ठौर–ठौर पै बुर्जों पै तोपें लगवाय दइं। बड़े–बड़े गोलंदाज बैठाद्दय। फिर ऐसी लड़ाइ भइ के मैदान में गोला गिरैं सब फौज के लत्ता से उड़त दिखावें।

बूढ़े पुराने कहत हैं के ऊदनशाय जीत तो गय लेकिन घरे के भेदी ने हरवाय दय होतय। ऊदनशाय कों जैसइं मालूम परी बोतइ गुस्सा भव और भेदीये बन्द करबाये दव। जब भेदी मंत्री से बेर बेर पूछों गव के दुश्मन कहाँ होयगो तब बू कहत तो के किलै पैं चढ़ रव होयगो, कबऊँ कहत तो के किले पै चढ़ चुकों होयगो, कबऊँ कहे के किलै पै चढ़ेगो। राजा भेदी की ऐसी बातें सुनकें बहोत हँसे कायसें के बिननें अपनी दीवानें भेजकें ढिंगा के राजा की फौजें बुलाय लइं और दोऊ लंग सें घेर के राजा कों बन्दी बनाय लव। कहत हैं के जा पै इश्वर की कृपा होत है बाको कोऊ कछू न बिगार सकत।

कहानी

एक बेर एक ठाकुर ने बंगला बनबाओ छैः सात कोरिया मजूरी पै आय पहलें बगला कौ ठाट बनों फिर बाके ऊपर घास (फूस) तिरौ फिर बातरें बधी बाके बाद

तिवतरी बधन लगी कोरियन नैं सोची जी ठाकुर तौ जानें के बैर बातरें बधवायगौ ठाकुर घर में घुसे इतनें मों कोरिया भाजिगए जब बेइ कोरिया एकशाल वादि बइ रस्ता निकरे बिननें बइ जगह पै देखो की बंगला छवि रहो है आपस में कहान लगे अपुन अच्छे रये कि भजिगए नहीं तो शाल विधे राहत ते।

सूचक क्रमांक – 17
श्री रजनसिंह तोमर, निवाजी का नुरा, मुरैना, जिला – मुरैना, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 18

मालक मैं अनपढ़ आदमी का कस सकत हैं। जो कछु पुराने आदमों सें सुनों हैं सो आपको सुनाय देत हैं। बाबा कहतै गढ़पहरा के राजा भोत बढ़िया आदमी हतै। जो बुंदेलखंड है इते पहलें कोनऊँ रजवाडो ने हतो। राजा ऊदनशाय बड़ै धरमात्मा हतै। भगवान कों जान हतै। अब तो राज ने धरम कों धोकें पी लव हैं। राजा ऊदनशाय के राज में कोऊ दुखी नइं हतो। प्रजा की बहू बिटियन कों अपनी बहू बिटियन जैसे मान्त हतै। झूठ बोलवे वारे की वे जीभ खैंच लैतय। बूढ़े वारे ऊँच नीच सबके लय प्रेम से मिलत हतै। उनके पुण्य प्रताप से सुखी हती। एकबार वे अपनी पद्दिया पै खड़े हतै। चारों तरफ देख रय थे। कि इतने में मोतीताल में सपररइ एक जनीं पें नजर परी। नजर पड़तोंइ उनके गोली सी लगी। बोले राम राम ऐसो कबऊँ नइं देखो चइये। बिननें सुइं मँगाय अपनी दोऊ आँखें फोर लइं। झूठी सांची तो देखवे वारे जानें हम तों सुनीं सुनीं बताऊत हैं। जैसेइ बिनने आँखें फोरी उनपै इश्वर ने सोनों बरषाव। धन्न हैं ऐसे आदमियन कों जो ऐसे चरित्रवान हैं। राजा की आँख जैसी की तैसइ ह्व गइं। बिनने फिर धरम पुन्न करों प्रजा को सुखी कद्दव। इश्वर की गति को कोऊ न जान्त। के राजा गुणन की प्रशंसा दिल्ली के बादशाह लौं पोंची। के ऊदनशाय के इतें सोनों बरसों है। बादशाह अपनी फौज लेके राजा के इते पौंचे। परन्तु ऊदनशाय के सैनिकों ने भीतरइ लड़वे की तैयारी कर लइ। फिर ऐसी लराइ भइ कैं जोंन जगां पै दुश्मन की फौज हती उते ऐसे गोला गिरे के सिपाइयन के झन्ना उड़ गये।

बड़े आदमी कैरय के ऊदनशाय जीव गव पर घर के भेदी न हरवाय दव होते। जब ऊदनशाय कों जा बात को पता चलौ तो वो बड़ो गुस्सां भव। वानें भेदी चुगलखोर कों बन्द कर लव। वा भेदी मंत्री सो जब बेर बेर पूछो जाय रब हतो कै दुश्मन कितै होयगो वो कह रव हतो कै किले पै चढ़ रव होयगो। कबहुं कात तो के किले पै चढ़ेगो। कबऊँ कात चढ़ चुका होयगा। भेदी की ऐसी बाते सुनके राजा खूब हंसो। काय सों

के बान अपने ढिंगा के राजा की सेना दीवान को भेजके बुलाय लइती और बोर दोऊ लंग घेरके राजा को भेंड लव हतो। कात हैं के जा पै इश्वर की कृपा होत है उसकी कोऊ कछु न बिगार सकत है।

कहानी

एक सूरा रय, एक बहरा, एक लंगड़ा, एक नंगा रय और एक लूला रय। जे सबरे चारऊ पाँच चोरी करवे को निकरे। जब सुनार के दरवाजे के पास पोंचे तो अंधो बोलता ह के रुक जाव सब जनें कै हमें कोऊ दिखाइ दे रव। तो इतनें में बहरा बोलो के खर खर की आवाज तो हमऊँ आय रइ है तो लूला बोलो आन दै दो–दो हाथ उड़ेंगे। इतनें मैं लंगड़ा बोलों के भज लै इनको कछू विश्वास नाइं तो नंगा बोलों का लुटवाइ देव का मिल जुर कैं।

सूचक क्रमांक – 18
श्री सरनाम बाबू शर्मा, इमलेंडा, पिड़ौरा, जिला – भिण्ड, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 19

साब में अपढ़ आदमी हों का के सकत जो कछू मैंने बूढ़े लोगन सें सुनो है बाये कत। बब्बा बताऊयत ते राजा ऊदनशाय भोत अच्छे हते। जो बुन्देलखंड है हियाँ पैलें कोनऊँ राज नइं हतो। राजा ऊदनशाय भौत धरमात्मा हतै। भगवान खों जानत ते। अब तो राजन ने धरम कौ सत्यानास कर डारो। राजा ऊदनशाय के राज में कोऊ परेशान नइं हतो। जनता को बऊ बिटियन खों राजा अपनी मताइ बिटियन की तरै मानत ते। झूठी बोलवे वारन की जीभ खिचवा लेते ते। बूढ़े बच्चा हल्के बड्डे सबऊ सें वे प्रेम सें मिलत ते। उनके पुन्न परताप सें जनता चैन में हती। एक दफे वे अपने किले की भीत पैं ठाड़े ते, कै इत्ते में मोतीताल में सपरत भइ एक जनीं के ऊपर राजा की नगिा पोंची, देखतनइं उनें गोली सी लगी। राम राम कैकें कन लगे जै आँखन का ऐसो देखने चइये। दो सूजें लियाव और कव जात है के बिनने अपनी दोऊ आँखें सूजन से फोर लइं। सच्ची झूठी तो देखवे वारे जानत हुइयें पर सुनी सुनायी बता रव। कै जैसइ उननें सूजें मंगवा कें आंखें फोरी भगवान ने खुसी होके बिन पै सोने की बरसा कर दइ। ऐसे आदमन खों धन्न है जो आचरन के इतेक पक्के हते। राजा की आंखें जैसी हतीं वैसइ हो गइं। फिर उननें पुन्न धरम करो और परजा खों भोतइ सुखी बनाव ईश्वर कीगति खों कछु नइं के सकत। राजा के इन गुनन की बड़ाइ दिल्ली के बासशा लो पोंची के

ऊदनशाय के नां सोने की बरसा भइ। बासशा अपनी फौज फांटे के संगे ऊदनशाय के ना पोंचों। लेकिन ऊदनशाय के सिपाइंयन ने किले भीतरइ लड़वे की तैयारी पूरी कर लइ। ठौर ठौर पै गुरजन पै तोपें लगवा दइं। बड़े बड़े तोपची बैठरवा दय। फिर ऐसी लड़ाइ भइ के जौंन मैदान में दुश्मन की फौजें हतीं, उते ऐसे गोला गिर रय हते के उते सिपाइंयन के लत्ता से उड़ रय ते।

बूढ़े लोगन को कैबो है के ऊदनशाय जीत गये हते। लेकिन जब उनें पतो चलो के घरइ के भेदी ने उने हरवा दव होतो तो वे भोतइ गुस्सा भय और बाये पकरवा कें बन्दी बना लव। बा भेदी मंत्री से जब बेर बेर पूछो जा रव तो के दुश्मन का हुइये तो बौ कत तो के किले पै चड़ रव हुइये। कबऊँ कत तो किले पे चढ़ हे तो कतऊँ कत तो किले प चढ़ गओ हुइए। बाकी ऐसी बातें सुनकें राजा खूबइ हँसे काय से उनने अपनइं दीवान खों भज के करके के राजा की फोज बुला लइ हती और दोऊ तरफ से घेर कें बाशसा खों बन्दी बना लव हतो। कइ जाव के जौंन पे भगवान की मेरबानी होत बीको कोइ कछू नइं बिगार सकत।

कहानी

एक पेड़े पै एक चिरैया को घेंसुआ धरो तो। बा में बाके बच्चा हते और बो पेड़ों गैल के करकेंइं हतो। बइ गेल सें रोजाना एक हाथी कड़त तो। वो बा पेड़े में टक्कर मारत जात तो जीसें बे बच्चा हिल जात ते। बिचारी चिरैया शाम कें अपनी चिरवा क आबे पे वा सें कत ती। तो चिरवा नें बा सें बताइ कै तें बाके घरे जाकें हतनीं सें ऊरानों दे आइये। और कै आइये के आस्ते सें समय जाँय तो अच्छी बात नइं तो लोगन–लोगन बिद जैयतो कठा सी फूठा जैय। जैसी बा नें सुनी तैसइ जाकें हतनीं खों सुना दइ। हतनी सुन कें गुस्सा में लाल हो गइ। कन लगी। बड़ो तेव लोग लात धर देय तो तैं न तेव लोग न तेव बच्चा सबकी चटनी बट जेये। बड़ी आइ उरानां देवे बारी, हट जासें। बिचारी चिरैया रोउत भग आइ और आकें सबइ विथा चिरवा खों सुनाइ। चिरवा नें कइ आज तगें चुन के लानें चली जा मैं देखत। टेम सें फिर हाती आव आर टक्कर मारी। चिरवा उड़ो सूंड के छेद में होंकें दिमाग में चल गव और भीतर काटन जीटन लगो। जीसें हाती के प्रान गड्ड बड्ड हौने लगे। बेहोश सो होके गिर गव और चिल्ल्यान लगो। चिल्लयाटो सुन कें हतनी दौरी आइ। लेकिन बाकी समज में कछू ना आय के का करौं। हाती सें पूछें भी तो वो मारे तकलीफ के कछू बता भी न पायें। जब बाकी समझ में आइ के चिरया को कछू करो करम तो नइया तब तक चिरैया भी आ गइ देख तनइ हथनी बाके पावन में लौट गइ और हाथी खों बचावे क लाने विनती करो तो चिरैया

कन लगी कै हमने कइ ते कै जा दिना लोगन बिद जैये तो कठा सी फट जेये। हतनी की विनती पै आखिर चिरैया ने चिरवा खों बुला लव। ऊ दिना से हाथी ने बा गैलइ छौड़ दइ। कइ जात है कै सरी बिरबाइ देखकें बापे लात पन धरो नइं तो हो सकत कांनऊँ सरो काँटो लग सकत।

सूचक क्रमांक – 19
श्री प्रभुदयाल दिनकर, सरसइ, भांडेर, जिला – ग्वालियर, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 20

मालक में अपढ़ आदमी का कह सकत हों, पर जो कछू मैंने पुराने लोगन से सुनीं ऊये कैत हों। दद्दा कत हते के गढ़पैरा के राजा ऊदनशाय भोतइ अच्छे हते। जो बुंदेलखंड है, इते पैलें कौनऊँ रजवाड़ो नइं हतो। राजा ऊदनशाय बड़े धर्मात्मा हते परमेश्वर खों चीनत ते। अब तो राजन् ने धरम खों धोके पी लव है। राजा ऊदनशाय केराज में कोंनऊँ दुखी नइं हतो। प्रजा की बहू बेटी ऐं, रजा अपनी मताइ, बिटिया मानत हते। लाबी कहबे बारे की वे जीब खिचवा लेत हते। बूढ़े, बारे, ऊँच, नीच सबइ सें वे प्रेम सें मिलत हते। एक बेर बे अपने किले की भीठ पै ठाडे हते। चारऊँ ओर देखत ते कै इतेक में मोततला में लहाय रही एक ओरत पै संजोग सें राजा की निगा परी निगा के परतइं उनें गोली सी लगी। बोले राम–राम इन आँखों खों ऐसो नइं देखने हतो और दो सूजों से अपनी दोऊ आँखें फोर लइं। साँची झूठी तो देखबै वारे जानें मैं तो सुनी सुनाइ कैत हों। कै जैसइ उननें आँखें फोरीं, भगवान ने खुशी होंकें उन पै सोनों बरषाव। धन्न हैं ऐसे आदमी जो इतेक चरित्रवान हैं। राजा की आँखें जैसी की तैसइ हो गइं। ओनें फिर पुन्न धरम करो और प्रजा को सुखी बनाव। विधि की गती खों कछू नइं के सकत। राजा के इन गुणों की प्रसंसा दिल्ली की बादशाय तक पोंची कै राजा ऊदनशाय के इते सोनें की बरषा भइ, बादशाय अपनी फौज लैकें ऊदनशाय के इते पौंचों। पै ऊदनशाय के सैनिकों ने पेलइं से किले के भतीरइ लरवे की तैयारी कर लइ हती। जगे जगे गुरज पै तोपें लगा दइं बड़े बड़े गोलंदाज बैठा दय, फिन ऐंसी लराइ भइ कै जौंन मैदान पे दुश्मन की फोजें हतीं, उते ऐसे गोला गिरे के दुश्मन के लत्ता उड़ गये।

बड़े लोग कैत हैं के ऊदनशाय जीत गय हते पै घर के भेदिया नें ओकों हरवा दव होतो। ऊदनशाय खों जैसइ जो भेद कौ पतौ चलौ, बो भोत गुस्सा भऔ। ओंने ऊ भेदिया मंत्री खों बन्दी बनाव। ऊ भेदी मंत्री सें जब बेर–बेर पूछी जा रइती कै दुश्मन किते हुइये बो कैत तो कै किले पै चढ़ रव हुइये, कबऊँ कैत तो कै किलै पै चढ़ेगो और

कबऊँ कैत तो कै किलै पै चढ़ चुको हुएये। भेदी की ऐसीं बातें सुनकें राजा खूबइं हँसो काये कै ओने अपने दीवान खों भेजकें पास के राजा की सेना बुलाइ हती और दो तरफ से घेर कें बादशाय खों बंदी बना लव हतो कैत हैं कै जौंन पै इश्वर की कृपा होत है बाको कोऊ कछू नइं बिगार सकत।

सूचक क्रमांक – 20
श्री मुरलीधर तिवारी, करेली, जिला – नरसिंहपुर, म.प्र.

सूचक क्रमांक – 21

मालक में अप्पढ़ आदमी क्या कर सकता हूँ, पर हां जो कुछ भी मैंने पुराने लोगों से सुना है उसी को कहता हूँ। बुड्ढा लोगन का कहना है कि गढ़पहरा गढ़ के राजा ऊदनशाय बहुत अच्छे थे। यह बुंदेलखण्ड है। यहाँ पहले कोइ रजवाड़ा नहीं था राजा ऊदनशाय बड़े पुन्नात्मा थे। भगवान को पिचानते थे। अब तो राजाओं ने पुन्न धरम को पी डाला है, खतम कर डाला है। राजा ऊदनशाय के राज में कोइ दुखी नहीं हता। प्रजा की बहु बेटियों की राजा इज्जत करता था। झुट्ठा बोलने वालों की राजा जीभ काट लेता था। बुड्ढा, बच्च, ऊच्चा, निच्चा सब से राजा प्रेम सें मिलता था। एक बार राजा किले की भींट पर खड़ा था कि मोती नाम के तालाब में आंग धो रही एक स्त्री पर नजर पड़ी, उनको धक्का लगा। बोले धिक्कार है इन आँखों को इस प्रकार नहीं देखना थां सच्चा झुट्ठा तो देखने वाले जानते हैं पर सुनी कहीं बातों से पता चलता है कि राजा ने सूजें मंगा कर अपनी आँखें फोड़ ली थी। उन राजा ने जिस बखत अपनी आँखें फोड़ी भगवान ने प्रसन्न होकर सुन्ना बरसाया। इस प्रकार के आदमियों को धन्य है, जो इतने चरित्रवाले हैं। राजा की आँखें पहले जैसी हो गइ उनने फिर से अच्छे काम किये पुन्न किये और प्रजा को बहुत सुखी बनाया। भाग्य की चाल को कोइ नहीं समझ सकता राजा के इन गुणों की बड़वारी दिल्ली वाले बादसा के यहाँ तक पहुँची कि ऊदनशाह के यहाँ सुन्ना बरसा। बादसा अपनी फौज के साथ ऊदनशाह के राज पहुंचा। पर ऊदनशाह के सैनिकन नें किले के भीतरइ भीतरइ लड़ने की तैयारी कर ली। जगे–जगे बुर्ज में तोपें लगाइं और बड़े–बड़े गोला दागनेवारे बिठा दिये। और इसके बाद इस प्रकार लराइ हुइ कि दुस्मनों के लत्ता उड़ गये।

बुड्ढा लोग कहते कि उद्दनशाह जीत गये पर चुगली करने वाले आदमी ने उनको हरा दिया होता ऊदनशाह को जैसे ही इस चुप बात का पता चला वह बहुत नाराज हुआ उसने चुगली करने वाले को कैद किया। उस चुगली करने वाले से

बार–बार ये पूँछा जा रहा था कि दुश्मन कहाँ पर होगा तो वह कभी कहता किले पर चढ़ेगा, कभी कहता कि चढ़ चुका होगा, कभी कहता चढ़ रहा है। भेदी की बातें सुनकर राजा बहुत हँसा क्योंकि उसके पास के राजा की सेना बुलाकर बादसा को पकड़ लिया था। कहते हैं जिस पर भगवान खुस रहता है, उसका कोइ आदमी कछु नहीं बिगार सकता।

कहानी

एक राजा के चार पुत्र थे। बड़े लड़के का नाम धरमा पहाड़ था। नित्य रोज अपना एक सूबा दान करने का उसका धन्दा था। बहुत रोज तक के दान करते भये आखिर रोज उनके घर–घर में विरोध होने लगा। घर भाइन–भाइन में विरोध होने लगा कि ये हर रोज दान करते हैं और कचेरी में न्याय करते हैं ओर इनका कोइ धंदा नहीं हे। इतनें भाइन में विरोध करके कोइ धंदा नइ करने का तब राजा ने देखा कि अब विरोध हो गया हमारे घर में अब चलो अपुन निकर के बनवास हो आये अब चलते–चलते राजा के पास जो धन आया था राजा के पास उनको भी दान करता चला। आखिर में राजा के पास कोइ चीज नहीं रहा। दान करने के लिये। राजा ने अपनी रानी को परट रख दिया वहाँ से कोइ गल्ला पानी लिया फिर राजा का दान करना चालू रहा। नित्य रोज। अब चलते–चलते बहुत दूर निकल गये पानी पियन कुँआ के पास गये जब पानी को देख रहे थे एक सुनार एक कोल्यहा (लड़ैया) शेर भी दिखा उसके कहा यहाँ तो तीन जन पड़े हैं में पानी कैसे पीयुं तो अंदर से वो तीनों ने आवाज लगाइ कि भइया हमें निकाल लों। इननें कहा कि मैं कैसे निकाल सकता हूँ पहले सुनार का निकारा फिर बाद में कोल्या को निकारा, दोनों ने मिलकर फिर शेर को निकारा अब चारों जन वहाँ रह चले। कोल्यहा और शेर तो जंगल की रास्ता पकड़ के भाग गये। सुनार और धरमा पहाड़ रहा दोनों साथ में चले तो जहाँ सुनार रहता था वहाँ पहुँचा। अब सुनार के यहाँ दो चार दिन रह चुका ऐसा करते– करते चंद रोज बिताये और वहाँ से राजा के यहाँ नौकरी लग गये। अब जब काम पैं चला तो उनको भैसी चराने का काम लग गया। अब भेंसी चराते–चराते बहुत दिन बीत गये। कोल्यहा मिला जंगल में उनकी जान पहचान फिर हो गयी। बोला बहुत दिनन बाद मिले आओ बैठो फिर दो लाल दिया उसके लाल पकड़ा और घर आया। तीसरे रोज शेर मिला शेर से भी पिचान भइ। तुम जितना चाहो जेवर जुड़व ले जाओ अब ये अपना घर मुहरा रख के भेंसी बांध दिया। अब एक दिन राजा की लड़की वो लाल को देख के अपने घर चली गइ और उसने घर में अपने मँडे थे। वो लड़की वो लाल को देख के अपने घर चली गइ और उसने घर में अपने माँ बाप को बताया कि हमारे भेंसी वाले के यहाँ दो लाल मँडे है। इतने

में राजा ने सोची कि ये लड़की क्या बता रह है। अब भेंसी चराने वाले कूं बुलाया वो पूंछन लगो कि– तूने लाल कहाँ से लाया कहाँ से लाया ऊके ऊपर जो बीती बात थी ऊनें बताया इतनें में लरकी ने हठ पकड़ी की हमारा स्वयंवर होना चाहिये अब राजा विचार में पड़ा कि नौकर के साथ कैसे वियाह दें। अब नोकर को बोलइये कि दो लाल और लाओ नइं तो तोप की टोंटी में उड़ा देंगे। अब वो भैंसी चरानें वाला लौट के आया और बोला कोल्यहा के पास और पूंछा कि भइया दो लाल और दे दो। कोल्यहा बोला कि मैं शंकर जी पास से लाया हूँ तू जाता है तो जा अब भैंसी की शंकर जी के पास गया। शंकर जी बोले भगवान के पास से लाया हूँ, भगवान जी बोले अब आये हो तो तीन ठऊआ ले जाओं। राजा के यहां आये राजा को बता दिये तो राजा ने अपनी लरकी हार दिया अब स्वयंवर रच दिये उनकी शादी हो चुकी बहुत दिन तक राजा के पास लड़की दामाद रहे बाद में राजा ने आधा धन दिया। वहाँ से धरमा पहाड़ रहा बहुत दिनन में जो बड़ी रानी को परट रखे थे वो देस आये और रानी को परट छुड़ाये जब वहाँ से चले तो अपने घर मेंइय आ गये और खा पीये और राज किये कहानी हिती सो खतम हो गइ।

सूचक नं. – 21
नाम – शिवलाल राहंगडाले, ग्राम – इंदौरी, – आष्टा, जिला – सिवनी, मध्यप्रदेश

सारतः यह कहा जा सकता है कि बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, साहित्यिक परम्पराएँ अत्यंत समृद्ध हैं, जिनका बुन्देली के विविध रूपों पर प्रभाव पड़ा है। समग्र बुन्देलखण्ड का मूल्यांकन बुन्देली के विविध रूपों के आधार पर ही संभव है। इन विविध रूपों में बुन्देलखण्ड की वह आत्मा विराजमान है, जो बुन्देली समाज और संस्कृति की अलग पहचान बनाती है। बुन्देली के इन विविध रूपों का भाषाशास्त्रीय अध ययन इसलिये भी आवश्यक था कि आधुनिक मीडिया के प्रभाव में एक पृथक् भाषाई चेतना जन्म ले रही है, जो कालान्तर में लोकबोलियों के स्वरूप को विस्मृत करा देगी। कुल मिलाकर इस अध्ययन के माध्यम से बुन्देली को सांगोपांग रूप में परीक्षित ही नहीं किया जा सकता, बल्कि भाषाशास्त्र के इतिहास में उसे संरक्षित भी किया जा सकता है।

संदर्भ

पुस्तकें

नगेन्द्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास दिल्ली
रमेशचंद्र श्रीवास्तव : बुन्देलखण्ड : साहित्यिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक वैभव संदर्भ ग्रंथ, बॉदा
डॉ. कृष्णलाल हंस : बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप, प्रयाग 1978
डॉ. लता दुबे : बुन्देली के ध्वनिगत विभेदों का अध्ययन, सागर 1980
डॉ. कृष्णलाल हंस : निमाड़ी और उसका साहित्य, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
प्रो. बलभद्र तिवारी बुन्देली समाज और संस्कृति, सुप्रिया प्रकाशन, सागर 1995
डॉ. द्वारका प्रसाद मिश्र : भारतीय आद्य इतिहास का अध्ययन 1972
पं. भगवद्धत : भारतवर्ष का वृहत् इतिहास वाराणसी
प्रो. एस.एम. अली : दी ज्योग्राफी ऑफ पुराण, दिल्ली 1971
डॉ. वागीश शास्त्री : बुन्देलखण्ड की प्राचीनता, बनारस
कालिदास : मेघदूत : काशी
डॉ. विन्सेण्ट ए. स्मिथ : अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, आक्सफोर्ड 1924
प्रो. हेमचन्द्र राय चौधरी : नन्दयुगीन भारत, संदर्भ : संपादक – के.ए
नीलकण्ठ शास्त्री : नन्दमौर्य युगीन भारत, वाराणसी 1969
के. मार्कस एकोनोमिक्स और फिलासफी मेनुस्क्रिप्टस् ऑफ 1844 मोसको, 1961
पण्डित गोरेलाल तिवारी : बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, काशी संवत 1990
डॉ. वासुदेव विष्णु मिराशी : कलचुरि नेरश और उनका काल, भोपाल 1965
वाकाटक राजवंश का इतिहास तथा अभिलेख 1979, नई दिल्ली
जे.एफ. फ्लेट : कारपस इन्सक्रिप्सन इंडिकेरम वाल्यूम 3, कलकत्ता 1988
वाट्टेर्स, योन चवांग, वोल 2
डॉ. ग्रियर्सन : भारत का भाषा सर्वेक्षण : खण्ड 9 : प्रकाश हिन्दी समिति लखनऊ, सूचना विभाग उत्तरप्रदेश
प्रो. बलभद्र तिवारी : बुन्देली समाज और संस्कृति प्राचीन एवं मध्यकालीन संदर्भ सागर 1995
पं. हरिहर निवास द्विवेदी : मध्यभारत का इतिहास प्रथम खण्ड ग्वालियर, 1956
बी.बी. लाल : आर्कियाजॉजी इन इण्डिया, दिल्ली, 1965
बी.के. घोष : हिस्ट्री एण्ड कल्चर ऑफ दी इण्डियन पीपुल खण्ड 1
पं. कृष्णदत्त बाजपेयी : दी चालाकोलिथिक कल्चर ऑफ दी बेतवा बेली (आर्कियाजॉलीकल कांग्रेस एण्ड सेमिनार 1972) मध्यभारती
एस.एन. चक्रवर्ती : जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल (1944)
डिटैरा एण्ड पेटरसन : स्टडीज इन दी आइस एज इन इण्डिया एण्ड एसोशिएटेड सुमन कलचर्स (वाशिगटन, 1939)
डॉ. एन. मजूमदार : रेसेज एण्ड कल्चर्स ऑफ इण्डिया
डॉ. भगवतशरण उपाध्याय : प्राचीन भारत का इतिहास, बनारस
जे. पुकजलस्की : जर्नल ऑफ दी रायल एशियांटिक सोसायटी ऑफ ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैंड, लंदन 1939
मध्यभारत, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश के चम्बल वाले भाग
एच.सी. राय : जर्नल ऑफ दी बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी, पटना

एस.के. चटर्जी : ए. डी. पुसालकर हिस्ट्री एण्ड कल्चर ऑफ दी इंडियन पीपुल, खण्ड 1 1952 बंबई
सतीशचंद्र काला : मोहनजोदरो तथा सिंधु सभ्यता, दिल्ली
के.एन. पन्निकर : ए सर्वे ऑफ इण्डियन हिस्ट्री, दिल्ली
ए.बी. कीथ : रिलीजन एण्ड फिलॉसाफी ऑफ वेद एण्ड उपानिषद् भाग 2
डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल : पाणिनी कालीन भारत 1975 वाराणसी
रामधारी सिंह दिनकर : संस्कृति के चार अध्याय, रामकमल प्रकाशन, दिल्ली
बी.जी. गोखले : प्राचीन भारत
दामोदर धर्मानन्द कोसम्बी : प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता 1965
डॉ. भगवतशरण उपाध्याय : भारतीय समाज का ऐतिहासिक विश्लेषण
जयचन्द्र विद्यालंकार : भारतीय इतिकास की रूपरेखा : भाग 1
डॉ. भगवतशरण उपाध्याय : भारतीय समाज का ऐतिहासिक विश्लेषण
रमेश चन्द्रदत्त : प्राचीन भारतवर्ष की सभ्यता का इतिहास भाग 12
शिवसहाय चतुर्वेदी : सतीशचन्द्र सान्याल की बंगाल पुस्तक पर आर्य जाति आर्कियाजाजीकल सर्वे : भाग 17
रामकृष्ण भण्डारकर : इण्डियन कल्चर भाग 6
काशीप्रसाद जायसवाल : फारिन इन्फ्लुएन्य इन एन्शट इंडिया
म्यौर : औरिजिनल संस्कृति टैक्ट्स
ए.एल. बाशम : अद्भुत भारत अनुवाद
रतिभानसिंह नाहर : प्राचीन भारत का राजनैतिक और सांस्कृतिक इतिहास, नई दिल्ली 1990
एपिग्राफिया इण्डिया
पं. कृष्णदत्त बाजपेयी : सागर थ्रू दि एजेज, सागर 1964
डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी प्राचीन भारत का इतिहास, 1968, पटना
आर. सी. मजूमदार : एशंट हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, 1962 पटना
अलबेरूनी का भारत : अनुवादक–संतराम
सी.बी. वैद्य : हिस्ट्री ऑफ हिन्दू मेडिकल इंण्डिया, भाग 2
शिवसहाय चतुर्वेदी : आर्य जाति
कृष्ण मिश्र : प्रबोध चन्द्रोदय अनु टेलर
केशवप्रसाद मिश्र : चंदेल और उनका राजस्व काल, विन्ध्यभूमि
पं. लोकनाथ सिलाकारी : महाकवि जगनिक और उनकी लोक गाथा काव्य, आल्हा, अभिनव प्रकाशन, सागर
डॉ. बलभद्र तिवारी : कविवर विष्णुदास और उनकी रामायन कथा, साहित्य भवन, इलाहाबाद
राधाकमल मुकर्जी : भारत की संस्कृति और कला, प्रयाग
ठाकुर लक्ष्मण सिंह : ओरछा का इतिहास, झाँसी
कृष्ण कवि श्री वीर चरितामृत, अप्रकाशित
अबध बिहारी पाण्डेयः उत्तर मध्य कालीन भारत, प्रयाग
आर. बी. रसेल : दी ट्राइब्ज एण्ड कास्ट्स ऑफ दी सेन्ट्रल प्राविन्सेज इंडिया, भाग 2
ए.बी. स्मिथ : अर्ली हिस्ट्री ऑफ इंडिया, तृतीय संस्करण, आक्सफोर्ड 1957
कृष्णनंद गुप्ता : बुन्देली कहावत कोश, झाँसी
डॉ. विलसन : इडियन कास्ट टाइप प्रेस एण्ड मैसर्स, ब्लैक बुड
श्रीपाद अमृत डांगे : भारत आदि आदिम साम्यवाद से दास प्रथा तक का इतिहास
व. केल्ले और म. कोवालजोन : ऐतिहासिक भौतिकवाद समाज के मार्क्सवादी सिद्धांत की रूपरेखा, मास्को सोवियत रूस
डॉ. सुनीति कुमार चाटुर्ज्या : भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी
डॉ. श्यामसुंदर दास : हिन्दी भाषा और साहित्य वाराणसी
डॉ. नामवरसिंह : हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग वाराणसी

जगदीश प्रसाद कौशिक : भारतीय आर्य भाषाओं का इतिहास
कीर्तिलता : प्रथम पल्लव
डॉ. दयानंद श्रीवास्तव : हिन्दी साहित्य का इतिहास : प्रथम खण्ड गोरखबानी
आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास वाराणसी
डॉ. बलभद्र तिवारी : बुन्देली लोक काव्य, भाग 2 बुन्देली पीठ, सागर
अभिनव गुप्त : भारत नाट्य शास्त्र : 17/49–50
डॉ. राधेश्याम द्विवेदी : हिन्दी भाषा और साहित्य में ग्वालियर क्षेत्र का योगदान, ग्वालियर
थेघनाथ : गीता पद्यानुवाद, आर्य भाषा पुस्तकालय, नागरी प्रचरिणी सभा, कालश के सौजन्य से प्राप्त प्रति। विद्यामंदिर मुर (ग्वालियर) में सुरक्षित है। (मध्यदेशीय) भाषा
डॉ. शिवप्रसाद सिंह : सूरपूर्व ब्रजभाषा वि वि प्रकाशन, वाराणसी
केशव ग्रंथावली : खण्ड 1 वाराणसी
बुन्देल वैभव : भाग 1 झाँसी
डॉ. भगीरथ मिश्र रीतिकाव्य वि वि प्रकाशन, वाराणसी
डॉ. रामकुमार वर्मा : हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, प्रयाग
डॉ. प्रेमशंकर : रामकाव्य और तुलसी वाणी प्रकाशन
कृष्ण दास : बुन्देलखण्ड के कवि पूर्वार्द्ध, पन्ना 1968
श्री उत्तमलाल गोस्वामी : महाकवि श्री गोरलाल भाग 2
श्री अम्बाप्रसाद श्रीवास्तव : अक्षर अनन्य, आगरा
बुन्देल वैभव : भाग 2 झाँसी
हरिसेवक मिश्र : कामरूप कथा काव्य, ग्वालियर
हिन्दी साहित्य का अतीत, वाराणसी
आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी : हिन्दी साहित्य, वाराणसी
प्रबोध पचासा
ठाकुर : कवित्त संग्रह,
बुन्देल वैभव : भाग 3, झाँसी
श्यामसुंदर बादल : बुन्देली का फाग इतिहास
हरनाथ ग्रन्थावली, झाँसी
किरण दूत, दतिया
डॉ. एम.पी. जायसवाल : ए लिंगवस्टिकस्टडी ऑफ बुन्देली, हॉलैंड
लक्ष्मीचन्द्र नुना : बुन्देलखंडी भाषा व्याकरण एवं शब्दकोष भूमिका, झाँसी
डॉ. रामस्वरूप श्रीवास्तव : बुन्देली लोक साहित्य, आगरा
डॉ. रामजीशरण दांगी : झाँसी जिले की बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन
कृष्णानंद गुप्त : बुन्देलीखण्डी भाषा और साहित्य झाँसी
डॉ. श्यामसुंदर सौनकिया : भिण्ड जिले की बोली का अनुशीलन, ग्वालियर
डॉ. कमलनारायण दुबे : नरसिंहपुर जिले की बुन्देलीखण्डी बोली का संकालिक अध्ययन
डॉ. कामिनी बुन्देली भाषी क्षेत्र के स्थान अभियानों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन : थीसिस ग्वालियर, 1985
डॉ. कामिनी आंचलिक स्थान अभिधान अनुशीलन, कानपुर 1983
डॉ. श्यामबिहारी श्रीवास्वत : बुन्देली के रासो काव्य, थीसिस
डॉ. सीता किशोर, दतिया जिले की बोली तथा हिन्दी के सर्वनाम, अव्यय तथा कारकों का अध्ययन, थीसिस
डॉ. दुर्गा प्रसाद श्रीवास्तव : भारतीय साहित्य
बाबूराम सक्सेना : सामान्य भाषा विज्ञान, प्रयाग
डॉ. रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल : बुन्देली का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन। विश्व वि. हिन्दी प्रकाशन लखनऊ : 1963

डॉ. गणेशीलाल जी बुधौलिया : प्राध्यापक डी.ए.बी. इंटर कालेज राठ से प्राप्त कहानी का अंश
डॉ. श्यामसुंदर सौनकिया : भदावरी का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन

पुराण तथा पत्रिकाएँ

मार्कण्डेय पुराण
भविष्य पुराण : ब्रह्म खण्ड 8
महाभारत वन पर्व 22
महाभारत सभा पर्व 70
महाभारत भीष्म पर्व 75 कर्ण पर्व 3
महाभारत विराट पर्व 19
ताम्रलेख बालाघाट : खण्ड 9
ऋग्वेद 5–19–10
भागवत : 12.9.1.
भगवद्गीता 10–25
मत्सय पुराण 43148–49
वायु पुराण 11.20–20
ऋग्वेद नवम मंडल
शतपथ ब्राह्मण 1.7.3.8.
वामन पुराण 76.14–26
महाभारत : 3.85–3.87.18
मत्सय पुराण 114–47–49, कलकत्ता संस्करण में अध्याय 113
मत्सय पुराण 114.41
वाल्मीकि रामायण : 3.76.29–32
अष्टाध्यायी 4.1.49
हर्षचरित
पाराशर संहिता
लघु सिद्धांत कौमदी
रघुवंश
मध्य भारती 1971– 73
इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया : भाग 12
ओरछा स्टेट गजेटियर
बालाघाट डिस्ट्रिक्ट गजेटियर
डॉ. विद्यानिवास मिश्र : विंध्यभूमि बसंत 1945
श्री लक्ष्मीनिवास नुना : विंध्यभूमि दिसम्बर 1946
श्री श्यामाचरण राय : मधुकर : जून 1943
श्री राजकुमार जैन मधुकर : सन् 1943 का मई अंक
डॉ. वासुदेवारण अग्रवाल : विन्ध्य भूमि
पं. कृष्णदत्त बाजपेयी : (संघमित्रा, पत्रिका) शिलागृह आदिम भारतीय संस्कृति के केन्द्र
श्री श्यामचरण राय : बुन्देलखण्ड के आदिम निवासी (मधुकर, मार्च 1944 अंग 23–24)
डॉ. वासुदेवारण अग्रवाल : कलचुरियों का वैभव (विन्ध्यभूमि 1956)
पं. कृष्णदत्त वाजपेयी : सागर थ्रू एजेज–गौरवमय इतिहास का धनीचेदिजनपद (मध्यप्रदेश संदेश–77, दिसम्बर)
पं. लोकनाथ सिलाकारी : मध्यभारती पत्रिका, वर्ष 5/7 (1964) चंदेलों का इतिहास